महात्मा गांधी

मेरे सपनों का भारत

168

प्रकाशकका निवेदन

अिस पुस्तकका अंग्रेजी संस्करण पहले-पहल 'अिंडिया ऑफ माय ड्रीम्स' नामसे १५ अगस्त, १९४७ के दिन प्रकाशित हुआ था, जो स्वतंत्र भारतके अितिहासमें अनोखा महत्त्व रखता है। प्रथम संस्करणके लिअे भारतके वर्तमान राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसादने जो प्रेरणादायी प्राक्कथन लिखा था, अुसका समावेश अिस हिन्दी संस्करणमें किया गया है। वह अिस पुस्तकके महत्त्व पर अच्छा प्रकाश डालता है।

श्री आर० के० प्रभुने अिस पुस्तकमें बड़ी कुशलतासे गांधीजीके लेखों, भाषणों तथा अन्य स्रोतोंसे अुपयुक्त वचनोंका संग्रह किया है और पाठकोंको अिस बातकी कल्पना करानेका प्रयत्न किया है कि गांधीजी स्वतंत्र भारतसे अपने घरेलू मामलोंमें तथा विदेशोंके साथके अुसके सम्बन्धोंमें कैसे व्यवहारकी आशा रखते थे। पुस्तकको पढ़कर हमारे सामने गांधीजीके सपनोंके भारतका वह कल्पना-चित्र खड़ा होता है, जो अुस महान कलाकारने 'यंग अिंडिया' तथा 'हरिजन' के अमर पृष्ठोंमें अितनी सफलतासे अंकित किया है।

सन् १९५९ में मूल अंग्रेजीका दूसरा संस्करण नवजीवन ट्रस्टने प्रकाशित किया, जिसमें देशकी बदली हुअी परिस्थितिके अनुसार संग्राहकने अनेक परिवर्तन किये। यह संशोधित और परिवर्धित संस्करण तैयार करनेमें संग्राहकका हेतु और प्रयत्न पाठकोंके हाथमें अेक अैसी छोटी किन्तु अविकृत पुस्तक रखनेका है, जिसमें भारतके सारे महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर गांधीजीके बुनियादी विचार अेक जगह पढ़नेको मिल जायें; और अिस तरह यह पुस्तक न सिर्फ गांधी-विचारका अध्ययन करनेवालोंके लिअे, परन्तु सक्रिय रूपमें देशसेवाका काम करनेवाले रचनात्मक कार्यकर्ताओंके लिअे भी अुपयोगी सिद्ध हो।

अंग्रेजीके दूसरे संस्करणके आधार पर तैयार किया गया यह हिन्दी संस्करण पाठकोंकी सेवामें प्रस्तुत करते हुअे हमें आनन्द होता है। स्वतंत्र भारतके नवनिर्माणके युगमें अैसी पुस्तकका कितना महत्त्व है, यह कहनेकी जरूरत नहीं होनी चाहिये। आज राष्ट्रपिताके सपनोंके भारतको मूर्तरूप देनेकी जिम्मेदारी हमारे सिर आअी है। यह जिम्मेदारी हम तभी पूरी कर सकेंगे जब अुनके बताये मार्ग पर हम सतत जाग्रत रहकर चलनेका सच्चा प्रयत्न करेंगे।

६–४–'६०

प्राक्कथन

आजके अिस अवसर पर, जब हम अपने अितिहासके अेक नये युगमें प्रवेश कर रहे हैं, दुनियाके और देशके सामने गांधीजीके सपनोंके भारतकी तसवीर रखना अेक शुभ विचार है। हमने जो स्वतंत्रता प्राप्त की है अुसके फलस्वरूप हमारे अूपर गम्भीर जिम्मेदारियां आ पड़ी हैं — हम चाहें तो भारतका भविष्य बना सकते हैं और चाहें तो बिगाड़ भी सकते हैं। हमारी यह स्वतंत्रता अधिकांशमें महात्मा गांधीके ही महान नेतृत्वका फल है। सत्य और अहिंसाके जिस अनुपम हथियारका अुन्होंने अुपयोग किया आज दुनियाको अुसकी बड़ी आवश्यकता है; अिस हथियारके द्वारा ही वह अुन सारी बुराअियोंसे त्राण पा सकती है जिनसे आज वह पीड़ित है। हम जानते हैं कि अपने साधनके रूपमें गांधीजीको जिन लोगोंका अुपयोग करना पड़ा वे कितने अधूरे थे; किन्तु अितिहास गवाही देगा कि समान स्थितिमें किसी भी दूसरे देशको अपना अुद्देश्य हासिल करनेमें जो बलिदान करना पड़ता, अुसकी तुलनामें हमें बहुत ही कम बलिदान करना पड़ा है। जिस तरह हमारी लड़ाअीका हथियार अनुपम था अुसी तरह स्वतंत्रताकी प्राप्तिने हमारे सामने जो सारी सम्भावनायें खोल दी हैं वे भी अनुपम हैं। विजय और आनन्दकी घड़ियोंमें न तो हम अपने नेताको भुला सकते हैं और न अुनके अमर सिद्धान्तोंको भुला सकते हैं। स्वतंत्रता अन्तमें तो किसी अधिक महान और अधिक अुदात्त साध्यका साधन ही है; और महात्मा गांधीके सपनोंके भारतकी सिद्धि अुन अुद्देश्यों और आदर्शोंकी भव्य परिणति होगी, जिनके लिअे वे जिये और जिनके वे प्रतीक बन गये हैं। अिस अवसर पर हमें गांधीजीकी शिक्षाके बुनियादी अुसूलोंको याद करना चाहिये।

यह पुस्तक पाठकोंके सामने न केवल अुन आधारभूत बुनियादी अुसूलोंको ही रखती है, बल्कि यह भी बताती है कि स्वतंत्रता-प्राप्तिके

वाद अुपयुक्त राजनीतिक और सामाजिक जीवनकी स्थापना करके संविवानकी मददसे तथा अपार मानव-शक्तिकी मददसे, जिसे यह विशाल देश विना किसी भीतरी या वाहरी वन्वनोंके अव काममें लगायेगा, हम गांवीजीके अुन अुसूलोंको कैसे मूर्त रूप दे सकते हैं। मुझे आशा है कि सव कोअी अिस पुस्तकका स्वागत करेंगे। श्री आर० के० प्रभुने वड़ी चतुराअीसे गांवीजीके लेखों, पुस्तकों और भाषणोंसे अत्यन्त प्रभावशाली और अर्थपूर्ण अुद्धरणोंका संग्रह किया है। और मेरा विश्वास है कि यह पुस्तक अिस विषयके साहित्यमें अेक कीमती वृद्धि करेगी।

राजेन्द्रप्रसाद

नअी दिल्ली,
८ अगस्त, १९४७

अनुक्रमणिका

मेरे सपनोंका भारत

१

मेरे सपनोंका भारत

भारतकी हर चीज मुझे आकर्षित करती है। सर्वोच्च आकांक्षायें रखनेवाले किसी व्यक्तिको अपने विकासके लिये जो कुछ चाहिये, वह सब अुसे भारतमें मिल सकता है।

यंग अिंडिया, २१–२–'२९

भारत अपने मूल स्वरूपमें कर्मभूमि है, भोगभूमि नहीं।

यंग अिंडिया, ५–२–'२५

भारत दुनियाके अुन अिने-गिने देशोंमें से है, जिन्होंने अपनी अधिकांश पुरानी संस्थाओंको, यद्यपि अुन पर अन्ध-विश्वास और भूल-भ्रान्तियोंकी काअी चढ़ गयी है, कायम रखा है। साथ ही वह अभी तक अन्ध-विश्वास और भूल-भ्रान्तियोंकी अिस काअीको दूर करनेकी और अिस तरह अपना शुद्ध रूप प्रगट करनेकी अपनी सहज क्षमता भी प्रगट करता है। अुसके लाखों-करोड़ों निवासियोंके सामने जो आर्थिक कठिनाअियां खड़ी हैं, अुन्हें सुलझा सकनेकी अुनकी योग्यतामें मेरा विश्वास अितना अुज्ज्वल कभी नहीं रहा जितना आज है।

यंग अिंडिया, ६–८–'२५

मेरा विश्वास है कि भारतका ध्येय दूसरे देशोंके ध्येयसे कुछ अलग है। भारतमें अैसी योग्यता है कि वह धर्मके क्षेत्रमें दुनियामें सबसे बड़ा हो सकता है। भारतने आत्मशुद्धिके लिअे स्वेच्छापूर्वक जैसा प्रयत्न किया है, अुसका दुनियामें कोअी दूसरा अुदाहरण नहीं मिलता। भारतको फौलादके हथियारोंकी अुतनी आवश्यकता नहीं है; वह दैवी हथियारोंसे लड़ा है और आज भी वह अुन्हीं हथियारोंसे लड़ सकता है। दूसरे देश पशुबलके पुजारी रहे हैं। यूरोपमें अभी जो भयंकर युद्ध

चल रहा है वह अिस सत्यका अेक प्रभावशाली अुदाहरण है। भारत अपने आत्मबलसे सबको जीत सकता है। अितिहास अिस सच्चाअीके चाहे जितने प्रमाण दे सकता है कि पशुबल आत्मबलकी तुलनामें कुछ नहीं है। कवियोंने अिस बलकी विजयके गीत गाये हैं और ऋषियोंने अिस विषयमें अपने अनुभवोंका वर्णन करके अुसकी पुष्टि की है।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ४०५

यदि भारत तलवारकी नीति अपनाये तो वह क्षणस्थायी विजय पा सकता है। लेकिन तब भारत मेरे गर्वका विषय नहीं रहेगा। मैं भारतकी भक्ति करता हूं, क्योंकि मेरे पास जो कुछ भी है वह सब अुसीका दिया हुआ है। मेरा पूरा विश्वास है कि अुसके पास सारी दुनियाके लिअे अेक सन्देश है। अुसे यूरोपका अन्धानुकरण नहीं करना है। भारतके द्वारा तलवारका स्वीकार मेरी कसौटीकी घड़ी होगी। मैं आशा करता हूं कि अुस कसौटी पर मैं खरा अुतरूंगा। मेरा धर्म भौगोलिक सीमाओंसे मर्यादित नहीं है। यदि अुसमें मेरा जीवंत विश्वास है तो वह मेरे भारत-प्रेमका भी अतिक्रमण कर जायगा। मेरा जीवन अहिंसा-धर्मके पालन द्वारा भारतकी सेवाके लिअे समर्पित है।

यंग अिंडिया, ११–८–'२०

यदि भारतने हिंसाको अपना धर्म स्वीकार कर लिया और यदि अुस समय मैं जीवित रहा, तो मैं भारतमें नहीं रहना चाहूंगा। तब वह मेरे मनमें गर्वकी भावना अुत्पन्न नहीं करेगा। मेरा देशप्रेम मेरे धर्म द्वारा नियंत्रित है। मैं भारतसे अुसी तरह बंधा हुआ हूं, जिस तरह कोअी बालक अपनी मांकी छातीसे चिपटा रहता है; क्योंकि मैं महसूस करता हूं कि वह मुझे मेरा आवश्यक आध्यात्मिक पोषण देता है। अुसके वातावरणसे मुझे अपनी अुच्चतम आकांक्षाओंकी पुकारका अुत्तर मिलता है। यदि किसी कारण मेरा यह विश्वास हिल जाय या चला जाय, तो मेरी दशा अुस अनाथके जैसी [illegible]
पानेकी आशा ही न रही हो।

यंग अिंडिया, ६–४–'२१

मैं भारतको स्वतंत्र और बलवान बना हुआ देखना चाहता हूं, क्योंकि मैं चाहता हूं कि वह दुनियाके भलेके लिअे स्वेच्छापूर्वक अपनी पवित्र आहुति दे सके। भारतकी स्वतंत्रतासे शान्ति और युद्धके बारेमें दुनियाकी दृष्टिमें जड़मूलसे क्रान्ति हो जायगी। अुसकी मौजूदा लाचारी और कमजोरीका सारी दुनिया पर बुरा असर पड़ता है।

यंग अिंडिया, १७–९–'२५

मैं यह मानने जितना नम्र तो हूं ही कि पश्चिमके पास बहुत कुछ अैसा है, जिसे हम अुससे ले सकते हैं, पचा सकते हैं और लाभान्वित हो सकते हैं। ज्ञान किसी अेक देश या जातिके अेकाधिकारकी वस्तु नहीं है। पाश्चात्य सभ्यताका मेरा विरोध असलमें अुस विचारहीन और विवेकहीन नकलका विरोध है, जो यह मानकर की जाती है कि अेशिया-निवासी तो पश्चिमसे आनेवाली हरअेक चीजकी नकल करने जितनी ही योग्यता रखते हैं। . . . मैं दृढ़तापूर्वक विश्वास करता हूं कि यदि भारतने दुःख और तपस्याकी आगमें से गुजरने जितना धीरज दिखाया और अपनी सभ्यता पर — जो अपूर्ण होते हुअे भी अभी तक कालके प्रभावको झेल सकी है — किसी भी दिशासे कोअी अनुचित आक्रमण न होने दिया, तो वह दुनियाकी शान्ति और ठोस प्रगतिमें स्थायी योगदान कर सकती है।

यंग अिंडिया, ११–८–'२७

भारतका भविष्य पश्चिमके अुस रक्त-रंजित मार्ग पर नहीं है, जिस पर चलते-चलते पश्चिम अब खुद थक गया है; अुसका भविष्य तो सरल धार्मिक जीवन द्वारा प्राप्त शान्तिके अहिंसक रास्ते पर चलनेमें ही है। भारतके सामने अिस समय अपनी आत्माको खोनेका खतरा अुपस्थित है। और यह संभव नहीं है कि अपनी आत्माको खोकर भी वह जीवित रह सके। अिसलिअे आलसीकी तरह अुसे लाचारी प्रकट करते हुअे अैसा नहीं कहना चाहिये कि "पश्चिमकी अिस बाढ़से मैं बच नहीं सकता।" अपनी और दुनियाकी भलाअीके लिअे अुस बाढ़को रोकने योग्य शक्तिशाली तो अुसे बनना ही होगा।

हिन्दी नवजीवन, ७–१०–'२६

यूरोपीय सभ्यता बेशक यूरोपके निवासियोंके लिअे अनुकूल है; लेकिन यदि हमने अुसकी नकल करनेकी कोशिश की, तो भारतके लिअे अुसका अर्थ अपना नाश कर लेना होगा। अिसका यह मतलब नहीं कि अुसमें जो कुछ अच्छा और हम पचा सकें अैसा हो, अुसे हम लें नहीं या पचायें नहीं। अिसी तरह अुसका यह मतलब भी नहीं है कि अुस सभ्यतामें जो दोष घुस गये हैं, अुन्हें यूरोपियनोंको दूर नहीं करना पड़ेगा। शारीरिक सुख-सुविधाओंकी सतत खोज और अुनकी संख्यामें तेजीसे हो रही वृद्धि अैसा ही अेक दोष है; और मैं साहसपूर्वक यह घोषणा करता हूं कि जिन सुख-सुविधाओंके वे गुलाम बनते जा रहे हैं अुनके बोझसे यदि अुन्हें कुचल नहीं जाना है, तो यूरोपीय लोगोंको अपना दृष्टिकोण बदलना पड़ेगा। संभव है मेरा यह निष्कर्ष गलत हो, लेकिन यह मैं निश्चयपूर्वक जानता हूं कि भारतके लिअे अिस सुनहले माया-मृगके पीछे दौड़नेका अर्थ आत्मनाशके सिवा और कुछ न होगा। हमें अपने हृदयों पर अेक पाश्चात्य तत्त्ववेत्ताका यह बोधवाक्य अंकित कर लेना चाहिये — 'सादा जीवन और अुच्च चिन्तन'। आज तो यह निश्चित है कि हमारे लाखों-करोड़ों लोगोंके लिअे सुख-सुविधाओंवाला अुच्च जीवन संभव नहीं है और हम मुट्ठीभर लोग, जो सामान्य जनताके लिअे चिन्तन करनेका दावा करते हैं, सुख-सुविधाओंवाले अुच्च जीवनकी निरर्थक खोजमें अुच्च चिन्तनको खोनेकी जोखिम अुठा रहे हैं।

यंग अिंडिया, ३०–४–'३१

मैं अैसे संविधानकी रचना करवानेका प्रयत्न करूंगा, जो भारतको हर तरहकी गुलामी और परावलम्बनसे मुक्त कर दे और अुसे, आवश्यकता हो तो, पाप करने तकका अधिकार दे। मैं अैसे भारतके लिअे कोशिश करूंगा जिसमें गरीबसे गरीब लोग भी यह महसूस करेंगे कि वह अुनका देश है — जिसके निर्माणमें अुनकी आवाजका महत्त्व है। मैं अैसे भारतके लिअे कोशिश करूंगा जिसमें अूंचे और नीचे वर्गोंका भेद नहीं होगा और जिसमें विविध सम्प्रदायोंमें पूरा मेलजोल होगा। अैसे भारतमें अस्पृश्यताके या शराब और दूसरी नशीली चीजोंके अभिशापके लिअे कोअी स्थान नहीं हो सकता। अुसमें स्त्रियोंको वही अधिकार

होंगे जो पुरुषोंको। चूंकि शेष सारी दुनियाके साथ हमारा सम्बन्ध शान्तिका होगा, यानी न तो हम किसीका शोषण करेंगे और न किसीके द्वारा अपना शोषण होने देंगे, अिसलिअे हमारी सेना छोटीसे छोटी होगी। अैसे सब हितोंका, जिनका करोड़ों मूक लोगोंके हितोंसे कोअी विरोध नहीं है, पूरा सम्मान किया जायगा, फिर वे देशी हों या विदेशी। अपने लिअे तो मैं यह भी कह सकता हूं कि मैं देशी और विदेशीके फर्कसे नफरत करता हूं। यह है मेरे सपनोंका भारत। ... अिससे भिन्न किसी चीजसे मुझे संतोष नहीं होगा।

यंग अिंडिया, १०–९–'३१

२

स्वराज्यका अर्थ

स्वराज्य अेक पवित्र शब्द है; वह अेक वैदिक शब्द है जिसका अर्थ आत्म-शासन और आत्म-संयम है। अंग्रेजी शब्द 'अिंडिपेंडेंस' अकसर सब प्रकारकी मर्यादाओंसे मुक्त निरंकुश आजादीका या स्वच्छंदताका अर्थ देता है; वह अर्थ स्वराज्य शब्दमें नहीं है।

यंग अिंडिया, १९–३–'३१

स्वराज्यसे मेरा अभिप्राय है लोक-सम्मतिके अनुसार होनेवाला भारतवर्षका शासन। लोक-सम्मतिका निश्चय देशके बालिग लोगोंकी बड़ीसे बड़ी तादादके मतके जरियेसे हो, फिर वे चाहे स्त्रियां हों या पुरुष, अिसी देशके हों या अिस देशमें आकर बस गये हों। वे लोग अैसे हों जिन्होंने अपने शारीरिक श्रमके द्वारा राज्यकी कुछ सेवा की हो और जिन्होंने मतदाताओंकी सूचीमें अपना नाम लिखवा लिया हो। ... सच्चा स्वराज्य थोड़े लोगोंके द्वारा सत्ता प्राप्त कर लेनेसे नहीं, बल्कि जब सत्ताका दुरुपयोग होता हो तब सब लोगोंके द्वारा अुसका प्रतिकार करनेकी क्षमता प्राप्त करके हासिल किया जा सकता है। दूसरे शब्दोंमें, स्वराज्य

जनतामें अिस बातका ज्ञान पैदा करके प्राप्त किया जा सकता है कि सत्ता पर कब्जा करने और अुसका नियमन करनेकी क्षमता अुसमें है।'

हिन्दी नवजीवन, २९-१-'२५

आखिर स्वराज्य निर्भर करता है हमारी आन्तरिक शक्ति पर, बड़ीसे बड़ी कठिनाअियोंसे जूझनेकी हमारी ताकत पर। सच पूछो तो वह स्वराज्य, जिसे पानेके लिअे अनवरत प्रयत्न और बचाये रखनेके लिअे सतत जाग्रति नहीं चाहिये, स्वराज्य कहलानेके लायक ही नहीं है। जैसा कि आपको मालूम है, मैंने वचन और कार्यसे यह दिखलानेकी कोशिश की है कि स्त्री-पुरुषोंके विशाल समूहका राजनीतिक स्वराज्य अेक अेक शख्सके अलग-अलग स्वराज्यसे कोअी ज्यादा अच्छी चीज नहीं है और अिसलिअे अुसे पानेका तरीका वही है जो अेक अेक आदमीके आत्म-स्वराज्य या आत्म-संयमका है।

हिन्दी नवजीवन, ८-१२-'२७

स्वराज्यका अर्थ है सरकारी नियंत्रणसे मुक्त होनेके लिअे लगातार प्रयत्न करना, फिर वह नियंत्रण विदेशी सरकारका हो या स्वदेशी सरकारका। यदि स्वराज्य हो जाने पर लोग अपने जीवनकी हर छोटी बातके नियमनके लिअे सरकारका मुंह ताकना शुरू कर दें, तो वह स्वराज्य-सरकार किसी कामकी नहीं होगी।

यंग अिंडिया, ६-८-'२५

मेरा स्वराज्य तो हमारी सभ्यताकी आत्माको अक्षुण्ण रखना है। मैं बहुतसी नअी चीजें लिखना चाहता हूं, पर वे तमाम हिन्दुस्तानकी स्लेट पर लिखी जानी चाहिये। हां, मैं पश्चिमसे भी खुशीसे अुधार लूंगा, पर तभी जब कि मैं अुसे अच्छे सूदके साथ वापस कर सकूं।

हिन्दी नवजीवन, २९-६-'२४

स्वराज्यकी रक्षा केवल वहीं हो सकती है, जहां देशवासियोंकी ज्यादा बड़ी संख्या अैसे देशभक्तोंकी हो, जिनके लिअे दूसरी सब चीजोंसे — अपने निजी लाभसे भी — देशकी भलाअीका ज्यादा महत्त्व हो।

स्वराज्यका अर्थ है देशकी बहुसंख्यक जनताका शासन। जाहिर है कि जहां बहुसंख्यक जनता नीतिभ्रष्ट हो या स्वार्थी हो, वहां अुनकी सरकार अराजकताकी ही स्थिति पैदा कर सकती है, दूसरा कुछ नहीं।

यंग अिंडिया, २८–७–'२१

मेरे . . . हमारे . . . सपनोंके स्वराज्यमें जाति (रेस) या धर्मके भेदोंको कोअी स्थान नहीं हो सकता। अुस पर शिक्षितों या धनवानोंका अेकाधिपत्य नहीं होगा। वह स्वराज्य सबके लिअे — सबके कल्याणके लिअे होगा। सबकी गिनतीमें किसान तो आते ही हैं, किन्तु लूले, लंगड़े, अंधे और भूखसे मरनेवाले लाखों-करोड़ों मेहनतकश मजदूर भी अवश्य आते हैं।

यंग अिंडिया, २६–३–'३१

कुछ लोग अैसा कहते हैं कि भारतीय स्वराज्य तो ज्यादा संख्यावाले समाजका यानी हिन्दुओंका ही राज्य होगा। अिस मान्यतासे ज्यादा बड़ी कोअी दूसरी गलती नहीं हो सकती। अगर यह सही सिद्ध हो तो अपने लिअे मैं अैसा कह सकता हूं कि मैं अुसे स्वराज्य माननेसे अिनकार कर दूंगा और अपनी सारी शक्ति लगाकर अुसका विरोध करूंगा। मेरे लिअे हिन्द स्वराज्यका अर्थ सब लोगोंका राज्य, न्यायका राज्य है।

यंग अिंडिया, १६–४–'३१

अगर स्वराज्यका अर्थ हमें सभ्य बनाना और हमारी सभ्यताको अधिक शुद्ध तथा मजबूत बनाना न हो, तो वह किसी कीमतका नहीं होगा। हमारी सभ्यताका मूल तत्त्व ही यह है कि हम अपने सब कामोंमें, वे निजी हों या सार्वजनिक, नीतिके पालनको सर्वोच्च स्थान देते हैं।

यंग अिंडिया, २३–१–'३०

पूर्ण स्वराज्य . . . कहनेमें आशय यह है कि वह जितना किसी राजाके लिअे होगा अुतना ही किसानके लिअे, जितना किसी धनवान जमींदारके लिअे होगा अुतना ही भूमिहीन खेतिहरके लिअे, जितना हिन्दुओंके लिअे होगा अुतना ही मुसलमानोंके लिअे, जितना जैन, यहूदी और सिक्ख लोगोंके लिअे होगा अुतना ही पारसियों और ओसाअियोंके

लिअे। अुसमें जाति-पांति, धर्म या दरजेके भेदभावके लिअे कोअी स्थान नहीं होगा।

यंग अिंडिया, ५–३–’३१

स्वराज्य शब्दका अर्थ स्वयं और अुसकी प्राप्तिके साधन यानी सत्य और अहिंसा — जिनका पालन करनेके लिअे हम प्रतिज्ञाबद्ध हैं — अैसी किसी संभावनाको असंभव सिद्ध करते हैं कि हमारा स्वराज्य किसीके लिअे तो अधिक होगा और किसीके लिअे कम, किसीके लिअे लाभकारी होगा और किसीके लिअे हानिकारी या कम लाभकारी।

यंग अिंडिया, ५–३–’३१

मेरे सपनेका स्वराज्य तो गरीबोंका स्वराज्य होगा। जीवनकी जिन आवश्यकताओंका अुपभोग राजा और अमीर लोग करते हैं, वही तुम्हें भी सुलभ होनी चाहिये; अिसमें फर्कके लिअे स्थान नहीं हो सकता। लेकिन अिसका यह अर्थ नहीं कि हमारे पास अुनके जैसे महल होने चाहिये। सुखी जीवनके लिअे महलोंकी कोअी आवश्यकता नहीं। हमें महलोंमें रख दिया जाये तो हम घबड़ा जायें। लेकिन तुम्हें जीवनकी वे सामान्य सुविधायें अवश्य मिलना चाहिये, जिनका अुपभोग अमीर आदमी करता है। मुझे अिस बातमें बिलकुल भी सन्देह नहीं है कि हमारा स्वराज्य तब तक पूर्ण स्वराज्य नहीं होगा, जब तक वह तुम्हें ये सारी सुविधायें देनेकी पूरी व्यवस्था नहीं कर देता।

यंग अिंडिया, २६–३–’३१

पूर्ण स्वराज्यकी मेरी कल्पना दूसरे देशोंसे कोअी नाता न रखनेवाली स्वतंत्रताकी नहीं, बल्कि स्वस्थ और गम्भीर किस्मकी स्वतंत्रताकी है। मेरा राष्ट्रप्रेम अुग्र तो है, पर वह वर्जनशील नहीं है; अुसमें किसी दूसरे राष्ट्र या व्यक्तिको नुकसान पहुंचानेकी भावना नहीं है। कानूनी सिद्धान्त असलमें नैतिक सिद्धान्त ही हैं। ‘अपनी सम्पत्तिका अुपयोग अिस तरह करो कि पड़ोसीकी सम्पत्तिको कोअी हानि न पहुंचे।’ — यह

कानूनी सिद्धान्त अेक सनातन सत्यको प्रकट करता है और अुसमें मेरा पूरा विश्वास है।

यंग अिंडिया, २६–३–'३१

यह सब अिस बात पर निर्भर है कि पूर्ण स्वराज्यसे हमारा आशय क्या है और अुसके द्वारा हम पाना क्या चाहते हैं। अगर हमारा आशय यह है कि जनतामें जाग्रति होनी चाहिये, अुन्हें अपने सच्चे हितका ज्ञान होना चाहिये और सारी दुनियाके विरोधका सामना करके भी अुस हितकी सिद्धिके लिअे कोशिश करनेकी योग्यता होनी चाहिये; और यदि पूर्ण स्वराज्यके द्वारा हम सुमेल, भीतरी या बाहरी आक्रमणसे रक्षा और जनताकी आर्थिक स्थितिमें अुत्तरोत्तर सुधार चाहते हों, तो हम अपना अुद्देश्य राजनीतिक सत्ताके बिना ही, सत्ता जिनके हाथमें हो अुन पर अपना सीधा प्रभाव डालकर, सिद्ध कर सकते हैं।

यंग अिंडिया, १८–६–'३१

स्वराज्यकी मेरी कल्पनाके विषयमें किसीको कोअी गलतफहमी नहीं होनी चाहिये। अुसका अर्थ विदेशी नियंत्रणसे पूरी मुक्ति और पूर्ण आर्थिक स्वतंत्रता है। अुसके दो दूसरे अुद्देश्य भी हैं; अेक छोर पर है नैतिक और सामाजिक अुद्देश्य और दूसरे छोर पर अिसी कक्षाका दूसरा अुद्देश्य है धर्म। यहां धर्म शब्दका सर्वोच्च अर्थ अभीष्ट है। अुसमें हिन्दू धर्म, अिस्लाम, अीसाअी धर्म आदि सबका समावेश होता है, लेकिन वह अिन सबसे अूंचा है। . . . अिसे हम स्वराज्यका समचतुर्भुज कह सकते हैं; यदि अुसका अेक भी कोण विषम हुआ तो अुसका रूप विकृत हो जायेगा।

हरिजन, २–१–'३७

मेरी कल्पनाका स्वराज्य तभी आयगा जब हमारे मनमें यह बात अच्छी तरह जम जाय कि हमें अपना स्वराज्य सत्य और अहिंसाके शुद्ध साधनों द्वारा ही हासिल करना है, अुन्हींके द्वारा हमें अुसका संचालन करना है और अुन्हींके द्वारा हमें अुसे कायम रखना है। सच्ची लोकसत्ता या जनताका स्वराज्य कभी भी असत्यमय और हिंसक साधनोंसे

नहीं आ सकता। कारण स्पष्ट और सीधा है: यदि असत्यमय
हिंसक अुपायोंका प्रयोग किया गया, तो अुसका स्वाभाविक परिणाम
होगा कि सारा विरोध या तो विरोधियोंको दबाकर या अुनका
करके खतम कर दिया जायगा। अैसी स्थितिमें वैयक्तिक स्वतंत्रत
रक्षा नहीं हो सकती। वैयक्तिक स्वतंत्रताको प्रगट होनेका पूरा अवव
केवल विशुद्ध अहिंसा पर आधारित शासनमें ही मिल सकता है।

हरिजन, २७–५–'३९

अहिंसा पर आधारित स्वराज्यमें लोगोंको अपने अधिकारोंका
न हो तो कोअी बात नहीं, लेकिन अुन्हें अपने कर्तव्योंका ज्ञान अ
होना चाहिये। हरअेक कर्तव्यके साथ अुसकी तौलका अधिकार
हुआ होता ही है, और सच्चे अधिकार तो वे ही हैं जो अपने कर्तव्य
योग्य पालन करके प्राप्त किये गये हों। अिसलिअे नागरिकताके अधि
सिर्फ अुन्हींको मिल सकते हैं जो जिस राज्यमें वे रहते हों अुसकी
करते हों। और सिर्फ वे ही अिन अधिकारोंके साथ पूरा न्याय
सकते हैं। हरअेक आदमीको झूठ बोलने और गुंडागिरी करनेका अधि
है, किन्तु अिस अधिकारका प्रयोग अुस आदमी और समाज, दोनोंके
हानिकारी है। लेकिन जो व्यक्ति सत्य और अहिंसाका पालन क
है अुसे प्रतिष्ठा मिलती है और अिस प्रतिष्ठाके फलस्वरूप अुसे अधि
मिल जाते हैं। और जिन लोगोंको अधिकार अपने कर्तव्योंके पाल
फलस्वरूप मिलते हैं, वे अुनका अुपयोग समाजकी सेवाके लिअे ही क
हैं, अपने लिअे कभी नहीं। किसी राष्ट्रीय समाजके 'स्वराज्यका
अुस समाजके विभिन्न व्यक्तियोंके स्वराज्य (अर्थात् आत्म-शासन)
योग ही है। और अैसा स्वराज्य व्यक्तियोंके द्वारा नागरिकोंके रू
अपने कर्तव्यके पालनसे ही आता है। अुसमें कोअी अपने अधिकार
बात नहीं सोचता। जब अुनकी आवश्यकता होती है तब वे अुन्हें अ
आप मिल जाते हैं और अिसलिअे मिलते हैं कि वे अपने कर्तव्य
सम्पादन ज्यादा अच्छी तरह कर सकें।

हरिजन, २५–३–'३९

अहिंसा पर आधारित स्वराज्यमें कोअी किसीका शत्रु नहीं होता, सारी जनताकी भलाअीका सामान्य अुद्देश्य सिद्ध करनेमें हरअेक अपना अभीष्ट योग देता है, सब लिख-पढ़ सकते हैं और अुनका ज्ञान दिन-दिन बढ़ता रहता है। बीमारी और रोग कम-से-कम हो जायं, अैसी व्यवस्था की जाती है। कोअी कंगाल नहीं होता और मजदूरी करना चाहनेवालेको काम अवश्य मिल जाता है। अैसी शासन-व्यवस्थामें जुआ, शराबखोरी और दुराचारको या वर्ग-विद्वेषको कोअी स्थान नहीं होता। अमीर लोग अपने धनका अुपयोग बुद्धिपूर्वक अुपयोगी कार्योंमें करेंगे; अपनी शान-शौकत बढ़ानेमें या शारीरिक सुखोंकी वृद्धिमें अुसका अपव्यय नहीं करेंगे। अुसमें अैसा नहीं हो सकता, होना नहीं चाहिये, कि चंद अमीर तो रत्न-जटित महलोंमें रहें और लाखों-करोड़ों अैसी मनहूस झोंपड़ियोंमें, जिनमें हवा और प्रकाशका प्रवेश न हो। अहिंसक स्वराज्यमें न्यायपूर्ण अधिकारोंका किसीके भी द्वारा कोअी अतिक्रमण नहीं हो सकता और अिसी तरह किसीको कोअी अन्यायपूर्ण अधिकार नहीं हो सकते। सुसंघटित राज्यमें किसीके न्याय्य अधिकारका किसी दूसरेके द्वारा अन्याय-पूर्वक छीना जाना असंभव होना चाहिये और कभी अैसा हो जाय तो अपहर्ताको अपदस्थ करनेके लिअे हिंसाका आश्रय लेनेकी जरूरत नहीं होना चाहिये।

हरिजन, २५–३–'३९

३

राष्ट्रवादका सच्चा स्वरूप

मेरे लिअे देशप्रेम और मानव-प्रेममें कोअी भेद नहीं है; दोनों अेक ही हैं। मैं देशप्रेमी हूं, क्योंकि मैं मानव-प्रेमी हूं। मेरा देशप्रेम वर्जनशील नहीं है। मैं भारतके हितकी सेवाके लिअे अिंग्लैंड या जर्मनीका नुकसान नहीं करूंगा। जीवनकी मेरी योजनामें साम्राज्यवादके लिअे कोअी स्थान नहीं है। देशप्रेमीकी जीवन-नीति किसी कुल या कबीलेके अधिपतिकी जीवन-नीतिसे भिन्न नहीं है। और यदि कोअी देशप्रेमी अुतना ही अुग्र मानव-प्रेमी नहीं है, तो कहना चाहिये कि अुसके देश-प्रेममें अुतनी न्यूनता है। वैयक्तिक आचरण और राजनीतिक आचरणमें कोअी विरोध नहीं है; सदाचारका नियम दोनोंको लागू होता है।

यंग अिंडिया, १६–३–'२१

जिस तरह देशप्रेमका धर्म हमें आज यह सिखाता है कि व्यक्तिको परिवारके लिअे, परिवारको ग्रामके लिअे, ग्रामको जनपदके लिअे और जनपदको प्रदेशके लिअे मरना सीखना चाहिये, अिसी तरह किसी देशको स्वतंत्र अिसलिअे होना चाहिये कि वह आवश्यकता होने पर संसारके कल्याणके लिअे अपना बलिदान दे सके। अिसलिअे राष्ट्रवादकी मेरी कल्पना यह है कि मेरा देश अिसलिअे स्वाधीन हो कि प्रयोजन अुपस्थित होने पर सारा ही देश मानव-जातिकी प्राणरक्षाके लिअे स्वेच्छापूर्वक मृत्युका आलिंगन करे। अुसमें जातिद्वेषके लिअे कोअी स्थान नहीं है। मेरी कामना है कि हमारा राष्ट्रप्रेम अैसा ही हो।

गांधीजी अिन अिंडियन विलेजेज़, पृ० १७०

मैं भारतका अुत्थान अिसलिअे चाहता हूं कि सारी दुनिया अुससे लाभ अुठा सके। मैं यह नहीं चाहता कि भारतका अुत्थान दूसरे देशोंके नाशकी नींव पर हो।

यंग अिंडिया, १२–३–'२५

यूरोपके पांवोंमें पड़ा हुआ अवनत भारत मानव-जातिको कोअी आशा नहीं दे सकता। किंतु जाग्रत और स्वतंत्र भारत दर्दसे कराहती हुअी दुनियाको शान्ति और सद्भावका सन्देश अवश्य देगा।

यंग अिंडिया, १–६–'२१

राष्ट्रवादी हुअे विना कोअी आन्तर-राष्ट्रीयतावादी नहीं हो सकता। आन्तर-राष्ट्रीयतावाद तभी सम्भव है जब राष्ट्रवाद सिद्ध हो चुके — यानी जब विभिन्न देशोंके निवासी अपना संघटन कर लें और हिल-मिलकर अेकतापूर्वक काम करनेका सामर्थ्य प्राप्त कर लें। राष्ट्रवादमें कोअी बुराअी नहीं है; बुराअी तो अुस संकुचितता, स्वार्थवृत्ति और वहिष्कार-वृत्तिमें है, जो मौजूदा राष्ट्रोंके मानसमें जहरकी तरह मिली हुअी है। हरअेक राष्ट्र दूसरेकी हानि करके अपना लाभ करना चाहता है और अुसके नाश पर अपना निर्माण करना चाहता है। भारतीय राष्ट्रवादने अेक नया रास्ता लिया है। वह अपना संघटन या अपने लिअे आत्म-प्रकाशनका पूरा अवकाश विशाल मानव-जातिके लाभके लिअे, अुसकी सेवाके लिअे ही चाहता है।

यंग अिंडिया, १८–६–'२५

भगवानने मुझे भारतमें जन्म दिया है और अिस तरह मेरा भाग्य अिस देशकी प्रजाके भाग्यके साथ बांध दिया है, अिसलिअे यदि मैं अुसकी सेवा न करूं तो मैं अपने विधाताके सामने अपराधी ठहरूंगा। यदि मैं यह नहीं जानता कि अुसकी सेवा कैसे की जाय, तो मैं मानव-जातिकी सेवा करना सीख ही नहीं सकता। और यदि अपने देशकी सेवा करते हुअे मैं दूसरे देशोंको कोअी नुकसान नहीं पहुंचाता, तो मेरे पथभ्रष्ट होनेकी कोअी सम्भावना नहीं है।

यंग अिंडिया, १८–६–'२५

मेरा देशप्रेम कोअी वहिष्कारशील वस्तु नहीं बल्कि अतिशय व्यापक वस्तु है और मैं अुस देशप्रेमको वर्ज्य मानता हूं जो दूसरे राष्ट्रोंको तकलीफ देकर या अुनका शोषण करके अपने देशको अुठाना चाहता है। देश-

प्रेमकी मेरी कल्पना यह है कि वह हमेशा, विना क़िसी अपवादके हरअेक स्थितिमें, मानव-जातिके विशालतम हितके साथ सुसंगत होना चाहिये। यदि अैसा न हो तो देशप्रेमकी कोअी कीमत नहीं। अितना ही नहीं, मेरे धर्म और अुस धर्मसे ही प्रसूत मेरे देशप्रेमके दायरेमें प्राणिमात्रका समावेश होता है। मैं न केवल मनुष्य नामसे पहिचाने जानेवाले प्राणियोंके साथ भ्रातृत्व और अेकात्मता सिद्ध करना चाहता हूं, वल्कि समस्त प्राणियोंके साथ — रेंगनेवाले सांप आदि जैसे प्राणियोंके साथ भी — अुसी अेकात्मताका अनुभव करना चाहता हूं। कारण, हम सव अुसी अेक स्रष्टाकी सन्तति होनेका दावा करते हैं और अिसलिअे सव प्राणी, अुनका रूप कुछ भी हो, मूलमें अेक ही हैं।

यंग अिंडिया, ४–४–'२९

हमारा राष्ट्रवाद दूसरे देशोंके लिअे कभी संकटका कारण नहीं हो सकता। क्योंकि जिस तरह हम किसीको अपना शोषण नहीं करने देंगे, अुसी तरह हम भी किसीका शोषण नहीं करेंगे। स्वराज्यके द्वारा हम सारी मानव-जातिकी सेवा करेंगे।

यंग अिंडिया, १६–४–'३१

सार्वजनिक जीवनके लगभग ५० वर्षके अनुभवके बाद आज मैं यह कह सकता हूं कि अपने देशकी सेवा दुनियाकी सेवासे असंगत नहीं है — अिस सिद्धान्तमें मेरा विश्वास वढ़ा ही है। यह अेक अुत्तम सिद्धान्त है। अिस सिद्धान्तको स्वीकार करके ही दुनियाकी मौजूदा कठिनाअियां आसान की जा सकती हैं और विभिन्न राष्ट्रोंमें जो पारस्परिक द्वेषभाव नजर आता है अुसे रोका जा सकता है।

हरिजन, १७–११–'३३

४

भारतीय लोकतंत्र

सर्वोच्च कोटिकी स्वतंत्रताके साथ सर्वोच्च कोटिका अनुशासन और विनय होता है। अनुशासन और विनयसे मिलनेवाली स्वतंत्रताको कोअी छीन नहीं सकता। संयमहीन स्वच्छंदता संस्कारहीनताकी द्योतक है; अुससे व्यक्तिकी अपनी और पड़ोसियोंकी भी हानि होती है।

यंग अिंडिया, ३–६–'२६

कोअी भी मनुष्यकी बनाअी हुअी संस्था अैसी नहीं है जिसमें खतरा न हो। संस्था जितनी बड़ी होगी, अुसके दुरुपयोगकी संभावनायें भी अुतनी ही बड़ी होंगी। लोकतंत्र अेक बड़ी संस्था है, अिसलिअे अुसका दुरुपयोग भी बहुत हो सकता है। लेकिन अुसका अिलाज लोकतंत्रसे बचना नहीं, बल्कि दुरुपयोगकी संभावनाको कम-से-कम बनाना है।

यंग अिंडिया, ७–५–'३१

जनताकी रायके अनुसार चलनेवाला राज्य जनमतसे आगे बढ़कर कोअी काम नहीं कर सकता। यदि वह जनमतके खिलाफ जाय तो नष्ट हो जाय। अनुशासन और विवेकयुक्त जनतंत्र दुनियाकी सबसे सुन्दर वस्तु है। लेकिन राग-द्वेष, अज्ञान और अन्ध-विश्वास आदि दुर्गुणोंसे ग्रस्त जनतंत्र अराजकताके गड्ढेमें गिरता है और अपना नाश खुद कर डालता है।

यंग अिंडिया, ३०–७–'३१

मैंने अकसर यह कहा है कि अमुक विचार रखनेवाला कोअी भी पक्ष यह दावा नहीं कर सकता कि प्रस्तुत प्रश्नोंके सही निर्णय केवल वही कर सकता है। हम सबसे भूलें होती हैं और हमें अकसर अपने निर्णयोंमें परिवर्तन करने पड़ते हैं। हमारे जैसे विशाल देशमें अीमानदारीसे विचार करनेवाले सभी पक्षोंको स्थान होना चाहिये। अिसलिअे हमारा

अपने प्रति और दूसरोंके प्रति कम-से-कम यह कर्तव्य तो है ही कि हम प्रतिपक्षीका दृष्टिकोण समझनेकी कोशिश करें। और यदि हम अुसे स्वीकार न कर सकें तो भी जिस तरह हम यह चाहेंगे कि वह हमारे मतका आदर करे, अुसी तरह हम भी अुसके मतका आदर करें। यह चीज स्वस्थ सार्वजनिक जीवनकी और स्वराज्यकी योग्यताकी अनिवार्य कसौटियोंमें से अेक है। यदि हममें अुदारता और सहिष्णुता नहीं है तो हम अपने भेद कभी मित्रतापूर्वक नहीं सुलझा सकेंगे और फल यह होगा कि हमें तीसरे पक्षको अपना पंच मानना पड़ेगा, यानी विदेशी अधीनता स्वीकार करनी पड़ेगी।

यंग अिंडिया, १७–४–'२४

जब राजसत्ता जनताके हाथमें आ जाती है तब प्रजाकी आजादीमें होनेवाले हस्तक्षेपकी मात्रा कम-से-कम हो जाती है। दूसरे शब्दोंमें, जो राष्ट्र अपना काम राज्यके हस्तक्षेपके बिना ही शान्तिपूर्वक और प्रभावपूर्ण ढंगसे कर दिखाता है, अुसे ही सच्चे अर्थोंमें लोकतंत्रात्मक कहा जा सकता है। जहां अैसी स्थिति न हो वहां सरकारका बाहरी रूप लोकतंत्रात्मक भले हो, परन्तु वह नामके लिअे ही लोकतंत्रात्मक है।

हरिजन, ११–१–'३६

लोकतंत्र और हिंसाका मेल नहीं बैठ सकता। जो राज्य आज नाममात्रके लिअे लोकतंत्रात्मक हैं अुन्हें या तो स्पष्ट रूपसे तानाशाहीका हामी हो जाना चाहिये, या अगर अुन्हें सचमुच लोकतंत्रात्मक बनना है तो अुन्हें साहसके साथ अहिंसक बन जाना चाहिये। यह कहना बिलकुल अविचारपूर्ण है कि अहिंसाका पालन केवल व्यक्ति ही कर सकते हैं, और राष्ट्र — जो व्यक्तियोंसे ही बनते हैं — हरगिज नहीं।

हरिजनसेवक, १२–११–'३८

प्रजातंत्रका सार ही यह है कि अुसमें हरअेक व्यक्ति विविध स्वार्थोंका प्रतिनिधित्व करता है, जिनसे राष्ट्र बनता है। यह सच है कि अिसका यह मतलब नहीं कि विशेष स्वार्थोंके विशेष प्रतिनिधियोंको

प्रतिनिधित्व करनेसे रोक दिया जाये, लेकिन असा प्रतिनिधित्व अुसकी कसौटी नहीं है। यह अुसकी अपूर्णताकी अेक निशानी है।

हरिजनसेवक, २२–४–'३९

सच्ची लोकसत्ता या जनताका स्वराज्य कभी भी असत्यमय या हिंसक साधनोंसे नहीं आ सकता। कारण स्पष्ट और सीधा है। यदि असत्यमय और हिंसक अुपायोंका प्रयोग किया गया, तो अुसका स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि सारा विरोध या तो विरोधियोंको दबाकर या अुनका नाश करके खतम कर दिया जायगा। असी स्थितिमें वैयक्तिक स्वतंत्रताकी रक्षा नहीं हो सकती। वैयक्तिक स्वतंत्रताको प्रगट होनेका पूरा अवकाश केवल विशुद्ध अहिंसा पर आधारित शासनमें ही मिल सकता है।

हरिजन, २७–५–'३९

आजाद प्रजातांत्रिक भारत आक्रमणके खिलाफ पारस्परिक रक्षण और आर्थिक सहकारके लिअे दूसरे आजाद देशोंके साथ खुशीसे सहयोग करेगा। वह आजादी और जनतंत्र पर आधारित असी विश्व-व्यवस्थाकी स्थापनाके लिअे काम करेगा, जो मानव-जातिकी प्रगति और विकासके लिअे दुनियाके समूचे ज्ञान और अुसकी समूची साधन-सम्पत्तिका अुपयोग करेगी।

हरिजन, २३–९–'३९

प्रजातंत्रका अर्थ मैं यह समझा हूं कि अिस तंत्रमें नीचेसे नीचे और अूंचेसे अूंचे आदमीको आगे बढ़नेका समान अवसर मिलना चाहिये। लेकिन सिवा अहिंसाके असा कभी हो ही नहीं सकता। संसारमें आज कोअी भी देश असा नहीं है जहां कमजोरोंके हककी रक्षा बतौर फर्जके होती हो। अगर गरीबोंके लिअे कुछ किया भी जाता है, तो वह मेहरबानीके तौर पर किया जाता है।

पश्चिमका आजका प्रजातंत्र जरा हलके रंगका नाजी और फासिस्ट तंत्र ही है। ज्यादासे ज्यादा प्रजातंत्र साम्राज्यवादकी नाजी और फासिस्ट चालको ढंकनेके लिअे अेक आडम्बर है। . . . हिन्दुस्तान सच्चा

प्रजातंत्र घड़नेका प्रयत्न कर रहा है, अर्थात् अैसा प्रजातंत्र जिसमें हिंसाके लिअे कोअी स्थान न होगा। हमारा हथियार सत्याग्रह है। अुसका व्यक्त स्वरूप है चरखा, ग्रामोद्योग, अुद्योगके जरिये प्राथमिक शिक्षा-प्रणाली, अस्पृश्यता-निवारण, मद्य-निषेध, अहिंसक तरीकेसे मजदूरोंका संगठन, जैसा कि अहमदाबादमें हो रहा है, और साम्प्रदायिक अैक्य। अिस कार्यक्रमके लिअे जनताको सामुदायिक रूपमें प्रयत्न करना पड़ता है, और सामुदायिक रूपसे जनताको शिक्षण भी मिल जाता है। अिन प्रवृत्तियोंको चलानेके लिअे हमारे पास बड़े-बड़े संघ हैं, पर कार्यकर्ता पूरी तरह स्वेच्छासे अिन कामोंमें आये हैं। अुनके पीछे अगर कोअी शक्ति है, तो वह अुनकी अत्यन्त दीन-दुर्बलोंकी सेवा-भावना ही है।

हरिजनसेवक, १८–५–'४०

जन्मजात लोकतंत्रवादी वह होता है, जो जन्मसे ही अनुशासनका पालन करनेवाला हो। लोकतंत्र स्वाभाविक रूपमें अुसीको प्राप्त होता है, जो साधारण रूपमें अपनेको मानवी तथा दैवी सभी नियमोंका स्वेच्छा-पूर्वक पालन करनेका अभ्यस्त बना ले। . . . जो लोग लोकतंत्रके अिच्छुक हैं अुन्हें चाहिये कि पहले वे लोकतंत्रकी अिस कसौटी पर अपनेको परख लें। अिसके अलावा, लोकतंत्रवादीको निःस्वार्थ भी होना चाहिये। अुसे अपनी या अपने दलकी दृष्टिसे नहीं बल्कि अेकमात्र लोकतंत्रकी हीं दृष्टिसे सब-कुछ सोचना चाहिये। तभी वह सविनय अवज्ञाका अधिकारी हो सकता है। . . . व्यक्तिगत स्वतंत्रताकी मैं कदर करता हूं, लेकिन आपको यह हरगिज नहीं भूलना चाहिये कि मनुष्य मूलतः अेक सामाजिक प्राणी ही है। सामाजिक प्रगतिकी आवश्यकताओंके अनुसार अपने व्यक्तित्वको ढालना सीखकर ही वह वर्तमान स्थिति तक पहुंचा है। अबाध व्यक्तिवाद वन्य पशुओंका नियम है। हमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक संयमके बीच समन्वय करना सीखना है। समस्त समाजके हितके खातिर [illegible] संयमके आगे स्वेच्छापूर्वक सिर झुकानेसे व्यक्ति और समाज, [illegible] अेक सदस्य है, दोनोंका ही कल्याण होता है।

[illegible] ५–'३९

जो व्यक्ति अपने कर्तव्यका अुचित पालन करता है, अुसे अधिकार अपने-आप मिल जाते हैं। सच तो यह है कि अेकमात्र अपने कर्तव्यके पालनका अधिकार ही अैसा अधिकार है, जिसके लिअे ही मनुष्यको जीना चाहिये और मरना चाहिये। अुसमें सब अुचित अधिकारोंका समावेश हो जाता है। बाकी सब तो अनधिकार अपहरण जैसा है और अुसमें हिंसाके बीज छिपे रहते हैं।

हरिजन, २७–५–'३९

लोकशाहीमें हर आदमीको समाजकी अिच्छा यानी राज्यकी अिच्छाके मुताबिक चलना होता है और अुसीके मुताबिक अपनी अिच्छाओंकी हद बांधनी होती है। स्टेट लोकशाहीके द्वारा और लोकशाहीके लिअे राज्य चलाती है। अगर हर आदमी कानून अपने हाथमें ले ले तो स्टेट नहीं रह जायेगी; वह अराजकता हो जायगी, यानी सामाजिक नियम या स्टेटकी हस्ती मिट जायगी। यह आजादीको मिटा देनेवाला रास्ता है। अिसलिअे आपको अपने गुस्से पर काबू पाना चाहिये और राज्यको न्याय पानेका मौका देना चाहिये।

दिल्ली-डायरी, पृ० १९

प्रजातंत्रमें लोगोंको चाहिये कि वे सरकारकी कोअी गलती देखें, तो अुसकी तरफ अुसका ध्यान खींचें और सन्तुष्ट हो जायं। अगर वे चाहें तो अपनी सरकारको हटा सकते हैं, मगर अुसके खिलाफ आन्दोलन करके अुसके कामोंमें बाधा न डालें। हमारी सरकार जबरदस्त जलसेना और थलसेना रखनेवाली कोअी विदेशी सरकार तो है नहीं। अुसका बल तो जनता ही है।

दिल्ली-डायरी, पृ० ९०

सच्ची लोकशाही केन्द्रमें बैठे हुअे बीस आदमी नहीं चला सकते। वह तो नीचेसे हरअेक गांवके लोगों द्वारा चलायी जानी चाहिये।

हरिजन, १८–१–'४८

भीड़का राज्य

मैं खुद तो सरकारकी नाराजीकी अुतनी परवाह नहीं करता जितनी भीड़की नाराजीकी। भीड़की मनमानी राष्ट्रीय बीमारीका लक्षण है और अिसलिअे सरकारकी नाराजीकी — जो कि अल्पकाय संघ तक ही सीमित होती है — तुलनामें अुससे निपटना ज्यादा मुश्किल है। अैसी किसी सरकारको जिसने अपनेको शासनके लिअे अयोग्य सिद्ध कर दिया हो अपदस्थ करना आसान है, लेकिन किसी भीड़में शामिल अनजाने आदमियोंका पागलपन दूर करना ज्यादा कठिन है।

यंग अिंडिया, २८–७–'२०

भीड़को अनुशासन सिखानेसे ज्यादा आसान और कुछ नहीं है। कारण सीधा है। भीड़ कोअी काम बुद्धिपूर्वक नहीं करती, अुसकी कोअी पहलेसे सोची हुअी योजना नहीं होती। भीड़के लोग जो कुछ करते हैं सो आवेशमें करते हैं। अपनी गलतीके लिअे पश्चात्ताप भी वे जल्दी करते हैं। मैं असहयोगका अुपयोग लोकशाहीका विकास करनेके लिअे कर रहा हूं।

यंग अिंडिया, ८–९–'२०

हमें अिन हजारों-लाखों लोगोंको, जिनका हृदय सोनेका है, जिन्हें देशसे प्रेम है, जो सीखना चाहते हैं और यह अिच्छा रखते हैं कि कोअी अुनका नेतृत्व करे, सही तालीम देनी चाहिये। केवल थोड़ेसे बुद्धिमान और निष्ठावान कार्यकर्ताओंकी जरूरत है। वे मिल जायं तो सारे राष्ट्रको बुद्धिपूर्वक काम करनेके लिअे संघटित किया जा सकता है तथा भीड़की अराजकताकी जगह सही प्रजातंत्रका विकास किया जा सकता है।

यंग अिंडिया, २२–९–'२०

सरकारकी ओरसे या प्रजाकी ओरसे आतंकवाद चलाया जा रहा हो, तब लोकशाहीकी भावनाकी स्थापना करना असंभव है। और कुछ अंशोंमें सरकारी आतंकवादकी तुलनामें प्रजाकीय आतंकवाद लोकशाहीकी भावनाके प्रसारका ज्यादा बड़ा शत्रु है। कारण, सरकारी आतंकवादसे

लोकशाहीकी भावनाको बल मिलता है, जब कि प्रजाकीय आतंकवाद तो अुसका हनन करता है।

यंग अिंडिया, २३–२–'२१

बहुसंख्यक दल और अल्पसंख्यक दल

अगर हम लोकशाहीकी सच्ची भावनाका विकास करना चाहते हैं, तो हम असहिष्णु नहीं हो सकते। असहिष्णुता बताती है कि अपने ध्येयकी सचाअीमें हमारा पूरा विश्वास नहीं है।

यंग अिंडिया, २–२–'२१

हम अपने लिअे स्वतंत्रतापूर्वक अपना मत प्रकट करने और कार्य करनेके अधिकारका दावा करते हैं, तो यही अधिकार हमें दूसरोंको भी देना चाहिये। बहुसंख्यक दलका शासन, जब वह लोगोंके साथ जबरदस्ती करने लगता है तब, अुतना ही असह्य हो अुठता है, जितना किसी अल्पसंख्यक नौकरशाहीका। हमें अल्पसंख्यकोंको अपने पक्षमें धीरजके साथ, समझा-बुझाकर और दलील करके ही लानेकी कोशिश करनी चाहिये।

यंग अिंडिया, २६–१–'२२

बहुसंख्यक दलका शासन अमुक हद तक जरूर माना जाना चाहिये। यानी, ब्योरेकी बातोंमें हमें बहुसंख्यक दलका निर्णय स्वीकार कर लेना चाहिये। लेकिन अुसके निर्णय कुछ भी क्यों न हों, अुन्हें हमेशा स्वीकार कर लेना गुलामीका चिह्न है। लोकशाही किसी अैसी स्थितिका नाम नहीं है जिसमें लोग भेड़ोंकी तरह व्यवहार करें। लोकशाहीमें व्यक्तिके मत-स्वातंत्र्य और कार्य-स्वातंत्र्यकी रक्षा अत्यंत सावधानीसे की जाती है, और की जानी चाहिये। अिसलिअे मैं यह विश्वास करता हूं कि अल्पसंख्यकोंको बहुसंख्यकोंसे अलग ढंगसे चलनेका पूरा अधिकार है।

यंग अिंडिया, २–३–'३२

अगर व्यक्तिका महत्त्व न रहे, तो समाजमें भी क्या सत्त्व रह जायगा? वैयक्तिक स्वतंत्रता ही मनुष्यको समाजकी सेवाके लिअे स्वेच्छा-

पूर्वक अपना पूरा अर्पण करनेकी प्रेरणा दे सकती है। यदि अुससे यह स्वतंत्रता छीन ली जाय, तो वह अेक जड़ यंत्र जैसा हो जाता है और समाजकी बरबादी होती है। वैयक्तिक स्वतंत्रताको अस्वीकार करके कोअी सभ्य समाज नहीं बनाया जा सकता।

हरिजन, १–२–'४२

५

भारत और समाजवाद

पूंजीपतियों द्वारा पूंजीके दुरुपयोगकी बात लोगोंके ध्यानमें आयी, तब समाजवादका जन्म हुआ यह खयाल गलत है। जैसा कि मैंने पहले भी प्रतिपादित किया है समाजवाद, और अुसी तरह साम्यवाद भी, अीशोपनिषद्के पहले श्लोकमें स्पष्ट रूपसे मिल जाता है। हां, यह बात सही है कि जब कुछ सुधारकोंने हृदय-परिवर्तनकी क्रिया द्वारा आदर्श सिद्ध करनेकी प्रणालीमें विश्वास खो दिया, तब जिसे वैज्ञानिक समाजवाद कहा जाता है अुसकी पद्धति ढूंढ़ी गयी। मैं अुसी समस्याको हल करनेमें लगा हुआ हूं, जो वैज्ञानिक समाजवादियोंके सामने है। अलबत्ता, कामका मेरा ढंग शुद्ध अहिंसाके अनुसार प्रयत्न करनेका है। यह हो सकता है कि मैं अिस सिद्धान्तका, जिसमें मेरा विश्वास प्रतिदिन बढ़ रहा है, अच्छा व्याख्याता न होअूं। अखिल भारत चरखा-संघ और अखिल भारत ग्रामोद्योग-संघ अैसी संस्थायें हैं, जिनके द्वारा अहिंसाकी कार्य-पद्धतिका अखिल भारतीय पैमाने पर प्रयोग किया जा रहा है। वे कांग्रेसके द्वारा बनायी गयी अैसी स्वतंत्र संस्थायें हैं, जिनका अुद्देश्य कांग्रेस जैसी लोकतांत्रिक संस्थाकी नीतिमें हमेशा जिन परिवर्तनोंके होनेकी संभावना है अुन परिवर्तनोंसे बंधे बिना मुझे अपने प्रयोग अपनी अिच्छाके अनुसार करते रहनेका मौका देना है।

हरिजन, २०–२–'३७

सच्चा समाजवाद तो हमें अपने पूर्वजोंसे प्राप्त हुआ है, जो हमें यह सिखा गये हैं कि 'सब भूमि गोपालकी है; अिसमें कहीं मेरी और तेरीकी सीमायें नहीं हैं। ये सीमायें तो आदमियोंने बनायी हैं और अिसलिअे वे अिन्हें तोड़ भी सकते हैं।' गोपाल यानी कृष्ण यानी भगवान। आधुनिक भाषामें गोपाल यानी राज्य यानी जनता। आज जमीन जनताकी नहीं है, यह बात सही है। पर अिसमें दोष अुस शिक्षाका नहीं है। दोष तो हमारा है जिन्होंने अुस शिक्षाके अनुसार आचरण नहीं किया। मुझे अिसमें कोअी सन्देह नहीं कि अिस आदर्शको जिस हद तक रूस या और कोअी देश पहुंच सकता है अुसी हद तक हम भी पहुंच सकते हैं, और वह भी हिंसाका आश्रय लिये बिना। पूंजीवालोंसे अुनकी पूंजी हिंसापूर्वक छीनी जाय, अिसके बजाय यदि चरखा और अुसके सारे फलितार्थ स्वीकार कर लिये जायं तो वही काम हो सकता है। चरखा हिंसक अपहरणकी जगह ले सकनेवाला अत्यंत प्रभावकारी साधन है। जमीन और दूसरी सारी संपत्ति अुसकी है, जो अुसके लिअे काम करे। दुःख अिस बातका है कि किसान और मजदूर या तो अिस सरल सत्यको जानते नहीं हैं या यों कहो कि अुन्हें अिसे जानने नहीं दिया गया है।

हरिजन, २–१–'३७

मैं सदासे यह मानता आया हूं कि नीचेसे नीचे और कमजोरसे कमजोरके प्रति हम जोर-जबरदस्तीसे सामाजिक न्यायका पालन नहीं कर सकते। मैं यह भी मानता आया हूं कि पतितसे पतित लोगोंको भी मुनासिब तालीम दी जाये, तो अहिंसक साधनों द्वारा सब प्रकारके अत्याचारोंका प्रतिकार किया जा सकता है। अहिंसक असहयोग ही अुसका मुख्य साधन है। कभी-कभी असहयोग भी अुतना ही कर्तव्य-रूप हो जाता है जितना कि सहयोग। अपनी विफलता या गुलामीमें खुद सहायक होनेके लिअे कोअी बंधा हुआ नहीं है। जो स्वतंत्रता दूसरोंके प्रयत्नों द्वारा — फिर वे कितने ही अुदार क्यों न हों — मिलती है, वह अुन प्रयत्नोंके न रहने पर कायम नहीं रखी जा सकती। दूसरे शब्दोंमें, अैसी स्वतंत्रता सच्ची स्वतंत्रता नहीं है। लेकिन जब पतितसे

पतित भी अहिंसक असहयोग द्वारा अपनी स्वतंत्रता प्राप्त करनेकी कला सीख लेते हैं, तो वे अुसके प्रकाशका अनुभव किये बिना नहीं रह सकते।

मेरा यह पक्का विश्वास है कि जिस चीजको हिंसा कभी नहीं कर सकती, वही अहिंसात्मक असहयोग द्वारा सिद्ध की जा सकती है। और अुससे अन्तमें जाकर अत्याचारियोंका हृदय-परिवर्तन भी हो सकता है। हमने हिन्दुस्तानमें अहिंसाको अुसके अनुरूप मौका अभी तक दिया ही नहीं। फिर भी आश्चर्य है कि अपनी अिस मिलावटी अहिंसा द्वारा भी हम अितनी शक्ति प्राप्त कर सके हैं।

हरिजनसेवक, २०–४–'४०

प्रतिष्ठित जीवनके लिअे जितनी जमीनकी आवश्यकता है, अुससे अधिक किसी आदमीके पास नहीं होनी चाहिये। अैसा कौन है जो अिस हकीकतसे अिनकार कर सके कि आम जनताकी घोर गरीबीका कारण आज यही है कि अुसके पास अुसकी अपनी कही जानेवाली कोअी जमीन नहीं है?

लेकिन यह याद रखना चाहिये कि अिस तरहके सुधार तुरन्त नहीं किये जा सकते। अगर ये सुधार अहिंसात्मक तरीकोंसे करने हैं, तो जमींदारों और गैर-जमींदारों दोनोंको सुशिक्षित बनाना लाजिमी हो जाता है। जमींदारोंको यह विश्वास दिलाना होगा कि अुनके साथ कभी जोर-जबरदस्ती नहीं की जायगी, और गैर-जमींदारोंको यह सिखाना और समझाना होगा कि अुनसे अुनकी मरजीके खिलाफ जबरन कोअी काम नहीं ले सकता, और यह कि कष्ट-सहन या अहिंसाकी कलाको सीखकर वे अपनी स्वतंत्रता प्राप्त कर सकते हैं। अगर अिस लक्ष्यको हमें प्राप्त करना है, तो अूपर मैंने जिस शिक्षाका जिक्र किया है अुसका आरम्भ अभीसे हो जाना चाहिये। अिसके लिअे पहली जरूरत अैसा वातावरण तैयार करनेकी है, जिसमें पारस्परिक आदर और सद्भावका सुमेल हो। अुस अवस्थामें वर्गों और आम जनताके बीच किसी प्रकारका हिंसात्मक संघर्ष हो ही नहीं सकता।

हरिजनसेवक, २०–४–'४०

समाजवादी कौन है?

समाजवाद अेक सुन्दर शब्द है। जहां तक मैं जानता हूं, समाजवादमें समाजके सारे सदस्य बराबर होते हैं, न कोअी नीचा और न कोअी अूंचा। किसी आदमीके शरीरमें सिर अिसलिअे अूंचा नहीं है कि वह सबसे अूपर है और पांवके तलुवे अिसलिअे नीचे नहीं हैं कि वे जमीनको छूते हैं। जिस तरह मनुष्यके शरीरके सारे अंग बराबर हैं, अुसी तरह समाजरूपी शरीरके सारे अंग भी बराबर हैं। यही समाजवाद है।

अिस वादमें राजा और प्रजा, धनी और गरीब, मालिक और मजदूर सब बराबर हैं। अिस तरह समाजवाद यानी अद्वैतवाद। अुसमें द्वैत या भेदभावकी गुंजाअिश ही नहीं है।

सारी दुनियाके समाज पर नजर डालें तो हम देखेंगे कि हर जगह द्वैत ही द्वैत है। अेकता या अद्वैत कहीं नामको भी नहीं दिखाअी ही देता। वह आदमी अूंचा है, वह आदमी नीचा है। वह हिन्दू है, वह मुसलमान है, तीसरा अीसाअी है, चौथा पारसी है, पांचवां सिक्ख है, छठा यहूदी है। अिनमें भी बहुतसी अुप-जातियां हैं। मेरे अद्वैतवादमें ये सब अेक हो जाते हैं; अेकतामें समा जाते हैं।

अिस वाद तक पहुंचनेके लिअे हम अेक-दूसरेकी तरफ ताकते न बैठें। जब तक सारे लोग समाजवादी न बन जायं तब तक हम कोअी हलचल न करें, अपने जीवनमें कोअी फेरफार न करके हम भाषण देते रहें, पार्टियां बनाते रहें और बाज पक्षीकी तरह जहां शिकार मिल जाय वहां अुस पर टूट पड़ें — यह समाजवाद हरगिज नहीं है। समाजवाद जैसी शानदार चीज झड़प मारनेसे हमसे दूर ही जानेवाली है।

समाजवादकी शुरुआत पहले समाजवादीसे होती है। अगर अेक भी अैसा समाजवादी हो तो अुस पर सिफर बढ़ाये जा सकते हैं। पहले सिफरसे अुसकी कीमत दस गुनी बढ़ती जायगी। लेकिन अगर पहला सिफर ही हो, दूसरे शब्दोंमें अगर कोअी आरंभ ही न करे, तो अुसके आगे कितने ही सिफर क्यों न बढ़ाये जायं अुनकी कीमत सिफर ही रहेगी। सिफरोंको लिखनेमें मेहनत और कागजकी बरबादी ही होगी।

यह समाजवाद बड़ी शुद्ध चीज है। अिसलिअे अिसे पानेके साधन भी शुद्ध ही होने चाहिये। गन्दे साधनोंसे मिलनेवाली चीज भी गन्दी ही होगी। अिसलिअे राजाको मारकर राजा और प्रजा अेकसे नहीं बन सकेंगे। मालिकका सिर काटकर मजदूर मालिक नहीं हो सकेंगे। यही बात सब पर लागू की जा सकती है।

कोअी असत्यसे सत्यको नहीं पा सकता। सत्यको पानेके लिअे हमेशा सत्यका आचरण करना ही होगा। अहिंसा और सत्यकी तो जोड़ी है न? हरगिज नहीं। सत्यमें अहिंसा छिपी हुअी है और अहिंसामें सत्य। अिसीलिअे मैंने कहा है कि सत्य और अहिंसा अेक ही सिक्केके दो रूप हैं। दोनोंकी कीमत अेक ही है। केवल पढ़नेमें ही फर्क है; अेक तरफ अहिंसा है, दूसरी तरफ सत्य। सम्पूर्ण पवित्रताके बिना अहिंसा और सत्य निभ ही नहीं सकते। शरीर या मनकी अपवित्रताको छिपानेसे असत्य और हिंसा ही पैदा होगी।

अिसलिअे केवल सत्यवादी, अहिंसक और पवित्र समाजवादी ही दुनियामें या हिन्दुस्तानमें समाजवाद फैला सकता है। जहां तक मैं जानता हूं, दुनियामें अैसा कोअी भी देश नहीं है जो पूरी तरह समाजवादी हो। मेरे बताये हुअे साधनोंके बिना अैसा समाज कायम करना असंभव है।

हरिजनसेवक, १३–७–'४७

६

भारत और साम्यवाद

मुझे स्वीकार करना चाहिये कि बोलशेविज्म शब्दका अर्थ मैं अभी तक पूरा-पूरा नहीं समझा हूं। मैं अितना ही जानता हूं कि अुसका अुद्देश्य निजी सम्पत्तिकी संस्थाको मिटाना है। यह तो अपरिग्रहके नैतिक आदर्शको अर्थके क्षेत्रमें प्रयुक्त करना हुआ; और यदि लोग अिस आदर्शको स्वेच्छासे स्वीकार कर लें या अुन्हें शान्तिपूर्वक समझाया जाय और अुसके फलस्वरूप वे अुसे स्वीकार कर लें, तो अिससे अच्छा कुछ हो ही नहीं सकता। लेकिन बोलशेविज्मके बारेमें मुझे जो कुछ जाननेको मिला है अुससे अैसा प्रतीत होता है कि वह न केवल हिंसाके प्रयोगका बहिष्कार नहीं करता, बल्कि निजी सम्पत्तिके अपहरणके लिअे और अुसे राज्यके स्वामित्वके अधीन बनाये रखनेके लिअे हिंसाके प्रयोगकी खुली छूट देता है। और यदि अैसा है तो मुझे यह कहनेमें कोअी संकोच नहीं कि बोलशेविक शासन अपने मौजूदा रूपमें ज्यादा दिन तक नहीं टिक सकता। कारण, मेरा दृढ़ विश्वास है कि हिंसाकी नींव पर किसी भी स्थायी रचनाका निर्माण नहीं हो सकता। लेकिन, वह जो भी हो, अिसमें कोअी सन्देह नहीं कि बोलशेविक आदर्शके पीछे असंख्य पुरुषों और स्त्रियोंके — जिन्होंने अुसकी सिद्धिके लिअे अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया है — शुद्धतम त्यागका बल है; और अेक अैसा आदर्श, जिसके पीछे लेनिन जैसे महापुरुषोंके त्यागका बल है, कभी व्यर्थ नहीं जा सकता। अुनके त्यागका अुज्ज्वल अुदाहरण चिरकाल तक जीवित रहेगा और समय ज्यों-ज्यों बीतेगा त्यों-त्यों वह अिस आदर्शको अधिकाधिक शुद्धि और वेग प्रदान करता रहेगा।

यंग अिंडिया, १५–११–'२८

समाजवाद और साम्यवाद आदि पश्चिमके सिद्धान्त जिन विचारों पर आधारित हैं, वे हमारे तत्सम्बन्धी विचारोंसे बुनियादी तौर पर भिन्न हैं। अैसा अेक विचार अुनका यह विश्वास है कि मनुष्य-स्वभावमें

ूलगामी स्वार्थ-भावना है। मैं अिस विचारको स्वीकार नहीं करता; ्योंकि मैं जानता हूं कि मनुष्य और पशुमें यह वुनियादी फर्क है के मनुष्य अपनी अन्तर्हित आत्माकी पुकारका अुत्तर दे सकता है, अुन वेकारोंके अूपर अुठ सकता है जो अुसमें और पशुओंमें सामान्य रूपसे ाये जाते हैं और अिसलिअे वह स्वार्थ-भावना और हिंसाके भी अूपर अुठ ़कता है। क्योंकि स्वार्थ-भावना और हिंसा पशु-स्वभावके अंग हैं, मनुष्यमें ान्तर्हित अुसकी अमर आत्माके नहीं। यह हिन्दू धर्मका अेक वुनियादी वेचार है और अिस सत्यकी शोधके पीछे कितने ही तपस्वियोंकी अनेक र्षोंकी तपस्या और साधना है। यही कारण है कि हमारे यहां अैसे न्त और महात्मा तो हुअे हैं, जिन्होंने आत्माके गूढ़ रहस्योंकी शोधमें पना शरीर घिसा है और अपने प्राण दिये हैं; परन्तु पश्चिमकी तरह मारे यहां अैसे लोग नहीं हुअे, जिन्होंने पृथ्वीके सुदूरतम कोनों या अूंची ोटियोंकी खोजमें अपने प्राणोंका वलिदान किया हो। अिसलिअे हमारे माजवाद या साम्यवादकी रचना अहिंसाके आधार पर और मजदूरों था पूंजीपतियों या जमींदारों तथा किसानोंके मीठे सहयोगके आधार र होनी चाहिये।

अमृतवाजार पत्रिका, २–८–'३४

साम्यवादके अर्थकी छानवीन की जाय तो अन्तमें हम अिसी निश्चय र पहुंचते हैं कि अुसका मतलव है—वर्गहीन समाज। यह वेशक ुत्तम आदर्श है और अुसके लिअे अवश्य कोशिश होनी चाहिये। लेकिन व अिस आदर्शको हासिल करनेके लिअे वह हिंसाका प्रयोग करनेकी ात करने लगता है, तव मेरा रास्ता अुससे अलग हो जाता है। हम व जन्मसे समान ही हैं, लेकिन हम हमेशासे भगवानकी अिस अिच्छाकी वज्ञा करते आये हैं। असमानताकी या अूंच-नीचकी भावना अेक वुराअी , किन्तु मैं अिस वुराअीको मनुष्यके मनसे, अुसे तलवार दिखाकर, काल भगानेमें विश्वास नहीं करता। मनुष्यके मनकी शुद्धिके लिअे ह कोअी कारगर साधन नहीं है।

हरिजन, १३–३–'३७

रूसका समाजवाद, यानी जनता पर जबरदस्ती लादा जानेवाला साम्यवाद, भारतको रुचेगा नहीं; भारतकी प्रकृतिके साथ अुसका मेल नहीं बैठ सकता। हां, यदि साम्यवाद बिना किसी हिंसाके आये तो हम अुसका स्वागत करेंगे। क्योंकि तब कोअी मनुष्य किसी भी तरहकी सम्पत्ति जनताके प्रतिनिधिकी तरह और जनताके हितके लिअे ही रखेगा; अन्यथा नहीं। करोड़पतिके पास अुसके करोड़ रहेंगे तो सही, लेकिन वह अुन्हें अपने पास धरोहरके रूपमें जनताके हितके लिअे ही रखेगा और सर्व-सामान्य प्रयोजनके लिअे आवश्यकता होने पर अिस सम्पत्तिको राज्य अपने अधिकारमें ले सकेगा।

हरिजन, १३–३–'३७

साम्यवादियों और समाजवादियोंका कहना है कि आज वे आर्थिक समानताको जन्म देनेके लिअे कुछ नहीं कर सकते। वे अुसके लिअे प्रचार भर कर सकते हैं। अिसके लिअे लोगोंमें द्वेष या वैर पैदा करने और अुसे बढ़ानेमें अुनका विश्वास है। अुनका कहना है कि राज्यसत्ता पाने पर वे लोगोंसे समानताके सिद्धान्त पर अमल करवायेंगे। मेरी योजनाके अनुसार राज्य प्रजाकी अिच्छाको पूरी करेगा, न कि लोगोंको हुक्म देगा या अपनी आज्ञा जबरन अुन पर लादेगा। मैं घृणासे नहीं परन्तु प्रेमकी शक्तिसे लोगोंको अपनी बात समझाअूंगा और अहिंसाके द्वारा आर्थिक समानता पैदा करूंगा। मैं सारे समाजको अपने मतका बनाने तक रुकूंगा नहीं, बल्कि अपने पर ही यह प्रयोग शुरू कर दूंगा। अिसमें जरा भी शक नहीं कि अगर मैं ५० मोटरोंका तो क्या, १० बीघा जमीनका भी मालिक हूं, तो मैं अपनी कल्पनाकी आर्थिक समानताको जन्म नहीं दे सकता। अुसके लिअे मुझे गरीब बन जाना होगा। यही मैं पिछले ५० सालोंसे या अुससे भी ज्यादा वक्तसे करता आया हूं।

अिसीलिअे मैं पक्का कम्युनिस्ट होनेका दावा करता हूं। अगरचे मैं धनवानों द्वारा दी गअी मोटरों या दूसरे सुभीतोंसे फायदा अुठाता हूं, मगर मैं अुनके वशमें नहीं हूं। अगर आम जनताके हितोंका वैसा तकाजा हुआ, तो बातकी बातमें मैं अुनको अपनेसे दूर हटा सकता हूं।

हरिजनसेवक, ३१–३–'४६

हममें विदेशोंके दानके बजाय हमारी धरती जो कुछ पैदा कर सकती हो अुस पर ही अपना निर्वाह कर सकनेकी योग्यता और साहस होना चाहिये। अन्यथा हम अेक स्वतंत्र देशकी तरह रहनेके हकदार न होंगे। यही बात विदेशी विचारधाराओंके लिअे भी लागू होती है। मैं अुन्हें अुसी हद तक स्वीकार करूंगा जिस हद तक मैं अुन्हें हजम कर सकता हूं और अुनमें परिस्थितियोंके अनुरूप फर्क कर सकता हूं। लेकिन मैं अुनमें वह जानेसे अिनकार करूंगा।

हरिजन, ६–१०–'४६

७

अुद्योगवादका अभिशाप

दुनियामें अैसे विवेकी पुरुषोंकी संख्या लगातार बढ़ रही है, जो अिस सभ्यताको — जिसके अेक छोर पर तो भौतिक समृद्धिकी कभी तृप्त न होनेवाली आकांक्षा है और दूसरे छोर पर अुसके फलस्वरूप पैदा होनेवाला युद्ध है — अविश्वासकी निगाहसे देखते हैं। लेकिन यह सभ्यता अच्छी हो या बुरी, भारतका पश्चिम जैसा अुद्योगीकरण करनेकी क्या जरूरत है? पश्चिमी सभ्यता शहरी सभ्यता है। अिंग्लैण्ड और अिटली जैसे छोटे देश अपनी व्यवस्थाओंका शहरीकरण कर सकते हैं। अमेरिका बड़ा देश है, किन्तु अुसकी आबादी बहुत विरल है। अिसलिअे अुसे भी शायद वैसा ही करना पड़ेगा। लेकिन कोअी भी आदमी यदि सोचेगा तो यह मानेगा कि भारत जैसे बड़े देशको, जिसकी आबादी बहुत ज्यादा बड़ी है और ग्राम-जीवनकी अैसी पुरानी परम्परामें पोषित हुअी है जो अुसकी आवश्यकताओंको बराबर पूरा करती आयी है, पश्चिमी नमूनेकी नकल करनेकी कोअी जरूरत नहीं है और न अुसे अैसी नकल करनी चाहिये। विशेष परिस्थितियोंवाले किसी अेक देशके लिअे जो बात अच्छी है वह भिन्न परिस्थितियोंवाले किसी दूसरे देशके लिअे भी अच्छी ही हो यह जरूरी नहीं है। जो चीज किसी अेक आदमीके लिअे पोषक आहारका काम देती हो, वही

यंत्रोंका भी स्थान है। और यंत्रोंने अपना स्थान प्राप्त भी कर लिया है। लेकिन मनुष्योंके लिअे जिस प्रकारकी मेहनत करना अनिवार्य होना चाहिये, अुसी प्रकारकी मेहनतका स्थान अुन्हें ग्रहण न कर लेना चाहिये। घरमें चलाने लायक यंत्रोंमें सुधार किये जायं तो मैं अुसका स्वागत करूंगा। लेकिन मैं यह भी समझता हूं कि जब तक लाखों किसानोंको अुनके घरमें कोअी दूसरा धंधा करनेके लिअे न दिया जाय, तब तक हाथ-मेहनतसे चरखा चलानेके बदले किसी दूसरी शक्तिसे कपड़ेका कारखाना चलाना गुनाह है।

हिन्दी नवजीवन, ५–११–'२५

यंत्रोंकी अूपरी विजयसे चमत्कृत होनेसे मैं अिनकार करता हूं। और मारक यंत्रोंके मैं अेकदम खिलाफ हूं; अुसमें मैं किसी तरहका समझौता स्वीकार नहीं कर सकता। लेकिन अैसे सादे औजारों, साधनों या यंत्रोंका, जो व्यक्तिकी मेहनत बचायें और झोपड़ियोंमें रहनेवाले लाखों-करोड़ों लोगोंका बोझ कम करें, मैं जरूर स्वागत करूंगा।

यंग अिंडिया, १७–६–'२६

हिन्दुस्तानके सात लाख गांवोंमें फैले हुअे ग्रामवासी-रूपी करोड़ों जीवित यंत्रोंके विरुद्ध अिन जड़ यंत्रोंको प्रतिद्वंद्वितामें नहीं लाना चाहिये। यंत्रोंका सदुपयोग तो यह कहा जायगा कि अुससे मनुष्यके प्रयत्नको सहारा मिले और अुसे वह आसान बना दे। यंत्रोंके मौजूदा अुपयोगका झुकाव तो अिस ओर ही बढ़ता जा रहा है कि कुछ अिने-गिने लोगोंके हाथमें खूब संपत्ति पहुंचाअी जाय और जिन करोड़ों स्त्री-पुरुषोंके मुंहसे रोटी छीन ली जाती है, अुन बेचारोंकी जरा भी परवाह न की जाय।

हरिजनसेवक, २०–९–'३५

बड़े पैमाने पर अुद्योगीकरणका अनिवार्य परिणाम यह होगा कि ज्यों-ज्यों प्रतिस्पर्धा और बाजारकी समस्यायें खड़ी होंगी त्यों-त्यों गांवोंका प्रगट या अप्रगट शोषण होगा। अिसलिअे हमें अपनी शक्ति अिसी प्रयत्न पर केन्द्रित करनी चाहिये कि गांव स्वयंपूर्ण बनें और वस्तुओंका

निर्माण और अुत्पादन अपने अुपयोगके लिअे करें। यदि अुत्पादनकी यह पद्धति स्वीकार कर ली जाय तो फिर गांववाले अैसे आधुनिक यंत्रों और औजारोंका, जिन्हें वे बना सकते हों और जिनका अुपयोग अुन्हें आर्थिक दृष्टिसे पुसा सकता हो, अुपयोग खुशीसे करें। अुस पर आपत्ति नहीं की जा सकती। अलबत्ता, अुनका अुपयोग दूसरोंका शोषण करनेके लिअे नहीं होना चाहिये।

हरिजन, २९-८-'३६

मैं नहीं मानता कि अुद्योगीकरण हर हालतमें किसी भी देशके लिअे जरूरी ही है। भारतके लिये तो वह अुससे भी कम जरूरी है। मेरा विश्वास है कि आजाद भारत दुःखसे कराहती हुअी दुनियाके प्रति अपने कर्तव्यका ऋण अपने गांवोंका विकास करके और दुनियाके साथ मित्रताका व्यवहार करके और अिस तरह सादा परन्तु अुदात्त जीवन अपनाकर ही चुका सकता है। धनकी पूजाने हमारे अूपर भौतिक समृद्धिके जिस जटिल और शीघ्रगामी जीवनको लाद दिया है, अुसके साथ 'अुच्च चिन्तन' का मेल नहीं बैठता। जीवनका सम्पूर्ण सौन्दर्य तभी खिल सकता है जब हम अुच्च कोटिका जीवन जीना सीखें।

खतरोंवाला जीवन जीनेमें रोमांच और अुत्तेजनाका अनुभव हो सकता है। पर खतरोंका सामना करते हुअे जीनेमें और खतरोंवाला जीवन जीनेमें भेद है। जो आदमी जंगली जानवरोंसे और अुनसे भी ज्यादा जंगली आदमियोंसे भरपूर जंगलमें अकेले, बिना बन्दूकके और केवल औश्वरके सहारे रहनेकी हिम्मत दिखाता है, वह खतरोंका सामना करते हुअे जीता है। दूसरा आदमी लगातार हवामें अुड़ता हुआ रहता है और टकटकी लगाकर देखनेवाले दर्शक-समुदायकी वाहवाही लूटनेके खयालसे नीचेकी ओर अुड़ी लगाता है; वह खतरोंवाला जीवन जीता है। पहले आदमीका जीवन लक्ष्यपूर्ण है, दूसरेका लक्ष्यहीन।

किसी अलग-थलग रहनेवाले देशके लिअे, भले वह भूविस्तार और जनसंख्याकी दृष्टिसे कितना भी बड़ा क्यों न हो, अैसी दुनियामें जो शस्त्रास्त्रोंसे सिरसे पांव तक लदी है और जिसमें सर्वत्र वैभव-

विलासका ही वातावरण नजर आता है, अैसा सादा जीवन जीना सम्भव है या नहीं — यह अैसा सवाल है जिसमें संशयशील आदमीको अवश्य सन्देह होगा। लेकिन अिसका अुत्तर सीधा है। यदि सादा जीवन जीने योग्य है तो यह प्रयत्न भी करने योग्य है, चाहे वह प्रयत्न किसी अेक ही व्यक्ति या किसी अेक ही समुदाय द्वारा क्यों न किया जाय।

लेकिन साथ ही मैं यह भी मानता हूं कि कुछ प्रमुख अुद्योग जरूर होने चाहिये। आरामकुर्सीवाले या हिंसावाले समाजवादमें मेरा विश्वास नहीं है। मैं तो अपने विश्वासके अनुसार आचरण करनेमें मानता हूं और अुसके लिअे सब लोग मेरी बात मान लें तब तक ठहरना अनावश्यक समझता हूं। अिसलिअे अिन प्रमुख अुद्योगोंको गिनाये बिना ही मैं कह देता हूं कि जहां कहीं भी लोगोंको काफी बड़ी संख्यामें मिलकर काम करना पड़ता है वहां मैं राज्यकी मालिकीकी हिमायत करूंगा। अुनकी कुशल या अकुशल मेहनतसे जो कुछ अुत्पन्न होगा अुसकी मालिकी राज्यके द्वारा अुनकी ही होगी। लेकिन चूंकि मैं तो अिस राज्यके अहिंसा पर ही आधारित होनेकी कल्पना कर सकता हूं, अिसलिअे मैं अमीरोंसे अुनकी सम्पत्ति बलपूर्वक नहीं छीनूंगा, बल्कि अुक्त अुद्योगों पर राज्यकी मालिकी कायम करनेकी प्रक्रियामें अुनका सहयोग मांगूंगा। अमीर हों या कंगाल, समाजमें कोअी भी वर्ग अछूत या पतित नहीं हैं। अमीर और गरीब दोनों अेक ही रोगके दो रूप हैं। और सत्य यह है कि कोअी कैसा भी हो, हैं तो सब मनुष्य ही।

और मैं अपना यह विश्वास अुन सारी बर्बरताओंके बावजूद घोषित करता हूं, जो हमने भारतमें और दूसरे देशोंमें घटित होते देखी हैं और जिन्हें शायद हमें आगे और भी देखना पड़े। हम खतरोंका सामना करते हुअे जीना सीखें।

हरिजन, १–९–'४६

८

वर्गयुद्ध

मैं आम लोगोंको यह नहीं सिखाता कि वे पूंजीपतियोंको अपना दुश्मन मानें। मैं तो अुन्हें यह सिखाता हूं कि वे आप ही अपने दुश्मन हैं।

यंग अिंडिया, २६–११–'३१

वर्गयुद्ध भारतके मूल स्वभावके खिलाफ है। भारतमें समान न्याय और सबके बुनियादी हकोंके विशाल आधार पर स्थापित अेक अुदार किस्मका साम्यवाद निर्माण करनेकी क्षमता है। मेरे सपनेके रामराज्यमें राजा और रंक सबके अधिकार सुरक्षित होंगे।

अमृतबाजार पत्रिका, २–८–'३४

मैंने यह कभी नही कहा कि शोषकों और शोषितोंमें सहयोग होना चाहिये। जब तक शोषण और शोषण करनेकी अिच्छा कायम है तब तक सहयोग नहीं हो सकता। अलबत्ता, मैं यह नहीं मानता कि सब पूंजीपति और जमींदार अपनी स्थितिकी किसी आन्तरिक आवश्यकताके फलस्वरूप शोषक ही हैं और न मैं यह मानता हूं कि अुनके और जनताके हितोंमें कोअी बुनियादी या अकाट्य विरोध है। हर प्रकारका शोषण शोषितके सहयोग पर आधारित है, फिर वह सहयोग स्वेच्छासे दिया जाता हो या लाचारीसे। हम अिस सचाअीको स्वीकार करनेसे कितना ही अिनकार क्यों न करें, फिर भी सचाअी तो यही है कि यदि लोग शोषककी आज्ञा न मानें तो शोषण हो ही नहीं सकता। लेकिन अुसमें स्वार्थ आड़े आता है और हम अुन्हीं जंजीरोंको अपनी छातीसे लगाये रहते हैं जो हमें बांधती हैं। यह चीज बन्द होना चाहिये। जरूरत अिस बातकी नहीं है कि पूंजीपति और जमींदार खतम हो जायं; अुनमें और आम लोगोंमें आज जो सम्बन्ध है अुसे बदलकर ज्यादा स्वस्थ और शुद्ध सम्बन्ध बनानेकी जरूरत है।

वर्गयुद्धका विचार मुझे नहीं भाता। भारतमें वर्गयुद्ध न सिर्फ अनिवार्य नहीं है वल्कि यदि हम अहिंसाके सन्देशको समझ गये हैं तो अुसे टाला जा सकता है। जो लोग वर्गयुद्धको अनिवार्य वताते हैं अुन्होंने या तो अहिंसाके फलितार्थोंको समझा नहीं है या अूपरी तौर पर ही समझा है।

हमें पश्चिमसे आये हुअे मोहक नारोंके असरमें आनेसे वचना चाहिये। क्या हमारे पास हमारी विशिष्ट पूर्वी परम्परा नहीं है? क्या हम श्रम और पूंजीके सवालका कोअी अपना हल नहीं निकाल सकते? वर्णाश्रमकी व्यवस्था वड़े और छोटेका भेद दूर करने या पूंजी और श्रममें मेल साधनेका अेक अुत्तम साधन नहीं तो और क्या है? अिस विषयसे सम्वन्धित जो कुछ भी पश्चिमसे आया है वह हिंसाके रंगमें रंगा हुआ है। मैं अुसका विरोध करता हूं, क्योंकि मैंने अुस नाशको देखा है जो अिस मार्गके आखिरी छोर पर हमारी प्रतीक्षा कर रहा है। पश्चिमके भी ज्यादा विचारवान लोग अव यह समझने लगे हैं कि अुनकी व्यवस्था अुन्हें अेक गहरे गर्तकी ओर ले जा रही है और वे अुससे भयभीत हैं। पश्चिममें मेरा जो भी प्रभाव है अुसका कारण हिंसा और शोपणके अिस दुष्टचक्रसे अुद्धारका रास्ता ढूंढ़ निकालनेका मेरा अथक प्रयत्न ही है। मैं पश्चिमकी समाज-व्यवस्थाका सहानुभूतिशील विद्यार्थी रहा हूं और मैं अिस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि पश्चिमकी अिस वेचैनी और संघर्पके पीछे सत्यकी व्याकुल खोजकी भावना ही है। मैं अिस भावनाकी कीमत करता हूं। वैज्ञानिक जांचकी अुसी भावनासे हम पूर्वकी अपनी संस्थाओंका अध्ययन करें और मेरा विश्वास है कि दुनियाने अभी तक जिसका सपना देखा है अुससे कहीं ज्यादा सच्चे समाजवाद और सच्चे साम्यवादका हम विकास कर सकेंगे। यह मान लेना गलत है कि लोगोंकी गरीवीके सवाल पर पश्चिमी समाजवाद या साम्यवाद ही अन्तिम शव्द हैं।

अमृतवाजार पत्रिका, ३–८–'३४

मैं जमींदारका नाश नहीं करना चाहता, लेकिन मुझे अैसा भी नहीं लगता कि जमींदार अनिवार्य है। मैं जमींदारों और दूसरे पूंजीपतियोंका

अहिंसाके द्वारा हृदय-परिवर्तन करना चाहता हूं और अिसलिअे वर्गयुद्धकी अनिवार्यता मैं स्वीकार नहीं करता। कम-से-कम संघर्षका रास्ता लेना मेरे लिअे अहिंसाके प्रयोगका अेक जरूरी हिस्सा है। जमीन पर मेहनत करनेवाले किसान और मजदूर ज्यों ही अपनी ताकत पहिचान लेंगे त्यों ही जमींदारीकी बुराअीका बुरापन दूर हो जायगा। अगर वे लोग यह कह दें कि अुन्हें सभ्य जीवनकी आवश्यकताओंके अनुसार अपने बच्चोंके भोजन, वस्त्र और शिक्षण आदिके लिअे जब तक काफी मजदूरी नहीं दी जायगी, तब तक वे जमीनको जोतेंगे-बोयेंगे ही नहीं, तो जमींदार बेचारा कर ही क्या सकता है? सच तो यह है कि मेहनत करनेवाला जो कुछ पैदा करता है अुसका मालिक वही है। अगर मेहनत करनेवाले बुद्धिपूर्वक अेक हो जायं, तो वे अेक अैसी ताकत बन जायेंगे जिसका मुकाबला कोअी नहीं कर सकता। और अिसीलिअे मैं वर्गयुद्धकी कोअी जरूरत नहीं देखता। यदि मैं अुसे अनिवार्य मानता होता तो अुसका प्रचार करनेमें और लोगोंको अुसकी तालीम देनेमें मुझे कोअी संकोच नहीं होता।

हरिजन, ५–१२–’३६

सवाल अेक वर्गको दूसरे वर्गके खिलाफ भड़काने और भिड़ानेका नहीं है, बल्कि मजदूर-वर्गको अपनी स्थितिके महत्त्वका ज्ञान करानेका है। आखिर तो अमीरोंकी संख्या दुनियामें अिनी-गिनी ही है। ज्यों ही मजदूर-वर्गको अपनी ताकतका भान होगा और अपनी ताकत जानते हुअे भी वह अीमानदारीका व्यवहार करेगा, त्यों ही वे लोग भी अीमानदारीका व्यवहार करने लगेंगे। मजदूरोंको अमीरोंके खिलाफ भड़कानेका अर्थ वर्गद्वेषको और अुससे निकलनेवाले तमाम बुरे नतीजोंको जारी रखना होगा। संघर्ष अेक दुष्टचक्र है और अुसे किसी भी कीमत पर टालना ही चाहिये। वह दुर्बलताकी स्वीकृतिका, हीनता-ग्रंथिका चिह्न है। श्रम ज्यों ही अपनी स्थितिका महत्त्व और गौरव पहचान लेगा, त्यों ही धनको अपना अुचित दरजा मिल जायेगा, अर्थात् अमीर अुसे अपने पास मजदूरोंकी धरोहरके ही रूपमें रखेंगे। कारण, श्रम धनसे श्रेष्ठ है।

हरिजन, १९–१०–’३५

९

हड़तालें

आजकल हड़तालोंका दौरदौरा है। वे वर्तमान असंतोषकी निशानी हैं। तरह तरहके अनिश्चित विचार हवामें फैल रहे हैं। सबके दिलोंमें अेक धुंधली-सी आशा बंधी हुअी है। और यदि वह आशा निश्चित रूप धारण नहीं करेगी, तो लोगोंको बड़ी निराशा होगी। और देशोंकी तरह भारतमें भी मजदूर-जगत अुन लोगोंकी दया पर निर्भर है, जो सलाहकार और पथदर्शक बन जाते हैं। ये लोग सदा सिद्धान्त-पालक नहीं होते और सिद्धान्त-पालक होते भी हैं तो हमेशा बुद्धिमान नहीं होते। मजदूरोंको अपनी हालत पर असंतोष है। असंतोषके लिअे अुनके पास पूरे कारण हैं। अुन्हें यह सिखाया जा रहा है, और ठीक सिखाया जा रहा है, कि अपने मालिकोंको धनवान बनानेका मुख्य साधन वे ही हैं। राजनीतिक स्थिति भी भारतके मजदूरोंको प्रभावित करने लगी है। और अैसे मजदूर-नेताओंका अभाव नहीं है, जो समझते हैं कि राजनीतिक हेतुओंके लिअे हड़तालें कराअी जा सकती हैं।

मेरी रायमें अैसे हेतुके लिअे मजदूर-हड़तालोंका अुपयोग करना अत्यंत गंभीर भूल होगी। मैं अिससे अिनकार नहीं करता कि अैसी हड़तालोंसे राजनीतिक गरज पूरी की जा सकती है। परन्तु वे अहिंसक असहयोगकी योजनामें नहीं आतीं। यह समझनेके लिअे बुद्धि पर बहुत जोर डालनेकी जरूरत नहीं है कि जब तक मजदूर देशकी राजनीतिक स्थितिको समझ न लें और सबकी भलाअीके लिअे काम करनेको तैयार न हों, तब तक मजदूरोंका राजनीतिक अुपयोग करना बहुत ही खतरनाक बात होगी। अिस व्यवहारकी अुनसे अचानक आशा रखना कठिन है। यह आशा अुस वक्त तक नहीं रखी जा सकती, जब तक वे अपनी खुदकी हालत अितनी अच्छी न बना लें कि शरीर और आत्माकी जरूरतें पूरी करके सभ्य और शिष्ट जीवन व्यतीत कर सकें।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० १०४९

अिसलिअे सबसे बड़ी राजनीतिक सहायता मजदूर यह कर सकते हैं कि वे अपनी स्थिति सुधार लें, अधिक जानकार हो जायं, अपने अधिकारोंका आग्रह रखें और जिस मालके तैयार करनेमें अुनका अितना महत्त्वपूर्ण हाथ होता है अुसके अुचित अुपयोगकी भी मालिकोंसे मांग करें। अिसलिअे मजदूरोंके लिअे सही विकास यही होगा कि वे अपना दरजा बढ़ायें और आंशिक मालिकोंका दरजा प्राप्त करें।

अतः अभी तो हड़तालें मजदूरोंकी हालतके सीधे सुधारके लिअे ही होनी चाहिये और जब अुनमें देशभक्तिकी भावना पैदा हो जाय, तब अपने तैयार किये हुअे मालकी कीमतोंके नियंत्रणके लिअे भी हड़ताल की जा सकती है।

सफल हड़तालोंकी शर्तें सीधी-सादी हैं और जब वे पूरी हो जाती हैं तो हड़तालें कभी असफल सिद्ध होनी ही नहीं चाहिये :

१. हड़तालका कारण न्यायपूर्ण होना चाहिये।

२. हड़तालियोंमें व्यावहारिक अेकमत होना चाहिये।

३. हड़ताल न करनेवालोंके विरुद्ध हिंसा काममें नहीं लेनी चाहिये।

४. हड़तालियोंमें यह शक्ति होनी चाहिये कि संघके कोषका आश्रय लिये बिना वे हड़तालके दिनोंमें अपना पालन-पोषण कर सकें। अिसके लिअे अुन्हें किसी अुपयोगी और अुत्पादक अस्थायी धंधेमें लगना चाहिये।

५. जब हड़तालियोंकी जगह लेनेके लिअे दूसरे मजदूर काफी हों, तब हड़तालका अुपाय बेकार साबित होता है। अुस सूरतमें अन्यायपूर्ण व्यवहार हो, नाकाफी मजदूरी मिले या अैसा ही और कोअी कारण हो, तो त्यागपत्र ही अुसका अेकमात्र अुपाय है।

६. अुपरोक्त सारी शर्तें पूरी न होने पर भी सफल हड़तालें हुअी हैं। परन्तु अिससे तो अितना ही सिद्ध होता है कि मालिक कमजोर थे और अुनका अन्तःकरण अपराधी था।

यंग अिंडिया, १६–२–'२१

जाहिर है कि बिना वजनदार कारणके हड़ताल होनी ही न चाहिये। नाजायज हड़तालको न तो कामयाबी हासिल होनी चाहिये और न ही

किसी हालतमें अुसे आम जनताकी हमदर्दी मिलनी चाहिये। आम तौर पर लोगोंको यह मालूम ही नहीं हो सकता कि हड़ताल जायज है या नाजायज, सिवा अिसके कि हड़तालका समर्थन कोअी अैसे लोग करें, जो निष्पक्ष हों और जिन पर आम लोगोंका पूरा विश्वास हो। हड़ताली खुद अपने मामलेमें राय देनेके हकदार नहीं। अिसलिअे या तो मामला अैसे पंचके सिपुर्द करना चाहिये, जो दोनों तरफके लोगोंको मंजूर हो, या अुसे अदालती फैसले पर छोड़ना चाहिये। . . .

जब अिस तरीकेसे काम किया जाता है, तो आम तौर पर पब्लिकके सामने हड़तालका मामला पेश करनेकी नौबत ही नहीं आती। अलबत्ता, कभी-कभी यह जरूर होता है कि मगरूर मालिक पंचके या अदालतके फैसलेको ठुकरा देते हैं, या गुमराह मजदूर अपनी ताकतके बल मालिकसे जबरदस्ती और भी रियायतें पानेके लिअे फैसलेको मंजूर करनेसे अिनकार कर देते हैं। अैसी हालतमें मामला आम जनताके सामने आता है।

हरिजनसेवक, ११–८–'४६

जो हड़ताल माली हालतकी बेहतरीके लिअे की जाती है, अुसमें कभी अंतिम ध्येयके तौर पर राजनीतिक मकसदकी मिलावट नहीं होनी चाहिये। अैसा करनेसे राजनीतिक तरक्की कभी नहीं हो सकती। बल्कि होता यह है कि अकसर हड़तालियोंको ही अिसका नतीजा भुगतना पड़ता है चाहे अुन हड़तालोंका असर आम लोगोंकी जिन्दगी पर पड़े या न पड़े। सरकारके सामने कुछ दिक्कतें जरूर खड़ी हो सकती हैं, लेकिन अुनकी वजहसे हुकूमतका काम रुक नहीं सकता। अमीर लोग रुपया खर्च करके अपनी डाकका बन्दोबस्त खुद कर लेंगे, लेकिन असल मुसीबत तो गरीबोंको झेलनी पड़ती है। अैसी हड़तालें तो तभी करना चाहिये, जब अिन्साफ करानेके दूसरे सब अुचित साधन असफल साबित हो चुके हों। . . .

अूपरकी अिन बातोंसे यह जाहिर है कि राजनीतिक हड़तालोंकी अपनी अलग जगह है और अुनको आर्थिक हड़तालोंके साथ न तो मिलाना

चाहिये और न दोनोंका आपसमें वैसा कोअी रिश्ता रखा जाना चाहिये। अहिंसक लड़ाअीमें राजनीतिक हड़तालकी अपनी अेक खास जगह होती है। वे चाहे जब और चाहे जैसे ढंगसे नहीं की जानी चाहिये। अैसी हड़तालें बिलकुल खुली होनी चाहिये और अुनमें गुण्डाशाहीकी कोअी गुंजाअिश न रहनी चाहिये। अुनकी वजहसे कहीं किसी तरहकी हिंसा नहीं होनी चाहिये।

हरिजनसेवक, ११-८-'४६

१०
मजदूर क्या चुनेंगे?

भारतके सामने आज दो रास्ते हैं; वह चाहे तो पश्चिमके 'शक्ति ही अधिकार है' वाले सिद्धान्तको अपनाये और चलाये या पूर्वके अिस सिद्धान्त पर दृढ़ रहे और अुसीकी विजयके लिअे अपनी सारी ताकत लगाये कि 'सत्यकी ही जीत होती है'; सत्यमें हार कभी है ही नहीं; और ताकतवर तथा कमजोर, दोनोंको न्याय पानेका समान अधिकार है। यह चुनाव सबसे पहले मजदूर-वर्गको करना है। क्या मजदूरोंको अपने वेतनमें वृद्धि, यदि वैसा सम्भव हो तो भी, हिंसाका आश्रय लेकर करानी चाहिये? अुनके दावे कितने भी अुचित क्यों न हों, अुन्हें हिंसाका आश्रय नहीं लेना चाहिये। अधिकार प्राप्त करनेके लिअे हिंसाका आश्रय लेना शायद आसान मालूम हो, किन्तु यह रास्ता अन्तमें कांटोंवाला सिद्ध होता है। जो लोग तलवारके द्वारा जीवित रहते हैं, वे तलवारसे ही मरते हैं। तैराक अकसर डूबकर मरता है। यूरोपकी ओर देखिये। वहां कोअी भी सुखी नहीं दिखाअी देता, क्योंकि किसीको भी संतोष नहीं है। मजदूर पूंजीपतिका विश्वास नहीं करता और पूंजीपतिको मजदूरमें विश्वास नहीं है। दोनोंमें अेक प्रकारकी स्फूर्ति और ताकत है, लेकिन वह तो बैलोंमें भी होती है। बैल भी मरनेकी हद तक लड़ते हैं। कैसी भी गति प्रगति नहीं है। हमारे पास यह माननेका कोअी कारण नहीं है कि यूरोपके

लोग प्रगति कर रहे हैं। अुनके पास जो पैसा है अुससे यह सूचित नहीं होता कि अुनमें कोअी नैतिक या आध्यात्मिक सद्‌गुण हैं। दुर्योधन असीम धनका स्वामी था, लेकिन विदुर या सुदामाकी तुलनामें वह गरीब ही था। आज दुनिया विदुर और सुदामाकी पूजा करती है; लेकिन दुर्योधनका नाम तो अुन सब बुराअियोंके प्रतीकके रूपमें ही याद किया जाता है जिनसे आदमीको बचना चाहिये।

. . . पूंजी और श्रममें चल रहे संघर्षके बारेमें आम तौर पर यह कहा जा सकता है कि गलती अकसर पूंजीपतियोंसे ही होती है। लेकिन जब मजदूरोंको अपनी ताकतका पूरा भान हो जायगा, तब मैं जानता हूं कि वे लोग पूंजीपतियोंसे भी ज्यादा अत्याचार कर सकते हैं। यदि मजदूर मिल-मालिकोंकी बुद्धि हासिल कर लें, तो मिल-मालिकोंको मजदूरोंकी दी हुअी शर्तों पर काम करना पड़ेगा। लेकिन यह स्पष्ट है कि मजदूरोंमें वह बुद्धि कभी नहीं आ सकती। अगर वे वैसी बुद्धि प्राप्त कर लें तो मजदूर मजदूर ही न रहें और मालिक बन जायें। पूंजीपति केवल पूंजीकी ताकत पर नहीं लड़ते; अुनके पास बुद्धि और कौशल भी है।

हमारे सामने सवाल यह है: मजदूरोंमें, अुनके मजदूर रहते हुअे, अपनी शक्ति और अधिकारोंकी चेतना आ जाये, अुस समय अुन्हें किस मार्गका अवलम्बन करना चाहिये? अगर अुस समय मजदूर अपनी संख्याके बलका यानी पशुशक्तिका आश्रय लें, तो यह अुनके लिअे आत्म-घातक सिद्ध होगा। अैसा करके वे देशके अुद्योगोंको हानि पहुंचायेंगे। दूसरी ओर यदि वे शुद्ध न्यायका आधार लेकर लड़ें और अुसे पानेके लिअे खुद कष्ट-सहन करें, तो वे अपनी हर कोशिशमें न सिर्फ सफल होंगे बल्कि अपने मालिकोंके हृदयका परिवर्तन कर डालेंगे, अुद्योगोंका ज्यादा विकास करेंगे और अन्तमें मालिक और मजदूर, दोनों अेक ही परिवारके सदस्योंकी भांति रहने लगेंगे। मजदूरोंकी हालतके संतोषजनक सुधारमें निम्नलिखित वस्तुओंका समावेश होना चाहिये:

(१) श्रमका समय अितना ही होना चाहिये कि मजदूरोंको आराम करनेके लिअे भी काफी समय बचा रहे।

(२) अुन्हें अपने शिक्षणकी सुविधायें मिलनी चाहिये।

(३) अुनके बच्चोंकी आवश्यक शिक्षाके लिअे तथा वस्त्र और पर्याप्त दूधके लिअे व्यवस्था की जानी चाहिये।

(४) मजदूरोंके लिअे साफ-सुथरे घर होने चाहिये।

(५) अुन्हें अितना वेतन मिलना चाहिये कि वे बुढ़ापेमें अपने निर्वाहके लिअे काफी रकम बचा सकें।

अभी तो अिनमें से अेक भी शर्त पूरी नहीं होती। अिस हालतके लिअे दोनों ही पक्ष जिम्मेदार हैं। मालिक लोग केवल कामकी परवाह करते हैं। मजदूरोंका क्या होता है, अुससे वे कोअी सम्बन्ध नहीं रखते। अुनकी सारी कोशिशोंका मकसद यही होता है कि पैसा कम-से-कम देना पड़े और काम ज़्यादा-से-ज्यादा मिले। दूसरी ओर, मजदूरकी कोशिश अैसी सब युक्तियां करनेकी होती है जिससे पैसा अुसे ज्यादा-से-ज्यादा मिले और काम कम-से-कम करना पड़े। परिणाम यह होता है कि यद्यपि मजदूरोंके वेतनमें वृद्धि होती है, परन्तु कामकी मात्रामें कोअी सुधार नहीं होता। दोनों पक्षोंके सम्बन्ध शुद्ध नहीं बनते और मजदूर लोग अपनी वेतन-वृद्धिका समुचित अुपयोग नहीं करते।

अिन दोनों पक्षोंके बीचमें अेक तीसरा पक्ष खड़ा हो गया है। वह मजदूरोंका मित्र बन गया है। अैसे पक्षकी आवश्यकतासे अिनकार नहीं किया जा सकता। लेकिन यह पक्ष मजदूरोंके प्रति अपनी मित्रताका निर्वाह अुसी हद तक कर सकेगा, जिस हद तक अुनके प्रति अुसकी मित्रता स्वार्थसे अछूती होगी।

अब वह समय आ पहुंचा है जब कि मजदूरोंका अुपयोग कअी तरहसे शतरंजके प्यादोंकी तरह करनेकी कोशिशें की जायेंगी। जो लोग राजनीतिमें भाग लेनेकी अिच्छा रखते हैं अुन्हें अिस सवाल पर विचार करना चाहिये। वे लोग क्या चुनेंगे : अपना हित या मजदूरोंकी और राष्ट्रकी सेवा? मजदूरोंको मित्रोंकी बड़ी आवश्यकता है। वे नेतृत्वके बिना कुछ नहीं कर सकते। देखना यह है कि यह नेतृत्व अुन्हें किस किस्मके लोगोंसे मिलता है; क्योंकि अुससे ही मजदूरोंकी भावी परिस्थितियोंका निर्धारण होनेवाला है।

काम छोड़कर बैठ जाना, हड़तालें आदि बेशक बहुत प्रभावशाली साधन हैं, लेकिन अुनका दुरुपयोग आसान है। मजदूरोंको अपने शक्तिशाली यूनियन बनाकर अपना संघटन कर लेना चाहिये और अिन यूनियनोंकी सहमतिके बिना कभी भी कोअी हड़ताल नहीं करनी चाहिये। हड़ताल करनेके पहले मिल-मालिकोंसे बातचीतके द्वारा समझौतेकी कोशिश होनी चाहिये; अुसके बिना हड़तालका खतरा मोल लेना ठीक नहीं। यदि मिल-मालिक झगड़ेके निपटारेके लिअे पंच-फैसलेका आश्रय लें, तो पंचायतकी बात जरूर स्वीकार की जानी चाहिये। और पंचोंकी नियुक्ति हो जानेके बाद दोनों पक्षोंको अुसका निर्णय समान रूपसे जरूर मान लेना चाहिये, भले अुन्हें वह पसंद आया हो या नहीं।

यंग अिंडिया, ११–२–'२०

मेरा सर्वत्र यही अनुभव रहा है कि सामान्यतः मालिककी तुलनामें मजदूर लोग अपने कर्तव्य ज्यादा अीमानदारीके साथ और ज्यादा परिणामकारी ढंगसे पूरे करते हैं, यद्यपि जिस तरह मालिकके प्रति मजदूरोंके कर्तव्य होते हैं अुसी तरह मजदूरोंके प्रति मालिकके भी कर्तव्य होते हैं। और यही कारण है कि मजदूरोंको अिस बातकी खोज करना आवश्यक हो जाता है कि वे मालिकोंसे अपनी मांग किस हद तक मनवा सकते हैं। अगर हम यह देखें कि हमें काफी वेतन नहीं मिलता या कि हमें निवासकी जैसी सुविधा चाहिये वैसी नहीं मिल रही है, तो हमें काफी वेतन और समुचित निवासकी सुविधा कैसे मिले, अिस बातका रास्ता ढूंढ़ना पड़ता है। मजदूरोंको कितनी सुख-सुविधा चाहिये, अिस बातका निश्चय कौन करे? सबसे अच्छी बात तो यही होगी कि तुम मजदूर लोग खुद यह समझो कि तुम्हारे अधिकार क्या हैं, अुन अधिकारोंको मालिकोंसे मनवानेका अुपाय क्या है और फिर अुन्हें अुन लोगो तुम खुद ही हासिल करो। लेकिन अिसके लिअे तुम्हारे पास पह ली हुअी थोड़ी-सी तालीम होनी चाहिये — शिक्षा होनी चाहिये।

मेरी नम्र रायमें यदि मजदूरोंमें काफी संगठन हो और बलिद भावना भी हो, तो अुन्हें अपने प्रयत्नोंमें हमेशा सफलता मिल है। पूंजीपति कितने ही अत्याचारी हों, मुझे निश्चय है कि

मजदूरोंसे सम्बन्ध है और जो मजदूर-आन्दोलनका मार्गदर्शन करते हैं, खुद अुन्हें ही अभी अिस बातकी कल्पना नहीं है कि मजदूरोंकी साधन-सम्पत्ति कितनी विशाल है। अुनकी साधन-सम्पत्ति सचमुच अितनी विशाल है कि पूंजीपतियोंकी अुतनी कभी हो ही नहीं सकती। अगर मजदूर अिस बातको पूरी तरह समझ लें कि पूंजी श्रमका सहारा पाये बिना कुछ नहीं कर सकती, तो अुन्हें अपना अुचित स्थान तुरंत ही प्राप्त हो जायगा।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० १०४६

दुर्भाग्यवश हमारा मन पूंजीकी मोहिनीसे मूढ़ हो गया है और हम यह मानने लगे हैं कि दुनियामें पूंजी ही सब कुछ है। लेकिन यदि हम गहरा विचार करें तो क्षणमात्रमें हमें यह पता चल जायगा कि मजदूरोंके पास जो पूंजी है वह पूंजीपतियोंके पास कभी हो ही नहीं सकती। . . . अंग्रेजीमें अेक बहुत जोरदार शब्द है — यह शब्द आपकी फ्रेंच भाषामें और दुनियाकी दूसरी भाषाओंमें भी है। यह है 'नहीं'। बस, हमने अपनी सफलताके लिअे यही रहस्य खोज निकाला है कि जब पूंजीपति मजदूरोंसे 'हां' कहलवाना चाहते हों अुस समय यदि मजदूर 'हां' न कहकर 'नहीं' कहनेकी अिच्छा रखते हों तो अुन्हें निस्संकोच 'नहीं' का ही गर्जन करना चाहिये। अैसा करने पर मजदूरोंको तुरंत ही अिस बातका ज्ञान हो जायगा कि अुन्हें यह आजादी है कि जब वे 'हां' कहना चाहें तब 'हां' कहें और जब 'नहीं' कहना चाहें तब 'नहीं' कह दें; और यह कि वे पूंजीके अधीन नहीं हैं बल्कि पूंजीको ही अुन्हें खुश रखना है। पूंजीके पास बंदूक और तोप और यहां तक कि जहरीले गैस जैसे डरावने अस्त्र भी हैं, तो भी अिस स्थितिमें कोअी फर्क नहीं पड़ सकता। अगर मजदूर अपनी 'नहीं' की टेक कायम रखें, तो पूंजी अपने अुन सब शस्त्रास्त्रोंके बावजूद पूरी तरह असहाय सिद्ध होगी। अुस हालतमें मजदूर प्रत्याक्रमण नहीं करेंगे, बल्कि गोलियों और जहरीले गैसकी मार सहते हुअे भी झुकेंगे नहीं और अपनी 'नहीं' की टेक पर अडिग रहेंगे। मजदूर अपने प्रयत्नमें अकसर असफल होते हैं, अुसका कारण यह है कि वे जैसा मैंने कहा है वैसा करके पूंजीका शोधन नहीं करते,

वल्कि (मैं खुद मजदूरके नाते ही यह कह रहा हूं) अुस पूंजीको स्वयं हथियाना चाहते हैं और खुद अिस शव्दके वुरे अर्थमें पूंजीपति वनना चाहते हैं। और अिसलिअे पूंजीपतियोंको, जो अच्छी तरह संगठित हैं और अपनी जगह मजवूतीसे डटे हुअे हैं, मजदूरोंमें अपना दरजा पानेके अभिलाषी अुम्मीदवार मिल जाते हैं और वे मजदूरोंके अिस अंशका अुपयोग मजदूरोंको दवानेके लिअे करते हैं। अगर हम लोग पूंजीकी अिस मोहिनीके प्रभावमें न होते तो हममें से हरअेक अिस वुनियादी सत्यको आसानीसे समझ लेता।

यंग अिंडिया, १४–१–'३२

११

अधिकार या कर्तव्य ?

मैं आज अुस वहुत वड़ी वुराअीकी चर्चा करना चाहता हूं, जिसने समाजको मुसीवतमें डाल रखा है। अेक तरफ पूंजीपति और जमींदार अपने हकोंकी वात करते हैं, दूसरी तरफ मजदूर अपने हकोंकी। राजा-महाराजा कहते हैं कि हमें शासन करनेका दैवी अधिकार मिला हुआ है, तो दूसरी तरफ अुनकी रैयत कहती है कि अुसे राजाओंके अिस हकका विरोध करनेका अधिकार है। अगर सव लोग सिर्फ अपने हकों पर ही जोर दें और फर्जोंको भूल जायं, तो चारों तरफ वड़ी गड़वड़ी और अंधाधुंधी मच जाय।

अगर हर आदमी हकों पर जोर देनेके वजाय अपना फर्ज अदा करे, तो मनुष्य-जातिमें जल्दी ही व्यवस्था और अमनका राज्य कायम हो जाय। राजाओंके राज्य करनेके दैवी अधिकार जैसी या रैयतके अिज्जतसे अपने मालिकोंका हुक्म माननेके नम्र कर्तव्य जैसी कोअी चीज नहीं है। यह सच है कि राजा और रैयतके पैदाअिशी भेद मिटने ही चाहिये, क्योंकि वे समाजके हितको नुकसान पहुंचाते हैं। लेकिन यह भी सच है कि अभी तक कुचले और दवाकर रखे गये लाखों-करोड़ों लोगोंके हकोंका ढिठाअीभरा दावा भी समाजके हितको ज्यादा नहीं

तो अुतना ही नुकसान जरूर पहुंचाता है। अुनके अिस दावेसे दैवी अधिकारों या दूसरे हकोंकी दुहाअी देनेवाले राजा-महाराजा या जमींदारों वगैराके बनिस्वत करोड़ों लोगोंको ही ज्यादा नुकसान पहुंचेगा। ये मुट्ठीभर जमींदार, राजा-महाराजा, या पूंजीपति बहादुरी या बुजदिलीसे मर सकते हैं, लेकिन अुनके मरनेसे ही सारे समाजका जीवन व्यवस्थित, सुखी और सन्तुष्ट नहीं बन सकता। अिसलिअे यह जरूरी है कि हम हकों और फर्जोंका आपसी सम्बन्ध समझ लें। मैं यह कहनेकी हिम्मत करूंगा कि जो हक पूरी तरह अदा किये गये फर्जसे नहीं मिलते, वे प्राप्त करने और रखने लायक नहीं हैं। वे दूसरोंसे छीने गये हक होंगे। अुन्हें जल्दीसे जल्दी छोड़ देनेमें ही भला है। जो अभागे मां-बाप बच्चोंके प्रति अपना फर्ज अदा किये बिना अुनसे अपना हुक्म मनवानेका दावा करते हैं, वे बच्चोंकी नफरतको ही भड़कायेंगे। जो बदचलन पति अपनी वफादार पत्नीसे हर बात मनवानेकी आशा करता है, वह धर्मके वचनको गलत समझता है; अुसका अेकतरफा अर्थ करता है। लेकिन जो बच्चे हमेशा फर्ज अदा करनेके लिअे तैयार रहनेवाले मां-बापको जलील करते हैं, वे कृतघ्न समझे जायेंगे और मां-बापके मुकाबले खुदका ज्यादा नुकसान करेंगे। यही बात पति और पत्नीके बारेमें भी कही जा सकती है। अगर यह सादा और सब पर लागू होनेवाला कायदा मालिकों और मजदूरों, जमींदारों और किसानों, राजाओं और रैयत, या हिन्दू और मुसलमानों पर लगाया जाय, तो हम देखेंगे कि जीवनके हर क्षेत्रमें अच्छेसे अच्छे सम्बन्ध कायम किये जा सकते हैं। और, अैसा करनेसे न तो हिन्दुस्तान या दुनियाके दूसरे हिस्सोंकी तरह सामाजिक जीवन या व्यापारमें किसी तरहकी रुकावट आयेगी और न गड़बड़ी पैदा होगी। मैं जिसे सत्याग्रह कहता हूं, वह नियम अपने-अपने फर्जों और अुनके पालनसे अपने-आप प्रकट होनेवाले हकोंके सिद्धान्तोंको बराबर समझ लेनेका नतीजा है।

अेक हिन्दूका अपने मुसलमान पड़ोसीके प्रति क्या फर्ज होना चाहिये? अुसे चाहिये कि वह अेक मनुष्यके नाते अुससे दोस्ती करे और अुसके सुख-दुःखमें हाथ बंटाकर मुसीबतमें अुसकी मदद करे। तब

अुसे अपने मुसलमान पड़ोसीसे अैसे ही बरतावकी आशा रखनेका हक प्राप्त होगा। और शायद मुसलमान भी अुसके साथ अैसा ही बरताव करे जिसकी अुसे अुम्मीद हो। मान लीजिये कि किसी गांवमें हिन्दुओंकी तादाद बहुत ज्यादा है और मुसलमान वहां अिने-गिने ही हैं, तो अुस ज्यादा तादादवाली जातिकी अपने थोड़ेसे मुसलमान पड़ोसियोंकी तरफकी जिम्मेदारी कओी गुनी बढ़ जाती है। यहां तक कि अुन्हें मुसलमानोंको यह महसूस करनेका मौका भी न देना चाहिये कि अुनके धर्मके भेदकी वजहसे हिन्दू अुनके साथ अलग किस्मका बरताव करते हैं। तभी, अिससे पहले नहीं, हिन्दू यह हक हासिल कर सकेंगे कि मुसलमान अुनके सच्चे दोस्त बन जायें और खतरेके समय दोनों कौमें अेक होकर काम करें। लेकिन मान लीजिये कि वे थोड़ेसे मुसलमान ज्यादा तादादवाले हिन्दुओंके अच्छे बरतावके बावजूद अुनसे अच्छा बरताव नहीं करते और हर बातमें लड़नेके लिअे तैयार हो जाते हैं, तो यह अुनकी कायरता होगी। तब अुन ज्यादा तादादवाले हिन्दुओंका क्या फर्ज होगा? बेशक, बहुमतकी अपनी दानवी शक्तिसे अुन पर काबू पाना नहीं। यह तो बिना हासिल किये हुअे हकको जबरदस्ती छीनना होगा। अुनका फर्ज यह होगा कि वे मुसलमानोंके अमानुषिक बरतावको अुसी तरह रोकें, जिस तरह वे अपने सगे भाअियोंके अैसे बरतावको रोकेंगे। अिस अुदाहरणको और ज्यादा बढ़ाना मैं जरूरी नहीं समझता। अितना कहकर मैं अपनी बात पूरी करता हूं कि जब हिन्दुओंकी जगह मुसलमान बहुमतमें हों और हिन्दू सिर्फ अिने-गिने हों, तब भी बहुमतवालोंको ठीक अिसी तरहका बरताव करना चाहिये। जो कुछ मैंने कहा है अुसका मौजूदा हालतमें हर जगह अुपयोग करके फायदा अुठाया जा सकता है। मौजूदा हालत घबड़ाहट पैदा करनेवाली बन गअी है, क्योंकि लोग अपने बरतावमें अिस सिद्धान्त पर अमल नहीं करते कि कोअी फर्ज पूरी तरह अदा करनेके बाद ही हमें अुससे सम्बन्ध रखनेवाला हक हासिल होता है।

यही नियम राजाओं और रैयत पर भी लागू होता है। राजाओंका फर्ज है कि वे रिआयाके सच्चे सेवकोंकी तरह काम करें। वे किसी बाहरी सत्ताके दिये हुअे हकोंके बल पर राज्य नहीं करेंगे और तलवारके

जोरसे तो कभी नहीं। वे सेवासे हासिल किये गये हकसे और खुदको मिली हुआी विशेष बुद्धिके हकसे राज्य करेंगे। तब अुन्हें खुशीसे दिये जानेवाले टैक्स वसूल करनेका और अुतनी ही राजी-खुशीसे की जानेवाली कुछ सेवायें लेनेका हक हासिल होगा। और यह टैक्स वे अपने लिअे नहीं बल्कि अपने आश्रयमें रहनेवाली प्रजाके लिअे वसूल करेंगे। अगर राजा लोग अिस सादे और बुनियादी फर्जको अदा करनेमें असफल रहते हैं, तो प्रजाके अुनके प्रति रहनेवाले सारे फर्ज ही खतम नहीं हो जाते, बल्कि प्रजाका यह फर्ज हो जाता है कि वह राजाओंकी मनमानी चालोंका मुकाबला करे। दूसरे शब्दोंमें यों कहा जा सकता है कि प्रजा राजाओंके बुरे शासन या मनमानीका मुकाबला करनेका हक हासिल कर लेती है। अगर हमारा मुकाबला हत्या, बरबादी और लूट-मारका रूप ले ले, तो फर्जके नाते यह कहा जायगा कि वह मुकाबला मनुष्य-जातिके खिलाफ अेक गुनाह बन जाता है। जो शक्ति कुदरती तौर पर फर्जको अदा करनेसे पैदा होती है, वह सत्याग्रहसे पैदा होनेवाली और किसीसे न जीती जा सकनेवाली अहिंसक शक्ति होती है।

हरिजनसेवक, ६–७–'४७

१२

बेकारीका सवाल

जब तक अेक भी सशक्त आदमी अैसा हो जिसे काम न मिलता हो या भोजन न मिलता हो, तब तक हमें आराम करने या भरपेट भोजन करनेमें शर्म महसूस होनी चाहिये।

यंग अिंडिया, ६–१०–'२१

अैसे देशकी कल्पना कीजिये जहां लोग प्रतिदिन औसतन पांच ही घंटे काम करते हों और वह भी स्वेच्छासे नहीं बल्कि परिस्थितियोंकी लाचारीके कारण; बस, आपको भारतकी सही तसवीर मिल जायगी। यदि पाठक अिस तसवीरको देखना चाहता हो तो अुसे अपने मनसे

शहरी जीवनमें पायी जानेवाली व्यस्त दौड़ादौड़को, या कारखानोंके मज-दूरोंकी शरीरको चूर कर देनेवाली थकावटको या चाय-वागानोंमें दिखाअी पड़नेवाली गुलामीको दूर कर देना चाहिये। ये तो भारतकी आवादीके समुद्रकी कुछ बूंदें ही हैं। अगर अुसे कंकाल-मात्र रह गये भूखे भारतीयोंकी तसवीर देखना हो, तो अुसे अुस अस्सी प्रतिशत आवादीकी वात सोचना चाहिये जो अपने खेतोंमें काम करती है, जिसके पास सालमें करीव चार महीने तक कोअी धंधा नहीं होता, और अिसलिअे जो लगभग भुखमरीकी जिन्दगी जीती है। यह अुसकी सामान्य स्थिति है। अिस विवश वेकारीमें वार-वार पड़नेवाले अकाल काफी वड़ी वृद्धि करते हैं।

यंग अिडिया, ३–११–'२१

हमारी औसत आयु अितनी कम है कि सोचकर दुःख होता है। अिसी तरह हम दिन-दिन अधिकाधिक गरीव होते जा रहे हैं। अिसका कारण यह है कि हमने अपने सात लाख गांवोंकी अुपेक्षा की है। अुनका खयाल नहीं रखा। अुनसे जितने पैसे मिल सकें अुतने लेनेकी हम कोशिश करते हैं, अुन्हें कंगाल करके हम स्वयं कंगाल हो रहे हैं। यह हिन्दुस्तान पहले सुवर्ण-भूमि कहलाता था। यह किसकी वदौलत कंगाल हुआ? हमारी ही वदौलत। हमारे पास तमाम अैश-आरामकी चीजें हैं। मोटरें हैं, सोनेको गद्दे हैं और अन्य सुविधायें हैं; परन्तु सच पूछा जाय तो हमको अिनमें से अेक भी चीजका अधिकार नहीं है।

हिन्दुस्तानकी सभ्यता पश्चिमकी सभ्यतासे निराली है। जहां जमीन ज्यादा और लोग कम, और जहां जमीन कम और लोग ज्यादा, अुसमें तो फर्क होना ही चाहिये। मशीनें या कलें अुन अमेरिकावालोंके लिअे जरूरी होंगी ही जहां लोग कम और काम ज्यादा है, किन्तु हिन्दुस्तानमें जहां अेक कामके लिअे अनेक लोग खाली हैं, मशीनरीकी जरूरत नहीं और न अिस प्रकार भूखों मरकर समय वचाना ही ठीक है। यदि हम खाना भी यंत्र द्वारा खायें तो मैं समझता हूं कि आप कभी वह पसन्द न करेंगे। अिसीलिअे हमें अुस खाली या वेकार जनताका अुपयोग कर लेना चाहिये। हिन्दुस्तानकी आवादी अितनी वढ़ गअी है कि अुसके भरण-पोषणके लिअे अुसकी जमीन वहुत कम है, अैसा वहुतसे अर्थशास्त्रज्ञ

कहते हैं। मैं अिसे नहीं मानता। हम यदि अुद्योग करें तो दूना पैदा कर सकते हैं। अिसमें मुझे पूरा विश्वास है। यह हमारे सोचनेकी वात है कि हम सच्चा अुद्योग करें और देहातियोंके साथ सम्पर्क वढ़ावें और अुनके सच्चे सेवक वन जायं, तो मुझे पूर्ण विश्वास है कि हम हिन्दुस्तानके छोटे-छोटे अुद्योगोंसे करोड़ों रुपयेका धन पैदा कर सकते हैं। अुसमें पैसेकी भी विशेष आवश्यकता नहीं, जरूरत है लोगोंकी, मेहनतकी। यदि हम विचारशील जीवन रखें तो हमारा वड़ा फायदा हो सकता है।

हम लोग जो आटा खाते हैं वह आटा नहीं जहर खाते हैं। हमारे लिअे आस्ट्रेलियासे खानेको आटा आता है वह तो जहर ही है। अैसा मैं नहीं कहता, आपके डॉक्टर लोग कहते हैं। यहां हम अमृतको भी जहर वनाकर खाते हैं। जो आटा हम कलसे पिसवाकर खाते हैं, अुसका सव द्रव्य निकल जाता है और हम निःसत्त्व भोजन खाते हैं। अिससे हम दिनोंदिन क्षीण हो रहे हैं। आटा तो रोज घरकी चक्कीमें पीसकर ताजा खाना चाहिये। मनों आटा पीसकर नहीं रख छोड़ना चाहिये। क्योंकि कुछ दिनके वाद वह दूषित हो जाता है। अिस प्रकार घरमें आटा पीस लेनेसे दो फायदे हैं। पहला तो शुद्ध, शक्तियुक्त भोजन खानेको मिलता है, जिससे हम दीर्घजीवी हो सकते हैं; और दूसरे, अुस वहाने हमारी वहिनोंका, जो निकम्मी-सी हो गअी हैं, व्यायाम हो जायगा, जिससे वे भी स्वास्थ्यलाभ कर सकेंगी। यदि अितना पैसा जिसे हम कलमें पिसवानेके लिअे देते हैं वच रहे, तो सव मिलकर देशका कितना फायदा हो सकता है? अिससे तो आमके आम और गुठलीके दाम भी मिल जाते हैं। हमारी अिससे कितनी वचत हो सकती है? धन भी वचे और स्वास्थ्यलाभ भी हो। यह अर्थशास्त्रकी वात नहीं, अनुभवकी वात है।

अिसी प्रकार चावलके साथ भी हम अत्याचार करते हैं। आज मैं यह दुःखकी वात सुनता हूं। चावलकी भूसी कलों द्वारा न निकलवानी चाहिये। अुससे चावलका पोषक द्रव्य नष्ट हो जाता है। अुसे तो घरमें ही हाथोंसे कूटकर साफ करना चाहिये। यही वात तेल और गुड़के लिअे है। हमें शक्करका प्रयोग न करके गुड़ खाना चाहिये। गुड़की

ललाअी ही खूनको बढ़ाती है, शक्करकी सफेदी नहीं। वह तो जहर है। लेकिन आजकल तो शुद्ध गुड़ भी नहीं मिलता। अुसे तो हमें स्वयं तैयार करना चाहिये। अिससे भी दूना लाभ होगा। शहद-जैसी कीमती चीज भी अिसी प्रकार पैदा की जा सकती है। अभी तो शहद अितना कीमती है कि या तो बड़े-बड़े लोग अुसे काममें ला सकते हैं या वैद्यराज अपनी गोलियां बनानेमें, सर्व-साधारण नहीं।

अिसे भी मधुमक्खियोंको पालकर पैदा किया जा सकता है। हमें गुड़ और शहदके लिअे देखना होगा कि वह सफाअीसे बनाया और निकाला जाय। अिन छोटे-छोटे अुद्योगोंसे आगे बढ़ें तो हमारा जीवन ही कलामय हो जाय और हम करोड़ों रुपया पैदा कर सकें। हम आरोग्यशास्त्र भी नहीं जानते। अिससे तो हमें स्वयं ही आरोग्यशास्त्रका सामान्य ज्ञान हो सकता है। मल भी अशुद्ध नहीं है, अुससे भी हम सोना बना सकते हैं, अर्थात् अच्छी खाद बनानेके अुपयोगमें वह आ सकता है। अुसका प्रयोग न करके हम अुसका दुरुपयोग करते हैं और बाहर दरिया वगैरामें फेंककर अनेक रोग पैदा करते हैं, जो हमारे प्राण-घातक हैं।

संक्षेपमें मेरा यही निवेदन है कि मैंने आपका ध्यान अिधर खींचनेकी कोशिश की है। यदि आप अिससे लाभ न अुठावें तो मैं लाचार हूं। आप अिन छोटी-छोटी बातोंसे बहुत कुछ कर सकते हैं, लेकिन अेक शर्त है कि अिन्हें चन्द लोग करें, और बाकी अुन पर निर्भर रहें तो वे अवश्य भूखे मरेंगे। किन्तु यदि सब मिलकर करेंगे तो करोड़ों रुपयेका फायदा हो सकता है, अैसा मेरा पूर्ण विश्वास है। सबको अपना हिस्सा देना चाहिये। यह बात अुद्यमशीलके लिअे है, अनुद्यमीके लिअे नहीं। मैं अुम्मीद करता हूं कि आप लोग अिस पर अवश्य विचार करके अिसे अमलमें लायेंगे।

[अिन्दौरकी अेक आम सभामें दिये गये मूल हिन्दी भाषणसे संक्षिप्त।]
हरिजनसेवक, १०–५–'३५

अेक तरहसे देखें तो हमारे देशमें बेकारीका सवाल अुतना कठिन नहीं है जितना दूसरे देशोंमें है। अिस सवालसे लोगोंकी रहन-सहनके तरीकेका घनिष्ठ सम्बन्ध है। पश्चिमके बेकार मजदूरोंको गरम कपड़े

चाहिये, दूसरे लोगोंकी ही तरह जूते और मोजे चाहिये, गरम घर चाहिये और ठंडी आबहवामें आवश्यक अन्य अनेक वस्तुयें चाहिये। हमें अिन सब चीजोंकी जरूरत नहीं है। अपने देशमें जो भयानक गरीबी और बेकारी है, अुसे देखकर मुझे रोना आया है। लेकिन मुझे स्वीकार करना चाहिये कि अिस स्थितिके लिअे हमारी अपनी अुपेक्षा और अज्ञान ही जिम्मेदार हैं। शरीर-श्रम करनेमें जो गौरव है अुसे हम नहीं जानते। अुदाहरणके लिअे, मोची जूते बनानेके सिवा कोअी दूसरा काम नहीं करता; वह अैसा समझता है कि दूसरे काम अुसकी प्रतिष्ठाके अनुकूल नहीं हैं। यह गलत खयाल दूर होना चाहिये। अुन सब लोगोंके लिअे, जो अपने हाथों और पांवोंसे अीमानदारीके साथ मेहनत करना चाहते हैं, हिन्दुस्तानमें काफी धंधा है। अीश्वरने हरअेकको काम करनेकी और अपनी रोजकी रोटीसे ज्यादा कमानेकी क्षमता दी है। और जो भी अिस क्षमताका अुपयोग करनेके लिअे तैयार हो अुसे काम अवश्य मिल सकता है। अीमानकी कमाअी करनेकी अिच्छा रखनेवालेको चाहिये कि वह किसी भी कामको नीचा न माने। जरूरत अिस बातकी है कि अीश्वरने हमें जो हाथ-पांव दिये हैं, हम अुनका अुपयोग करनेके लिअे तैयार रहें।

हरिजन, १९–१२–'३६

मैं मानता हूं कि मेहनत-मजदूरी करके अपनी जीविका कमानेवालोंके लिअे विविध धन्धोंके पर्याप्त ज्ञानकी वही कीमत है जो कि पैसेकी पूंजीपतिके लिअे है। मजदूरका कौशल ही अुसकी अूंची पूंजी है। जिस तरह पूंजीपति अपनी पूंजीको मजदूरोंके सहयोगके बिना फलप्रद नहीं बना सकता, अुसी तरह मजदूर भी अपनी मेहनतको पूंजीके सहयोगके बिना फलप्रद नहीं बना सकते। और मजदूरों तथा पूंजीवालों, दोनोंकी बुद्धिका विकास समान रूपसे हुआ हो और दोनोंको अेक-दूसरेसे न्यायोचित व्यवहार हासिल करनेकी अपनी क्षमतामें विश्वास हो, तो वे अेक-दूसरेको किसी समान कार्यमें लगे हुअे समान दरजेके सहकारी मानना सीखेंगे, और अेक-दूसरेका वैसा ही आदर करने लगेंगे। जरूरत अिस बातकी है कि वे अेक-दूसरेको अपना अैसा विरोधी समझना बन्द कर दें, जिनमें मेल कभी हो ही नहीं सकता। कठिनाअी यह है कि आज

पूंजीवालोंमें तो संघटन है और अैसा भी मालूम होता है कि अुन्होंने अपने पैर मजबूतीसे जमा रखे हैं; लेकिन मजदूरोंका अैसा नहीं है। अिसके सिवा मजदूर अपने जड़ और यांत्रिक व्यवसायसे भी जकड़ा हुआ है। अिस व्यवसायके कारण अुसे अपनी बुद्धिका विकास करनेके लिअे मौका ही नहीं मिलता। अिसीलिअे वह अपनी स्थितिकी शक्ति और अुसके गौरवको पूरी तरह समझनेमें असमर्थ रहा है। अुसे यह मानना सिखाया गया है कि अुसका वेतन तो पूंजीवाले ही तय करेंगे; अुसके सम्बन्धमें वह खुद अपनी कोअी मांग नहीं कर सकता। अुपाय यह है कि वे सही ढंगसे अपना संघटन करें, अपनी बुद्धिका विकास करें और अेकसे अधिक धंधोंमें निपुणता प्राप्त करें। ज्यों ही वे अैसा करेंगे त्यों ही वे अपना सिर अूंचा रखकर चलनेमें समर्थ हो जायंगे और अपनी जीविकाके बारेमें फिर अुन्हें डरनेकी कोअी आवश्यकता नहीं रहेगी।

हरिजन, ३–७–'३७

१३

दरिद्र-नारायण

मनुष्य-जाति अीश्वरको — जो वैसे नामहीन है और मनुष्यकी बुद्धिकी पहुंचके परे है — जिन अनन्त नामोंसे पहिचानती है, अुनमें से अेक नाम दरिद्र-नारायण है; अुसका अर्थ है गरीबोंका या गरीबोंके हृदयमें प्रगट होनेवाला अीश्वर।

यंग अिंडिया, ४–४–'२९

गरीबोंके लिअे रोटी ही अध्यात्म है। भूखसे पीड़ित अुन लाखों-करोड़ों लोगों पर किसी और चीजका प्रभाव पड़ ही नहीं सकता। कोअी दूसरी बात अुनके हृदयोंको छू ही नहीं सकती। लेकिन अुनके पास आप रोटी लेकर जाअिये और वे आपको ही भगवानकी तरह पूजेंगे। रोटीके सिवा अुन्हें और कुछ सूझ ही नहीं सकता।

यंग अिंडिया, ५–५–'२७

अपने अिन्हीं हाथोंसे मैंने अुनके फटे-पुराने कपड़ोंकी गांठोंमें मजबूतीसे बंधे हुअे मटमैले पैसे अिकट्ठे किये हैं। अुनसे आधुनिक प्रगतिकी बातें न कीजिये। अुनके सामने व्यर्थ ही अीश्वरका नाम लेकर अुनका अपमान मत कीजिये। हम अुनसे अीश्वरकी बात करेंगे तो वे आपको और मुझे राक्षस बतायेंगे। अगर वे किसी अीश्वरको पहिचानते हैं तो अुसके बारेमें अुनकी कल्पना यही हो सकती है कि वह लोगोंको आतंकित करनेवाला, दण्ड देनेवाला, अेक निर्दय अत्याचारी है।

यंग अिंडिया, १५–९–'२७

भूखा रहकर आत्महत्या करनेकी अिच्छाका संवरण मैं अपने अिसी विश्वासके कारण कर पाया हूं कि भारत जागेगा और यह कि अुसमें अिस विनाशकारी गरीबीसे अपना अुद्धार कर सकनेकी सामर्थ्य है। यदि अिस सम्भावनामें मेरा विश्वास न हो तो मुझे जीनेमें कोअी दिलचस्पी न रहे।

यंग अिंडिया, ३–४–'३१

मुझे अुनके पास अीश्वरका सन्देश ले जानेकी हिम्मत नहीं होती। मैं अुन करोड़ों भूखोंके सामने, जिनकी आंखोंमें तेज नहीं और जिनका अीश्वर अुनकी रोटी ही है, अीश्वरका नाम लूं तो फिर वहां खड़े अुस कुत्तेके सामने भी ले सकता हूं। अुनके पास अीश्वरका सन्देश ले जाना हो, तो यह काम मैं अुनके पास पवित्र परिश्रमका सन्देश ले जाकर ही कर सकता हूं। हम यहां बढ़िया नाश्ता अुड़ा कर बैठे हों और अुससे भी बढ़िया भोजनकी आशा रखते हों, तब अीश्वरकी बात करना भला मालूम होता है। लेकिन जिन लाखों लोगोंको दो जून खानेको भी नसीब नहीं होता, अुनसे मैं अीश्वरकी बात कैसे कहूं? अुनके सामने तो अीश्वर रोटी और मक्खनके रूपमें ही प्रगट हो सकता है। भारतके किसानोंको रोटी अपनी जमीनसे मिल रही थी। मैंने अुन्हें चरखा दिया, ताकि अुन्हें थोड़ा मक्खन भी मिल सके। अगर आज यहां मैं लंगोटी पहिनकर आया हूं तो अिसका कारण यही है कि मैं अुन लाखों आधे भूखे, आधे नंगे और मूक मानव-प्राणियोंका अेकमात्र प्रतिनिधि बनकर आया हूं।

यंग अिंडिया, १५–१०–'३१

हमारे लाखों मूक देशवासियोंके हृदयोंमें जो अीश्वर निवास करता है, अुसके सिवा मैं किसी दूसरे अीश्वरको नहीं जानता। वे अुसकी अुपस्थितिका अनुभव नहीं करते; मैं करता हूं। और मैं सत्यरूप अीश्वर या अीश्वररूप सत्यकी पूजा अिन मूक देशवासियोंकी सेवाके द्वारा ही करता हूं।

हरिजन, ११-३-'३९

रोजकी जरूरत जितना ही रोज पैदा करनेका अीश्वरका नियम हम नहीं जानते, या जानते हुअे भी अुसे पालते नहीं। अिसलिअे जगतमें असमानता और अुसमें से पैदा होनेवाले दुःख हम भुगतते हैं। अमीरके यहां अुसको न चाहिये वैसी चीजें भरी पड़ी होती हैं, वे लापरवाहीसे खो जाती हैं, बिगड़ जाती हैं; जब कि अिन्हीं चीजोंकी कमीके कारण करोड़ों लोग भटकते हैं, भूखों मरते हैं, ठंडसे ठिठुर जाते हैं। सब अगर अपनी जरूरतकी चीजोंका ही संग्रह करें, तो किसीको तंगी महसूस न हो और सबको संतोष हो। आज तो दोनों (तंगी) महसूस करते हैं। करोड़पति अरबपति होना चाहता है, फिर भी अुसको संतोष नहीं होता। कंगाल करोड़पति होना चाहता है; कंगालको भरपेट ही मिलनेसे संतोष होता हो अैसा नहीं देखा जाता। फिर भी अुसे भरपेट पानेका हक है, और अुसे अुतना पानेवाला बनाना समाजका फर्ज है। अिसलिअे अुसके (गरीबके) और अपने संतोषके खातिर अमीरको पहल करनी चाहिये। अगर वह अपना बहुत ज्यादा परिग्रह छोड़े तो कंगालको अपनी जरूरतका आसानीसे मिल जाय और दोनों पक्ष संतोषका सबक सीखें।

मंगल-प्रभात, पृ० २९-३०, प्रक० ६

सही सुधार, सच्ची सभ्यताका लक्षण परिग्रह बढ़ाना नहीं है, बल्कि सोच-समझकर और अपनी अिच्छासे अुसे कम करना है। ज्यों ज्यों हम परिग्रह घटाते जाते हैं त्यों त्यों सच्चा सुख और सच्चा संतोष बढ़ता जाता है, सेवाकी शक्ति बढ़ती जाती है। अभ्याससे, आदत डालनेसे आदमी अपनी हाजतें घटा सकता है; और ज्यों ज्यों अुन्हें घटाता जाता है त्यों त्यों वह सुखी, शान्त और सब तरहसे तन्दुरुस्त होता जाता है।

मंगल-प्रभात, पृ० ३१, प्रक० ६

सुनहला नियम तो . . . यह है कि जो चीज लाखों लोगोंको नहीं मिल सकती असे लेनेसे हम भी दृढ़तापूर्वक अिनकार कर दें। त्यागकी यह शक्ति हमें कहींसे अेकाअेक नहीं मिल जायगी। पहले तो हमें अैसी मनोवृत्ति पैदा करनी चाहिये कि हमें अुन सुख-सुविधाओंका अुपयोग नहीं करना है जिनसे लाखों लोग वंचित हैं। और अुसके बाद तुरन्त ही अपनी अिस मनोवृत्तिके अनुसार हमें शीघ्रतापूर्वक अपना जीवन बदलनेमें लग जाना चाहिये।

यंग अिंडिया, २४–६–'२६

अीसा, मुहम्मद, बुद्ध, नानक, कबीर, चैतन्य, शंकर, दयानन्द, रामकृष्ण आदि अैसे व्यक्ति थे, जिनका हजारों-लाखों लोगों पर गहरा प्रभाव पड़ा और जिन्होंने अुनके चरित्रका निर्माण किया। वे दुनियामें आये तो अुससे दुनिया समृद्ध हुअी है। और वे सब अैसे व्यक्ति थे जिन्होंने गरीबीको जान-बूझकर अपनाया।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ३५३

१४

शरीर-श्रम

महान प्रकृतिकी अिच्छा तो यही है कि हम अपनी रोटी पसीना बहाकर कमायें। अिसलिअे जो आदमी अपना अेक मिनट भी बेकारीमें बिताता है वह अुस हद तक अपने पड़ोसियों पर बोझ बनता है। और अैसा करना अहिंसाके बिलकुल पहले ही नियमका अुल्लंघन करना है। . . . अहिंसा यदि अपने पड़ोसीके हितका खयाल रखना न हो तब तो अुसका कोअी अर्थ ही न रहे। आलसी आदमी अहिंसाकी अिस प्रारंभिक कसौटीमें ही खोटा सिद्ध होता है।

यंग अिंडिया, ११–४–'२९

रोटीके लिअे हरअेक मनुष्यको मजदूरी करना चाहिये, शरीरको (कमरको) झुकाना चाहिये, यह अीश्वरका कानून है। यह मूल खोज

टॉल्स्टॉयकी नहीं है, लेकिन अुससे बहुत कम मशहूर रशियन लेखक टी० अेम० बोन्दरेव्हकी है। टॉल्स्टॉयने अुसे रोशन किया और अपनाया। अिसकी झांकी मेरी आंखें भगवद्गीताके तीसरे अध्यायमें करती हैं। यज्ञ किये बिना जो खाता है वह चोरीका अन्न खाता है, अैसा कठिन शाप यज्ञ नहीं करनेवालेको दिया गया है। यहां यज्ञका अर्थ जात-मेहनत या रोटी-मजदूरी ही शोभता है और मेरी रायमें यही मुमकिन है।

जो भी हो, हमारे अिस व्रतका जन्म अिस तरह हुआ है। बुद्धि भी अुस चीजकी ओर हमें ले जाती है। जो मजदूरी नहीं करता अुसे खानेका क्या हक है? बाअिबल कहती है: 'अपनी रोटी तू अपना पसीना बहाकर कमा और खा'। करोड़पति भी अगर अपने पलंग पर लोटता रहे और अुसके मुंहमें कोअी खाना डाले तब खाये, तो वह ज्यादा देर तक खा नहीं सकेगा, अिसमें अुसको मजा भी नहीं आयेगा। अिसलिअे वह कसरत वगैरा करके भूख पैदा करता है और खाता तो है अपने ही हाथ-मुंह हिलाकर। अगर यों किसी न किसी रूपमें अंगोंकी कसरत राय-रंक सबको करनी ही पड़ती है, तो रोटी पैदा करनेकी कसरत ही सब क्यों न करें? यह सवाल कुदरती तौर पर अुठता है। किसानको हवाखोरी या कसरत करनेके लिअे कोअी कहता नहीं है और दुनियाके ९० फीसदीसे भी ज्यादा लोगोंका निर्वाह खेती पर होता है। बाकीके दस फीसदी लोग अगर अिनकी नकल करें तो जगतमें कितना सुख, कितनी शांति और कितनी तन्दुरुस्ती फैल जाये? और अगर खेतीके साथ बुद्धि भी मिले तो खेतीसे सम्बन्ध रखनेवाली बहुतसी मुसीबतें आसानीसे दूर हो जायेंगी। फिर, अगर अिस जात-मेहनतके निरपवाद कानूनको सब मानें तो अूंच-नीचका भेद मिट जाय।

आज तो जहां अूंच-नीचकी गंध भी नहीं थी वहां यानी वर्ण-व्यवस्थामें भी वह घुस गअी है। मालिक-मजदूरका भेद आम और स्थायी हो गया है और गरीब धनवानसे जलता है। अगर सब रोटीके लिअे मजदूरी करें, तो अूंच-नीचका भेद न रहे; और फिर भी धनिक वर्ग रहेगा तो वह खुदको मालिक नहीं बल्कि अुस धनका रखवाला या ट्रस्टी मानेगा और अुसका ज्यादातर अुपयोग सिर्फ लोगोंकी सेवाके लिअे ही करेगा।

जिसे अहिंसाका पालन करना है, सत्यकी भक्ति करनी है, ब्रह्मचर्यको कुदरती बनाना है, अुसके लिअे तो जात-मेहनत रामबाण-सी हो जाती है। यह मेहनत सचमुच तो खेतीमें ही है। लेकिन सब खेती नहीं कर सकते, अैसी आज तो हालत है ही। अिसलिअे खेतीके आदर्शको खयालमें रखकर खेतीके अेवजमें आदमी भले दूसरी मजदूरी करे — जैसे कताअी, बुनाअी, बढ़अीगिरी, लुहारी वगैरा वगैरा। सबको खुदके भंगी तो बनना ही चाहिये। जो खाता है वह टट्टी तो फिरेगा ही। जो टट्टी फिरता है वही अपनी टट्टी जमीनमें गाड़ दे यह अुत्तम रिवाज है। अगर यह नहीं ही हो सके तो प्रत्येक कुटुम्ब अपना यह फर्ज अदा करे।

जिस समाजमें भंगीका अलग पेशा माना गया है, वहां कोअी बड़ा दोष पैठ गया है, अैसा मुझे तो बरसोंसे लगता रहा है। अिस जरूरी और तन्दुरुस्ती बढ़ानेवाले (आरोग्य-पोषक) कामको सबसे नीचा काम पहले-पहल किसने माना, अिसका अितिहास हमारे पास नहीं है। जिसने माना अुसने हम पर अुपकार तो नहीं ही किया। हम सब भंगी हैं यह भावना हमारे मनमें बचपनसे ही जम जानी चाहिये; और अुसका सबसे आसान तरीका यह है कि जो समझ गये हैं वे जात-मेहनतका आरम्भ पाखाना-सफाअीसे करें। जो समझ-बूझकर, ज्ञानपूर्वक यह करेगा, वह अुसी क्षणसे धर्मको निराले ढंगसे और सही तरीकेसे समझने लगेगा।

मंगल-प्रभात, पृ० ४१–४४, प्रक० ९

अधिकारोंकी अुत्पत्तिका सच्चा स्रोत कर्तव्योंका पालन है। यदि हम सब अपने कर्तव्योंका पालन करें तो अधिकारोंको ज्यादा ढूंढ़नेकी जरूरत नहीं रहेगी। लेकिन यदि हम कर्तव्योंको पूरा किये बिना अधिकारोंके पीछे दौड़ें, तो वह मृग-मरीचिकाके पीछे पड़ने जैसा ही व्यर्थ सिद्ध होगा। जितना हम अुनके पीछे जायेंगे अुतने ही वे हमसे दूर हटते जायेंगे। यही शिक्षा श्रीकृष्णने अिन अमर शब्दोंमें दी है: 'तुम्हारा अधिकार कर्ममें ही है, फलमें कदापि नहीं।' यहां कर्म कर्तव्य है और फल अधिकार।

यंग अिंडिया, ८–१–'२५

जीवनकी आवश्यकताओंको पानेका हरअेक आदमीको समान अधिकार है। यह अधिकार तो पशुओं और पक्षियोंको भी है। और चूंकि प्रत्येक अधिकारके साथ अेक सम्बन्धित कर्तव्य जुड़ा हुआ है और अुस अधिकार पर कहींसे कोअी आक्रमण हो तो अुसका वैसा ही अिलाज भी है, अिसलिअे हमारी समस्याका रूप यह है कि हम अुस प्रारम्भिक बुनियादी समानताको सिद्ध करनेके लिअे अुस समानताके अधिकारसे जुड़े हुअे कर्तव्य और अिलाज ढूंढ़ निकालें। वह कर्तव्य यह है कि हम अपने हाथ-पांवोंसे मेहनत करें और वह अिलाज यह है कि जो हमें हमारी मेहनतके फलसे वंचित करे अुसके साथ हम असहयोग करें।

यंग अिंडिया, २६-३-'३१

यदि सब लोग अपने ही परिश्रमकी कमाअी खावें तो दुनियामें अन्नकी कमी न रहे, और सबको अवकाशका काफी समय भी मिले। न तब किसीको जनसंख्याकी वृद्धिकी शिकायत रहे, न कोअी बीमारी आवे, और न मनुष्यको कोअी कष्ट या क्लेश ही सतावे। वह श्रम अुच्च-से-अुच्च प्रकारका यज्ञ होगा। अिसमें संदेह नहीं कि मनुष्य अपने शरीर या बुद्धिके द्वारा और भी अनेक काम करेंगे, पर अुनका वह सब श्रम लोक-कल्याणके लिअे प्रेमका श्रम होगा। अुस अवस्थामें न कोअी राव होगा, न कोअी रंक; न कोअी अूंच होगा, न कोअी नीच; न कोअी स्पृश्य रहेगा, न कोअी अस्पृश्य।

भले ही वह अेक अलभ्य आदर्श हो, पर अिस कारण हमें अपना प्रयत्न बन्द कर देनेकी जरूरत नहीं। यज्ञके सम्पूर्ण नियमको अर्थात् अपने 'जीवनके नियम' को पूरा किये बिना भी अगर हम अपने नित्यके निर्वाहके लिअे पर्याप्त शारीरिक श्रम करेंगे, तो अुस आदर्शके बहुत कुछ निकट तो हम पहुंच ही जायंगे।

यदि हम अैसा करेंगे तो हमारी आवश्यकतायें बहुत कम हो जायंगी। और हमारा भोजन भी सादा बन जायगा। तब हम जीनेके लिअे खायेंगे, न कि खानेके लिअे जीयेंगे। अिस बातकी यथार्थतामें जिसे शंका हो वह अपने परिश्रमकी कमाअी खानेका प्रयत्न करे। अपने पसीनेकी कमाअी खानेमें अुसे कुछ और ही स्वाद मिलेगा, अुसका

स्वास्थ्य भी अच्छा रहेगा, और अुसे यह मालूम हो जायगा कि जो बहुतसी विलासकी चीजें अुसने अपने अूपर लाद रखी थीं वे सब बिलकुल ही फिजूल थीं।

हरिजनसेवक, ५–७–'३५.

बुद्धिपूर्वक किया हुआ शरीर-श्रम समाज-सेवाका सर्वोत्कृष्ट रूप है। यहां शरीर-श्रम शब्दके साथ 'बुद्धिपूर्वक किया हुआ' विशेषण यह दिखानेके लिअे जोड़ा गया है कि किये हुअे शरीर-श्रमके पीछे समाज-सेवाका निश्चित अुद्देश्य हो तभी अुसे समाज-सेवाका दरजा मिल सकता है। अैसा न हो तब तो कहा जायगा कि हरअेक मजदूर समाज-सेवा करता ही है। वैसे, अेक अर्थमें यह कथन सही भी है, लेकिन यहां अुससे कुछ ज्यादा अभीष्ट है। जो आदमी सब लोगोंके सामान्य कल्याणके लिअे परिश्रम करता है वह जरूर समाजकी ही सेवा करता है और अुसकी आवश्यकतायें पूरी होनी ही चाहिये। अिसलिअे अैसा शरीर-श्रम समाज-सेवासे भिन्न नहीं है।

हरिजन, १–६–'३५

क्या मनुष्य अपने बौद्धिक श्रमसे अपनी आजीविका नहीं कमा सकते? नहीं। शरीरकी आवश्यकताअें शरीर द्वारा ही पूरी होनी चाहियें। केवल मानसिक और बौद्धिक श्रम आत्माके लिअे और स्वयं अपने ही संतोषके लिअे है। अुसका पुरस्कार कभी नहीं मांगा जाना चाहिये। आदर्श राज्यमें डॉक्टर, वकील और अैसे ही दूसरे लोग केवल समाजके लाभके लिअे काम करेंगे; अपने लिअे नहीं। शारीरिक श्रमके धर्मका पालन करनेसे समाजकी रचनामें अेक शान्त क्रान्ति हो जायगी। मनुष्यकी विजय अिसमें होगी कि अुसने जीवन-संग्रामके बजाय परस्पर सेवाके संग्रामकी स्थापना कर दी। पशुधर्मके स्थान पर मानव-धर्म कायम हो जायगा।

देहातमें लौट जानेका अर्थ यह है कि शरीर-श्रमके धर्मको अुसके तमाम अंगोंके साथ हम निश्चित-रूपमें स्वेच्छापूर्वक स्वीकार करते हैं। परन्तु आलोचक कहते हैं, 'भारतकी करोड़ों संतानें आज भी देहातमें

रहती हैं, फिर भी अुन्हें पेटभर भोजन नसीब नहीं होता।' अफसोसके साथ कहना पड़ता है कि यह बिलकुल सच बात है। सौभाग्यसे हम जानते हैं कि अुनका शरीर-श्रमके धर्मका पालन स्वेच्छापूर्ण नहीं है। अुनका बस चले तो वे शरीर-श्रम कभी न करें और नजदीकके शहरमें कोअी व्यवस्था हो जाय तो वहां दौड़ कर चले जायं। मजबूर होकर किसी मालिककी आज्ञा पालना गुलामीकी स्थिति है, स्वेच्छासे अपने पिताकी आज्ञा मानना पुत्रत्वका गौरव है। अिसी प्रकार शरीर-श्रमके नियमका विवश होकर पालन करनेसे दरिद्रता, रोग और असंतोष अुत्पन्न होते हैं। यह दासत्वकी दशा है। शरीर-श्रमके नियमका स्वेच्छा-पूर्वक पालन करनेसे संतोष और स्वास्थ्य मिलता है। और तन्दुरुस्ती ही असली दौलत है, न कि सोने-चांदीके टुकड़े। ग्रामोद्योग-संघ स्वेच्छा-पूर्ण शरीर-श्रमका ही अेक प्रयोग है।

हरिजन, २९–६–'३५

भिखारियोंकी समस्या

मेरी अहिंसा किसी अैसे तन्दुरुस्त आदमीको मुफ्त खाना देनेका विचार बरदाश्त नहीं करेगी, जिसने अुसके लिअे अीमानदारीसे कुछ न कुछ काम न किया हो; और मेरा वश चले तो जहां मुफ्त भोजन मिलता है, वे सब सदाव्रत मैं बन्द कर दूं। अिससे राष्ट्रका पतन हुआ है और सुस्ती, बेकारी, दंभ और अपराधोंको भी प्रोत्साहन मिला है अिस प्रकारका अनुचित दान देशके भौतिक या आध्यात्मिक धन कुछ भी वृद्धि नहीं करता और दाताके मनमें पुण्यात्मा होनेका झू भाव पैदा करता है। क्या ही अच्छी और बुद्धिमानीकी बात हो, दानी लोग अैसी संस्थायें खोलें जहां अुनके लिअे काम करनेवाले पुरुषोंको स्वास्थ्यप्रद और स्वच्छ हालतमें भोजन दिया जाय। खुदका तो यह विचार है कि चरखा या अुससे सम्बन्धित क्रियाअ कोअी भी कार्य आदर्श होगा। परन्तु अुन्हें यह स्वीकार न हो कोअी भी दूसरा काम चुन सकते हैं। जो भी हो, नियम य चाहिये कि 'मेहनत नहीं तो खाना भी नहीं।' प्रत्येक शह

भिखमंगोंकी अपनी-अपनी अलग कठिन समस्या है, जिसके लिअे धनवान जिम्मेदार हैं। मैं जानता हूं कि आलसियोंको मुफ्त भोजन करा देना बहुत आसान है, परन्तु अैसी संस्था संगठित करना बहुत कठिन है जहां किसीको खाना देनेसे पहले अुससे अीमानदारीसे काम कराना जरूरी हो। आर्थिक दृष्टिसे, कमसे कम शुरूमें, लोगोंसे काम लेनेके बाद अुन्हें खाना खिलानेका खर्च मौजूदा मुफ्तके भोजनालयोंके खर्चसे ज्यादा होगा। लेकिन मुझे पक्का विश्वास है कि यदि हम भूमितिकी गतिसे देशमें बढ़नेवाले आवारागर्द लोगोंकी संख्या नहीं बढ़ाना चाहते, तो अन्तमें यह व्यवस्था अधिक सस्ती पड़ेगी।

यंग अिंडिया, १३–८–'३५

भीख मांगनेको प्रोत्साहन देना बेशक बुरा है, लेकिन मैं किसी भिखारीको काम और भोजन दिये बिना नहीं लौटाअूंगा। हां, वह काम करना मंजूर न करे तो मैं अुसे भोजनके बिना ही चला जाने दूंगा। जो लोग शरीरसे लाचार हैं, जैसे लंगड़े या विकलांग, अुनका पोषण राज्यको करना चाहिये। लेकिन बनावटी या सच्ची अंधताकी आड़में भी काफी धोखा-धड़ी चल रही है। कितने ही अैसे अंधे हैं जिन्होंने अपनी अंधताका लाभ अुठाकर काफी पैसा जमा कर लिया है। वे अिस तरह अपनी अंधताका अेक अनुचित लाभ अुठायें, अिसके बजाय यह ज्यादा अच्छा होगा कि अुन्हें अपाहिजोंकी देखभाल करनेवाली किसी संस्थामें रख दिया जाय।

हरिजन, ११–५–'३५

१५

सर्वोदय

हमने देखा कि मनुष्यकी वृत्तियां चंचल हैं। अुसका मन वेकारकी दौड़-धूप किया करता है। अुसका शरीर जैसे जैसे ज्यादा देते जायं वैसे वैसे ज्यादा मांगता जाता है। ज्यादा लेकर भी वह सुखी नहीं होता। भोग भोगनेसे भोगकी अिच्छा वढ़ती जाती है। अिसलिअे हमारे पुरखोंने भोगकी हद वांध दी। वहुत सोचकर अुन्होंने देखा कि सुख-दु:ख तो मनके कारण हैं। अमीर अपनी अमीरीकी वजहसे सुखी नहीं है, गरीव अपनी गरीवीके कारण दुखी नहीं है। अमीर दुखी देखनेमें आता है और गरीव सुखी देखनेमें आता है। करोड़ों लोग तो गरीव ही रहेंगे। अैसा देखकर पूर्वजोंने भोगकी वासना छुड़वाअी। हजारों साल पहले जो हल काममें लिया जाता था अुससे हमने काम चलाया। हजारों साल पहले जैसे झोंपड़े थे अुन्हें हमने कायम रखा। हजारों साल पहले जैसी हमारी शिक्षा थी वही चलती आअी। हमने नाशकारक होड़को जगह नहीं दी। सव अपना अपना धंधा करते रहे। अुसमें अुन्होंने दस्तूरके मुताविक दाम लिये। अैसा नहीं था कि हमें यंत्र वगैराकी खोज करना ही नहीं आता था। लेकिन हमारे पूर्वजोंने देखा कि लोग अगर यंत्र वगैराकी झंझटमें पड़ेंगे, तो गुलाम ही वनेंगे और अपनी नीतिको छोड़ देंगे। अुन्होंने सोच-समझकर कहा कि हमें अपने हाथ-पैरोंसे जो काम हो सके वही करना चाहिये। हाथ-पैरोंका अिस्तेमाल करनेमें ही सच्चा सुख है, अुसीमें तन्दुरुस्ती है।

अुन्होंने सोचा कि वड़े शहर कायम करना वेकारकी झंझट है। अुनमें लोग सुखी नहीं होंगे। अुनमें धूर्तोंकी टोलियां और वेश्याओंकी गलियां पैदा होंगी; गरीव अमीरोंसे लूटे जायेंगे। अिसलिअे अुन्होंने छोटे गांवोंसे ही संतोष माना।

अुन्होंने देखा कि राजाओं और अुनकी तलवारके वनिस्वत नीतिका वल ज्यादा वलवान है। अिसलिअे अुन्होंने राजाओंको नीतिवान पुरुषों — ऋषियों और फकीरों — से कम दरजेका माना।

अैसी जिस प्रजाकी गठन है, वह प्रजा दूसरोंको सिखाने लायक है; वह दूसरोंसे सीखने लायक नहीं है।

अिस राष्ट्रमें अदालतें थीं, वकील थे, डॉक्टर-वैद्य थे। लेकिन वे सब ठीक ढंगसे नियमके मुताबिक चलते थे। सब जानते थे कि ये धंधे बड़े धंधे नहीं हैं। और वकील, डॉक्टर वगैरा लोगोंमें लूट नहीं चलाते थे, वे तो लोगोंके आश्रित थे। वे लोगोंके मालिक बनकर नहीं रहते थे। अिन्साफ काफी अच्छा होता था। अदालतोंमें न जाना, लोगोंका ध्येय था। अुन्हें भरमानेवाले स्वार्थी लोग समाजमें नहीं थे। अितनी सड़न भी सिर्फ राजा और राजधानीके आसपास ही थी। यों आम प्रजा तो अुनसे स्वतंत्र रहकर अपने खेतोंका मालिकी हक भोगती थी — खेती करके अपना निर्वाह करती थी। अुसके पास सच्चा स्वराज्य था।

हिन्द स्वराज्य, पृ० ४५–४६, प्रक० १३

अैसी नम्रता — शून्यता — आदत डालनेसे कैसे आ सकती है? लेकिन व्रतोंको सही ढंगसे समझनेसे नम्रता अपने-आप आने लगती है। सत्यका पालन करनेकी अिच्छा रखनेवाला अहंकारी कैसे हो सकता है? दूसरेके लिअे प्राण न्योछावर करनेवाला अपनी जगह बनाने कहां जाय? अुसने तो जब प्राण न्योछावर करनेका निश्चय किया तभी अपनी देहको फेंक दिया। अैसी नम्रताका मतलब पुरुषार्थका अभाव तो नहीं है? अैसा अर्थ हिन्दू धर्ममें कर डाला गया है सही। और अिसीलिअे आलस्यको और पाखंडको बहुतेरे स्थानों पर जगह मिल गअी हैं। सचमुच तो नम्रताके मानी हैं तीव्रतम पुरुषार्थ, सख्तसे सख्त मेहनत। लेकिन वह सब परमार्थके लिअे होना चाहिये। अीश्वर खुद चौबीसों घण्टे अेक सांससे काम करता रहता है, अंगड़ाअी लेने तककी फुरसत नहीं लेता। अुसके हम हो जायं, अुसमें हम मिल जायं, तो हमारा अुद्यम अुसके जैसा ही अतंद्रित हो जायगा — होना चाहिये।

मंगल-प्रभात, पृ० ५३–५४, प्रक० १२

भगवानके नाम पर किया गया और अुसे समर्पित किया गया कोअी भी काम छोटा नहीं है। अिस तरह किये गये हरअेक छोटे या

बड़े कामका समान मूल्य है। कोअी भंगी अपना काम भगवानकी सेवाकी भावनासे करता हो तो अुसके और अुस राजाके कामका, जो अपनी प्रतिभाका अुपयोग भगवानके नाम पर और ट्रस्टीकी तरह करता है, समान महत्त्व है।

यंग अिंडिया, २५–११–'२६

अहिंसाका पुजारी अुपयोगितावाद (बड़ीसे बड़ी संख्याका ज्यादासे ज्यादा हित) का समर्थन नहीं कर सकता। वह तो 'सर्वभूत-हिताय' यानी सबके अधिकतम लाभके लिअे ही प्रयत्न करेगा और अिस आदर्शकी प्राप्तिमें मर जायगा। अिस प्रकार वह अिसलिअे मरना चाहेगा कि दूसरे जी सकें। दूसरोंके साथ-साथ वह अपनी सेवा भी आप मर कर करेगा। सबके अधिकतम सुखके भीतर अधिकांशका अधिकतम सुख भी मिला हुआ है। और अिसलिअे अहिंसावादी और अुपयोगितावादी अपने रास्ते पर कअी बार मिलेंगे। किन्तु अन्तमें अैसा भी अवसर आयेगा, जब अुन्हें अलग-अलग रास्ते पकड़ने होंगे और किसी-किसी दशामें अेक-दूसरेका विरोध भी करना होगा। तर्कसंगत बने रहनेके लिअे अुपयोगितावादी अपनेको कभी बलि नहीं कर सकता। परन्तु अहिंसावादी हमेशा मिट जानेको तैयार रहेगा।

हिन्दी नवजीवन, ९–१२–'२६

जब तक सेवाकी जड़ प्रेम या अहिंसामें न हो तब तक वह सम्भव ही नहीं है। सच्चा प्रेम समुद्रकी तरह निस्सीम होता है और हृदयके भीतर ज्वारकी तरह अुठकर बढ़ते हुअे वह बाहर फैल जाता है तथा सीमाओंको पार करके दुनियाके छोरों तक जा पहुंचता है। सेवाके लिअे आवश्यक दूसरी चीज है शरीर-श्रम, जिसे गीतामें यज्ञ कहा गया है; शरीर-श्रमके बिना भी सेवा असंभव है। सेवाके लिअे जब कोअी पुरुष या स्त्री शरीर-श्रम करती है तभी अुसे जीनेका अधिकार प्राप्त होता है।

यंग अिंडिया, २०–९–'२८

जब तक हम अपना अहंकार भूलकर शून्यताकी स्थिति प्राप्त नहीं करते, तब तक हमारे लिअे अपने दोषोंको जीतना सम्भव नहीं है।

अीश्वर पूर्ण आत्म-समर्पणके विना संतुष्ट नहीं होता। वास्तविक स्वतंत्रताका अितना मूल्य वह अवश्य चाहता है। और जब मनुष्य अपना अैसा समर्पण कर चुकता है तब तुरंत ही वह अपनेको प्राणिमात्रकी सेवामें लीन पाता है। यह सेवा ही तब अुसके आनंद और आमोदका विषय हो जाती है। तब वह अेक बिलकुल नया ही आदमी बन जाता है और अीश्वरकी अिस सृष्टिकी सेवामें अपनेको खपाते हुअे कभी नहीं थकता।

हिन्दी नवजीवन, २०-१२-'२८

अिस सत्यकी भक्तिके खातिर ही हमारी हस्ती हो। अुसीके लिअे हमारा हरअेक काम, हरअेक प्रवृत्ति हो। अुसीके लिअे हम हर सांस लें। अैसा करना हम सीखें तो दूसरे सब नियमोंके पास भी आसानीसे पहुंच सकते हैं; और अुनका पालन भी आसान हो जायगा। सत्यके बगैर किसी भी नियमका शुद्ध पालन नामुमकिन है।

मंगल-प्रभात, पृ० ८, प्रक० १

सत्यकी खोज करनेवाला, अहिंसा बरतनेवाला परिग्रह नहीं कर सकता। परमात्मा परिग्रह नहीं करता। अपने लिअे जरूरी चीज वह रोजकी रोज पैदा करता है। अिसलिअे अगर हम अुस पर पूरा भरोसा रखते हैं, तो हमें समझना चाहिये कि हमारी जरूरतकी चीजें वह रोजाना देता है, और देगा।

मंगल-प्रभात, पृ० २९, प्रक० ६

साधन और साध्य

लोग कहते हैं, 'आखिर साधन तो साधन ही हैं।' मैं कहूंगा, 'आखिर तो साधन ही सब कुछ हैं।' जैसे साधन होंगे वैसा ही साध्य होगा। साधन और साध्यको अलग करनेवाली कोअी दीवार नहीं है। वास्तवमें सृष्टिकर्ताने हमें साधनों पर नियंत्रण (और वह भी बहुत सीमित नियंत्रण) दिया है; साध्य पर तो कुछ भी नहीं दिया। लक्ष्य-

सिद्धि ठीक अुतनी ही शुद्ध होती है, जितने हमारे साधन शुद्ध होते हैं। यह बात अैसी है जिसमें किसी अपवादकी गुंजाअिश नहीं है।

यंग अिंडिया, १७–७–'२४

हिंसापूर्ण अुपायोंसे लिया गया स्वराज्य भी हिंसापूर्ण होगा और वह दुनियाके लिअे तथा खुद भारतके लिअे भयका कारण सिद्ध होगा।

यंग अिंडिया, १७–७–'२४

गन्दे साधनोंसे मिलनेवाली चीज भी गन्दी ही होगी। अिसलिअे राजाको मारकर राजा और प्रजा अेकसे नहीं बन सकेंगे। मालिकका सिर काटकर मजदूर मालिक नहीं हो सकेंगे। यही बात सब पर लागू की जा सकती है।

कोअी असत्यसे सत्यको नहीं पा सकता। सत्यको पानेके लिअे हमेशा सत्यका आचरण करना ही होगा। अहिंसा और सत्यकी तो जोड़ी है न? हरगिज नहीं। सत्यमें अहिंसा छिपी हुअी है और अहिंसामें सत्य। अिसीलिअे मैंने कहा है कि सत्य और अहिंसा अेक ही सिक्केके दो रुख हैं। दोनोंकी कीमत अेक ही है। केवल पढ़नेमें ही फर्क है; अेक तरफ अहिंसा है, दूसरी तरफ सत्य। पूरी पूरी पवित्रताके बिना अहिंसा और सत्य निभ ही नहीं सकते। शरीर या मनकी अपवित्रताको छिपानेसे असत्य और हिंसा ही पैदा होंगी।

अिसलिअे सत्यवादी, अहिंसक और पवित्र समाजवादी ही दुनियामें या हिन्दुस्तानमें समाजवाद फैला सकता है।

हरिजनसेवक, १३–७–'४७

१६
संरक्षकताका सिद्धान्त

फर्ज कीजिये कि विरासतके या अुद्योग-व्यवसायके द्वारा मुझे प्रचुर सम्पत्ति मिल गअी। तब मुझे यह जानना चाहिये कि वह सब सम्पत्ति मेरी नहीं है, बल्कि मेरा तो अुस पर अितना ही अधिकार है कि जिस तरह दूसरे लाखों आदमी गुजर करते हैं अुसी तरह मैं भी अिज्जतके साथ अपना गुजर भर करूं। मेरी शेष सम्पत्ति पर राष्ट्रका हक है और अुसीके हितार्थ अुसका अुपयोग होना आवश्यक है। अिस सिद्धान्तका प्रतिपादन मैंने तब किया था, जब कि जमींदारों और राजाओंकी सम्पत्तिके सम्बन्धमें समाजवादी सिद्धान्त देशके सामने आया था। समाजवादी अिन सुविधा-प्राप्त वर्गोंको खतम कर देना चाहते हैं, जब कि मैं यह चाहता हूं कि वे (जमींदार और राजा-महाराजा) अपने लोभ और सम्पत्तिके बावजूद अुन लोगोंके समकक्ष बन जायं जो मेहनत करके रोटी कमाते हैं। मजदूरोंको भी यह महसूस करना होगा कि मजदूरका काम करनेकी शक्ति पर जितना अधिकार है, मालदार आदमीका अपनी सम्पत्ति पर अुससे भी कम है।

यह दूसरी बात है कि अिस तरहके सच्चे ट्रस्टी कितने हो सकते हैं। अगर सिद्धान्त ठीक हैं, तो यह बात गौण है कि अुनका पालन अनेक लोग कर सकते हैं या केवल अेक ही आदमी कर सकता है। यह प्रश्न आत्म-विश्वासका है। अगर आप अहिंसाके सिद्धान्तको स्वीकार करें, तो आपको अुसके अनुसार आचरण करनेकी कोशिश करनी चाहिये, चाहे अुसमें आपको सफलता मिले या असफलता। आप यह तो कह सकते हैं कि अिस पर अमल करना मुश्किल है, लेकिन अिस सिद्धान्तमें अैसी कोअी बात नहीं है जिसके लिअे यह कहा जा सके कि वह बुद्धि-ग्राह्य नहीं है।

हरिजनसेवक, ३–६–'३९

आप कह सकते हैं कि ट्रस्टीशिप तो कानून-शास्त्रकी अेक कल्पना-मात्र है; व्यवहारमें अुसका कहीं कोअी अस्तित्व दिखाअी नहीं पड़ता। लेकिन यदि लोग अुस पर सतत विचार करें और अुसे आचरणमें अुतारनेकी कोशिश भी करते रहें, तो मनुष्य-जातिके जीवनकी नियामक शक्तिके रूपमें प्रेम आज जितना प्रभावशाली दिखाअी देता है, अुससे कहीं अधिक दिखाअी पड़ेगा। वेशक, पूर्ण ट्रस्टीशिप तो युक्लिडकी विन्दुकी व्याख्याकी तरह अेक कल्पना ही है और अुतनी ही अप्राप्य भी है। लेकिन यदि अुसके लिअे कोशिश की जाय तो दुनियामें समानताकी स्थापनाकी दिशामें हम दूसरे किसी अुपायसे जितनी दूर तक जा सकते हैं, अुसके वजाय अिस अुपायसे ज्यादा दूर तक जा सकेंगे। . . . मेरा दृढ़ निश्चय है कि यदि राज्यने पूंजीवादको हिंसाके द्वारा दवानेकी कोशिश की तो वह खुद ही हिंसाके जालमें फंस जायगा और फिर कभी भी अहिंसाका विकास नहीं कर सकेगा। राज्य हिंसाका अेक केन्द्रित और संघटित रूप ही है। व्यक्तिमें आत्मा होती है, परंतु चूंकि राज्य अेक जड़ यंत्रमात्र है अिसलिअे अुसे हिंसासे कभी नहीं छुड़ाया जा सकता। क्योंकि हिंसासे ही तो अुसका जन्म होता है। अिसीलिअे मैं ट्रस्टीशिपके सिद्धान्तको तरजीह देता हूं। यह डर हमेशा वना रहता है कि कहीं राज्य अुन लोगोंके खिलाफ, जो अुससे मतभेद रखते हैं, वहुत ज्यादा हिंसाका अुपयोग न करे। लोग यदि स्वेच्छासे ट्रस्टियोंकी तरह व्यवहार करने लगें तो मुझे सचमुच वड़ी खुशी होगी। लेकिन यदि वे अैसा न करें तो मेरा खयाल है कि हमें राज्यके द्वारा भरसक कम हिंसाका आश्रय लेकर अुनसे अुनकी सम्पत्ति ले लेनी पड़ेगी। . . . (यही कारण है कि मैंने गोलमेज परिषदमें यह कहा था कि सभी निहित हितवालोंकी सम्पत्तिकी जांच होनी चाहिये और जहां आवश्यक मालूम हो वहां अुनकी सम्पत्ति राज्यको . . . मुआवजा देकर या मुआवजा विना दिये ही, जहां जैसा अुचित हो, अपने हाथमें कर लेनी चाहिये।) व्यक्तिगत तौर पर तो मैं यह चाहूंगा कि राज्यके हाथोंमें शक्तिका ज्यादा केन्द्रीकरण न हो, अुसके वजाय ट्रस्टीशिपकी भावनाका विस्तार हो। क्योंकि मेरी रायमें राज्यकी हिंसाकी तुलनामें वैयक्तिक मालिकीकी

हिंसा कम हानिकर है । लेकिन यदि राज्यकी मालिकी अनिवार्य ही हो तो मैं भरसक कमसे कम राज्यकी मालिकीकी सिफारिश करूंगा।

दि मॉडर्न रिव्यू, १९३५, पृ० ४१२

आजकल यह कहना अेक फैशन हो गया है कि समाजको अहिंसाके आधार पर न तो संघटित किया जा सकता है और न चलाया जा सकता है । मैं अिस कथनका विरोध करता हूं । परिवारमें जब पिता अपने पुत्रको अपराध करने पर थप्पड़ मार देता है, तो पुत्र अुसका बदला लेनेकी बात नहीं सोचता । वह अपने पिताकी आज्ञा अिसलिअे स्वीकार कर लेता है कि अिस थप्पड़के पीछे वह अपने पिताके प्यारको आहत हुआ देखता है, अिसलिअे नहीं कि थप्पड़ अुसे वैसा अपराध दुबारा करनेसे रोकता है । मेरी रायमें समाजकी व्यवस्था अिस तरह होनी चाहिये; यह अुसका अेक छोटा रूप है। जो बात परिवारके लिअे सही है, वही समाजके लिअे भी सही है; क्योंकि समाज अेक बड़ा परिवार ही है।

हरिजन, ३-१२-'३८

मेरी धारणा है कि अहिंसा केवल वैयक्तिक गुण नहीं है । वह *अेक सामाजिक गुण भी है और अन्य गुणोंकी तरह अुसका भी* विकास किया जाना चाहिये। यह तो मानना ही होगा कि समाजके पारस्परिक व्यवहारोंका नियमन बहुत हद तक अहिंसाके द्वारा होता है। मैं अितना ही चाहता हूं कि अिस सिद्धान्तका बड़े पैमाने पर, राष्ट्रीय और आन्तरराष्ट्रीय पैमाने पर विस्तार किया जाय।

हरिजन ७-१-'३९

मेरा ट्रस्टीशिपका सिद्धान्त कोअी अैसी चीज नहीं है, जो काम निकालनेके लिअे आज घड़ लिया गया हो। अपनी मंशा छिपानेके लिअे खड़ा किया गया आवरण तो वह हरगिज नहीं ह। मेरा विश्वास है कि दूसरे सिद्धान्त जब नहीं रहेंगे तब भी वह रहेगा। अुसके पीछे तत्त्वज्ञान और धर्मके समर्थनका बल है। धनके मालिकोंने अिस सिद्धान्तके अनुसार आचरण नहीं किया है, अिस बातसे यह सिद्ध नहीं होता कि वह

सिद्धान्त झूठा है; अिससे धनके मालिकोंकी कमजोरी मात्र सिद्ध होती है। अहिंसाके साथ किसी दूसरे सिद्धान्तका मेल ही नहीं बैठता। अहिंसक मार्गकी खूबी यह है कि अन्यायी यदि अपना अन्याय दूर नहीं करता तो वह अपना नाश खुद ही कर डालता है। क्योंकि अहिंसक असहयोगके कारण या तो वह अपनी गलती देखने और सुधारनेके लिअे मजबूर हो जाता है या वह बिलकुल अकेला पड़ जाता है।

हरिजन, १६–१२–'३९

मैं अिस रायके साथ निःसंकोच अपनी सम्मति जाहिर करता हूं कि आम तौर पर धनवान — केवल धनवान ही क्यों, बल्कि ज्यादातर लोग — अिस बातका विशेष विचार नहीं करते कि वे पैसा किस तरह कमाते हैं। अहिंसक अुपायका प्रयोग करते हुअे यह विश्वास तो होना ही चाहिये कि कोअी आदमी कितना ही पतित क्यों न हो, यदि अुसका अिलाज कुशलतापूर्वक और सहानुभूतिके साथ किया जाय तो अुसे सुधारा जा सकता है। हमें मनुष्योंमें रहनेवाले दैवी अंशको प्रभावित करना चाहिये और अपेक्षा करनी चाहिये कि अुसका अनुकूल परिणाम निकलेगा। यदि समाजका हरअेक सदस्य अपनी शक्तियोंका अुपयोग वैयक्तिक स्वार्थ साधनेके लिअे नहीं बल्कि सबके कल्याणके लिअे करे, तो क्या अिससे समाजकी सुख-समृद्धिमें वृद्धि नहीं होगी? हम अैसी जड़ समानताका निर्माण नहीं करना चाहते, जिसमें कोअी आदमी योग्यताओंका पूरा-पूरा अुपयोग कर ही न सके। अैसा समाज अन्तमें नष्ट हुअे बिना नहीं रह सकता। अिसलिअे मेरी यह सलाह बिलकुल ठीक है कि धनवान लोग चाहे करोड़ों रुपये कमायें (बेशक, ओीमानदारीसे), लेकिन अुनका अुद्देश्य वह सारा पैसा सबके कल्याणमें समर्पित कर देनेका होना चाहिये। 'तेन त्यक्तेन भुंजीथाः' मंत्रमें असाधारण ज्ञान भरा पड़ा है। मौजूदा जीवन-पद्धतिकी जगह, जिसमें हरअेक आदमी पड़ोसीकी परवाह किये बिना केवल अपने ही लिअे जीता है, सर्व-कल्याणकारी नयी जीवन-पद्धतिका विकास करना हो, तो अुसका सबसे निश्चित मार्ग यही है।

हरिजन, १–२–'४२

१७

अहिंसक अर्थ-व्यवस्था

मैं कहना चाहता हूं कि हम सब अेक तरहसे चोर हैं। अगर मैं कोअी अैसी चीज लेता और रखता हूं, जिसकी मुझे अपने किसी तात्कालिक अुपयोगके लिअे जरूरत नहीं है, तो मैं अुसकी किसी दूसरेसे चोरी ही करता हूं। यह प्रकृतिका अेक निरपवाद बुनियादी नियम है कि वह रोज केवल अुतना ही पैदा करती है जितना हमें चाहिये। और यदि हरअेक आदमी जितना अुसे चाहिये अुतना ही ले, ज्यादा न ले, तो दुनियामें गरीबी न रहे और कोअी आदमी भूखा न मरे। मैं समाजवादी नहीं हूं और जिनके पास सम्पत्तिका संचय है अुनसे मैं अुसे छीनना नहीं चाहता। लेकिन मैं यह जरूर कहता हूं कि हममें से जो लोग प्रकाशकी खोजमें प्रयत्नशील हैं अुन्हें व्यक्तिगत तौर पर अिस नियमका पालन करना चाहिये। मैं किसीसे अुसकी सम्पत्ति छीनना नहीं चाहता, क्योंकि वैसा करूं तो मैं अहिंसाके नियमसे च्युत हो जाअूंगा। यदि किसीके पास मेरी अपेक्षा ज्यादा सम्पत्ति है तो भले रहे। लेकिन यदि मुझे अपना जीवन नियमके अनुसार गढ़ना है तो मैं अैसी कोअी चीज अपने पास नहीं रख सकता जिसकी मुझे जरूरत नहीं है। भारतमें लाखों लोग अैसे हैं जिन्हें दिनमें केवल अेक ही बार खाकर संतोष कर लेना पड़ता है और अुनके अुस भोजनमें भी सूखी रोटी और चुटकी भर नमकके सिवा और कुछ नहीं होता। हमारे पास जो कुछ भी है अुस पर हमें और आपको तब तक कोअी अधिकार नहीं है जब तक अिन लोगोंके पास पहिननेके लिअे कपड़ा और खानेके लिअे अन्न नहीं हो जाता। हममें और आपमें ज्यादा समझ होनेकी आशा की जाती है। अतः हमें अपनी जरूरतोंका नियमन करना चाहिये और स्वेच्छापूर्वक अमुक अभाव भी सहना चाहिये, जिससे कि अुन गरीबोंका पालन-पोषण हो सके, अुन्हें कपड़ा और अन्न मिल सके।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ३८४

मुझे स्वीकार करना चाहिये कि मैं अर्थविद्या और नीतिविद्यामें न सिर्फ कोओी स्पष्ट भेद नहीं करता, बल्कि भेद ही नहीं करता। जिस अर्थविद्यासे व्यक्ति या राष्ट्रके नैतिक कल्याणको हानि पहुंचती हो अुसे मैं अनीतिमय और अिसलिअे पापपूर्ण कहूंगा। अुदाहरणके लिअे, जो अर्थ-विद्या किसी देशको किसी दूसरे देशका शोषण करनेकी अनुमति देती है वह अनैतिक है। जो मजदूरोंको योग्य मेहनताना नहीं देते और अुनके परिश्रमका शोषण करते हैं, अुनसे वस्तुअें खरीदना या अुन वस्तुओंका अुपयोग करना पापपूर्ण है।

यंग अिंडिया, १३–१०–'२१

मेरी रायमें भारतकी — न सिर्फ भारतकी बल्कि सारी दुनियाकी — अर्थरचना अैसी होना चाहिये कि किसीको भी अन्न और वस्त्रके अभावकी तकलीफ न सहनी पड़े। दूसरे शब्दोंमें, हरअेकको अितना काम अवश्य मिल जाना चाहिये कि वह अपने खाने-पहिननेकी जरूरतें पूरी कर सके। और यह आदर्श निरपवाद रूपसे तभी कार्यान्वित किया जा सकता है जब जीवनकी प्राथमिक आवश्यकताओंके अुत्पादनके साधन जनताके नियंत्रणमें रहें। वे हरअेकको बिना किसी बाधाके अुसी तरह अुपलब्ध होने चाहिये जिस तरह कि भगवानकी दी हुअी हवा और पानी हमें अुपलब्ध हैं; किसी भी हालतमें वे दूसरोंके शोषणके लिअे चलाये जानेवाले व्यापारका वाहन न बनें। किसी भी देश, राष्ट्र या समुदायका अुन पर अेकाधिकार अन्यायपूर्ण होगा। हम आज न केवल अपने अिस दुःखी देशमें बल्कि दुनियाके दूसरे हिस्सोंमें भी जो गरीबी देखते हैं अुसका कारण अिस सरल सिद्धान्तकी अुपेक्षा ही है।

यंग अिंडिया, १५–११–'२८

जिस तरह सच्चे नीतिधर्ममें और अच्छे अर्थशास्त्रमें कोअी विरोध नहीं होता, अुसी तरह सच्चा अर्थशास्त्र कभी भी नीतिधर्मके अूंचेसे अूंचे आदर्शका विरोधी नहीं होता। जो अर्थशास्त्र धनकी पूजा करना सिखाता है और बलवानोंको दुर्बलोंका शोषण करके धनका संग्रह करनेकी सुविधा देता है अुसे शास्त्रका नाम नहीं दिया जा सकता। वह तो

अेक झूठी चीज है जिससे हमें कोअी लाभ नहीं हो सकता। अुसे अपनाकर हम मृत्युको न्यौता देंगे। सच्चा अर्थशास्त्र तो सामाजिक न्यायकी हिमायत करता है; वह समान भावसे सबकी भलाअीका — जिनमें कमजोर भी शामिल हैं — प्रयत्न करता है और सभ्यजनोचित सुन्दर जीवनके लिअे अनिवार्य है।

हरिजन, ९–१०–'३७

मैं अैसी स्थिति लाना चाहता हूं जिसमें सबका सामाजिक दरजा समान माना जाय। मजदूरी करनेवाले वर्गोंको सैकड़ों वर्षोंसे सभ्य समाजसे अलग रखा गया है और अुन्हें नीचा दरजा दिया गया है। अुन्हें शूद्र कहा गया है और अिस शब्दका यह अर्थ किया गया है कि वे दूसरे वर्गोंसे नीचे हैं। मैं बुनकर, किसान और शिक्षकके लड़कोंमें कोअी भेद नहीं होने दे सकता।

हरिजन, १५–१–'३८

रचनात्मक कामका यह अंग अहिंसापूर्ण स्वराज्यकी मुख्य चाबी है। आर्थिक समानताके लिअे काम करनेका मतलब है, पूंजी और मजदूरीके बीचके झगड़ोंको हमेशाके लिअे मिटा देना। अिसका अर्थ यह होता है कि अेक ओरसे जिन मुट्ठीभर पैसेवाले लोगोंके हाथमें राष्ट्रकी संपत्तिका बड़ा भाग अिकट्ठा हो गया है, अुनकी संपत्तिको कम करना और दूसरी ओरसे जो करोड़ों लोग अधपेट खाते और नंगे रहते हैं, अुनकी संपत्तिमें वृद्धि करना। जब तक मुट्ठीभर धनवानों और करोड़ों भूखे रहनेवालोंके बीच बेअिन्तहा अन्तर बना रहेगा, तब तक अहिंसाकी बुनियाद पर चलनेवाली राज-व्यवस्था कायम नहीं हो सकती। आजाद हिन्दुस्तानमें देशके बड़े-से-बड़े धनवानोंके हाथमें हुकूमतका जितना हिस्सा रहेगा, अुतना ही गरीबोंके हाथमें भी होगा; और तब नअी दिल्लीके महलों और अुनकी बगलमें बसी हुअी गरीब मजदूर बस्तियोंके टूटे-फूटे झोंपड़ोंके बीच जो दर्दनाक फर्क आज नजर आता है वह अेक दिनको भी नहीं टिकेगा। अगर धनवान लोग अपने धनको और अुसके कारण मिलनेवाली सत्ताको खुद राजी-खुशीसे छोड़कर और सबके कल्याणके

लिअे सबके साथ मिलकर बरतनेको तैयार न होंगे, तो यह तय समझिये कि हमारे देशमें हिंसक और खूंख्वार क्रांति हुअे बिना न रहेगी। ट्रस्टी-शिप या सरपरस्तीके मेरे सिद्धान्तका बहुत मजाक अुड़ाया गया है, फिर भी मैं अुस पर कायम हूं। यह सच है कि अुस तक पहुंचने यानी अुसका पूरा-पूरा अमल करनेका काम कठिन है। क्या अहिंसाकी भी यही हालत नहीं है? फिर भी १९२० में हमने यह सीधी चढ़ाअी चढ़नेका निश्चय किया था।

रचनात्मक कार्यक्रम, पृ० ४०-४१

मेरी सूचना है कि यदि भारतको अपना विकास अहिंसाकी दिशामें करना है, तो अुसे बहुतसी चीजोंका विकेन्द्रीकरण करना पड़ेगा। केन्द्रीकरण किया जाय तो फिर अुसे कायम रखनेके लिअे और अुसकी रक्षाके लिअे हिंसाबल अनिवार्य है। जिनमें चोरी करने या लूटनेके लिअे कुछ है ही नहीं अैसे सादे घरोंकी रक्षाके लिअे पुलिसकी जरूरत नहीं होती। लेकिन धनवानोंके महलोंके लिअे अवश्य बलवान पहरेदार चाहिये, जो डाकुओंसे अुनकी रक्षा करें। यही बात बड़े-बड़े कारखानोंकी है। गांवोंको मुख्य मानकर जिस भारतका निर्माण होगा अुसे शहर-प्रधान भारतकी अपेक्षा — शहर-प्रधान भारत जल, स्थल और वायुसेनाओंसे सुसज्जित होगा तो भी — विदेशी आक्रमणका कम खतरा रहेगा।

हरिजन, ३०–१२–'३९

आज तो बहुत ज्यादा और अिसलिअे बहुत भद्दी आर्थिक असमानता है। समाजवादका आधार आर्थिक समानता है। अन्यायपूर्ण असमानताओंकी अिस हालतमें, जहां चंद लोग मालामाल हैं और सामान्य प्रजाको भरपेट खाना भी नसीब नहीं होता, रामराज्य कैसे हो सकता है?

हरिजन, १–६–'४७

१८

समान वितरणका रास्ता

आर्थिक समानता, अर्थात् जगतके पास समान सम्पत्तिका होना, यानी सबके पास अितनी सम्पत्तिका होना कि जिससे वे अपनी कुदरती आवश्यकतायें पूरी कर सकें। कुदरतने ही अेक आदमीका हाजमा अगर नाजुक बनाया हो और वह केवल पांच ही तोला अन्न खा सके, और दूसरेको बीस तोला अन्न खानेकी आवश्यकता हो, तो दोनोंको अपनी पाचन-शक्तिके अनुसार अन्न मिलना चाहिये। सारे समाजकी रचना अिस आदर्शके आधार पर होनी चाहिये। अहिंसक समाजका दूसरा आदर्श नहीं रखना चाहिये। पूर्ण आदर्श तक हम कभी नहीं पहुंच सकते। मगर अुसे नजरमें रखकर हम विधान बनावें और व्यवस्था करें। जिस हद तक हम अिस आदर्शको पहुंच सकेंगे अुसी हद तक सुख और संतोष प्राप्त करेंगे और अुसी हद तक सामाजिक अहिंसा सिद्ध हुअी कही जा सकेगी।

अिस आर्थिक समानताके धर्मका पालन अेक अकेला मनुष्य भी कर सकता है। दूसरोंके साथकी अुसे आवश्यकता नहीं रहती। अगर अेक आदमी अिस धर्मका पालन कर सकता है तो जाहिर है कि अेक मण्डल भी कर सकता है। यह कहनेकी जरूरत अिसीलिअे है कि किसी भी धर्मके पालनमें जहां तक दूसरे अुसका पालन न करें वहां तक हमें रुके रहनेकी आवश्यकता नहीं। और फिर, ध्येयकी आखिरी हद तक न पहुंच सकें वहां तक कुछ भी त्याग न करनेकी वृत्ति बहुधा लोगोंमें देखनेमें आती है। यह भी हमारी गतिको रोकती है।

अहिंसाके द्वारा आर्थिक समानता कैसे लाअी जा सकती है अिसका विचार करें। पहला कदम यह है कि जिसने अिस आदर्शको अपनाया हो, वह अपने जीवनमें आवश्यक परिवर्तन करे। हिन्दुस्तानकी गरीब प्रजाके साथ अपनी तुलना करके अपनी आवश्यकतायें कम करे। अपनी धन कमानेकी शक्तिको नियंत्रणमें रखे। जो धन कमावे अुसे अीमानदारीसे कमानेका निश्चय करे। सट्टेकी वृत्ति हो तो अुसका त्याग करे। घर

भी अपनी सामान्य आवश्यकता पूरी करने लायक ही रखे और जीवनको हर तरहसे संयमी बनावे। अपने जीवनमें संभव सुधार कर लेनेके बाद अपने मिलने-जुलनेवालों और अपने पड़ोसियोंमें समानताके आदर्शका प्रचार करे।

आर्थिक समानताकी जड़में धनिकका ट्रस्टीपन निहित है। अिस आदर्शके अनुसार धनिकको अपने पड़ोसीसे अेक कौड़ी भी ज्यादा रखनेका अधिकार नहीं। तब अुसके पास जो ज्यादा है, क्या वह अुससे छीन लिया जाये? अैसा करनेके लिअे हिंसाका आश्रय लेना पड़ेगा। और हिंसाके द्वारा अैसा करना संभव हो, तो भी समाजको अुससे कुछ फायदा होनेवाला नहीं है। क्योंकि द्रव्य अिकट्ठा करनेकी शक्ति रखनेवाले अेक आदमीकी शक्तिको समाज खो बैठेगा। अिसलिअे अहिंसक मार्ग यह हुआ कि जितनी मान्य हो सकें अुतनी अपनी आवश्यकतायें पूरी करनेके बाद जो पैसा बाकी बचे अुसका वह प्रजाकी ओरसे ट्रस्टी बन जाये। अगर वह प्रामाणिकतासे संरक्षक बनेगा तो जो पैसा पैदा करेगा अुसका सद्-व्यय भी करेगा। जब मनुष्य अपने-आपको समाजका सेवक मानेगा, समाजके खातिर धन कमावेगा, समाजके कल्याणके लिअे अुसे खर्च करेगा, तब अुसकी कमाअीमें शुद्धता आयेगी। अुसके साहसमें भी अहिंसा होगी। अिस प्रकारकी कार्य-प्रणालीका आयोजन किया जाये तो समाजमें बगैर संघर्षके मूक क्रान्ति पैदा हो सकती है।

अिस प्रकार मनुष्य-स्वभावमें परिवर्तन होनेका अुल्लेख अितिहासमें कहीं देखा गया है? अैसा प्रश्न हो सकता है। व्यक्तियोंमें तो अैसा हुआ ही है। बड़े पैमाने पर समाजमें परिवर्तन हुआ है, यह शायद सिद्ध न किया जा सके। अिसका अर्थ अितना ही है कि व्यापक अहिंसाका प्रयोग आज तक नहीं किया गया। हम लोगोंके हृदयमें अिस झूठी मान्यताने घर कर लिया है कि अहिंसा व्यक्तिगत रूपसे ही विकसित की जा सकती है और वह व्यक्ति तक ही मर्यादित है। दरअसल बात अैसी है नहीं। अहिंसा सामाजिक धर्म है, सामाजिक धर्मके तौर पर वह विकसित किया जा सकता है, यह मनवानेका मेरा प्रयत्न और प्रयोग है। यह नयी चीज है, अिस-लिअे अिसे झूठ समझकर फेंक देनेकी बात अिस युगमें तो कोअी नहीं

कहेगा। यह कठिन है, अिसलिअे अशक्य है, यह भी अिस युगमें कोअी नहीं कहेगा। क्योंकि बहुतसी चीजें अपनी आंखोंके सामने नअी-पुरानी होती हमने देखी हैं। मेरी यह मान्यता है कि अहिंसाके क्षेत्रमें अिससे बहुत ज्यादा साहस शक्य है, और विविध धर्मोंके अितिहास अिस बातके प्रमाणोंसे भरे पड़े हैं। समाजमें से धर्मको निकाल कर फेंक देनेका प्रयत्न बांझके घर पुत्र पैदा करने जितना ही निष्फल है; और अगर कहीं सफल हो जाये तो समाजका अुसमें नाश है। धर्मके रूपान्तर हो सकते हैं। अुसमें निहित प्रत्यक्ष वहम, सड़न और अपूर्णतायें दूर हो सकती हैं, हुअी हैं और होती रहेंगी। मगर धर्म तो जहां तक जगत है वहां तक चलता ही रहेगा, क्योंकि अेक धर्म ही जगतका आधार है। धर्मकी अन्तिम व्याख्या है अीश्वरका कानून। अीश्वर और अुसका कानून अलग-अलग चीजें नहीं हैं। अीश्वर अर्थात् अचलित, जीता-जागता कानून। अुसका पार कोअी नहीं पा सकता। मगर अवतारोंने और पैगम्बरोंने तपस्या करके अुसके कानूनकी कुछ-न-कुछ झांकी जगतको कराअी है।

किन्तु महाप्रयत्न करने पर भी धनिक संरक्षक न बनें, और भूखों मरते हुअे करोड़ोंको अहिंसाके नामसे और अधिक कुचलते जायें तब क्या करें? अिस प्रश्नका अुत्तर ढूंढ़नेमें ही अहिंसक कानून-भंग प्राप्त हुआ। कोअी धनवान गरीबोंके सहयोगके बिना धन नहीं कमा सकता। मनुष्यको अपनी हिंसक शक्तिका भान है, क्योंकि वह अुसे लाखों वर्षोंसे विरासतमें मिली हुअी है। जब अुसे चार पैरकी जगह दो पैर और दो हाथवाले प्राणीका आकार मिला, तब अुसमें अहिंसक शक्ति भी आअी। अहिंसा-शक्तिका भान भी धीरे-धीरे, किन्तु अचूक रीतिसे रोज-रोज बढ़ने लगा। वह भान गरीबोंमें प्रसार पा जाये, तो वे बलवान बनें और आर्थिक असमानताको, जिसके कि वे शिकार बने हुअे हैं, अहिंसक तरीकेसे दूर करना सीख लें।

हरिजनसेवक, २४–८–'४०

भारतकी जरूरत यह नहीं है कि चंद लोगोंके हाथोंमें बहुत भारी पूंजी अिकट्ठी हो जाय। पूंजीका अैसा वितरण होना चाहिये कि वह

अिस १९०० मील लम्बे और १५०० मील चौड़े विशाल देशको बनाने-वाले साढ़े-सात लाख गांवोंको आसानीसे अुपलब्ध हो सके।

यंग अिंडिया, २३–३–'२१

१९

भारतमें अहिंसाकी अुपासना

मैंने भारतके समक्ष आत्मत्यागका पुराना आदर्श रखनेका साहस किया है। सत्याग्रह और अुसकी शाखायें, असहयोग और सविनय कानून-भंग, तपस्याके ही दूसरे नाम हैं। अिस हिंसामय जगतमें जिन्होंने अहिंसाका नियम ढूंढ़ निकाला वे अृषि न्यूटनसे कहीं ज्यादा बड़े आविष्कारक थे। वे वेलिंग्टनसे ज्यादा बड़े योद्धा थे। वे शस्त्रास्त्रोंका अुपयोग जानते थे और अुन्हें अुनकी व्यर्थताका निश्चय हो गया था। और तब अुन्होंने हिंसासे अूबी हुअी दुनियाको सिखाया कि अुसे अपनी मुक्तिका रास्ता हिंसामें नहीं बल्कि अहिंसामें मिलेगा। अपने सक्रिय रूपमें अहिंसाका अर्थ है ज्ञानपूर्वक कष्ट सहना। अुसका अर्थ अन्यायीकी अिच्छाके आगे दबकर घुटने टेकना नहीं है; अुसका अर्थ यह है कि अत्याचारीकी अिच्छाके खिलाफ अपनी आत्माकी सारी शक्ति लगा दी जाय। जीवनके अिस नियमके अनुसार चलकर तो कोअी अकेला आदमी भी अपने सम्मान, धर्म और आत्माकी रक्षाके लिअे किसी अन्यायी साम्राज्यके सम्पूर्ण बलको चुनौती दे सकता है और अिस तरह अुस साम्राज्यके नाश या सुधारकी नींव रख सकता है। और अिसलिअे मैं भारतसे अहिंसाको अपनानेके लिअे कह रहा हूं तो अुसका कारण यह नहीं है कि भारत कमजोर है। बल्कि मुझे अुसके बल और अुसकी वीरताका भान है, अिसीलिअे मैं यह चाहता हूं कि वह अहिंसाके रास्ते पर चले। अुसे अपनी शक्तिको पहिचाननेके लिअे शस्त्रास्त्रोंकी तालीमकी जरूरत नहीं है। हमें अुसकी जरूरत अिसलिअे मालूम होती है कि हम समझते हैं कि हम शरीर-मात्र हैं। मैं चाहता हूं कि भारत अिस बातको पहिचान ले कि वह शरीर

नहीं वल्कि अमर आत्मा है, जो हरअेक शारीरिक कमजोरीके अूपर अुठ सकती है और सारी दुनियाके सम्मिलित शारीरिक बलको चुनौती दे सकती है।

यंग अिंडिया, ११–८–'२०

भारतकी हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख या गुरखा आदि सैनिक जातियोंकी वैयक्तिक वीरता और साहससे यह सिद्ध है कि भारतीय प्रजा कायर नहीं है। मेरा मतलब अितना ही है कि युद्ध और रक्तपात भारतको प्रिय नहीं है और संभवतः दुनियाके भावी विकासमें अुसे कोअी अूंचा हिस्सा अदा करना है। यह तो समय ही बतायेगा कि अुसका भविष्य क्या होनेवाला है।

यंग अिंडिया, २२–६–'२१

भूतकालमें युगों तक भारतको, यानी भारतकी आम जनताको, जो तालीम मिलती रही है वह हिंसाके खिलाफ है। भारतमें मनुष्य-स्वभावका विकास अिस हद तक हो चुका है कि आम लोगोंके लिअे हिंसाके बजाय अहिंसाका सिद्धान्त ज्यादा स्वाभाविक हो गया है।

यंग अिंडिया, २६–१–'२२

भारतने कभी किसी राष्ट्रके खिलाफ युद्ध नहीं चलाया। हां, शुद्ध आत्मरक्षाके लिअे अुसने आक्रमणकारियोंके खिलाफ कभी-कभी विरोधका असफल या अधूरा संघटन अवश्य किया है। अिसलिअे अुसे शान्तिकी आकांक्षा पैदा करनेकी जरूरत नहीं है। शांतिकी आकांक्षा तो अुसमें विपुल मात्रामें मौजूद ही है, भले वह अिस बातको जाने या न जाने। शान्तिकी वृद्धिके लिअे अुसे शांतिमय साधनोंके द्वारा अपने शोषणको रोकनेकी कोशिश करनी चाहिये, यानी अुसे शांतिमय साधनोंके द्वारा अपनी स्वतंत्रता हासिल करनी चाहिये। अगर वह सफलतापूर्वक अैसा कर सके तो यह विश्वशांतिकी दिशामें अुसकी किसी अेक देशके द्वारा दी जा सकनेवाली ज्यादासे ज्यादा मदद होगी।

यंग अिंडिया, ४–७–'२९

२०

सर्वोदयी राज्य

मुझसे कितने ही लोगोंने संदेहसे सिर डुलाते हुअे कहा है: "लेकिन आप सामान्य जनताको अहिंसा नहीं सिखा सकते। अहिंसाका पालन केवल व्यक्ति ही कर सकते हैं और सो भी विरले व्यक्ति।" मेरी रायमें यह धारणा अेक मोटी भूल है। यदि मनुष्य-जाति आदतन् अहिंसक न होती तो अुसने युगों पहले अपने हाथों अपना नाश कर लिया होता। लेकिन हिंसा और अहिंसाके पारस्परिक संघर्षमें अन्तमें अहिंसा ही सदा विजयी सिद्ध हुअी है। सच तो यह है कि हमने राजनीतिक अुद्देश्यकी प्राप्तिके लिअे लोगोंमें अहिंसाकी शिक्षाके प्रसारकी पूरी कोशिश करने जितना धीरज ही कभी प्रगट नहीं किया।

यंग अिंडिया, २-१-'३०

मेरी दृष्टिमें राजनीतिक सत्ता कोअी साध्य नहीं है, परन्तु जीवनके प्रत्येक विभागमें लोगोंके लिअे अपनी हालत सुधार सकनेका अेक साधन है। राजनीतिक सत्ताका अर्थ है राष्ट्रीय प्रतिनिधियों द्वारा राष्ट्रीय जीवनका नियमन करनेकी शक्ति। अगर राष्ट्रीय जीवन अितना पूर्ण हो जाता है कि वह स्वयं आत्म-नियमन कर ले, तो किसी प्रतिनिधित्वकी आवश्यकता नहीं रह जाती। अुस समय ज्ञानपूर्ण अराजकताकी स्थिति हो जाती है। अैसी स्थितिमें हरअेक अपना राजा होता है। वह अिस ढंगसे अपने पर शासन करता है कि अपने पड़ोसियोंके लिअे कभी बाधक नहीं बनता। अिसलिअे आदर्श अवस्थामें कोअी राजनीतिक सत्ता नहीं होती, क्योंकि कोअी राज्य नहीं होता। परन्तु जीवनमें आदर्शकी पूरी सिद्धि कभी नहीं होती। अिसीलिअे थोरोने कहा है कि जो सबसे कम शासन करे वही अुत्तम सरकार है।

यंग अिंडिया, २-७-'३१

मैं राज्यकी सत्ताकी वृद्धिको बड़ेसे बड़े भयकी दृष्टिसे देखता हूं। क्योंकि जाहिरा तौर पर तो वह शोषणको कमसे कम करके लाभ पहुंचाती है; परन्तु व्यक्तित्वको — जो सब प्रकारकी अुन्नतिकी जड़ है — नष्ट करके वह मानव-जातिको बड़ीसे बड़ी हानि पहुंचाती है।

राज्य केन्द्रित और संगठित रूपमें हिंसाका प्रतीक है। व्यक्तिके आत्मा होती है, परन्तु चूंकि राज्य अेक आत्मा-रहित जड़ मशीन होता है, अिसलिअे अुससे हिंसा कभी नहीं छुड़वायी जा सकती; अुसका अस्तित्व ही हिंसा पर निर्भर है।

मेरा यह पक्का विश्वास है कि अगर राज्य हिंसासे पूंजीवादको दबा देगा, तो वह स्वयं हिंसाकी लपेटमें फंस जायगा और किसी भी समय अहिंसाका विकास नहीं कर सकेगा।

मैं स्वयं तो यह अधिक पसंद करूंगा कि राज्यके हाथोंमें सत्ता केन्द्रित न करके ट्रस्टीशिपकी भावनाका विस्तार किया जाय। क्योंकि मेरी रायमें व्यक्तिगत स्वामित्वकी हिंसा राज्यकी हिंसासे कम हानिकारक है। किन्तु अगर यह अनिवार्य हो तो मैं कमसे कम राजकीय स्वामित्वका समर्थन करूंगा।

मुझे जो बात नापसंद है वह है बलके आधार पर बना हुआ संगठन; और राज्य अैसा ही संगठन है। स्वेच्छापूर्वक संगठन जरूर होना चाहिये।

दि मॉडर्न रिव्यू, १९३५, पृ० ४१२

अब सवाल यह है कि आदर्श समाजमें कोअी राजसत्ता रहेगी या वह अेक बिलकुल अराजक समाज बनेगा? मेरे खयालमें अैसा सवाल पूछनेसे कुछ भी फायदा नहीं हो सकता। अगर हम अैसे समाजके लिअे मेहनत करते रहें, तो वह किसी हद तक बनता रहेगा, और अुस हद तक लोगोंको अुससे फायदा पहुंचेगा। युक्लिडने कहा है कि लाअिन वही हो सकती है जिसमें चौड़ाअी न हो। लेकिन अैसी लाअिन या लकीर न तो आज तक कोअी बना पाया, न बना पायेगा। फिर भी अैसी लाअिनको खयालमें रखनेसे ही प्रगति हो सकती है। और, हरअेक आदर्शके बारेमें यही सच है।

हां, अितना याद रखना चाहिये कि आज दुनियामें कहीं भी अराजक समाज मौजूद नहीं है। अगर कभी कहीं बन सकता है, तो अुसका आरम्भ हिन्दुस्तानमें ही हो सकता है। क्योंकि हिन्दुस्तानमें अैसा समाज बनानेकी कोशिश की गअी है। आज तक हम आखिरी दरजेकी बहादुरी नहीं दिखा सके; मगर अुसे दिखानेका अेक ही रास्ता है, और वह यह है कि जो लोग अुसे मानते हैं वे अुसे दिखायें। अैसा कर दिखानेके लिअे, जिस तरह हमने जेलोंका डर छोड़ दिया है, अुसी तरह हमें मृत्युका डर भी छोड़ देना होगा।

हरिजनसेवक, १५–९–'४६

पुलिस-बल

अहिंसक राज्यमें भी पुलिसकी जरूरत हो सकती है। मैं स्वीकार करता हूं कि यह मेरी अपूर्ण अहिंसाका चिह्न है। मुझमें फौजकी तरह पुलिसके बारेमें भी यह घोषणा करनेका साहस नहीं है कि हम पुलिसकी ताकतके बिना काम चला सकते हैं। अवश्य ही मैं अैसे राज्यकी कल्पना कर सकता हूं और करता हूं, जिसमें पुलिसकी जरूरत नहीं होगी; परन्तु यह कल्पना सफल होगी या नहीं, यह तो भविष्य ही बतायेगा।

परन्तु मेरी कल्पनाकी पुलिस आजकलकी पुलिससे बिलकुल भिन्न होगी। अुसमें सभी सिपाही अहिंसामें माननेवाले होंगे। वे जनताके मालिक नहीं, सेवक होंगे। लोग स्वाभाविक रूपमें ही अुन्हें हर प्रकारकी सहायता देंगे और आपसके सहयोगसे दिन-दिन घटनेवाले दंगोंका आसानीसे सामना कर लेंगे। पुलिसके पास किसी न किसी प्रकारके हथियार तो होंगे, परन्तु अुन्हें क्वचित् ही काममें लिया जायगा। असलमें तो पुलिसवाले सुधारक बन जायेंगे। अुनका काम मुख्यतः चोर-डाकुओं तक सीमित रह जायगा। मजदूरों और पूंजीपतियोंके झगड़े और हड़तालें अहिंसक राज्यमें यदा-कदा ही होंगी, क्योंकि अहिंसक बहुमतका असर अितना अधिक रहेगा कि समाजके मुख्य तत्त्व अुसका आदर करेंगे। अिसी तरह साम्प्रदायिक दंगोंकी भी गुंजाअिश नहीं रहेगी।

हरिजन, १–९–'४०

२१

सत्याग्रह और दुराग्रह

मेरी यह दृढ़ धारणा है कि सविनय कानून-भंग वैधानिक आन्दोलनका शुद्धतम रूप है। बेशक, अुसमें विनय और अहिंसाकी जिन विशिष्टताका दावा किया जाता है वह यदि दूसरोंको धोखा देनेके लिअे ओढ़ लिया गया झूठा आवरण-मात्र हो, तो वह लोगोंको गिराता है और निंदनीय बन जाता है।

यंग अिंडिया, १५–१२–'२१

कानूनकी अवज्ञा सच्चे भावसे और आदरपूर्वक की जाय, अुसमें किसी प्रकारकी अुद्धतता न हो और वह किसी ठोस सिद्धान्त पर आधारित हो तथा अुसके पीछे द्वेष या तिरस्कारका लेश भी न हो — यह आखिरी कसौटी सबसे ज्यादा महत्त्वकी है — तो ही अुसे शुद्ध सत्याग्रह कहा जा सकता है।

यंग अिंडिया, २४–३–'२०

कानूनकी सविनय अवज्ञामें केवल वे लोग ही हिस्सा ले सकते हैं, जो राज्य द्वारा लादे गये कष्टप्रद कानूनोंका — अगर वे अुनकी धर्म-बुद्धि या अन्तःकरणको चोट न पहुंचाते हों तो — स्वेच्छापूर्वक पालन करते हैं और जो अिस तरह की गयी अवज्ञाका दण्ड भी अुतनी ही खुशीसे भोगनेके लिअे तैयार हों। कानूनकी अवज्ञा सविनय तभी कही जा सकती है जब वह पूरी तरह अहिंसक हो। सविनय अवज्ञाके पीछे सिद्धांत यह है कि प्रतिपक्षीको खुद कष्ट सहकर यानी प्रेमके द्वारा जीता जाये।

यंग अिंडिया, ३–११–'२१

सविनय अवज्ञा नागरिकका जन्मसिद्ध अधिकार है। वह अपने अिस अधिकारको अपना मनुष्यत्व खोकर ही छोड़ सकता है। सविनय अवज्ञाका परिणाम कभी भी अराजकतामें नहीं आ सकता। दुष्ट हेतुसे की गयी

अवज्ञासे ही अराजकता पैदा हो सकती है। दुष्ट हेतुसे की जानेवाली अवज्ञाको हरअेक राज्य बलपूर्वक अवश्य दबायेगा। यदि वह अुसे नहीं दबायेगा तो वह खुद नष्ट हो जायेगा। किन्तु सविनय अवज्ञाको दबानेका अर्थ तो अन्तरात्माकी आवाजको दबानेकी कोशिश करना है।

यंग अिंडिया, ५-१-'२२

चूंकि सत्याग्रह सीधी कार्रवाअीके अत्यंत बलशाली अुपायोंमें से अेक है, अिसलिअे सत्याग्रही सत्याग्रहका आश्रय लेनेसे पहले और सब अुपाय आजमा कर देख लेता है। अिसके लिअे वह सदा और निरन्तर सत्ताधारियोंके पास जायेगा, लोकमतको प्रभावित और शिक्षित करेगा, जो अुसकी सुनना चाहते हैं अुन सबके सामने अपना मामला शान्ति और ठंडे दिमागसे रखेगा और जब ये सब अुपाय वह आजमा चुकेगा तभी सत्याग्रहका आश्रय लेगा। परन्तु जब अुसे अन्तर्नादकी प्रेरक पुकार सुनाअी देती है और वह सत्याग्रह छेड़ देता है, तब वह अपना सब कुछ दांव पर लगा देता है और पीछे कदम नहीं हटाता।

यंग अिंडिया, २०-१०-'२७

सत्याग्रह शब्दका अुपयोग अकसर बहुत शिथिलतापूर्वक किया जाता है और छिपी हुअी हिंसाको भी यह नाम दे दिया जाता है। लेकिन अिस शब्दके रचयिताके नाते मुझे यह कहनेकी अनुमति मिलनी चाहिये कि अुसमें छिपी हुअी अथवा प्रकट सभी प्रकारकी हिंसाका, फिर वह कर्मकी हो या मन और वाणीकी हो, पूरा बहिष्कार है। प्रतिपक्षीका बुरा चाहना या अुसे हानि पहुंचानेके अिरादेसे अुससे या अुसके बारेमें बुरा बोलना सत्याग्रहका अुल्लंघन है। सत्याग्रह अेक सौम्य वस्तु है, वह कभी चोट नहीं पहुंचाता। अुसके पीछे क्रोध या द्वेष नहीं होना चाहिये। अुसमें शोरगुल, प्रदर्शन या अुतावली नहीं होती। वह जबरदस्तीसे बिलकुल अुलटी चीज है। अुसकी कल्पना हिंसासे अुलटी परंतु हिंसाका स्थान पूरी तरह भर सकनेवाली चीजके रूपमें की गअी है।

हरिजन, १५-४-'३३

दुराग्रह

[अप्रैल १९१९ में पंजाब जाते हुअे जब गांधीजीको गिरफ्तार कर लिया गया अुस समय अुनकी गिरफ्तारीकी खबर फैलते ही बम्बअीमें और दूसरी जगहोंमें हिंसात्मक अुपद्रव शुरू हो गये थे। बादमें जब पुलिसकी निगरानीमें अुन्हें बम्बअी वापिस लाया गया और ११ अप्रैलको छोड़ा गया तब अुन्होंने अेक सन्देश दिया था जो शामको होनेवाली सभाओंमें पढ़ा जाना था। अिस सन्देशका अेक अंश अिस प्रकार था:]

मेरी गिरफ्तारी पर अितना क्षोभ और अितनी गड़बड़ क्यों हुअी, अिसका कारण मैं नहीं समझ सका हूं। यह सत्याग्रह तो नहीं है; अितना ही नहीं, यह दुराग्रहसे भी बुरा है। जो लोग सत्याग्रहसे सम्बन्धित प्रदर्शनोंमें भाग लेते हैं, वे — अुन्हें खतरा हो तो भी — हिंसा न करनेके लिअे, पत्थर आदि न फेंकनेके लिअे, किसीको भी किसी भी तरह चोट न पहुंचानेके लिअे बंधे हुअे हैं। लेकिन बम्बअीमें हमने पत्थर फेंके हैं और रास्तोंमें रुकावटें डालकर ट्राम-गाड़ियां रोकी हैं। यह सत्याग्रह नहीं है। हमने हिंसक प्रवृत्तियोंके कारण गिरफ्तार किये गये पचास आदमियोंके छोड़े जानेकी मांग भी की है। हमारा कर्तव्य तो मुख्यतः अपनेको गिरफ्तार करवाना है। जिन्होंने हिंसाकी प्रवृत्तियां की हैं अुन्हें छुड़वानेकी कोशिश करना धार्मिक कर्तव्यका अुल्लंघन है। अिसलिअे गिरफ्तार लोगोंकी रिहाअीकी मांग करना हमारे लिअे किसी भी आधार पर अुचित नहीं है।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ४७४

मैंने असंख्य बार कहा है कि सत्याग्रहमें हिंसा, लूटमार, आगजनी आदिके लिअे कोअी स्थान नहीं है; लेकिन अिसके बावजूद हमने मकान जलाये हैं, बलपूर्वक हथियार छीने हैं, लोगोंको डरा-धमकाकर अुनसे पैसा लिया है, रेलगाड़ियां रोकी है, तार काटे हैं, निर्दोष आदमियोंकी हत्या की है और दुकानें तथा लोगोंके निजी घरोंमें लूटमार की है। अिस तरहके कामोंसे मुझे जेल या फांसीके तख्तेसे बचाया जा सकता हो तो भी मैं अिस तरह बचाया जाना पसन्द नहीं करूंगा।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ४७६

हिंसाके अुपायोंके प्रयोगसे मुझे तो भारतके लिअे नाशके सिवा और कुछ नजर नहीं आता। अगर मजदूर लोग अपना गुस्सा देशमें प्रचलित कानूनको दुष्ट भावसे तोड़कर प्रगट करें, तो मैं कहूंगा कि वे आत्मघात कर रहे हैं और भारतको अुसके फलस्वरूप अवर्णनीय कष्ट भोगने पड़ेंगे। जब मैंने सत्याग्रह और सविनय अवज्ञाका प्रचार शुरू किया तो अुसका यह अुद्देश्य कदापि नहीं था कि अुसमें कानूनोंकी दुष्ट भावसे की जानेवाली अुद्धत अवज्ञाका भी समावेश होगा। मेरा अनुभव मुझे सिखाता है कि सत्यका प्रचार हिंसाके द्वारा कभी नहीं किया जा सकता। जिन्हें अपने ध्येयके औचित्यमें विश्वास है अुनमें असीम धीरज होना चाहिये। और कानूनकी सविनय अवज्ञाके लिअे केवल वे ही व्यक्ति योग्य माने जा सकते हैं, जो अविनय अवज्ञा (क्रिमिनल डिसओबीडिअेन्स) या हिंसा किसी तरह कर ही न सकते हों। जिस तरह कोअी आदमी अेक ही समयमें संयत और कुपित नहीं हो सकता, अुसी तरह कोअी सविनय अवज्ञा और अविनय अवज्ञा, दोनों अेक साथ नहीं कर सकता। और जिस तरह आत्म-संयमकी शक्ति अपने मनोविकारों पर पूरा नियंत्रण पा चुकनेके बाद ही आती है, अुस तरह जब हम देशके कानूनोंका खुशीसे और पूरा-पूरा पालन करना सीख चुके हों तभी हम अुनकी सविनय अवज्ञा करनेकी योग्यता प्राप्त करते हैं। फिर, जिस तरह किसी आदमीको हम प्रलोभनोंकी पहुंचके अूपर तभी कह सकते हैं जब कि वह प्रलोभनोंसे घिरा रहा हो और फिर भी अुनका निवारण कर सका हो, अुसी तरह हमने क्रोधको जीत लिया है, अैसा तभी कहा जा सकता है जब क्रोधका काफी कारण होने पर भी हम अपने अूपर काबू रखनेमें कामयाब सिद्ध हों।

यंग अिंडिया, २८-४-'२०

कुछ विद्यार्थियोंने धरना देनेके पुराने जंगलीपनको फिरसे जिन्दा किया है। मैं अिसे 'जंगलीपन' अिसलिअे कहता हूं कि यह दबाव डालनेका भद्दा ढंग है। अिसमें कायरता भी है, क्योंकि जो धरना देता है वह जानता है कि अुसे कुचलकर कोअी नहीं जायेगा। अिस कृत्यको हिंसात्मक कहना तो कठिन है, मगर वह अिससे भी बदतर जरूर है। अगर हम अपने विरोधीसे लड़ते हैं तो कमसे कम अुसे बदलेमें वार

करनेका मौका तो देते हैं। लेकिन जब हम अुसे अपनेको कुचलकर निकलनेकी चुनौती देते हैं — यह जानते हुअे कि वह अैसा नहीं करेगा — तब हम अुसे अेक अत्यंत विषम और अपमानजनक स्थितिमें रख देते हैं। मैं जानता हूं कि धरना देनेके अत्यधिक जोशमें विद्यार्थियोंने कभी सोचा भी नहीं होगा कि यह कृत्य जंगलीपन है। परन्तु जिनसे यह आशा की जाती है कि वह अन्तःकरणकी आवाज पर चलेगा और भारी विपत्तियोंका अकेले सामना करेगा, वह विचारहीन नहीं बन सकता। अिसलिअे असहयोगियोंको हर काममें पहलेसे ही सचेत रहना चाहिये। अुनके काममें कोअी अधीरता, कोअी जंगलीपन, कोअी गुस्ताखी और कोअी अनुचित दबाव नहीं होना चाहिये।

यदि हम लोकशाहीकी सच्ची भावनाका विकास करना चाहते हैं तो असहिष्णु नहीं हो सकते। असहिष्णुतासे अपने ध्येयमें हमारे विश्वासकी कमी प्रगट होती है।

यंग अिंडिया, २–२–'२१

शासनके खिलाफ विवेकरहित विरोध चलाया जाय तो अुससे अराजकताकी, अनियंत्रित स्वच्छंदताकी स्थिति पैदा होगी और समाज अपने ही हाथों अपना नाश कर डालेगा।

यंग अिंडिया, २–४–'३१

कानूनकी सविनय अवज्ञाकी पूर्ववर्ती अनिवार्य शर्त यह है कि अुसमें अिस बातका पूरा आश्वासन होना चाहिये कि अवज्ञा आन्दोलनमें भाग लेनेवालोंकी ओरसे या आम जनताकी ओरसे कहीं कोअी हिंसा नहीं होगी। हिंसक अुपद्रव होने पर यह कहना कि अुसके पीछे राज्यका या अवज्ञाकारियोंका विरोध करनेवाले दूसरे दलोंका हाथ है अुचित अुत्तर नहीं है। जाहिर है कि सविनय अवज्ञाका आन्दोलन हिंसाके वातावरणमें नहीं पनप सकता। अिसका यह मतलब नहीं कि अैसी स्थितिमें सत्याग्रहीके पास फिर कोअी अुपाय ही नहीं रह जाता। अुसे सविनय अवज्ञासे भिन्न दूसरे अुपायोंकी खोज करनी चाहिये।

हरिजन, १८–३–'३९

सत्याग्रहमें अुपवास

अुपवास सत्याग्रहके शस्त्रागारका अेक अत्यन्त शक्तिशाली अस्त्र है। अुसे हर कोअी नहीं कर सकता। केवल शारीरिक योग्यता अिसके लिअे कोअी योग्यता नहीं है। अीश्वरमें जीती-जागती श्रद्धा न हो तो दूसरी योग्यतायें निरुपयोगी हैं। वह निरा यांत्रिक प्रयत्न या अनुकरण कभी नहीं होना चाहिये। अुसकी प्रेरणा अपनी अन्तरात्माकी गहराअीसे आनी चाहिये। अिसलिअे वह बहुत विरल होता है।

हरिजनसेवक, १८–३–'३९

शुद्ध अुपवासमें स्वार्थ, क्रोध, अविश्वास या अधीरताके लिअे कोअी जगह नहीं हो सकती।... अपार धीरज, दृढ़ता, ध्येयमें अेकाग्र-निष्ठा, और पूर्ण शान्ति तो अुपवास करनेवालेमें होनी ही चाहिये। ये सब गुण किसी व्यक्तिमें अेकाअेक नहीं आ सकते, अिसलिअे जिसने यम-नियमादिका पालन करके अपना जीवन शुद्ध न कर लिया हो, अुसे सत्याग्रहके हेतुसे किया जानेवाला अुपवास नहीं करना चाहिये।

हरिजन, १३–१०–'४०

लेकिन मैं अेक सामान्य सिद्धान्तका अुल्लेख करना चाहूंगा। सत्याग्रहीको अुपवास अन्तिम अुपायके तौर पर ही करना चाहिये, यानी तब जब कि अपनी शिकायत दूर करवानेके और सब अुपाय विफल हो गये हों। अुपवासमें अनुकरणके लिअे कोअी गुंजाअिश नहीं है। जिसमें आन्तरिक शक्ति न हो अुसे अुपवासका विचार भी नहीं करना चाहिये। अुपवास सफलताकी आसक्ति रखकर कभी न किया जाय।... जिनमें अुपवासका तत्त्व नहीं होता वैसे अुपहासास्पद अुपवास बीमारीकी तरह फैलते हैं और हानिकारक सिद्ध होते हैं।

हरिजन, २१–४–'४६

बेशक, अिस बातसे अिनकार नहीं किया जा सकता कि अुपवासोंमें बलात्कारका तत्त्व कभी कभी जरूर हो सकता है। कोअी स्वार्थपूर्ण अुद्देश्य प्राप्त करनेके लिअे किये जानेवाले अुपवासोंमें यह बात होती है।

किसी व्यक्तिसे अुसकी अिच्छाके खिलाफ पैसा खींचने या अैसा कोअी वैयक्तिक स्वार्थ सिद्ध करनेके लिअे किया गया अुपवास अनुचित दबाव डालना या बलात्कारका प्रयोग करना ही कहा जायगा। मेरे खिलाफ किये गये अुपवासोंमें — अथवा जब मुझे अपने खिलाफ अुपवास करनेकी धमकियां दी गयी हैं तब — मैंने अुनमें रहे अनुचित दबावका सफल प्रतिरोध किया है। अगर यह कहा जाय कि स्वार्थपूर्ण और स्वार्थहीन प्रयोजनोंकी विभाजक रेखा बहुत अस्पष्ट है और अिसलिअे अुनका ठीक निर्णय नहीं किया जा सकता, तो मेरी सलाह यह है कि जो आदमी किसी अुपवासके अुद्देश्यको स्वार्थपूर्ण या अन्यथा निदनीय मानता है अुसे अुस अुपवासके सामने झुकनेसे दृढ़तापूर्वक अिनकार कर देना चाहिये, चाहे अिस कारण अुपवास करनेवालेकी मृत्यु ही क्यों न हो जाये।

यदि लोग अैसे अुपवासोंकी अुपेक्षा करने लग जायं, जो अुनके मतानुसार अनुचित अुद्देश्योंकी प्राप्तिके लिअे किये गये हों, तो अिन अुपवासोंमें बलात्कार या अनुचित दबावका जो दोष पाया जाता है अुससे वे मुक्त हो जायेंगे। दूसरी मनुष्य-कृत कार्य-प्रणालियोंकी तरह अुपवासके भी अुचित और अनुचित दोनों किस्मके अुपयोग हो सकते हैं।

हरिजन, ६–५–'३३

२२

किसान

यदि भारतीय समाजको शान्तिपूर्ण मार्ग पर सच्ची प्रगति करनी है, तो धनिक वर्गको निश्चित रूपसे स्वीकार कर लेना होगा कि किसानके पास भी वैसी ही आत्मा है जैसी अुनके पास है और अपनी दौलतके कारण वे गरीबोंसे श्रेष्ठ नहीं हैं। जैसा जापानके अुमरावोंने किया, अुसी तरह अुन्हें भी अपने-आपको संरक्षक मानना चाहिये। अुनके पास जो धन है अुसे यह समझकर रखना चाहिये कि अुसका अुपयोग अुन्हें अपने संरक्षित किसानोंकी भलाअीके लिअे करना है। अुस हालतमें वे अपने परिश्रमके कमीशनके रूपमें वाजिब रकमसे ज्यादा नहीं लेंगे। अिस समय धनिक वर्गके

सर्वथा अनावश्यक दिखावे और फिजूलखर्चीमें तथा जिन किसानोंके बीचमें वे रहते हैं अुनके गंदगीभरे वातावरण और कुचल डालनेवाले दारिद्रयमें कोअी अनुपात नहीं है। अिसलिअे अेक आदर्श जमींदार किसानका बहुत कुछ बोझा, जो वह अभी अुठा रहा है, अेकदम घटा देगा। वह किसानोंके गहरे संपर्कमें आयेगा और अुनकी आवश्यकताओंको जानकर अुस निराशाके स्थान पर, जो अुनके प्राणोंको सुखाये डाल रही है, अुनमें आशाका संचार करेगा। वह किसानोंके सफाअी और तन्दुरुस्तीके नियमोंके अज्ञानको दर्शककी तरह देखता नहीं रहेगा, बल्कि अिस अज्ञानको दूर करेगा। किसानोंके जीवनकी आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेके लिअे वह स्वयं अपनेको दरिद्र बना लेगा। वह अपने किसानोंकी आर्थिक स्थितिका अध्ययन करेगा और अैसे स्कूल खोलेगा, जिनमें किसानोंके बच्चोंके साथ-साथ अपने खुदके बच्चोंको भी पढ़ायेगा। वह गांवके कुअें और तालाबको साफ करायेगा। वह किसानोंको अपनी सड़कें और अपने पाखानें खुद आवश्यक परिश्रम करके साफ करना सिखायेगा। वह किसानोंके बेरोकटोक अिस्तेमालके लिअे अपने खुदके बाग-बगीचे निःसंकोच भावसे खोल देगा। जो गैरजरूरी अिमारतें वह अपनी मौजके लिअे रखता है, अुनका अुपयोग अस्पताल, स्कूल या अैसे ही कामोंके लिअे करेगा।

भी नहीं रोक सकती। मैंने यह आशा रखी है कि भारतवर्ष जिस विपत्तिसे बचनेमें सफल रहेगा।

यंग अिंडिया, ५–१२–'२९

किसानोंका — वे भूमिहीन मजदूर हों या मेहनत करनेवाले जमीन-मालिक हों — स्थान पहला है। अुनके परिश्रमसे ही पृथ्वी फलप्रसू और समृद्ध हुआी है और अिसलिअे सच कहा जाय तो जमीन अुनकी ही है या होनी चाहिये, जमीनसे दूर रहनेवाले जमींदारोंकी नहीं। लेकिन अहिंसक पद्धतिमें मजदूर-किसान अिन जमींदारोंसे अुनकी जमीन बलपूर्वक नहीं छीन सकता। अुसे अिस तरह काम करना चाहिये कि जमींदारके लिअे अुसका शोषण करना असम्भव हो जाय। किसानोंमें आपसमें घनिष्ठ सहकार होना नितान्त आवश्यक है। अिस हेतुकी पूर्तिके लिअे, जहां वैसी समितियां न हों, वहां वे बनायी जानी चाहिये और जहां हों वहां आवश्यक होने पर अुनका पुनर्गठन होना चाहिये। किसान ज्यादातर अपढ़ हैं। स्कूल जानेकी अुमरवालोंको और वयस्कोंको शिक्षा दी जानी चाहिये। शिक्षा पुरुषों और स्त्रियों, दोनोंको दी जानी चाहिये। भूमिहीन खेतिहर मजदूरोंकी मजदूरी अिस हद तक बढ़ाअी जानी चाहिये कि वे सभ्यजनोचित जीवनकी सुविधायें प्राप्त कर सकें। यानी, अुन्हें संतुलित भोजन और आरोग्यकी दृष्टिसे जैसे चाहिये वैसे घर और कपड़े मिल सकें।

दि बॉम्बे क्रॉनिकल, २८–१०–'४४

मुझे अिसमें कोअी सन्देह नहीं कि यदि हमें लोकतांत्रिक स्वराज्य हासिल हो — और यदि हमने अपनी स्वतंत्रता अहिंसासे पायी तो जरूर अैसा ही होगा — तो अुसमें किसानोंके पास राजनीतिक सत्ताके साथ हर किस्मकी सत्ता होनी चाहिये।

दि बॉम्बे क्रॉनिकल, १२–१–'४५

अगर स्वराज्य सारी जनताकी कोशिशोंके फलस्वरूप आता है, और चूंकि हमारा हथियार अहिंसा है अिसलिअे अैसा ही होगा, तो किसानोंको अुनकी योग्य स्थिति मिलनी ही चाहिये और देशमें अुनकी

आवाज ही सबसे अूपर होनी चाहिये। लेकिन यदि अैसा नहीं होता है और मर्यादित मताधिकारके आधार पर सरकार और प्रजाके बीच कोअी व्यावहारिक समझौता हो जाता है, तो किसानोंके हितोंको ध्यानसे देखते रहना होगा। अगर विधान-सभायें किसानोंके हितोंकी रक्षा करनेमें अस-मर्थ सिद्ध होती हैं, तो किसानोंके पास सविनय अवज्ञा और असहयोगका अचूक अिलाज तो हमेशा होगा ही। लेकिन . . . अन्तमें अन्याय या दमनसे जो चीज प्रजाकी रक्षा करती है, वह कागजों पर लिखे जानेवाले कानून, वीरतापूर्ण शब्द या जोशीले भाषण नहीं हैं, बल्कि अहिंसक संगठन, अनुशासन और बलिदानसे पैदा होनेवाली ताकत है।

दि बॉम्बे क्रॉनिकल, १२–१–'४५

२३

गांवोंकी ओर

मेरा विश्वास है और मैंने अिस बातको असंख्य वार दुहराया है कि भारत अपने चन्द शहरोंमें नहीं बल्कि सात लाख गांवोंमें बसा हुआ है। लेकिन हम शहरवासियोंका खयाल है कि भारत शहरोंमें ही है और गांवोंका निर्माण शहरोंकी जरूरतें पूरी करनेके लिअे ही हुआ है। हमने कभी यह सोचनेकी तकलीफ ही नहीं अुठाअी कि अुन गरीबोंको पेट भरने जितना अन्न और शरीर ढकने जितना कपड़ा मिलता है या नहीं और धूप तथा वर्षासे बचनेके लिअे अुनके सिर पर छप्पर है या नहीं।

हरिजन, ४–४–'३६

मैंने पाया है कि शहरवासियोंने आम तौर पर ग्रामवासियोंका शोषण किया है; सच तो यह है कि वे गरीब ग्रामवासियोंकी ही मेहनत पर जीते हैं। भारतके निवासियोंकी हालत पर कअी ब्रिटिश अधिकारियोंने बहुत कुछ लिखा है। जहां तक मैं जानता हूं किसीने भी यह नहीं कहा है कि भारतीय ग्रामवासियोंको भरपेट अन्न मिलता है। अुलटे, अुन्होंने यह

स्वीकार किया है कि अधिकांश आबादी लगभग भुखमरीकी हालतमें रहती है, दस प्रतिशत अधभूखी रहती है और लाखों लोग चुटकीभर नमक और मिर्चोंके साथ मशीनोंका पालिश किया हुआ निःसत्त्व चावल या रूखा-सूखा अनाज खाकर अपना गुजारा चलाते हैं।

आप विश्वास कीजिये कि यदि अुस किस्मके भोजन पर हम लोगोंमें से किसीको रहनेके लिअे कहा जाय, तो हम अेक माहसे ज्यादा जीनेकी आशा नहीं कर सकते, या फिर हमें यह डर लगेगा कि अैसा खानेमें कहीं हमारी दिमागी शक्तियां नष्ट न हो जायं। लेकिन हमारे ग्राम-वासियोंको तो अिस हालतमें से रोज-रोज गुजरना पड़ता है।

हरिजन, ४–४–'३६

हमारी आबादीका पचहत्तर प्रतिशतसे ज्यादा हिस्सा कृषिजीवी है। लेकिन यदि हम अुनसे अुनकी मेहनतका सारा फल खुद छीन लें या दूसरोंको छीन लेने दें, तो यह नहीं कहा जा सकता कि हममें स्वराज्यकी भावना काफी मात्रामें है।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ३२३

शहर अपनी हिफाजत आप कर सकते हैं। हमें तो अपना ध्यान गांवोंकी ओर लगाना चाहिये। हमें अुन्हें अुनकी संकुचित दृष्टि, अुनके पूर्वग्रहों और वहमों आदिसे मुक्त करना है और अिसे करनेका सिवा अिसके और कोअी तरीका नहीं है कि हम अुनके साथ अुनके बीचमें रहें, अुनके सुख-दुःखमें हिस्सा लें और अुनमें शिक्षाका तथा अुपयोगी ज्ञानका प्रचार करें।

यंग अिंडिया, ३०–३–'३१

हमें आदर्श ग्रामवासी बनना है; अैसे ग्रामवासी नहीं जिन्हें सफाअीकी या तो कोअी समझ ही नहीं है या है तो बहुत विचित्र प्रकारकी, और जो अिस बातका कोअी विचार ही नहीं करते कि वे क्या खाते हैं और कैसे खाते हैं। अुनमें से ज्यादातर लोग चाहे जिस तरह अपना खाना पका लेते हैं, किसी भी तरह खा लेते हैं और किसी भी तरह रह लेते हैं। वैसा हमें नहीं करना है। हमें चाहिये कि हम अुन्हें आदर्श आहार बतलायें।

आहारके चुनावमें हमें अपनी रुचियों और अरुचियोंका विचार नहीं करना चाहिये, बल्कि खाद्य वस्तुओंके पोषक तत्त्वों पर ही नजर रखनी चाहिये।

हरिजन, १–३–'३५

हमें जिनकी पीठ पर जलता हुआ सूरज अपनी किरणोंके तीर बरसाता है और अुस हालतमें भी जो कठिन परिश्रम करते रहते हैं अुन ग्रामवासियोंसे अेकता साधनी है। हमें सोचना है कि जिस पोखरमें वे नहाते हैं और अपने कपड़े तथा बरतन धोते हैं और जिसमें अुनके पशु लोटते और पानी पीते हैं अुसीमें से यदि हमें भी अुनकी तरह पीनेका पानी लेना पड़े तो हमें कैसा लगेगा। तभी हम अुस जनताका ठीक प्रतिनिधित्व कर सकेंगे और तब वे हमारे कहने पर जरूर ध्यान देंगे।

हरिजन, १–३–'३५

हमें अुन्हें बताना है कि वे अपनी साग-भाजियां विशेष कुछ खर्च किये बिना खुद अुगा सकते हैं और अपने स्वास्थ्यकी ठीक रक्षा कर सकते हैं। हमें अुन्हें यह भी सिखाना है कि पत्ता-भाजियोंको वे जिस तरह पकाते हैं, अुसमें अुनके अधिकांश विटामिन नष्ट हो जाते हैं।

हरिजन, १–३–'३५

हमें अुन्हें यह सिखाना है कि वे समय, स्वास्थ्य और पैसेकी बचत कैसे कर सकते हैं। लिओनेल कर्टिसने हमारे गांवोंका वर्णन करते हुअे अुन्हें 'घूरेके ढेर' कहा है। हमें अुन्हें आदर्श बस्तियोंमें बदलना है। हमारे ग्रामवासियोंको शुद्ध हवा नहीं मिलती, यद्यपि वे शुद्ध हवासे घिरे हुअे हैं; अुन्हें ताजा अन्न नहीं मिलता, यद्यपि अुनके चारों ओर ताजेसे ताजा अन्न होता है। अिस अन्नके मामलेमें मैं मिशनरीकी तरह अिसीलिअे बोलता हूं कि मैं गांवोंको अेक सुन्दर दर्शनीय वस्तु बना देनेकी आकांक्षा रखता हूं।

हरिजन, १–३–'३५

क्या भारतके गांव हमेशा वैसे ही थे जैसे कि वे आज हैं, अिस प्रश्नकी छान-बीन करनेसे कोअी लाभ नहीं होगा। अगर वे कभी भी

अिससे अच्छे नहीं थे तो अिससे हमारी पुरानी सभ्यताका, जिस पर हम अितना अभिमान करते हैं, अेक बड़ा दोष प्रगट होता है। लेकिन यदि वे कभी अच्छे नहीं थे तो सदियोंसे चली आ रही नाशकी क्रियाको, जो हम अपने आसपास आज भी देख रहे हैं, वे कैसे सह सके? . . . हरअेक देश-प्रेमीके सामने आज जो काम है वह यह है कि अिस नाशकी क्रियाको कैसे रोका जाय या दूसरे शब्दोंमें भारतके गांवोंका पुर्ननिर्माण कैसे किया जाय, ताकि किसीके लिअे भी अुनमें रहना अुतना ही आसान हो जाय जितना आसान वह शहरोंमें माना जाता है। सचमुच हरअेक देशभक्तके सामने आज यही काम है। सम्भव है कि ग्रामवासियोंका पुनरुद्धार अशक्य हो, और यही सच हो कि ग्राम-सभ्यताके दिन अब बीत गये हैं और सात लाख गांवोंकी जगह अब केवल सात सौ सुव्यवस्थित शहर ही रहेंगे और अुनमें ३० करोड़ आदमी नहीं, केवल तीन ही करोड़ आदमी रहेंगे। अगर भारतके भाग्यमें यही हो तो भी यह स्थिति अेक दिनमें तो नहीं आयेगी; आखिर गांवों और ग्रामवासियोंकी अितनी बड़ी संख्याके मिटनेमें और जो बच रहेंगे अुनका शहरों और शहरवासियोंमें परिवर्तन करनेमें समय तो लगेगा ही।

हरिजन, ७–३–'३६

ग्राम-सुधार आन्दोलनमें केवल ग्रामवासियोंके ही शिक्षणकी बात नहीं है; शहरवासियोंको भी अुससे अुतना ही शिक्षण लेना है। अिस कामको अुठानेके लिअे शहरोंसे जो कार्यकर्ता आयें, अुन्हें ग्राम-मानसका विकास करना है और ग्रामवासियोंकी तरह रहनेकी कला सीखनी है। अिसका यह अर्थ नहीं कि अुन्हें ग्रामवासियोंकी तरह भूखे मरना है; लेकिन अिसका यह अर्थ जरूर है कि जीवनकी अुनकी पुरानी पद्धतिमें आमूल परिवर्तन होना चाहिये।

हरिजन, ११–४–'३६

अिसका अेक ही अुपाय है: हम जाकर अुनके बीचमें बैठ जायें और अुनके आश्रयदाताओंकी तरह नहीं बल्कि अुनके सेवकोंकी तरह दृढ़ निष्ठासे अुनकी सेवा करें; हम अुनके भंगी बन जायें और अुनके स्वास्थ्यकी रक्षा

करनेवाले परिचारक बन जायें। हमें अपने सारे पूर्वग्रह भुला देना चाहिये। अेक क्षणके लिअे हम स्वराज्यको भी भूल जायें और अमीरोंकी बात तो भूल ही जायें, यद्यपि अुनका होना हमें हर कदम पर खटकता है। वे तो अपनी जगह हैं ही। और कअी लोग हैं जो अिन बड़े सवालोंको सुलझानेमें लगे हुअे हैं। हमें तो गांवोंके सुधारके अिस छोटे काममें लग जाना चाहिये जो आज जरूरी है और तब भी जरूरी होगा जब हम अपना अुद्देश्य प्राप्त कर चुकेंगे। सच तो यह है कि ग्रामकार्यकी यह सफलता स्वयं हमें अपने अुद्देश्यके निकट ले जायगी।

हरिजन, १६–३–'३६

ग्राम-वस्तियोंका पुनरुत्थान होना चाहिये। भारतीय गांव भारतीय शहरोंकी सारी जरूरतें पैदा करते थे और अुन्हें देते थे। भारतकी गरीबी तब शुरू हुअी जब हमारे शहर विदेशी मालके बाजार बन गये और विदेशोंका सस्ता और भद्दा माल गांवोंमें भरकर अुन्हें चूसने लगे।

हरिजन, २७–२–'३७

गांवों और शहरोंके बीच स्वास्थ्यपूर्ण और नीतियुक्त सम्बन्धका निर्माण तब होगा जब कि शहरोंको अपने अिस कर्तव्यका ज्ञान होगा कि अुन्हें गांवोंका अपने स्वार्थके लिअे शोषण करनेके बजाय गांवोंसे जो शक्ति और पोषण वे प्राप्त करते हैं अुसका पर्याप्त बदला देना चाहिये। और यदि समाजके पुनर्निर्माणके अिस महान और अुदात्त कार्यमें शहरके बालकोंको अपना हिस्सा अदा करना है, तो जिन अुद्योगोंके द्वारा अुन्हें अपनी शिक्षा दी जाती है वे गांवोंकी जरूरतोंसे सीधे सम्बन्धित होने चाहिये।

हरिजन, १९–१०–'३७

हमें गांवोंको अपने चंगुलमें जकड़ रखनेवाली जिस त्रिविध बीमारीका अिलाज करना है, वह अिस प्रकार है: (१) सार्वजनिक स्वच्छताकी कमी, (२) पर्याप्त और पोषक आहारकी कमी, (३) ग्रामवासियोंकी जड़ता। . . . ग्रामवासी जनता अपनी अुन्नतिकी ओरसे अुदासीन है। स्वच्छताके

आधुनिक अुपायोंको न तो वे समझते हैं और न अुनकी कद्र करते हैं। अपने खेतोंको जोतने-बोने या जिस किस्मका परिश्रम वे करते आये हैं वैसा परिश्रम करनेके सिवा अधिक कोअी श्रम करनेके लिअे वे राजी नहीं हैं। ये कठिनाअियां वास्तविक और गम्भीर हैं। लेकिन अुनसे हमें घबड़ाने या हतोत्साह होनेकी जरूरत नहीं। हमें अपने ध्येय और कार्यमें अमिट श्रद्धा होनी चाहिये। हमारे व्यवहारमें धीरज होना चाहिये। ग्रामकार्यमें हम खुद नौसिखिया ही तो हैं। हमें अेक पुरानी और जटिल बीमारीका अिलाज करना है। धीरज और सतत परिश्रमसे, यदि हममें ये गुण हों तो, कठिनाअियोंके पहाड़ तक जीते जा सकते हैं। हम अुन परिचारिकाओंकी स्थितिमें हैं जो अुन्हें सौंपे हुअे बीमारोंको अिसलिअे नहीं छोड़ सकतीं कि अुन बीमारोंकी बीमारी असाध्य है।

हरिजन, १६–५–'३६

अिन भारतीय किसानोंसे ज्यों ही तुम बातचीत करोगे और वे तुमसे बोलने लगेंगे, त्यों ही तुम देखोगे कि अुनके होंठोंसे ज्ञानका निर्झर बहता है। तुम देखोगे कि अुनके अनगढ़ बाहरी रूपके पीछे आध्यात्मिक अनुभव और ज्ञानका गहरा सरोवर भरा पड़ा है। मैं अिसी चीजको संस्कृति कहता हूं। पश्चिममें तुम्हें यह चीज नहीं मिलेगी। तुम किसी यूरोपीय किसानसे बातचीत करके देखो, तुम पाओगे कि अुसे आध्यात्मिक वस्तुओंमें कोअी रस नहीं है।

हरिजन, २८–१–'३९

भारतीय किसानमें फूहड़पनके बाहरी आवरणके पीछे युगों-पुरानी संस्कृति छिपी पड़ी है। अिस बाहरी आवरणको अलग कर दें, अुसकी दीर्घकालीन गरीबी और निरक्षरताको हटा दें, तो हमें सुसंस्कृत, सभ्य और आजाद नागरिकका अेक सुन्दरसे सुन्दर नमूना मिल जायगा।

हरिजन, २८–१–'३९

२४

ग्राम-स्वराज्य

ग्राम-स्वराज्यकी मेरी कल्पना यह है कि वह अेक अैसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी अहम जरूरतोंके लिअे अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा; और फिर भी वहुतेरी दूसरी जरूरतोंके लिअे — जिनमें दूसरोंका सहयोग अनिवार्य होगा — वह परस्पर सहयोगसे काम लेगा। अिस तरह हरअेक गांवका पहला काम यह होगा कि वह अपनी जरूरतका तमाम अनाज और कपड़ेके लिअे कपास खुद पैदा कर ले। अुसके पास अितनी सुरक्षित जमीन होनी चाहिये, जिसमें ढोर चर सकें और गांवके वड़ों व वच्चोंके लिअे मनवहलावके सावन और खेलकूदके मैदान वगैराका वन्दोवस्त हो सके। अिसके वाद भी जमीन वची तो अुसमें वह अैसी अुपयोगी फसलें वोयेगा, जिन्हें वेचकर वह आर्थिक लाभ अुठा सके; यों वह गांजा, तम्वाकू, अफीम वगैराकी खेतीसे वचेगा।

हरअेक गांवमें गांवकी अपनी अेक नाटकशाला, पाठशाला और सभा-भवन रहेगा। पानीके लिअे अुसका अपना अिन्तजाम होगा — वाटर वर्क्स होंगे — जिससे गांवके सभी लोगोंको शुद्ध पानी मिला करेगा। कुओं और तालावों पर गांवका पूरा नियंत्रण रखकर यह काम किया जा सकता है। वुनियादी तालीमके आखिरी दरजे तक शिक्षा सवके लिअे लाजिमी होगी। जहां तक हो सकेगा, गांवके सारे काम सहयोगके आधार पर किये जायंगे। जात-पांत और क्रमागत अस्पृश्यताके जैसे भेद आज हमारे समाजमें पाये जाते हैं, वैसे अिस ग्राम-समाजमें विलकुल नहीं रहेंगे।

हरिजनसेवक, २–८–'४२

सत्याग्रह और असहयोगके शास्त्रके साथ अहिंसाकी सत्ता ही ग्रामीण समाजका शासन-वल होगी। गांवकी रक्षाके लिअे ग्राम-सैनिकोंका अेक अैसा दल रहेगा, जिसे लाजिमी तौर पर वारी-वारीसे गांवके चौकी-पहरेका काम करना होगा। अिसके लिअे गांवमें अैसे लोगोंका रजिस्टर रखा जायगा। गांवका शासन चलानेके लिअे हर साल गांवके पांच आदमियोंकी अेक पंचायत चुनी जायगी। अिसके लिअे नियमानुसार अेक

खास निर्धारित योग्यतावाले गांवके बालिग स्त्री-पुरुषोंको अधिकार होगा कि वे अपने पंच चुन लें। जिन पंचायतोंको सब प्रकारकी आवश्यक सत्ता और अधिकार रहेंगे। चूंकि जिस ग्राम-स्वराज्यमें आजके प्रचलित अर्थोंमें सजा या दंडका कोअी रिवाज नहीं रहेगा जिसलिअे यह पंचायत अपने अेक सालके कार्यकालमें स्वयं ही धारासभा, न्यायसभा और कार्यकारिणी सभाका सारा काम संयुक्त रूपसे करेगी।

आज भी अगर कोअी गांव चाहे तो अपने यहां जिस तरहका प्रजातंत्र कायम कर सकता है। अुसके जिस काममें मौजूदा सरकार भी ज्यादा दस्तंदाजी नहीं करेगी। क्योंकि अुसका गांवसे जो भी कारगर संबंध है, वह सिर्फ मालगुजारी वसूल करने तक ही सीमित है। यहां मैंने जिस बातका विचार नहीं किया है कि जिस तरहके गांवका अपने पास-पड़ोसके गांवोंके साथ या केन्द्रीय सरकारके साथ, अगर वैसी कोअी सरकार हुअी, क्या संबंध रहेगा। मेरा हेतु तो ग्राम-शासनकी अेक रूपरेखा पेश करनेका ही है। जिस ग्राम-शासनमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर आधार रखनेवाला संपूर्ण प्रजातंत्र काम करेगा। व्यक्ति ही अपनी जिस सरकारका निर्माता भी होगा। अुसकी सरकार और वह दोनों अहिंसाके नियमके वश होकर चलेंगे। अपने गांवके साथ वह सारी दुनियाकी शक्तिका मुकाबला कर सकेगा। क्योंकि हरअेक देहातीके जीवनका सबसे बड़ा नियम यह होगा कि वह अपनी और अपने गांवकी अिज्जतकी रक्षाके लिअे मर मिटे।

संभव है अैसे गांवको तैयार करनेमें अेक आदमीकी पूरी जिन्दगी खतम हो जाय। सच्चे प्रजातंत्रका और ग्राम-जीवनका कोअी भी प्रेमी अेक गांवको लेकर बैठ सकता है और अुसीको अपनी सारी दुनिया मानकर अुसके काममें मशगूल रह सकता है। निश्चय ही अुसे जिसका अच्छा फल मिलेगा। वह गांवमें बैठते ही अेक साथ गांवके भंगी, कतवैये, चौकीदार, वैद्य और शिक्षकका काम शुरू कर देगा। अगर गांवका कोअी आदमी अुसके पास न फटके, तो भी वह सन्तोषके साथ अपने सफाअी और कताअीके काममें जुटा रहेगा।

हरिजनसेवक, २–८–'४२

देहातवालोंमें अैसी कला और कारीगरीका विकास होना चाहिये, जिससे बाहर अुनकी पैदा की हुअी चीजोंकी कीमत की जा सके। जब गावोंका पूरा-पूरा विकास हो जायगा, तो देहातियोंकी बुद्धि और आत्माको सन्तुष्ट करनेवाली कला-कारीगरीके धनी स्त्री-पुरुषोंकी गांवोंमें कमी नहीं रहेगी। गांवमें कवि होंगे, चित्रकार होंगे, शिल्पी होंगे, भाषाके पंडित और शोध करनेवाले लोग भी होंगे। थोड़ेमें, जिन्दगीकी अैसी कोअी चीज न होगी जो गांवमें न मिले। आज हमारे देहात अुजड़े हुअे और कूड़े-कचरेके ढेर बने हुअे हैं। कल वहीं सुन्दर बगीचे होंगे और ग्रामवासियोंको ठगना या अुनका शोषण करना असंभव हो जायगा।

अिस तरहके गांवोंकी पुनर्रचनाका काम आजसे ही शुरू हो जाना चाहिये। गांवोंकी पुनर्रचनाका काम कामचलाअू नहीं, बल्कि स्थायी होना चाहिये।

अुद्योग, हुनर, तन्दुरुस्ती और शिक्षा अिन चारोंका सुन्दर समन्वय करना चाहिये। नअी तालीममें अुद्योग और शिक्षा, तन्दुरुस्ती और हुनरका सुन्दर समन्वय है। अिन सबके मेलसे मांके पेटमें आनेके समयसे लेकर बुढ़ापे तकका अेक खूबसूरत फूल तैयार होता है। यही नअी तालीम है। अिसलिअे मैं शुरूमें ग्राम-रचनाके टुकड़े नहीं करूंगा, बल्कि यह कोशिश करूंगा कि अिन चारोंका आपसमें मेल बैठे। अिसलिअे मैं किसी अुद्योग और शिक्षाको अलग नहीं मानूंगा, बल्कि अुद्योगको शिक्षाका जरिया मानूंगा, और अिसीलिअे अैसी योजनामें नअी तालीमको शामिल करूंगा।

हरिजनसेवक, १०–११–'४६

मेरी कल्पनाकी ग्राम-अिकाअी मजबूतसे मजबूत होगी। मेरी कल्पनाके गांवमें १००० आदमी रहेंगे। अैसे गांवको अगर स्वावलम्बनके आधार पर अच्छी तरह संगठित किया जाय, तो वह बहुत कुछ कर सकता है।

हरिजन, ४–८–'४६

आदर्श भारतीय ग्राम अिस तरह बनाया जायगा कि अुसमें आसानीसे स्वच्छताकी पूरी-पूरी व्यवस्था रहे। अुसकी झोपड़ियोंमें पर्याप्त प्रकाश और हवाका प्रबन्ध होगा और अुनके निर्माणमें जिस सामानका अुपयोग होगा

वह अैसा होगा, जो गांवके आसपास पांच मीलकी त्रिज्याके अन्दर आनेवाले प्रदेशमें मिल सके। अिन झोपड़ियोंमें आंगन या खुली जगह होगी, जहां अुस घरके लोग अपने अुपयोगके लिअे साग-भाजियां अुगा सकें और अपने मवेशियोंको रख सकें। गांवकी गलियां और सड़कें जिस धूलको हटाया जा सकता है अुससे मुक्त होंगी। अुस गांवमें अुसकी आवश्यकताके अनुसार कुअें होंगे और वे सबके लिअे खुले होंगे। अुसमें सब लोगोंके लिअे पूजाके स्थान होंगे, सबके लिअे अेक सभा-भवन होगा, मवेशियोंके चरनेके लिअे गांवका चरागाह होगा, सहकारी डेरी होगी, प्रायमिक और माध्यमिक शालायें होंगी जिनमें मुख्यतः औद्योगिक शिक्षा दी जायगी और झगड़ोंके निपटारेके लिअे ग्राम-पंचायत होगी। वह अपना अनाज, साग-भाजियां और फल तथा खादी खुद पैदा कर लेगा।

महात्मा, खंड ४, पृ० १४४

२५

पंचायत राज

आजादी नीचेसे शुरू होनी चाहिये। हरअेक गांवमें जमहूरी सल्तनत या पंचायतका राज होगा। अुसके पास पूरी सत्ता और ताकत होगी। अिसका मतलब यह है कि हरअेक गांवको अपने पांव पर खड़ा होना होगा — अपनी जरूरतें खुद पूरी कर लेनी होंगी, ताकि वह अपना सारा कारोबार खुद चला सके। यहां तक कि वह सारी दुनियाके खिलाफ अपनी रक्षा खुद कर सके। अुसे तालीम देकर अिस हद तक तैयार करना होगा कि वह बाहरी हमलेके मुकाबलेमें अपनी रक्षा करते हुअे मर-मिटनेके लायक बन जाय। अिस तरह आखिर हमारी बुनियाद व्यक्ति पर होगी। अिसका यह मतलब नहीं कि पड़ोसियों पर या दुनिया पर भरोसा न रखा जाय; या अुनकी राजी-खुशीसे दी हुअी मदद न ली जाय। कल्पना यह है कि सब लोग आजाद होंगे और सब अेक-दूसरे पर अपना असर डाल सकेंगे। जिस समाजका हरअेक आदमी यह जानता है कि अुसे क्या चाहिये और

अिससे भी वढ़कर जिसमें यह माना जाता है कि वरावरीकी मेहनत करके भी दूसरोंको जो चीज नहीं मिलती है वह खुद भी किसीको नहीं लेनी चाहिये, वह समाज जरूर ही वहुत अूंचे दरजेकी सभ्यतावाला होना चाहिये।

अैसे समाजकी रचना सत्य और अहिंसा पर ही हो सकती है। मेरी राय है कि जव तक अीश्वर पर जीता-जागता विश्वास न हो, तव तक सत्य और अहिंसा पर चलना असंभव है। अीश्वर या खुदा वह जिन्दा ताकत है, जिसमें दुनियाकी तमाम ताकतें समा जाती हैं। वह किसीका सहारा नहीं लेती और दुनियाकी दूसरी सव ताकतोंके खतम हो जाने पर भी कायम रहती है। अिस जीती-जागती रोशनी पर, जिसने अपने दामनमें सव कुछ लपेट रखा है, मैं विश्वास न रखूं, तो मैं समझ न सकूंगा कि मैं आज किस तरह जिन्दा हूं।

अैसा समाज अनगिनत गांवोंका वना होगा। अुसका फैलाव अेकके अूपर अेकके ढंग पर नहीं, वल्कि लहरोंकी तरह अेकके वाद अेककी शकलमें होगा। जिन्दगी मीनारकी शकलमें नहीं होगी, जहां अूपरकी तंग चोटीको नीचेके चौड़े पाये पर खड़ा होना पड़ता है। वहां तो समुद्रकी लहरोंकी तरह जिन्दगी अेकके वाद अेक घेरेकी शकलमें होगी और व्यक्ति अुसका मध्यविन्दु होगा। यह व्यक्ति हमेशा अपने गांवके खातिर मिटनेको तैयार रहेगा। गांव अपने अिर्दगिर्दके गांवोंके लिअे मिटनेको तैयार होगा। अिस तरह आखिर सारा समाज अैसे लोगोंका वन जायगा, जो अुद्धत वनकर कभी किसी पर हमला नहीं करते, वल्कि हमेशा नम्र रहते हैं, और अपनेमें समुद्रकी अुस शानको महसूस करते हैं जिसके वे अेक जरूरी अंग हैं।

अिसलिअे सवसे वाहरका घेरा या दायरा अपनी ताकतका अुपयोग भीतरवालोंको कुचलनेमें नहीं करेगा, वल्कि अुन सवको ताकत देगा और अुनसे ताकत पायेगा। मुझे ताना दिया जा सकता है कि यह सव तो खयाली तसवीर है, अिसके वारेमें सोचकर वक्त क्यों विगाड़ा जाय? युक्लिडकी परिभाषावाला विन्दु कोअी मनुष्य खींच नहीं सकता, फिर भी अुसकी कीमत हमेशा रही है और रहेगी। अिसी तरह मेरी

अिस तसवीरकी भी कीमत है। अिसके लिअे मनुष्य जिन्दा रह सकता है। अगरचे अिस तसवीरको पूरी तरह बनाना या पाना संभव नहीं है, तो भी अिस सही तसवीरको पाना या अिस तक पहुंचना हिन्दुस्तानकी जिन्दगीका मकसद होना चाहिये। जिस चीजको हम चाहते हैं अुसकी सही-सही तसवीर हमारे सामने होनी चाहिये, तभी हम अुससे मिलती-जुलती कोअी चीज पानेकी आशा रख सकते हैं। अगर हिन्दुस्तानके हरअेक गांवमें कभी पंचायती राज कायम हुआ, तो मैं अपनी अिस तसवीरकी सचाअी साबित कर सकूंगा, जिसमें सबसे पहला और सबसे आखिरी दोनों बराबर होंगे या यों कहिये कि न कोअी पहला होगा, न आखिरी।

अिस तसवीरमें हरअेक धर्मकी अपनी पूरी और बराबरीकी जगह होगी। हम सब अेक ही आलीशान पेड़के पत्ते हैं। अिस पेड़की जड़ हिलाअी नहीं जा सकती, क्योंकि वह पाताल तक पहुंची हुअी है। ज़बरदस्तसे जबरदस्त आंधी भी अुसे हिला नहीं सकती।

अिस तसवीरमें अुन मशीनोंके लिअे कोअी जगह नहीं होगी, जो मनुष्यकी मेहनतकी जगह लेकर कुछ लोगोंके हाथोंमें सारी ताकत अिकट्ठी कर देती हैं। सभ्य लोगोंकी दुनियामें मेहनतकी अपनी अनोखी जगह है। अुसमें अैसी मशीनोंकी गुंजाअिश होगी, जो हर आदमीको अुसके काममें मदद पहुंचायें। लेकिन मुझे कबूल करना चाहिये कि मैंने कभी बैठकर यह सोचा नहीं कि अिस तरहकी मशीन कैसी हो सकती है। सिलाअीकी सिंगर मशीनका खयाल मुझे आया था। लेकिन अुसका जिक्र भी मैंने यों ही कर दिया था। अपनी अिस तसवीरको पूर्ण बनानेके लिअे मुझे अुसकी जरूरत नहीं।

हरिजनसेवक, २८–७–'४६

जब पंचायत राज स्थापित हो जायेगा तब लोकमत अैसे भी अनेक काम कर दिखायेगा जो हिंसा कभी नहीं कर सकती। जमींदारों, पूंजीपतियों और राजाओंकी मौजूदा सत्ता तभी तक चल सकती है जब तक कि सामान्य जनताको अपनी शक्तिका भान नहीं होता। अगर लोग

जमींदारी और पूंजीवादकी बुराअीसे सहयोग करना बंद कर दें, तो वह पोषणके अभावमें खुद ही मर जायगी। पंचायत राजमें केवल पंचायतकी आज्ञा मानी जायगी और पंचायत अपने बनाये हुअे कानूनके द्वारा ही अपना कार्य करेगी।

हरिजन, १–७–'४७

२६
ग्रामोद्योग

ग्रामोद्योगोंका यदि लोप हो गया, तो भारतके ७ लाख गांवोंका सर्वनाश ही समझिये।

ग्रामोद्योग-संबंधी मेरी प्रस्तावित योजना पर अिधर दैनिक पत्रोंमें जो टीकायें हुअी हैं अुन्हें मैंने पढ़ा है। कअी पत्रोंने तो मुझे यह सलाह दी है कि मनुष्यकी अन्वेषण-बुद्धिने प्रकृतिकी जिन शक्तियोंको अपने वशमें कर लिया है, अुनका अुपयोग करनेसे ही गांवोंकी मुक्ति होगी। अुन आलोचकोंका यह कहना है कि प्रगतिशील पश्चिममें जिस तरह पानी, हवा, तेल और बिजलीका पूरा-पूरा अुपयोग हो रहा है, अुसी तरह हमें भी अिन चीजोंको काममें लाना चाहिये। वे कहते हैं कि अिन गुप्त प्राकृतिक शक्तियों पर कब्जा कर लेनेसे प्रत्येक अमेरिका-वासी ३३ गुलामोंको रख सकता है, अर्थात् ३३ गुलामोंका काम वह अिन शक्तियोंके द्वारा ले सकता है।

अिस रास्ते अगर हम हिन्दुस्तानमें चले, तो मैं यह बेधड़क कह सकता हूं कि प्रत्येक मनुष्यको ३३ गुलाम मिलनेके बजाय अिस मुल्कके अेक-अेक मनुष्यकी गुलामी ३३ गुनी बढ़ जायगी।

यंत्रोंसे काम लेना अुसी अवस्थामें अच्छा होता है, जब कि किसी निर्धारित कामको पूरा करनेके लिअे आदमी बहुत ही कम हों या नपे-तुले हों। पर यह बात हिन्दुस्तानमें तो है नहीं। यहां कामके लिअे जितने आदमी चाहिये, अुनसे कहीं अधिक बेकार पड़े हुअे हैं। अिसलिअे अुद्योगोंके यंत्रीकरणसे यहांकी बेकारी घटेगी या बढ़ेगी? कुछ

वर्गगज जमीन खोदनेके लिये मैं हल्का अुपयोग नहीं करूंगा। हमारे यहां सवाल यह नहीं है कि हमारे गांवोंमें जो लाखों-करोड़ों आदमी पड़े हैं अुन्हें परिश्रमकी चक्कीसे निकाल कर किस तरह छुट्टी दिलाअी जाय, बल्कि यह है कि अुन्हें सालमें जो कुछ महीनोंका समय यों ही बैठे-बैठे आलसमें बिताना पड़ता है अुसका अुपयोग कैसे किया जाय। कुछ लोगोंको मेरी यह बात शायद विचित्र लगेगी, पर दरअसल बात यह है कि प्रत्येक मिल सामान्यतः आज गांवोंकी जनताके लिअे ग्रामशूल हो रही है। अुनकी रोजी पर ये मायाविनी मिलें छापा मार रही हैं। मैंने बारीकीसे आंकड़े अेकत्र नहीं किये, पर अितना तो कह ही सकता हूं कि गांवोंमें बैठकर कमसे कम दस मजदूर जितना काम करते हैं अुतना ही काम मिलका अेक मजदूर करता है। अिसे यों भी कह सकते हैं कि दस आदमियोंकी रोजी छीनकर यह अेक आदमी गांवमें जितना कमाता था अुससे कहीं अधिक कमा रहा है। अिस तरह कताअी और बुनाअीकी मिलोंने गांवोंके लोगोंकी जीविकाका अेक बड़ा भारी साधन छीन लिया है।

अूपरकी दलीलका यह कोअी जवाब नहीं है कि ये मिलें जो कपड़ा तैयार करती हैं वह अधिक अच्छा और काफी सस्ता होता है। कारण यह है कि अिन मिलोंने अगर हजारों मजदूरोंका धंधा छीनकर अुन्हें बेकार बना दिया है, तो सस्तेसे सस्ता मिलका कपड़ा गांवोंकी बनी हुअी महंगीसे महंगी खादीसे भी ज्यादा महंगा है। कोयलेकी खानमें काम करनेवाले मजदूर जहां रहते हैं वहीं वे कोयलेका अुपयोग कर सकते हैं, अिसलिअे अुन्हें कोयला महंगा नहीं पड़ता। अिसी तरह जो ग्रामवासी अपनी जरूरत भरके लिअे खुद खादी बना लेता है, अुसे वह महंगी नहीं पड़ती। पर मिलोंका बना कपड़ा अगर गांवोंके लोगोंको बेकार बना रहा है, तो चावल कूटने और आटा पीसनेकी मिलें हजारों स्त्रियोंकी न केवल रोजी ही छीन रही हैं, बल्कि बदलेमें तमाम जनताके स्वास्थ्यको हानि भी पहुंचा रही हैं। जहां लोगोंको मांस खानेमें कोअी आपत्ति न हो और जहां मांसाहार पुसाता हो, वहां मैदा और पॉलिशदार चावलसे शायद हानि न होती हो। लेकिन हमारे देशमें,

जहां करोड़ों आदमी अैसे हैं जो मांस मिले तो खानेमें आपत्ति नहीं करेंगे, पर जिन्हें मांस मिलता ही नहीं, अुन्हें हाथकी चक्कीके पिसे हुअे गेहूंके आटे और हाथ-कुटे चावलके पौष्टिक तथा जीवनप्रद तत्त्वोंसे वंचित रखना अेक प्रकारका पाप है। अिसलिअे डॉक्टरों तथा दूसरे आहार-विशेषज्ञोंको चाहिये कि मैदे और मिलके कुटे पॉलिशदार चावलसे लोगोंके स्वास्थ्यको जो हानि हो रही है अुससे वे जनताको आगाह कर दें।

मैंने सहज ही नजरमें आनेवाली जो कुछ मोटी-मोटी बातोंकी तरफ यहां ध्यान खींचा है, अुसका अुद्देश्य यही है कि अगर ग्रामवासियोंको कुछ काम देना है तो वह यंत्रोंके द्वारा संभव नहीं। अुनके अुद्धारका सच्चा मार्ग तो यही है कि जिन अुद्योग-धंधोंको वे अब तक किसी कदर करते चले आ रहे हैं, अुन्हींको भलीभांति जीवित किया जाय।

हरिजनसेवक, २३–११–'३४

ग्रामोद्योगोंकी योजनाके पीछे मेरी कल्पना तो यह है कि हमें अपनी रोजमर्राकी आवश्यकतायें गांवोंकी बनी चीजोंसे ही पूरी करनी चाहिये; और जहां यह मालूम हो कि अमुक चीजें गांवोंमें मिलती ही नहीं, वहां हमें यह देखना चाहिये कि अुन चीजोंको थोड़े परिश्रम और संगठनसे बना कर गांववाले अुनसे कुछ मुनाफा अुठा सकते हैं या नहीं। मुनाफेका अंदाज लगानेमें हमें अपना नहीं, किन्तु गांववालोंका खयाल रखना चाहिये। संभव है कि शुरूमें हमें साधारण भावसे कुछ अधिक देना पड़े और चीज हलकी मिले। पर अगर हम अुन चीजोंके बनानेवालोंके काममें रस लें और यह आग्रह रखें कि वे बढ़ियासे बढ़िया चीजें तैयार करें, और सिर्फ आग्रह ही नहीं रखें बल्कि अुन लोगोंको पूरी मदद भी दें, तो यह हो नहीं सकता कि गांवोंकी बनी चीजोंमें दिन-दिन तरक्की न होती जाय।

हरिजनसेवक, ३०–११–'३४

मैं कहूंगा कि अगर गांवोंका नाश होता है तो भारतका भी नाश हो जायगा। अुस हालतमें भारत भारत नहीं रहेगा। दुनियाको अुसे जो संदेश देना है अुस संदेशको वह खो देगा।

गांवोंमें फिरसे जान तभी आ सकती है, जब वहांकी लूट-खसोट रुक जाय। बड़े पैमाने पर मालकी पैदावार जरूर ही व्यापारिक प्रतिस्पर्धा तथा माल निकालनेकी धुनके साथ-साथ गांवोंकी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपसे होनेवाली लूटके लिअे जिम्मेवार है। अिसलिअे हमें अिस बातकी सबसे ज्यादा कोशिश करनी चाहिये कि गांव हर बातमें स्वावलंबी और स्वयंपूर्ण हो जायं। वे अपनी जरूरतें पूरी करने भरके लिअे चीजें तैयार करें। ग्रामोद्योगके अिस अंगकी अगर अच्छी तरह रक्षा की जाय, तो फिर भले ही देहाती लोग आजकलके अुन यंत्रों और औजारोंसे भी काम ले सकते हैं, जिन्हें वे बना और खरीद सकते हैं। शर्त सिर्फ यही है कि दूसरोंको लूटनेके लिअे अुनका अुपयोग नहीं होना चाहिये।

हरिजनसेवक, २९–८–'३६

सच तो यह है कि हमें गांवोंवाला भारत और शहरोंवाला भारत, अिन दोमें से अेकको चुन लेना है। गांव अुतने ही पुराने हैं, जितना कि यह भारत पुराना है। शहरोंको विदेशी आधिपत्यने बनाया है। जब यह आधिपत्य मिट जायगा, तब शहरोंको गांवोंके मातहत होकर रहना पड़ेगा। आज तो शहरोंका बोलबाला है और वे गांवोंकी सारी दौलत खींच लेते हैं। अिससे गांवोंका ह्रास और नाश हो रहा है। गांवोंका शोषण खुद अेक संगठित हिंसा है। अगर हमें स्वराज्यकी रचना अहिंसाके पाये पर करनी है, तो गांवोंको अुनका अुचित स्थान देना होगा।

हरिजनसेवक, २०–१–'४०

खादी

मेरे विचारमें खादी हिन्दुस्तानकी समस्त जनताकी अेकताकी, अुसकी आर्थिक स्वतंत्रता और समानताकी प्रतीक है, और अिसलिअे जवाहरलालके काव्यमय शब्दोंमें कहूं तो वह 'हिन्दुस्तानकी आजादीकी पोशाक' है।

अिसके सिवा, खादीवृत्तिका अर्थ है, जीवनके लिअे जरूरी चीजोंकी अुत्पत्ति और अुनके बंटवारेका विकेन्द्रीकरण। अिसलिअे अब तक जो सिद्धांत बना है, वह यह है कि हरअेक गांवको अपनी जरूरतकी सब

चीजें खुद पैदा कर लेनी चाहिये, और शहरोंकी जरूरतें पूरी करनेके लिअे कुछ अधिक अुत्पत्ति करनी चाहिये।

अलवत्ता, वड़े-वड़े अुद्योग-धन्धोंको तो अेक जगह केन्द्रित करके राष्ट्रके अधीन रखना होगा। लेकिन समूचा देश मिलकर गांवोंमें जिन वड़े-वड़े आर्थिक अुद्योगोंको चलायेगा, अुनके सामने ये कोअी चीज न रहेंगे।

खादीके अुत्पादनमें ये काम शामिल हैं — कपास वोना, कपास चुनना, अुसे झाड़-झटक कर साफ करना और ओटना, रुअी पींजना, पूनी वनाना, सूत कातना, सूतको मांड लगाना, सूत रंगना, अुसका ताना भरना और वाना तैयार करना, सूत वुनना और कपड़ा धोना। अिनमें से रंगसाजीको छोड़कर वाकीके सारे काम खादीके सिलसिलेमें जरूरी और महत्त्वके हैं, और अुन्हें किये विना काम नहीं चल सकता। अिनमें से हरअेक काम गांवोंमें अच्छी तरह हो सकता है; और सच तो यह है कि अखिल भारत चरखा-संघ समूचे हिन्दुस्तानके जिन कअी गांवोंमें काम कर रहा है, वहां ये सारे काम आज हो रहे हैं।

जवसे गांवोंमें चलनेवाले अनेक अुद्योगोंमें से अिस मुख्य अुद्योगका और अिसके आसपास जड़ी हुअी कअी दस्तकारियोंका विना सोचे-समझे, मनमाने तरीकेसे और वेरहमीके साथ नाश किया गया है, तवसे हमारे गांवोंकी वुद्धि और तेज नष्ट हो गया है। वे सव निस्तेज और निष्प्राण वन गये हैं, और अुनकी हालत अुनके अपने भूखों मरनेवाले मरियल ढोरोंकी-सी हो गअी है।

रचनात्मक कार्यक्रम, पृ० २०, २१, २२

दूसरे ग्रामोद्योग

खादीके मुकावले देहातमें चलनेवाले और देहातके लिअे जरूरी दूसरे धन्धोंकी वात अलग है। अुन सव धन्धोंमें अपनी राजी-खुशीसे मजदूरी करनेकी वात वहुत अुपयोगी होने जैसी नहीं है। फिर, अुनमें से हरअेक धन्धा या अुद्योग अैसा है, जिसमें अेक खास तादादमें ही लोगोंको मजदूरी मिल सकती है। अिसलिअे ये अुद्योग खादीके मुख्य

काममें सहायक हो सकते हैं। खादीके अभावमें अुनकी कोअी हस्ती नहीं, और अुनके विना खादीका गौरव या शोभा नहीं है। हाथसे पीसना, हाथसे कूटना और कछोरना, सावुन वनाना, कागज वनाना, चमड़ा कमाना, तेल पेरना और अिस तरहके सामाजिक जीवनके लिअे जरूरी और महत्त्वके दूसरे धन्धोंके विना गांवोंकी आर्थिक रचना संपूर्ण नहीं हो सकती, यानी गांव स्वयंपूर्ण घटक नहीं वन सकते। कांग्रेसी आदमी अिन सव धन्धोंमें दिलचस्पी लेगा, और अगर वह गांवका वाशिन्दा होगा या गांवमें जाकर रहता होगा, तो अिन धन्धोंमें नयी जान फूंकेगा और अिन्हें नये रास्ते ले जायेगा। हरअेक आदमीको, हर हिन्दुस्तानीको, अिसे अपना धर्म समझना चाहिये कि जव-जव और जहां-जहां मिले, वहां वह हमेशा गांवोंकी वनी चीजें ही वरते। अगर अैसी चीजोंकी मांग पैदा हो जाय, तो अिसमें जरा भी शक नहीं कि हमारी ज्यादातर जरूरतें गांवोंसे पूरी हो सकती हैं। जव हम गांवोंके लिअे सहानुभूतिसे सोचने लगेंगे और गांवोंकी वनी चीजें हमें पसंद आने लगेंगी, तो पश्चिमकी नकलके रूपमें यंत्रोंकी वनी चीजें हमें नहीं जंचेंगी, और हम अैसी राष्ट्रीय अभिरुचिका विकास करेंगे, जो गरीवी, भुखमरी और आलस्य या वेकारीसे मुक्त नये हिन्दुस्तानके आदर्शके साथ मेल खाती होगी।

रचनात्मक कार्यक्रम, पृ० २६–२७

मिश्र खाद

भारतकी जनता अिस प्रयत्नमें खुशीसे सहयोग करे तो यह देश न सिर्फ अनाजकी कमीको पूरा कर सकता है, वल्कि हमें जितना चाहिये अुससे कहीं ज्यादा अनाज पैदा कर सकता है। यह जीवित खाद (आरगेनिक मैन्युर) जमीनके अुपजाअूपनको हमेशा वढ़ाता ही है, कभी कम नहीं करता। हर दिन जो कूड़ा-कचरा अिकट्ठा होता है अुसे ठीक विधिके अनुसार गड्ढोंमें अिकट्ठा किया जाय तो अुसका सुनहला खाद वन जाता है; और तव अुसे खेतकी जमीनमें मिला दिया जाय तो अुससे अनाजकी अुपज कअी गुनी वढ़ जाती है और फलतः हमें करोड़ों रुपयोंकी वचत होती है। अिसके सिवा कूड़े-कचरेका अिस तरह खाद वनानेके लिअे

अुपयोग कर लिया जाय तो आसपासकी जगह साफ रहती है। और स्वच्छता अेक सद्गुण होनेके साथ-साथ स्वास्थ्यकी पोषक भी है।

हरिजन, २८-१२-'४७

गांवोंमें चमड़ेका धन्धा

हमारे गांवोंका चमड़ेका धंधा अुतना ही प्राचीन है जितना कि स्वयं भारतवर्ष। यह कोअी नहीं बतला सकता कि चमड़ा कमानेका यह धंधा कब अनादरकी चीज समझा जाने लगा। प्राचीन कालमें तो यह बात हुअी नहीं होगी। लेकिन हम जानते हैं कि आज हमारे यहांके अिस अेक अत्यन्त जरूरी और अुपयोगी अुद्योगने संभवतः दस लाख आदमियोंको पुश्तैनी अछूत बना दिया है। वह कुदिन ही होगा जिस दिनसे अिस अभागे देशमें परिश्रमको लोग घृणाकी दृष्टिसे देखने लगे होंगे और अिस प्रकार अुसकी अुपेक्षा करने लगे होंगे। लाखों-करोड़ों मनुष्य, जो दुनियाके हीर थे और जिनके अुद्योग पर यह देश जी रहा था, नीच समझे जाने लगे और अूपरसे बड़े दीखनेवाले थोड़ेसे अहदी आदमियोंका वर्ग प्रतिष्ठित समझा जाने लगा! अिसका दुःखद परिणाम यह हुआ कि भारतको नैतिक और आर्थिक दोनों ही प्रकारकी भारी क्षति पहुंची। यह हिसाब लगाना असंभव नहीं तो कठिन जरूर है कि अिन दोनोंमें से कौनसी हानि बड़ी थी। किन्तु किसानों और कारीगरोंके प्रति बताअी गअी अिस अपराधपूर्ण लापरवाहीने हमें दरिद्र, मूढ़ और काहिल बना कर ही छोड़ा। भारतके पास कौनसे साधन नहीं हैं? अुसका सुन्दर जल-वायु, अुसके गगनचुम्बी पर्वत, अुसकी विशाल नदियां और अुसका विस्तृत समुद्र — ये सब अैसे असीम साधन हैं कि अगर अिन सबका पूरा-पूरा अुपयोग किया जाय, तो अिस स्वर्णदेशमें दारिद्र्य और रोग आयें ही क्यों? पर जबसे हमने शारीरिक श्रमसे बुद्धिका सम्बन्ध छुड़ाया, तबसे हमारी कौमका सब तरहसे पतन हो गया; दुनियामें आज हम सबसे अल्पजीवी, निपट साधनहीन और अत्यन्त पराजित प्रजा माने जाते हैं। चमड़ेके देशी धंधेकी आज जो हालत है, वह शायद मेरे अिस कथनका सबसे अच्छा सबूत है।

हिसाव लगाकर देखा गया है कि नौ करोड़ रुपयेका कच्चा चमड़ा हर साल हिन्दुस्तानसे वाहर जाता है और वह सवका सव वनी-वनाअी चीजोंके रूपमें फिर यहां वापस आ जाता है। यह देशका सिर्फ आर्थिक ही नहीं वौद्धिक शोषण भी है। चमड़ा कमाने और अपने नित्यके अुपयोगमें आनेवाली अुसकी अनगिनत चीजें वनानेकी शिक्षा हमें आज कहां मिल रही है?

यहां शत-प्रतिशत स्वदेशी-प्रेमीके लिअे काफी काम पड़ा हुआ है। साथ ही अेक वहुत वड़े सवालके हल करनेमें जिस वैज्ञानिक ज्ञानकी आवश्यकता है अुसे काममें लानेका क्षेत्र भी मौजूद है। अिस अेक कामसे तीन अर्थ सधते हैं। अेक तो अिससे हरिजनोंकी सेवा होती है; दूसरे ग्रामवासियोंकी सेवा होती है; और तीसरे मध्यमवर्गके जो वुद्धिशाली लोग रोजगार-धन्धेकी खोजमें वेकार फिरते हैं, अुन्हें जीविकाका अेक प्रतिष्ठित साधन मिल जाता है। और यह लाभ तो जुदा ही है कि गांवकी जनताके सीधे संसर्गमें आनेका भी अुन्हें सुन्दर अवसर मिलता है।

हरिजनसेवक, १४–९–'३४

आरंभ कैसे करें?

वहुतसे सज्जन तो पत्र लिख-लिखकर और अनेक मित्र खुद मुझसे मिलकर यह प्रश्न पूछ रहे हैं कि किस प्रकार तो हम ग्रामोद्योग-कार्यका आरंभ करें और सवसे पहले किस चीजको हाथमें लें।

अिसका स्पष्ट अुत्तर तो यही है कि "अिस कार्यका श्रीगणेश आप खुद ही करें, और सवसे पहले अुसी कामको हाथमें लें, जो आपको आसानसे आसान जान पड़े।"

पर अिस सूत्रात्मक अुत्तरसे पूछताछ करनेवालोंको संतोष थोड़े ही होता है। अिसलिअे अिसे मैं जरा और स्पष्ट कर दूं।

हममें से हरअेक आदमी खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने और अपने नित्यके अुपयोगकी चीजोंको जांच-परख सकता है, और विलायती अथवा शहरकी वनी चीजोंकी जगह ग्रामवासियोंकी वनाअी हुअी अुन चीजोंको काममें ला सकता है, जिन्हें कि वे अपनी मढ़ैयामें या खेत-खलिहानमें चार-छह

पैसेके मामूली औजारोंसे सहज ही तैयार कर सकते हैं। अिन औजारोंको वे लोग आसानीसे चला सकते हैं और विगड़ जायें तो अुन्हें सुधार भी सकते हैं। विदेशी या शहरकी बनी चीजोंकी जगह गांवोंकी बनी चीजोंको आप काममें लाने लगें, तो ग्रामोद्योग-कार्यका यह बड़ा अच्छा आरंभ होगा, और आपके लिअे यह खुद ही अेक बड़े महत्त्वकी चीज होगी। अिसके बाद फिर क्या करना होगा, यह तो आप ही मालूम हो जायगा। मान लीजिये कि आजतक कोअी आदमी बंबअीके किसी कल-कारखानेके बने टुथब्रशसे दांत साफ करता आ रहा है। अब अुसकी जगह वह गांवका बना टुथब्रश चाहता है। तो अुसे बबूल या नीमकी दातौनसे दांत साफ करनेकी सलाह दें। अगर अुसके दांत कमजोर हैं या दांत हैं ही नहीं, तो वह दातौनका अेक सिरा तो लोढ़ी या हथौड़ीसे कुचल ले और दूसरे सिरेको चीरकर अुसकी फांकोंसे जीभीका काम ले। दातौनका यह ब्रश सस्ता भी काफी पड़ेगा और कारखानोंके बने हुअे अस्वच्छ ब्रशोंसे स्वच्छ भी अधिक होगा। शहरोंके बने दंतमंजनोंको वह छुअेगा ही नहीं। वह तो लकड़ीके कोयलेको खूब महीन पीसकर और अुसमें थोड़ा-सा साफ नमक मिलाकर अपने घरमें ही बढ़िया मंजन तैयार कर लेगा। मिलके बने कपड़ेके बजाय वह गांवकी बुनी खादी पहनेगा, मिलके दले चावलकी जगह हाथके दले बिना पॉलिश किये चावलका और सफेद शक्करके स्थान पर गांवके बने गुड़का अुपयोग करेगा। अिन चीज़ोंको मैंने यहां बतौर नमूनेके ही दिया है और अिनकी चर्चा यद्यपि मैं 'हरिजनसेवक' में पहले कर चुका हूं, तो भी अिस विषय पर मेरे साथ जिन लोगोंकी लिखा-पढ़ी या बातचीत चल रही है, अुनकी बताअी हुअी कठिनाअियोंको दृष्टिमें रखकर मैंने पुनः खादी, चावल और गुड़का यहां अुल्लेख किया है।

हरिजनसेवक, २५–१–'३५

२७

सरकार क्या कर सकती है?

यह पूछना जायज है कि कांग्रेसी मंत्री, जो अब ओहदों पर आ गये हैं, खद्दर और दूसरे देहाती धंधोंके लिअे क्या करेंगे? मैं तो अिस सवालको और भी फैलाना चाहता हूं, ताकि यह हिन्दुस्तानके तमाम सूबोंकी सरकारों पर लागू हो। गरीबी तो हिन्दुस्तानके तमाम सूबोंमें फैली हुअी हैं। अिसी तरह आम जनताके अुद्धारके जरिये भी वहां हैं। अखिल भारतीय चरखा-संघ और अखिल भारतीय ग्रामोद्योग-संघका अैसा ही अनुभव है। अेक यह तजवीज भी आअी है कि अिस कामके लिअे अेक अलग मंत्री होना चाहिये। क्योंकि अिसके ठीक संगठनमें अेक मंत्रीका पूरा समय लग जायगा। मैं तो अिस तजवीजसे डरता हूं, क्योंकि अभी तक हम अपने खर्चके नापमें से अंग्रेजी पैमानेको छोड़ नहीं सके हैं। चाहे अलग मंत्री रखा जाय या न रखा जाय, अिस कामके लिअे अेक महकमा तो बेशक जरूरी है। आजकल खाने और पहननेके संकटके जमानेमें यह महकमा बड़ी मदद कर सकता है। अखिल भारतीय चरखा-संघ और अखिल भारतीय ग्रामोद्योग-संघके विशेषज्ञ मंत्रियोंसे मिल सकते हैं। आज यह संभव है कि थोड़े समयमें थोड़ीसे थोड़ी रकम लगाकर सारे हिन्दुस्तानको खादी पहना दी जाय। हर प्रान्तकी सरकारको गांववालोंसे कहना होगा कि अुनको अपने अुपयोगके लिअे अपनी खादी आप तैयार कर लेनी चाहिये। अिस तरह अपने-आप स्थानीय अुत्पादन और बंटवारा हो जायगा। और बेशक शहरोंके लिअे कमसे कम कुछ जरूर बच रहेगा, जिससे स्थानीय मिलों पर दबाव कम हो जायगा। तब ये मिलें दुनियाके दूसरे हिस्सोंमें कपड़ेकी जरूरत पूरी करनेमें हिस्सा लेने योग्य हो जायंगी।

यह नतीजा कैसे पैदा किया जा सकता है?

सरकारोंको चाहिये कि गांववालोंको यह सूचना कर दे कि अुनसे यह आशा रखी जायगी कि वे अपने गांवकी जरूरतोंके लिअे अेक निश्चित

तारीखके अन्दर खादी तैयार करें। अिसके बाद अुनको कोअी कपड़ा नहीं दिया जायगा। सरकार अपनी तरफसे गांववालोंको बिनौले या रुअी (जिसकी भी जरूरत हो) दामके दाम देगी और अुत्पादनके औजार भी असे दामों पर देगी जो आसानीसे वसूल होनेवाली किस्तोंमें लगभग पांच साल या अिससे भी ज्यादामें अदा हो सकें। सरकार जहां कहीं जरूरी हो अुन्हें सिखानेवाले भी दे और यह जिम्मा ले कि अगर गांववालोंके पास अुनकी तैयार की हुअी खादीसे अुनकी जरूरतें पूरी हो जायं, तो फालतू खादी सरकार खरीद लेगी। अिस तरह बिना हलचलके और बहुत थोड़ अूपरी खर्चके साथ कपड़ेकी कमी दूर हो जायगी।

गांवोंकी जांच-पड़ताल की जायगी और असी चीजोंकी अेक यादी तैयार की जायगी, जो किसी मददके बिना या बहुत थोड़ी मददसे स्थानीय स्तर पर तैयार हो सकती हैं और जिनकी जरूरत गांवमें बरतनेके लिअे या बाहर बेचनेके लिअे हो। जैसे, घानीका तेल, घानीकी खली, घानीसे निकला हुआ जलानेका तेल, हाथका कुटा हुआ चावल, ताड़ीका गुड़, शहद, खिलौने, मिठाअियां, चटाअियां, हाथसे बना हुआ कागज, गांवका साबुन वगैरा चीजें। अगर अिस तरह काफी ध्यान दिया जाय तो अुन गांवोंमें, जिनमें से ज्यादातर अुजड़ चुके हैं या अुजड़ रहे हैं, जीवनकी चहल-पहल पैदा हो जाय और अुनमें अपनी और हिन्दुस्तानके शहरों और कस्बोंकी बहुत ज्यादा जरूरतें पूरी करनेकी जो ज्यादासे ज्यादा शक्ति है वह दिखाअी पड़ने लगे।

फिर हिन्दुस्तानमें अनगिनत पशुधन है, जिसकी तरफ हमने ध्यान न देकर गुनाह किया है। गोसेवा-संघको अभी ठीक अनुभव नहीं है, फिर भी वह कीमती मदद दे सकता है।

बुनियादी तालीमके बिना गांववाले विद्यासे वंचित रहते हैं। यह जरूरी बात हिन्दुस्तानी तालीमी संघ पूरी कर सकता है।

हरिजनसेवक, २८-४-'४६

२८

ग्राम-प्रदर्शनियां

अगर हम यह चाहते हैं और मानते हैं कि गांवोंको न केवल जीवित रहना चाहिये, बल्कि अुन्हें बलवान तथा समृद्ध बनना चाहिये, तो हमारे दृष्टिकोणमें गांवकी ही प्रधानता होनी चाहिये। और यदि यह सही हो तो फिर हमारी प्रदर्शनियोंमें शहरोंकी तड़क-भड़कके लिअे कोअी जगह नहीं हो सकती। शहरी खेलों या मनोरंजनोंकी भी कोअी जरूरत नहीं। हम अपनी प्रदर्शनीको 'तमाशे' का रूप नहीं दे सकते, और न अुसे आयका साधन ही बना सकते हैं। अुसे व्यापारियोंके लिअे अुनके मालका विज्ञापन करनेवाला साधन भी नहीं बनने देना चाहिये। वहां किसी तरहकी बिक्री नहीं होनी चाहिये। खादी और ग्रामोद्योगोंकी बनी चीजें भी वहां नहीं बिकनी चाहिये। प्रदर्शनीको शिक्षाका माध्यम होना चाहिये, अुसे आकर्षक होना चाहिये और अैसा होना चाहिये जिसे देखकर गांववालोंको कोअी ग्रामोद्योग सीखने और चलानेकी प्रेरणा मिले। अुसे मौजूदा ग्राम-जीवनकी त्रुटियां और कमियां दिखानी चाहिये और अुन्हें सुधारनेके अुपाय बताने चाहिये। अुसे यह भी बताना चाहिये कि जब ग्राम-सुधारके अिस आन्दोलनका आरम्भ हुआ तबसे आज तक अिस दिशामें क्या क्या किया जा चुका है। अुसे यह भी सिखाना चाहिये कि ग्राम-जीवनको सुन्दर और कलामय कैसे बनाया जा सकता है।

अब हम देखें कि यदि ये सब शर्तें पूरी की जायें तो प्रदर्शनीका रूप क्या होगा:

१. गांवोंके दो तरहके नमूने दिखाये जायें — अेक तो जैसे वे आज हैं अुसका और दूसरा सुधरा हुआ, जैसा कि हम अुसे बनाना चाहते हैं। सुधरा हुआ गांव अेकदम साफ-सुथरा होगा। अुसके घर, गलियां और सड़कें, आसपासकी जमीन और खेत, सब स्वच्छ होंगे। मवेशियोंकी हालत भी आजसे बेहतर होगी। किताबों, नक्शों और तसवीरोंके द्वारा यह दिखाना चाहिये कि किन अुद्योगोंसे ज्यादा आय हो सकती है और कैसे।

२. अुसे यह जरूर बताना चाहिये कि विविध ग्रामोद्योग कैसे चलाये जायें, अुनके जरूरी औजार कहांसे मिल सकते हैं, और अुन्हें कैसे बनाया जा सकता है। हरअेक अुद्योगकी कार्य-प्रणाली प्रत्यक्ष करके दिखानी जानी चाहिये। अिनके सिवा नीचे लिखी बातें भी रहनी चाहिये :

(क) आदर्श ग्राम-आहार
(ख) ग्रामोद्योगों और यंत्र-अुद्योगोंकी तुलना
(ग) पशु-पालनकी आदर्श शिक्षा
(घ) कला-विभाग
(ङ) ग्रामीण पाखानेका आदर्श नमूना
(च) खेतोंसे मिलनेवाले, यानी कूड़ा-कचरा और गोबरके योगसे बननेवाले, खाद और रासायनिक खादकी तुलना
(छ) मवेशियोंके चमड़े और अुनकी हड्डियों आदिका अुपयोग
(ज) ग्रामीण संगीत, ग्रामीण वाद्य और ग्रामीण नाटक
(झ) ग्रामीण खेल, अखाड़े और शारीरिक व्यायामके प्रकार
(ञ) नयी तालीम
(ट) ग्रामीण दवाअियां
(ठ) ग्रामीण प्रसूति-गृह

लेखके आरम्भमें बतायी गयी नीतिको ध्यानमें रखकर अिस सूचीमें और वृद्धि की जा सकती है। मैंने जो कुछ बताया है वह केवल मार्ग-दर्शनके लिअे है। अुसमें सब आ गया है, अैसी बात नहीं है। मैंने चरखेकी और दूसरे ग्रामोद्योगोंकी चर्चा नहीं की है, क्योंकि अुनकी आवश्यकता तो अब अेक जानी-मानी चीज हो गयी है। अुनके बिना प्रदर्शनी अेकदम व्यर्थ होगी।

ग्राम अुद्योग पत्रिका, जुलाअी, १९४६

२९

चरखेका संगीत

मैं जितनी बार चरखे पर सूत निकालता हूं अुतनी ही बार भारतके गरीबोंका विचार करता हूं। भूखकी पीड़ासे व्यथित और पेट भरनेके सिवा और कोअी अिच्छा न रखनेवाले मनुष्यके लिअे अुसका पेट ही अीश्वर है। अुसे जो रोटी देता है वही अुसका मालिक है। अुसके द्वारा वह अीश्वरके भी दर्शन कर सकता है। अैसे लोगोंको, जिनके हाथ-पैर सही-सलामत हैं, दान देना अपना और अुनका दोनोंका पतन करना है। अुन्हें तो किसी न किसी तरहके धंधेकी जरूरत है; और वह धंधा, जो करोड़ोंको काम देगा, केवल हाथ-कताअीका ही हो सकता है। . . . अिसलिअे मैंने कताअीको प्रायश्चित्त या यज्ञ बताया है। और चूंकि मैं मानता हूं कि जहां गरीबोंके लिअे शुद्ध और सक्रिय प्रेम है वहां अीश्वर भी है, अिसलिअे चरखे पर मैं जो सूत निकालता हूं अुसके अेक अेक धागेमें मुझे अीश्वर दिखाअी देता है।

यंग अिंडिया, २०-५-'२६

मेरा पक्का विश्वास है कि हाथ-कताअी और हाथ-बुनाअीके पुनरुज्जीवनसे भारतके आर्थिक और नैतिक पुनरुद्धारमें सबसे बड़ी मदद मिलेगी। करोड़ों आदमियोंको खेतीकी आयमें वृद्धि करनेके लिअे कोअी सादा अुद्योग चाहिये। बरसों पहले वह गृह-अुद्योग कताअीका था; और करोड़ोंको भूखों मरनेसे बचाना हो तो अुन्हें अिस योग्य बनाना पड़ेगा कि वे अपने घरोंमें फिरसे कताअी जारी कर सकें और हर गांवको अपना ही बुनकर फिरसे मिल जाय।

यंग अिंडिया, २१-७-'२०

जब मैं सोचता हूं कि यज्ञार्थ किये जानेवाले शरीर-श्रमका सबसे अच्छा और सबको स्वीकार्य रूप क्या होगा, तो मुझे कताअीके सिवा और कुछ नहीं सूझता। मैं अिससे ज्यादा अुदात्त और ज्यादा राष्ट्रीय किसी दूसरी चीजकी कल्पना नहीं कर सकता कि प्रतिदिन अेक घंटा

हम सब कोअी अैसा परिश्रम करें जो गरीबोंको करना ही पड़ता है और अिस तरह अुनके साथ और अुनके द्वारा सारी मानव-जातिके साथ अपनी अेकता साधें। मैं भगवानकी अिससे अच्छी पूजाकी कल्पना नहीं कर सकता कि अुसके नाम पर मैं गरीबोंके लिअे गरीबोंकी ही तरह परिश्रम करूं। चरखा दुनियाके धनका अधिक समानतापूर्ण बंटवारा सिद्ध करता है।

यंग अिंडिया, २०–१०–'२१

मैं . . . चरखेके लिअे अिस सम्मानका दावा करता हूं कि वह हमारी गरीबीकी समस्याको लगभग बिना कुछ खर्च किये और बिना किसी दिखावेके अत्यन्त सरल और स्वाभाविक ढंगसे हल कर सकता है। अिसलिअे चरखा न केवल निरुपयोगी नहीं है . . . बल्कि वह अेक अैसी आवश्यक चीज है जो हरअेक घरमें होनी ही चाहिये। वह राष्ट्रकी समृद्धिका और अिसलिअे अुसकी आजादीका चिह्न है।

चरखा व्यापारिक युद्धकी नहीं, व्यापारिक शान्तिकी निशानी है। अुसका संदेश संसारके राष्ट्रोंके लिअे दुर्भावका नहीं, परन्तु सद्‌भावका और स्वावलम्बनका है। अुसे संसारकी शांतिके लिअे खतरा बननेवाली या अुसके साधनोंका शोषण करनेवाली किसी जलसेनाके संरक्षणकी जरूरत नहीं होगी; परन्तु अुसे जरूरत होगी अैसे लाखों लोगोंके धार्मिक निश्चयकी, जो अपने-अपने घरोंमें अुसी तरह सूत कात लें जैसे आज वे अपने-अपने घरोंमें भोजन बना लेते हैं। मैंने करनेके काम न करके और न करनेके काम करके अैसी अनेक भूलें की हैं, जिनके लिअे मैं भावी संतानोंके शापका भाजन बन सकता हूं। मगर मुझे विश्वास है कि चरखेका पुनरुद्धार सुझाकर तो मैं अुनके आशीर्वादका ही अधिकारी बना हूं। मैंने अुस पर सारी बाजी लगा दी है, क्योंकि चरखेके हर तारमें शान्ति, सद्‌भाव और प्रेमकी भावना भरी है। और चूंकि चरखेको छोड़ देनेसे हिन्दुस्तान गुलाम बना है, अिसलिअे चरखेके सब फलितार्थोंके साथ अुसके स्वेच्छापूर्ण पुनरुद्धारका अर्थ होगा हिन्दुस्तानकी स्वतंत्रता।

यंग अिंडिया, ८–१२–'२१

कताओीके पक्षमें जो दावे किये जाते हैं वे ये हैं:

१. जिन लोगोंको फुरसत है और जिन्हें थोड़ेसे पैसोंकी भी जरूरत है, अुन्हें अिससे आसानीसे रोजगार मिल जाता है;

२. अिसका हजारोंको ज्ञान है;

३. यह आसानीसे सीखी जाती है;

४. अिसमें लगभग कुछ भी पूंजी लगानेकी जरूरत नहीं होती;

५. चरखा आसानीसे और सस्ते दामोंमें तैयार किया जा सकता है। हममें से अधिकांशको यह मालूम नहीं है कि कताओी अेक ठीकरी और बांसकी खपचीसे यानी तकली पर भी की जा सकती है;

६. लोगोंको अिससे अरुचि नहीं है;

७. अिससे अकालके समय तात्कालिक राहत मिल जाती है;

८. विदेशी कपड़ा खरीदनेसे भारतका जो धन बाहर चला जा रहा है अुसे यही रोक सकती है;

९. अिससे करोड़ों रुपयोंकी जो बचत होती है वह अपने-आप सुपात्र गरीबोंमें बंट जाती है;

१०. अिसकी छोटीसे छोटी सफलतासे भी लोगोंको बहुत कुछ तात्कालिक लाभ होता है;

११. लोगोंमें सहयोग पैदा करनेका यह अत्यंत प्रबल साधन है।

यंग अिंडिया, २१–८–'२४

अब आलोचक यह पूछेगा कि 'अगर हाथ-कताओीमें वे सब गुण हैं जो आप बताते हैं, तो क्या बात है कि अभी तक वह सब जगह नहीं अपनाओी गयी है?' प्रश्न बिलकुल न्यायपूर्ण है। अुत्तर सीधा है। चरखेका संदेश अैसे लोगोंके पास पहुंचाना है जिनमें कोओी आशा, कोओी आरंभ-शक्ति रह नहीं गओी है और जिन्हें यों ही छोड़ दिया जाय तो भूखों मर जाना मंजूर है, परन्तु काम करके जिन्दा रहना मंजूर नहीं। पहले यह हाल नहीं था, परन्तु लम्बी अुपेक्षाने आलस्यको अुनकी आदत बना दिया है। यह आलस्य अैसे चरित्रवान और अुद्योगी मनुष्योंके सजीव संपर्कसे ही मिटाया जा सकता है, जो अुनके सामने चरखा चलायें और अुन्हें

प्रेमपूर्वक रास्ता दिखायें। दूसरी बड़ी कठिनाअी खादीके लिअे यह है कि अुसकी तुरन्त विक्री नहीं होती। मैं स्वीकार करता हूं कि फिलहाल वह मिलके कपड़ेके साथ स्पर्धा नहीं कर सकती। मैं अैसी किसी घातक स्पर्धामें पड़ूंगा भी नहीं। पूंजीपति लोग बाजार पर कब्जा करनेके लिअे अपना माल मुफ्तमें भी बेच सकते हैं। लेकिन जिस आदमीकी अेकमात्र पूंजी श्रम है, वह अैसा नहीं कर सकता। क्या जड़ कृत्रिम गुलाबमें — फिर वह कितना ही सुन्दर और सुडौल हो — और जीवित कुदरती गुलाबमें, जिसकी कोअी दो पंखडियां समान नहीं होतीं, कोअी तुलना हो सकती है? खादी सजीव वस्तु है। लेकिन हिंदुस्तानने सच्ची कलाकी परख खो दी है। अिसलिअे वह बाहरी कृत्रिम सुन्दरतासे सन्तुष्ट हो जाता है। अुस स्वस्थ राष्ट्रीय सुरुचिको फिरसे जगाअिये और भारतका हर गांव अुद्योगोंसे गूंजने लगेगा। अभी तो खादी-संस्थाओंको अपनी अधिकांश शक्ति खादी बेचनेमें ही लगानी पड़ती है। . . . अद्‌भुत बात यह है कि भारी कठिनाअियां होते हुअे भी यह आन्दोलन आगे बढ़ रहा है।

मैंने हाथ-कताअीके पक्षमें अूपर जो कुछ कहा है, अुससे किसी तरहका विचार-भ्रम नहीं होना चाहिये। मैं हाथ-करघेके विरुद्ध नहीं हूं। वह अेक महान और फलता-फूलता गृह-अुद्योग है। अगर चरखा सफल हुआ तो हाथ-करघेकी प्रगति अपने-आप होगी। अगर चरखा असफल हुआ तो हाथ-करघा मरे बिना नहीं रहेगा।

यंग अिंडिया, ११–११–'२६

चरखा मुझे जनसाधारणकी आशाओंका प्रतीक मालूम होता है। चरखेको खोकर अुन्होंने अपनी आजादी, जैसी कुछ भी वह थी, खो दी। चरखा देहातकी खेतीकी पूर्ति करता था और अुसे गौरव प्रदान करता था। वह विधवाओंका मित्र और सहारा था। वह देहातियोंको आलस्यसे बचाता था, क्योंकि चरखेमें पहले और पीछेके सब अुद्योग — लोढ़ाअी, पिंजाअी, ताना करना, मांड़ लगना, रंगाअी और बुनाअी — आ जाते थे। और अिनसे गांवके बढ़अी और लुहार काममें लगे रहते थे। चरखेसे सात लाख गांव आत्म-निर्भर रहते थे। चरखेके चले जाने पर तेलघानी आदि दूसरे ग्रामोद्योग भी खतम हो गये। अिन धंधोंकी जगह और किसी धंधेने

नहीं की। अिसलिअे गांवोंके विविध धंधे, अुनकी अुत्पादक प्रतिभा और अुनसे होनेवाली थोड़ी आमदनी, सबका सफाया हो गया।

अिसलिअे अगर ग्रामीणोंको फिरसे अपनी स्थितिमें वापस आना हो, तो सबसे स्वाभाविक बात जो सूझती है, वह यह है कि चरखे और अुसके साथ लगी हुअी सब बातोंका पुनरुद्धार हो।

यह पुनरुद्धार तब तक नहीं हो सकता जब तक बुद्धि और देशभक्तिवाले निःस्वार्थ भारतीयोंकी अेक सेना न हो और वह चरखेका संदेश देहातियोंमें फैलाने और अुनकी निस्तेज आंखोंमें आशा और प्रकाशकी किरण जगानेके लिअे दत्तचित्त होकर काम न करने लगे। यह सही ढंगके सहयोग और प्रौढ़ शिक्षाका जबरदस्त प्रयत्न है। यह चरखेकी शांत परन्तु प्राणदायक गतिकी तरह ही अेक शांत और निश्चित क्रान्तिको लानेवाला है।

हरिजन, १३-४-'४०

३०

मिल-अुद्योग

हमारी मिलें अभी अितना सूत पैदा नहीं कर सकतीं कि कपड़ेकी हमारी सारी जरूरत अुनसे पूरी हो जाय, और यदि वे करती होतीं तो भी जब तक अुन्हें बाध्य न किया जाता वे कीमत कम करनेके लिअे तैयार न होतीं। अुनका अुद्देश्य जाहिरा तौर पर पैसे कमाना है और अिसलिअे यह तो हो नहीं सकता कि वे राष्ट्रकी आवश्यकताओंका खयाल करके अपनी कीमतोंका नियमन करें। अतः हाथ-कताअी ही अेक अैसा साधन है जिसके द्वारा गरीब देहातियोंके हाथोंमें करोड़ों रुपये रखे जा सकते हैं। हरअेक कृषि-प्रधान देशको अैसे अेक पूरक अुद्योगकी जरूरत होती है, जिससे किसान अपने अवकाशके समयका अुपयोग कर सकें। भारतमें यह पूरक अुद्योग हमेशा कताअी रहा है। जिस अुद्योगके नाशके फलस्वरूप गुलामी और गरीबी आयी और अुस अनुपम कला-प्रतिभाका लोप हो गया, जो किसी समय चमत्कारपूर्ण भारतीय वस्त्रोंमें दिखाअी देती थी और

जो दुनियाकी अीर्ष्याका विषय थी, अुस प्राचीन अुद्योगको पुनर्जीवित करनेके प्रयत्नको क्या स्वप्न-सेवियोंका आदर्श कहा जा सकता है?

यंग अिंडिया, १६–२–'२१

आम तौर पर यह दावा जरूर किया जा सकता है कि वड़ा मिल-अुद्योग हिन्दुस्तानी अुद्योग है। पर जापान और लंकाशायरके साथ टक्कर लेनेकी शक्ति होते हुअे भी यह अुद्योग जितने अंशोंमें खादीके अूपर विजय प्राप्त करता है, अुतने ही अंशोंमें जनसाधारणका शोषण करता और अुसकी दरिद्रताको बढ़ाता है। सारे देशमें भारी-भारी यांत्रिक अुद्योग खड़े कर देनेकी अिस जमानेकी धुनमें मेरे अिस विचारको यद्यपि विलकुल ठुकरा नहीं दिया गया है, तो भी अिसके विषयमें कुछ लोगोंने शंका तो अुठाअी ही है। अिसके विरोधमें यह कहा गया है कि यांत्रिक अुद्योगोंकी प्रगतिके कारण जनसाधारणकी दरिद्रता जो वढ़ती जाती है वह अनिवार्य है, और अिसलिअे अुसको सहन करना ही चाहिये। अिस अनिष्टको सहन करना तो दूर, मैं तो यह भी नहीं मानता कि वह अनिवार्य है। अखिल भारत चरखा-संघने सफलतापूर्वक यह वता दिया है कि लोगोंके फुरसतके समयका अुपयोग अगर कातने और अुसके पूर्वकी क्रियाओंमें किया जाय, तो अितनेसे ही गांवोंमें हिन्दुस्तानकी जरूरतके लायक कपड़ा पैदा हो सकता है। कठिनाअी तो जनतासे मिलका कपड़ा छुड़वानेमें है।

हरिजनसेवक, ३०–१०–'३७

मिल-मालिक कुछ परोपकारी तो हैं नहीं कि वे हाथ-करघेके वुनकरोंको तब भी सूत देते रहेंगे जब ये अुनके साथ अुन्हें नुकसान पहुंचानेवाली प्रतिस्पर्धा करने लगेंगे।

हरिजन, २५–८–'४६

ज्यों ही मिल-मालिकोंको अैसा लगेगा कि सूत वेचनेके वजाय वुननेमें ज्यादा लाभ है, त्यों ही वे अुसे वेचना वन्द कर देंगे और वुनना शुरू कर देंगे। वे कुछ परोपकारी नहीं हैं। अुन्होंने मिलें पैसा कमानेके

लिअे ही खड़ी की हैं। यदि वे देखेंगे कि सूत बुननेमें ज्यादा लाभ है, तो वे अुसे हाथ-करघेके बुनकरोंको बेचना बन्द कर देंगे।

हरिजन, ३१-३-'४६

मिलके सूतका अुपयोग हाथ-करघा अुद्योगके मार्गकी अेक घातक बाधा है। अुसकी मुक्ति हाथ-कताअीके सूतका अुपयोग करनेमें ही है। अगर चरखा असफल रहा और मिट गया, तो हाथ-करघेका नाश भी निश्चित ही है।

हरिजन, २५-८-'४६

मैं अनेक कम्पनियोंके संघबद्ध होकर काम करने या बड़े-बड़े यंत्रोंका अुपयोग करके अुद्योगोंका केन्द्रीकरण करनेके खिलाफ हूं। अगर भारत खादीको और खादीके फलितार्थोंको अपनाये, तो मैं अैसी आशा करता हूं कि भारत आधुनिक यंत्रोंमें से केवल अुतनोंका ही अुपयोग करेगा, जो जीवनकी सुख-सुविधा बढ़ाने और श्रमकी बचतके लिअे आवश्यक माने जायं।

यंग अिंडिया, २४-७-'२४

चन्द लोगोंके हाथमें धन और सत्ताका केन्द्रीकरण करनेके लिअे यंत्रोंके संघटनको मैं बिलकुल गलत समझता हूं। आजकल यंत्रोंकी अधिकांश योजनाओंका यही अुद्देश्य होता है। चरखेका आन्दोलन यंत्रों द्वारा होनेवाला शोषण और धन तथा सत्ताका यह केन्द्रीकरण रोकनेके लिअे किया जा रहा संघटित प्रयत्न है। अिसलिअे मेरी योजनामें यंत्रोंके अधिकारी अपने लाभकी या अपने देशके लाभकी बात नहीं सोचेंगे, बल्कि सारी मानव-जातिके लाभकी बात सोचेंगे। अुदाहरणके लिअे, लंकाशायरके लोग अपने यंत्रोंका अुपयोग भारतके या दूसरे देशोंके शोषणके लिअे नहीं करेंगे; अुलटे, वे अैसे साधन ढूढ़ेंगे जिनसे भारत अपने कपासको अपने गांवोंमें ही कपड़ेका रूप देनेमें समर्थ हो जाये। अिसी तरह मेरी योजनामें अमेरिकाके लोग भी अपनी आविष्कारक प्रतिभाके द्वारा दुनियाकी दूसरी जातियोंका शोषण करनेकी कोशिश नहीं करेंगे।

यंग अिंडिया, १७-९-'२५

३१

स्वदेशी

स्वदेशीकी भावनाका अर्थ है हमारी वह भावना जो हमें दूरको छोड़कर अपने समीपवर्ती प्रदेशका ही अुपयोग और सेवा करना सिखाती है। अुदाहरणके लिअे, अिस परिभाषाके अनुसार धर्मके सम्बन्धमें यह कहा जायगा कि मुझे अपने पूर्वजोंसे प्राप्त धर्मका ही पालन करना चाहिये। अपने समीपवर्ती धार्मिक परिवेष्टनका अुपयोग अिसी तरह हो सकेगा। यदि मैं अुसमें दोष पाअूं तो मुझे अुन दोषोंको दूर करके अुसकी सेवा करना चाहिये। अिसी तरह राजनीतिके क्षेत्रमें मुझे स्थानीय संस्थाओंका अुपयोग करना चाहिये और अुनके जाने-माने दोषोंको दूर करके अुनकी सेवा करना चाहिये। अर्थके क्षेत्रमें मुझे अपने पड़ोसियों द्वारा बनायी गयी वस्तुओंका ही अुपयोग करना चाहिये और अुन अुद्योगोंकी कमियां दूर करके, अुन्हें ज्यादा सम्पूर्ण और सक्षम बनाकर अुनकी सेवा करना चाहिये। मुझे लगता है कि यदि स्वदेशीको व्यवहारमें अुतारा जाय, तो मानवताके स्वर्णयुगकी अवतारणा की जा सकती है।...

अूपर स्वदेशीकी जिन तीन शाखाओंका अुल्लेख हुआ है अुन पर अब हम थोड़ा विचार करें। हिन्दू धर्म अुसकी बुनियादमें निहित अिस स्वदेशीकी भावनाके कारण ही स्थितिशील और फलस्वरूप अत्यंत शक्तिशाली बन गया। चूंकि वह दूसरे धर्मोंके अनुयायियोंको अपने दायरेमें खींचनेकी न तो अिच्छा ही रखता है और न प्रयत्न ही करता है, अिसलिअे वह सबसे ज्यादा सहिष्णु है और वह आज भी अपना विस्तार करनेकी वैसी ही योग्यता रखता है जैसी कि वह भूतकालमें दिखा चुका है। कुछ लोग अैसा मानते हैं कि अुसने बौद्ध धर्मको खदेड़कर भारतके बाहर भगा दिया। यह धारणा गलत है। अुलटे अुसने बौद्ध धर्मको आत्मसात् कर लिया है। स्वदेशीकी भावनाके ही कारण हिन्दू अपने धर्मका परिवर्तन करनेसे अिनकार करता है। अिसका यह अर्थ नहीं कि वह अुसे सर्वश्रेष्ठ मानता है, लेकिन वह जानता है कि वह अुसमें जरूरी सुधार दाखिल कर सकता है और अुसे सम्पूर्ण बना सकता है। और

जो कुछ मैंने हिन्दू धर्मके बारेमें कहा है, मेरा खयाल है वह सब दुनियाके दूसरे बड़े धर्मोंके लिये भी सही है। अन्तर केवल यह है कि हिन्दू धर्मके लिअे यह विशेष रूपसे सही है। यहां मुझे अेक बात कहनी है। भारतमें काम करनेवाली मिशनरी संस्थाओंने भारतके लिअे बहुत-कुछ किया है और अभी भी कर रही हैं और भारत अिसके लिअे अुनका कृतज्ञ है। लेकिन यदि मैंने जो कुछ कहा है अुसमें कोअी सत्य है, तो क्या यह ज्यादा अच्छा न होगा कि वे धर्म-परिवर्तनका कार्य छोड़ दें और केवल परोपकारकी ही प्रवृत्तियां जारी रखें? क्या अिस तरह वे अीसाअी धर्मके आन्तरिक तत्त्वकी अधिक सेवा नहीं करेंगी?

स्वदेशीकी भावनाको खोज करते हुअे जब मैं देशकी संस्थाओं पर नजर डालता हूं तो मुझे ग्राम-पंचायतें बहुत ज्यादा आकर्षित करती हैं। भारत वस्तुतः प्रजातंत्रका अुपासक देश है; और वह प्रजातंत्रका अुपासक है अिसलिअे वह अुन सब चोटोंको सह सका है, जो आज तक अुन पर की गयी हैं। राजाओं और नवाबोंने, वे भारतीय रहे हों या विदेशी, प्रजासे सिर्फ कर वसूल किया है; अुसके सिवा प्रजासे अुनका कोअी सम्पर्क शायद ही रहा है। और प्रजाने राजाको अुसका प्राप्य देकर, अपना बाकी जीवन-व्यवहार अपनी अिच्छाके अनुसार चलाया है। वर्ण और जातियोंका विशाल संघटन न केवल समाजकी धार्मिक आवश्यकतायें पूरी करता था, बल्कि अुसकी राजनीतिक आवश्यकताओंकी पूर्ति भी करता था। गांववाले अपना आन्तरिक कामकाज जाति-संघटनके द्वारा चलाते थे और अुसीके द्वारा वे राजकीय शक्तिके अत्याचारोंका भी मुकाबला करते थे। जाति-संघटनके द्वारा अपनी संघटन-शक्तिका अैसा अच्छा परिचय जिस राष्ट्रने दिया है, अुसकी संघटन-शक्तिकी क्षमतासे अिनकार नहीं किया जा सकता। आप हरिद्वारके कुम्भ मेलेको देखें। . . . आपको पता चल जायगा कि जो संघटन लगभग अनायास ही लाखों तीर्थयात्रियोंकी व्यवस्था कर सकता है, वह कितना कौशलपूर्ण न होगा? फिर भी यह कहनेकी फैशन हो गयी है कि हम लोगोंमें संघटनकी योग्यता नहीं है। हां, यह बात अुनके बारेमें अमुक हद तक सही हो सकती है, जो नयी परंपराओंमें पले और बड़े हुअे हैं।

स्वदेशीकी भावनासे हट जानेके कारण हमें भयंकर विघ्न-बाधाओंसे गुजरना पड़ा है। हम शिक्षित वर्गके लोगोंको हमारी शिक्षा विदेशी भाषाके माध्यमसे मिली है। अिसलिअे आम जनताको हम तनिक भी प्रभावित नहीं कर सके हैं। हम जनताका प्रतिनिधित्व करना चाहते हैं, पर हम अुसमें असफल सिद्ध होते हैं। वे किसी अंग्रेज अधिकारीको जितना जानते-पहिचानते हैं, अुससे अधिक हमें नहीं जानते-पहिचानते। अुनके दिलमें क्या है, अिसे न अंग्रेज शासक जानते हैं, न हम लोग। अुनकी आकांक्षायें हमारी आकांक्षायें नहीं हैं। अिसलिअे हमारा और अुनका सम्बन्ध-सूत्र टूट-सा गया है। हम प्रजाका संघटन करनेमें असफल सिद्ध हुअे हैं, यह बात नहीं है; सच बात यह है कि प्रतिनिधियोंमें और प्रजामें आपसका नाता ही नहीं है। अगर पिछले पचास वर्षोंमें हमें अपनी ही भाषाओंके माध्यमसे शिक्षा मिली होती, तो हमारे बड़े-बूढ़े, घरके नौकर और पड़ोसी, सब हमारे अुस ज्ञानमें हिस्सा लेते। बोस और राय जैसे वैज्ञानिकोंके आविष्कार रामायण और महाभारतकी तरह, ही हरअेक घरमें प्रवेश कर जाते। अभी तो स्थिति अैसी है कि जनताके लिअे ये आविष्कार विदेशी वैज्ञानिकों द्वारा किये गये आविष्कारों जैसे ही हैं। यदि विविध पाठ्य-विषयोंकी शिक्षा देशी भाषाओं द्वारा दी गयी होती, तो मैं यह कहनेका साहस करता हूं कि हमारी अिन भाषाओंकी आश्चर्यजनक समृद्धि हुअी होती। गांवोंकी स्वच्छता आदिके सवाल वर्षों पहले हल हो गये होते। ग्राम-पंचायतें जीवित शक्तिके रूपमें काम कर रही होतीं, भारतको जैसा स्वराज्य चाहिये वैसा स्वराज्य वह भोगता होता और अुसे अपनी पुनीत भूमि पर संघटित हत्याका अपमानकारी दृश्य न देखना पड़ता। खैर, अभी भी अवसर है कि हम अपनी भूलें सुधार लें।

अब हम स्वदेशीकी अन्तिम शाखा पर विचार करें। यहां भी जनताकी अधिकांश गरीबीका कारण यह है कि आर्थिक और औद्योगिक जीवनमें हमने स्वदेशीके नियमका भंग किया है। अगर भारतमें व्यापारकी कोअी भी वस्तु विदेशोंसे न लायी गयी होती, तो हमारी भूमिमें दूध और मधुकी नदियां बहती होतीं। लेकिन यह तो होना नहीं था। हमें

लोभ था और अिंग्लैण्डको भी लोभ था। अिंग्लैण्ड और भारतका सम्बन्ध स्पष्टतया गलती पर कायम था। लेकिन यहां रहनेमें वह गलती नहीं कर रहा है। यहां रहनेमें अुसकी घोषित नीति यह है कि वह भारतको अपनी सम्पत्ति नहीं मानता; वह अुसे जनताकी धरोहरके रूपमें अुसीके भलेके लिअे अपने पास रख रहा है। अगर यह सही है तो लंकाशायरको भारतमें व्यापार करनेका लालच छोड़ देना चाहिये। और यदि स्वदेशीका सिद्धान्त सही है तो अिससे लंकाशायरकी कोअी हानि नहीं होगी। अलबत्ता, शुरूमें कुछ समयके लिअे अुसे कुछ अटपटा-सा लगेगा। मैं स्वदेशीको बदला लेनेके लिअे चलाया गया बहिष्कारका आन्दोलन नहीं मानता। मैं अुसे अैसा धार्मिक सिद्धान्त मानता हूं, जिसका पालन सब लोगोंको करना चाहिये। मैं अर्थशास्त्री नहीं हूं, लेकिन मैंने कुछ किताबें पढ़ी हैं जिनमें बतलाया गया है कि अिंग्लैण्ड आसानीसे अपनी सारी जरूरतें खुद पैदा करनेवाला आत्म-निर्भर देश बन सकता था। हो सकता है यह बात हास्यास्पद हो; और वह सच नहीं हो सकती, अिसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि अिंग्लैण्ड दुनियाके अुन देशोंमें है जो बाहरसे सबसे ज्यादा माल आयात करते हैं। लेकिन जब तक भारत अपने जीवनका अुत्तम निर्वाह करने योग्य नहीं हो जाता है, तब तक अुनसे यह आशा नहीं की जा सकती कि वह लंकाशायरके अथवा किसी दूसरे देशके लिअे जिये। और वह अपने जीवनका अुत्तम निर्वाह तभी कर सकता है जब वह — अपने प्रयत्नसे या दूसरोंकी मदद लेकर — अपनी आवश्यकताकी सारी वस्तुअें अपनी ही सीमामें अुत्पन्न करने लगे। अुसे नाशकारी प्रतिस्पर्धाके अुस चक्करमें नहीं पड़ना चाहिये जो आपसी लड़ाअी-झगड़ों, अीर्षा और अन्य अनेक बुराअियोंको जन्म देता है। लेकिन अुनके बड़े सेठों और करोड़पतियोंको अिस विश्वव्यापी प्रतिस्पर्धामें पड़नेसे कौन रोकेगा? कानून तो निश्चय ही अैसा नहीं कर सकता। लेकिन लोकमतका बल और समुचित शिक्षा अवश्य अिस दिशामें बहुत कुछ कर सकती है। हाथ-करघा अुद्योग लगभग मरनेकी स्थितिमें है। अपनी यात्राओंमें . . . मैंने भरसक ज्यादासे ज्यादा बुनकरोंसे मिलने और अुनकी कठिनाअियां समझनेकी कोशिश की और मुझे यह देखकर हार्दिक दुःख हुआ कि किस

तरह अनेक बुनकर परिवारोंको यह अुद्योग — जो किसी समय तरक्की पर था और सम्मानास्पद माना जाता था — छोड़ देना पड़ा है।

अगर हम स्वदेशीके सिद्धान्तका पालन करें तो हमारा और आपका यह कर्तव्य होगा कि हम अुन बेरोजगार पड़ोसियोंको ढूंढ़ें जो हमारी आवश्यकताकी वस्तुअें हमें दे सकते हों और यदि वे अिन वस्तुओंको बनाना न जानते हों तो अुन्हें अुसकी प्रक्रिया सिखायें। अैसा हो तो भारतका हरअेक गांव लगभग अेक स्वाश्रयी और स्वयंपूर्ण अिकाअी बन जाये। दूसरे गांवोंके साथ वह अुन चंद वस्तुओंका आदान-प्रदान जरूर करेगा, जिन्हें वह खुद अपनी सीमामें पैदा नहीं कर सकता। मुमकिन है कुछ लोगोंको यह बात व्यर्थ मालूम हो। अुन लोगोंसे मैं कहूंगा कि भारत अेक विचित्र देश है। कोअी दयालु मुसलमान शुद्ध पानी पिलानेके लिअे तैयार हो, तो भी हजारों परम्परावादी हिन्दू अैसे हैं जो प्याससे अपना गला सूखने देंगे, लेकिन मुसलमानके हाथका पानी नहीं पियेंगे। यह बात अर्थहीन तो है, लेकिन अिस देशमें वह होती है। अिसी तरह अिन लोगोंको अेक बार अिस बातका निश्चय करा दिया जाय कि धर्मके अनुसार अुन्हें भारतमें ही बने हुअे कपड़े पहनना चाहिये और भारतमें ही पैदा हुआ अन्न खाना चाहिये, तो फिर वे कोअी दूसरे कपड़े पहनने या दूसरा अन्न खानेसे अिनकार कर देंगे।

भगवद्गीताका अेक श्लोक है जिसमें कहा गया है कि सामान्य जन श्रेष्ठ जनोंका अनुकरण करते हैं। स्वदेशीका व्रत लेने पर कुछ समय तक असुविधायें तो भोगना पड़ेंगी, लेकिन अुन असुविधाओंके बावजूद यदि समाजके विचारशील व्यक्ति स्वदेशीका व्रत अपना लें, तो हम अुन अनेक बुराअियोंका निवारण कर सकते हैं जिनसे हम पीड़ित हैं। मैं कानून द्वारा किये जानेवाले हस्तक्षेपको, वह जीवनके किसी भी विभागमें क्यों न किया जाय, बिलकुल नापसन्द करता हूं। अुसके समर्थनमें ज्यादासे ज्यादा यही कहा जा सकता है कि दूसरी बुराअीकी तुलनामें वह कम बुरी है। लेकिन अपनी अिस नापसन्दगीके बावजूद मैं विदेशी माल पर सख्त आयात-कर लगाना न सिर्फ सह लूंगा, बल्कि मैं चाहूंगा कि अैसा

किया जाय। नेटाल अेक ब्रिटिश अुपनिवेश है, किन्तु अुसने अेक दूसरे ब्रिटिश अुपनिवेश मारीशससे आनेवाली शक्कर पर काफी कर लगाया था और अिस तरह अपनी शक्करकी रक्षा की थी। अिंग्लैण्डने भारत पर स्वतंत्र व्यापारकी नीति लादकर भारतके प्रति बड़ा अन्याय किया है। यह नीति अिंग्लैण्डके लिअे आहारकी तरह पोषक सिद्ध हुअी होगी, किन्तु भारतके लिअे तो वह जहर साबित हुअी है।

कहा जाता है कि भारत कमसे कम आर्थिक जीवनमें तो स्वदेशीके नियमका आचरण नहीं कर सकता। जो लोग यह दलील देते हैं वे स्वदेशीको जीवनके अेक अनिवार्य सिद्धान्तके रूपमें नहीं मानते। अुनके लिअे वह महज देशसेवाका कार्य है, जो अगर अुसमें ज्यादा आत्म-निग्रह करना पड़ता हो तो छोड़ा भी जा सकता है। जैसा कि अूपर बताया गया है, स्वदेशी अेक धार्मिक नियम है जिसका पालन अुनसे होने-वाले सारे शारीरिक कष्टोंके बावजूद भी होना ही चाहिये। स्वदेशीका सच्चा प्रेम हो तो सुअी या पिन जैसी चीजोंका अभाव — क्योंकि वे भारतमें नहीं बनती हैं — भयका कारण नहीं होना चाहिये। स्वदेशीका व्रत लेनेवाला अैसी सैकड़ों चीजोंके बिना ही अपना काम चलाना सीख लेगा, जिन्हें आज वह जरूरी समझता है। फिर यह बात भी तो है कि जो लोग स्वदेशीको असंभव कहकर टाल देना चाहते हैं, वे यह भूल जाते हैं कि स्वदेशी आखिर अेक आदर्श है जिसे लगातार कोशिश करके क्रमशः प्राप्त करना है। और यदि फिलहाल हम अिस नियमको अमुक वस्तुओं तक ही मर्यादित रखें और जो वस्तुअें देशमें प्राप्य नहीं हैं अुनका अुपयोग जारी रखें, तो भी हम आदर्शकी दिशामें बढ़ते रह सकते हैं।

अन्तमें मुझे स्वदेशीके खिलाफ अुठाये जानेवाले अेक अन्य आक्षेप पर और विचार करना है। आक्षेपकारोंका कहना है कि यह अेक अत्यन्त स्वार्थपूर्ण सिद्धान्त है और सभ्यजनोंकी मानी हुअी नीतिमें अुसे कोअी स्थान नहीं हो सकता। वे समझते हैं कि स्वदेशीका पालन तो असभ्यताके युगकी ओर लौटने जैसा होगा। मैं यहां अिस कथनका विस्तृत विश्लेषण नहीं कर सकता। किन्तु मैं यह कहूंगा कि नम्रता

और प्रेमके नियमोंके साथ अेकमात्र स्वदेशीका ही मेल बैठ सकता है। यदि मैं अपने परिवारकी भी यथोचित सेवा नहीं कर पाता हूं, तो अुस हालतमें मेरा सम्पूर्ण भारतकी सेवाका विचार करना दुरभिमान ही कहा जायगा। अुस हालतमें तो यही अच्छा होगा कि मैं अपना प्रयत्न परिवारकी सेवा पर ही केन्द्रित करूं और अैसा समझूं कि परिवारकी सेवा द्वारा मैं पूरे देशकी या, यों कहो कि, पूरी मानव-जातिकी सेवा कर रहा हूं। नम्रता और प्रेम अिसीमें है। कार्यका मूल्य अुसके प्रेरक हेतुसे निश्चित होता है। परिवारकी सेवा मैं अुससे दूसरोंको होनेवाले कष्टोंकी परवाह किये बिना भी कर सकता हूं। अुदाहरणके लिअे हम लोगोंसे जबरदस्ती अुनका पैसा छीननेका पेशा अख्तियार कर सकते हैं। अुसके द्वारा हम धनवान बनकर परिवारकी अनेक अनुचित मांगोंको पूरा कर सकते हैं। लेकिन यदि हम अैसा करें तो अुससे न तो परिवारकी सेवा होगी और न राज्यकी। परिवारकी सेवाका दूसरा तरीका यह होगा कि मैं अिस बातको पहिचान लूं कि भगवानने मुझे अपने आश्रितोंके पोषणके लिअे हाथ-पांव दिये हैं। और मुझे अुनसे काम लेना चाहिये। अैसा हो तो मैं अेकदम अपना और जिनसे मेरा सीधा सम्बन्ध है अुनका जीवन सादा बनानेमें लग जाअूंगा। यदि मैं अैसा करूं तो अपने परिवारकी भी सेवा करूंगा और किसी दूसरेकी कोअी हानि भी नहीं करूंगा। अगर हरअेक आदमी यह जीवन-पद्धति अपना ले, तो अेकदम आदर्श स्थितिका निर्माण हो जाय। सब लोग अुस स्थितिको अेक साथ नहीं प्राप्त करेंगे। लेकिन जिन लोगोंने अिस बातको समझ लिया है और अिसलिअे जो अुसे अपने आचरणमें अुतारेंगे, वे स्पष्टतः अुस शुभ दिनको पास लानेमें बड़ी मदद करेंगे। जीवनकी अिस योजनामें मैं केवल भारतकी ही सेवा करता दिखता हूं, फिर भी मैं किसी दूसरे देशको हानि नहीं पहुंचाता। मेरी देशभक्ति वर्जनशील भी है और ग्रहणशील भी है। वह वर्जनशील अिस अर्थमें है कि मैं अत्यंत नम्रतापूर्वक अपना ध्यान अपनी जन्मभूमि पर ही देता हूं और ग्रहणशील अिस अर्थमें है कि मेरी सेवामें स्पर्धा या विरोधकी भावना बिलकुल नहीं है। 'अपनी सम्पत्तिका अुपयोग अिस तरह करो कि अुससे तुम्हारे पड़ोसीको कोअी कष्ट न हो' — यह केवल

कानूनका सिद्धान्त नहीं परन्तु अेक महान जीवन-सिद्धान्त भी है। वह अहिंसा या प्रेमके समुचित पालनकी कुंजी है।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ३३६–४४

लेकिन जो लोग चरखेसे जैसे-तैसे सूत कातकर खादी पहन-पहनाकर स्वदेशी-धर्मका पूरा पालन हुआ मान लेते हैं, वे बड़े मोहमें डूबे हुअे हैं। खादी सामाजिक स्वदेशीकी प्रथम सीढ़ी है, वह स्वदेशी-धर्मकी आखिरी हद नहीं है। अैसे खादीधारी देखे गये हैं, जो और सब चीजें परदेशी खरीदते हैं। वे स्वदेशी-धर्मका पालन नहीं करते। वे तो सिर्फ चालू बहावमें बह रहे हैं। स्वदेशी-व्रतका पालन करनेवाला हमेशा अपने आसपास निरीक्षण करेगा और जहां जहां पड़ोसियोंकी सेवा की जा सके, यानी जहां जहां अुनके हाथका तैयार किया हुआ जरूरतका माल होगा, वहां दूसरा छोड़कर अुसे लेगा। फिर भले ही स्वदेशी चीज पहले-पहल महंगी और कम दरजेकी हो। व्रतधारी अुसको सुधारनेकी कोशिश करेगा। स्वदेशी खराब है अिसलिअे कायर बनकर परदेशीका अिस्तेमाल करने नहीं लग जायेगा।

लेकिन स्वदेशी-धर्म जाननेवाला अपने कुअेंमें डूब नहीं जायेगा। जो चीज स्वदेशमें नहीं बनती हो या बड़ी तकलीफसे बन सकती हो, वह परदेशके द्वेषके कारण अपने देशमें बनाने लग जाय तो अुसमें स्वदेशी-धर्म नहीं है। स्वदेशी-धर्म पालनेवाला परदेशीका द्वेष कभी नहीं करेगा। अिसलिअे पूर्ण स्वदेशीमें किसीका द्वेष नहीं है। वह संकुचित धर्म नहीं है। वह प्रेममें से — अहिंसामें से — निकला हुआ सुन्दर धर्म है।

मंगल-प्रभात, पृ० ५९, प्रक० १६

३२

गोरक्षा

हिन्दू धर्मकी मुख्य वस्तु है गोरक्षा। गोरक्षा मुझे मनुष्यके सारे विकास-क्रममें सबसे अलौकिक वस्तु मालूम हुआी है। गायका अर्थ मैं मनुष्यसे नीचेकी सारी गूंगी दुनिया करता हूं। अिसमें गायके वहाने अिस तत्त्वके द्वारा मनुष्यको संपूर्ण चेतन-सृष्टिके साथ आत्मीयताका अनुभव करानेका प्रयत्न है। मुझे तो यह भी स्पष्ट दीखता है कि गायको ही यह देवभाव क्यों प्रदान किया गया होगा। हिन्दुस्तानमें गाय ही मनुष्यका सबसे सच्चा साथी, सबसे बड़ा आधार था। यही हिन्दुस्तानको अेक कामधेनु थी। वह सिर्फ दूध ही नहीं देती थी, वल्कि सारी खेतीका आधार-स्तंभ थी। गाय दयाधर्मकी मूर्तिमंत कविता है। अिस गरीब और शरीफ जानवरमें हम केवल दया ही अुमड़ती देखते हैं। यह लाखों-करोड़ों हिन्दुस्तानियोंको पालनेवाली माता है। अिस गायकी रक्षा करना अीश्वरकी सारी मूक सृष्टिकी रक्षा करना है। जिस अज्ञात ॠषि या द्रष्टाने गोपूजा चलाअी अुसने गायसे शुरुआत की। अिसके सिवा और कोअी ध्येय हो ही नहीं सकता। अिस पशुसृष्टिकी फरियाद मूक होनेसे और भी प्रभावशाली है। गोरक्षा हिन्दू धर्मकी दुनियाको दी हुअी अेक कीमती भेंट है। और हिन्दू धर्म भी तभी तक रहेगा, जब तक गायकी रक्षा करनेवाले हिन्दू हैं।

हिन्दुओंकी परीक्षा तिलक करने, स्वरशुद्ध मंत्र पढ़ने, तीर्थयात्रायें करने या जात-विरादरीके छोटे-छोटे नियमोंको कट्टरतासे पालनेसे नहीं होगी, वल्कि गायको बचानेकी अुनकी शक्तिसे ही होगी।

यंग अिंडिया, ६–१०–'२१

गोमाता जन्म देनेवाली मांसे कहीं वढ़कर है। मां तो साल दो साल दूध पिलाकर हमसे फिर जीवनभर सेवाकी आशा रखती है। पर गोमाताको तो सिवा दाने और घासके कोअी सेवाकी आवश्यकता ही नहीं। मांकी तो हमें अुसकी वीमारीमें सेवा करनी पड़ती है। परन्तु गोमाता केवल जीवन-पर्यन्त ही हमारी अटूट सेवा नहीं करती, वल्कि अुसके मरनेके वाद भी हम अुसके मांस, चर्म, हड्डी, सींग आदिसे अनेक लाभ

अुठाते हैं। यह सब मैं जन्मदात्री माताका दरजा कम करनेको नहीं कहता, बल्कि यह दिखानेके लिअे कहता हूं कि गोमाता हमारे लिअे कितनी पूज्य है।

हरिजनसेवक, २१–९–'४०

हमारे ढोरोंकी दुर्दशाके लिअे अपनी गरीबीका राग भी हम नहीं अलाप सकते। यह हमारी निर्दय लापरवाहीके सिवा और किसी भी बातकी सूचक नहीं है। हालांकि हमारे पिंजरापोल हमारी दयावृत्ति पर खड़ी हुअी संस्थायें हैं, तो भी वे अुस वृत्तिका अत्यन्त भद्दा अमल करनेवाली संस्थायें ही हैं। वे आदर्श गोशालाओं या डेरियों और समृद्ध राष्ट्रीय संस्थाओंके रूपमें चलनेके बजाय केवल लूले-लंगड़े ढोर रखनेके धर्मादा खाते बन गये हैं। गोरक्षाके धर्मका दावा करते हुअे भी हमने गाय और अुसकी सन्तानको गुलाम बनाया है और हम खुद भी गुलाम बन गये हैं।

यंग अिंडिया, ६–१०–'२१

लेकिन मैं फिरसे अिस बात पर जोर देता हूं . . . कानून बनाकर गोवध बन्द करनेसे गोरक्षा नहीं हो जाती। वह तो गोरक्षाके कामका छोटेसे छोटा भाग है। . . . लोग अैसा मानते दीखते हैं कि किसी भी बुराअीके विरुद्ध कोअी कानून बना कि तुरन्त वह किसी झंझटके बिना मिट जायगी। अैसी भयंकर आत्म-वंचना और कोअी नहीं हो सकती। किसी दुष्ट बुद्धिवाले अज्ञानी या छोटेसे समाजके खिलाफ कानून बनाया जाता है और अुसका असर भी होता है। लेकिन जिस कानूनके विरुद्ध समझदार और संगठित लोकमत हो, या धर्मके बहाने छोटेसे छोटे मंडलका भी विरोध हो, वह कानून सफल नहीं होता। गोरक्षाके प्रश्नका जैसे-जैसे मैं अधिक अध्ययन करता जाता हूं, वैसे-वैसे मेरा यह मत दृढ़ होता जाता है कि गांवों और अुनकी जनताकी रक्षा तभी हो सकती है, जब कि मेरी अूपर बताअी हुअी दिशामें निरन्तर प्रयत्न किया जाय।

यंग अिंडिया, ७–७–'२७

अब सवाल यह है कि जब गाय अपने पालन-पोषणके खर्चसे भी कम दूध देने लगती है या दूसरी तरहसे नुकसान पहुंचानेवाला बोझ बन जाती

है, तब बिना मारे अुसे कैसे बचाया जा सकता है? अिस सवालका जवाब थोड़ेमें अिस तरह दिया जा सकता है:

१. हिन्दू गाय और अुसकी सन्तानकी तरफ अपना फर्ज पूरा करके अुसे बचा सकते हैं। अगर वे अैसा करें तो हमारे जानवर हिन्दुस्तान और दुनियाके गौरव बन सकते हैं। आज अिससे बिलकुल अुलटा हो रहा है।

२. जानवरोंके पालन-पोषणका सायन्स सीखकर गायकी रक्षा की जा सकती है। आज तो अिस काममें पूरी अन्धाधुन्धी चलती है।

३. हिन्दुस्तानमें आज जिस बेरहम तरीकेसे बैलोंको बधिया बनाया जाता है, अुसकी जगह पश्चिमके हमदर्दीभरे और नरम तरीके काममें लाकर अुसे कष्टसे बचाया जा सकता है।

४. हिन्दुस्तानके सारे पिंजरापोलोंका पूरा-पूरा सुधार किया जाना चाहिये। आज तो हर जगह पिंजरापोलका अिन्तजाम अैसे लोग करते हैं, जिनके पास न कोअी योजना होती है और न वे अपने कामकी जानकारी ही रखते हैं।

५. जब ये महत्त्वके काम कर लिये जायंगे, तो मुसलमान खुद दूसरे किसी कारणसे नहीं तो अपने हिन्दू भाअियोंके खातिर ही मांस या दूसरे मतलबके लिअे गायको न मारनेकी जरूरतको समझ लेंगे।

पढ़नेवाले यह देखेंगे कि अूपर बताअी हुअी जरूरतोंके पीछे अेक खास चीज है। वह है अहिंसा जिसे दूसरे शब्दोंमें प्राणीमात्र पर दया कहा जाता है। अगर अिस सबसे बड़े महत्त्वकी बातको समझ लिया जाय, तो दूसरी सब बातें आसान बन जाती हैं। जहां अहिंसा है वहां अपार धीरज, भीतरी शान्ति, भले-बुरेका ज्ञान, आत्मत्याग और सच्ची जानकारी भी है। गोरक्षा कोअी आसान काम नहीं है। अुसके नाम पर देशमें बहुत पैसा बरबाद किया जाता है। फिर भी अहिंसाके न होनेसे हिन्दू गायके रक्षक बननेके बजाय अुसके नाश करनेवाले बन गये हैं। गोरक्षाका काम हिन्दुस्तानसे विदेशी हुकूमतको हटानेके कामसे भी ज्यादा कठिन है।

(नोट: कहा जाता है कि हिन्दुस्तानकी गाय रोजाना लगभग २ पौण्ड दूध देती है, जब कि न्यूज़ीलैण्डकी १४ पौण्ड, अिंग्लैण्डकी १५ पौण्ड

और हालैण्डकी गाय रोजाना २० पौण्ड दूध देती है। जैसे-जैसे दूधकी पैदावार बढ़ती है वैसे-वैसे तन्दुरुस्तीके आंकड़े भी बढ़ते हैं।)

हरिजनसेवक, ३१–८–'४७

मुझे यह देखकर आश्चर्य होता है कि हम भैंसके दूध-घीका कितना पक्षपात करते हैं। असलमें हम निकटका स्वार्थ देखते हैं, दूरके लाभका विचार नहीं करते। नहीं तो यह साफ है कि अन्तमें गाय ही ज्यादा अुपयोगी है। गायके घी और मक्खनमें अेक खास तरहका पीला रंग होता है, जिसमें भैंसके मक्खनसे कहीं अधिक केरोटीन यानी विटामिन 'अे' रहता है। अुसमें अेक खास तरहका स्वाद भी है। मुझसे मिलने आनेवाले विदेशी यात्री सेवाग्राममें गायका शुद्ध दूध पीकर खुश हो जाते हैं। और यूरोपमें तो भैंसके घी और मक्खनके बारेमें कोअी जानता ही नहीं। हिन्दुस्तान ही अैसा देश है, जहां भैंसका घी-दूध अितना पसन्द किया जाता है। अिससे गायकी बरबादी हुअी है। अिसीलिअे मैं कहता हूं कि हम सिर्फ गाय पर ही जोर न देंगे, तो गाय नहीं बच सकेगी।

हरिजनसेवक, २२–२–'४२

३२

सहकारी गोपालन

प्रत्येक किसान अपने घरमें गाय-बैल रखकर अुनका पालन भली-भांति और शास्त्रीय पद्धतिसे नहीं कर सकता। गोवंशके ह्रासके अनेक कारणोंमें व्यक्तिगत गोपालन भी अेक कारण रहा है। यह बोझ वैयक्तिक किसानकी शक्तिके बिलकुल बाहर है।

मैं तो यहां तक कहता हूं कि आज संसार हरअेक काममें सामुदायिक रूपसे शक्तिका संगठन करनेकी ओर जा रहा है। अिस संगठनका नाम सहयोग है। बहुतसी बातें आजकल सहयोगसे हो रही हैं। हमारे मुल्कमें भी सहयोग आया तो है, लेकिन वह अैसे विकृत रूपमें आया है कि अुसका सही लाभ हिन्दुस्तानके गरीबोंको बिलकुल नहीं मिलता।

हमारी आबादी बढ़ती जा रही है और अुसके साथ किसानकी व्यक्तिगत जमीन कम होती जा रही है। नतीजा यह हुआ है कि प्रत्येक किसानके पास जितनी चाहिये अुतनी जमीन नहीं है। जो है वह अुसकी अड़चनोंको बढ़ानेवाली है। अैसा किसान अपने घरमें या खेत पर गाय-बैल नहीं रख सकता। रखता है तो अपने हाथों अपनी बरबादीको न्योता भी देता है। आज हिन्दुस्तानकी यही हालत है। धर्म, दया या नीतिकी परवाह न करनेवाला अर्थशास्त्र तो पुकार-पुकार कर कहता है कि आज हिन्दुस्तानमें लाखों पशु मनुष्यको खा रहे हैं। क्योंकि अुनसे कुछ लाभ नहीं पहुंचने पर भी अुन्हें खिलाना तो पड़ता ही है। अिसलिअे अुन्हें मार डालना चाहिये। लेकिन धर्म कहो, नीति कहो या दया कहो; ये हमें अिन निकम्मे पशुओंको मारनेसे रोकते हैं।

अिस हालतमें क्या किया जाये? यही कि जितना प्रयत्न पशुओंको जीवित रखने और अुन्हें बोझ न बनने देनेका हो सकता है अुतना किया जाय। अिस प्रयत्नमें सहयोगका बड़ा महत्त्व है। सहयोग अथवा सामुदायिक पद्धतिसे पशु-पालन करनेसे :

१. जगह बचेगी। किसानको अपने घरमें पशु नहीं रखने पड़ेंगे। आज तो जिस घरमें किसान रहता है, अुसीमें अुसके सारे मवेशी भी रहते हैं। अिससे हवा बिगड़ती है और घरमें गंदगी रहती है। मनुष्य पशुके साथ अेक ही घरमें रहनेके लिअे पैदा नहीं किया गया है। अैसा करनेमें न दया है, न ज्ञान।

२. पशुओंकी वृद्धि होने पर अेक घरमें रहना असंभव हो जाता है। अिसलिअे किसान बछड़ेको बेच डालता है और भैंसे या पाड़ेको मार डालता है, या मरनेके लिअे छोड़ देता है। यह अधमता है। सहयोगसे यह रुकेगा।

३. जब पशु बीमार होता है, तब व्यक्तिगत रूपसे किसान अुसका शास्त्रीय अुपचार नहीं करवा सकता। सहयोगसे ही चिकित्सा सुलभ होती है।

४. प्रत्येक किसान सांड़ नहीं रख सकता। सहयोगके आधार पर बहुतसे पशुओंके लिअे अेक अच्छा सांड़ रखना सरल है।

५. प्रत्येक किसान गोचर-भूमि तो ठीक, पशुओंके लिअे व्यायामकी यानी हिरने-फिरनेकी भूमि भी नहीं छोड़ सकता। किन्तु सहयोग द्वारा ये दोनों सुविधायें आसानीसे मिल सकती हैं।

६. व्यक्तिगत रूपमें किसानको घास अित्यादि पर बहुत खर्च करना पड़ता है। सहयोग द्वारा कम खर्चमें काम चल जायगा।

७. किसान व्यक्तिगत रूपमें अपना दूध आसानीसे नहीं बेच सकेगा। सहयोग द्वारा अुसे दाम भी अच्छे मिलेंगे और वह दूधमें पानी वगैरा मिलानेके लालचसे भी बच सकेगा।

८. व्यक्तिगत रूपमें किसानके लिअे पशुओंकी परीक्षा करना असंभव है, किन्तु गांवभरके पशुओंकी परीक्षा सुलभ है। और अुनकी नसलके सुधारका प्रश्न भी आसान हो जाता है।

९. सामुदायिक या सहयोगी पद्धतिके पक्षमें अितने कारण पर्याप्त होने चाहिये। परन्तु सबसे बड़ी और सचोट दलील तो यह है कि व्यक्तिगत पद्धतिके कारण ही हमारी और पशुओंकी दशा आज अितनी दयनीय हो अुठी है। अुसे बदल दें तो हम बच सकते हैं, और पशुओंको भी बचा सकते हैं।

मेरा तो विश्वास है कि जब हम अपनी जमीनको सामुदायिक पद्धतिसे जोतेंगे, तभी अुससे फायदा अुठा सकेंगे। गांवकी खेती अलग-अलग सौ टुकड़ोंमें बंट जाय, अिसके बनिस्बत क्या यह बेहतर नहीं होगा कि सौ कुटुम्ब सारे गांवकी खेती सहयोगसे करें और अुनकी आमदनी आपसमें बांट लिया करें? और जो खेतीके लिअे सच है, वह पशुओंके लिअे भी सच है।

यह दूसरी बात है कि आज लोगोंको सहयोगकी पद्धति पर लानेमें कठिनाअी है। कठिनाअी तो सभी सच्चे और अच्छे कामोंमें होती है। गोसेवाके सभी अंग कठिन हैं। कठिनाअियां दूर करनेसे ही सेवाका मार्ग सुगम बन सकता है। यहां तो मुझे अितना ही बताना था कि सामुदायिक पद्धति क्या चीज है और यह कि वैयक्तिक पद्धति गलत है, सामुदायिक सही है। व्यक्ति अपने स्वातंत्र्यकी रक्षा भी सहयोगको स्वीकार करके

ही कर सकता है। अतअेव सामुदायिक पद्धति अहिंसात्मक है, वैयक्तिक हिंसात्मक।

हरिजनसेवक, १५–२–'४२

गोबर, कचरे और मनुष्यके मल वगैरामें से खूबसूरत और सुगन्धित खाद मिल सकती है। यह सुनहली चीज है। घूलमें से धन पैदा करनेकी बात है। . . . यह ख़ाद बनाना भी अेक ग्रामोद्योग है। यह तभी चल सकता है, जब करोड़ों अुसमें हिस्सा लें, मदद दें।

दिल्ली-डायरी, पृ० २८६–८७

३४

गांवोंकी सफाअी

श्रम और बुद्धिके बीच जो अलगाव हो गया है, अुसके कारण हम अपने गांवोंके प्रति अितने लापरवाह हो गये हैं कि वह अेक गुनाह ही माना जा सकता है। नतीजा यह हुआ है कि देशमें जगह-जगह सुहावने और मनभावने छोटे-छोटे गांवोंके बदले हमें घूरे जैसे गंदे गांव देखनेको मिलते हैं। बहुतसे या यों कहिये कि करीब-करीब सभी गांवोंमें घुसते समय जो अनुभव होता है, अुससे दिलको खुशी नहीं होती। गांवके बाहर और आसपास अितनी गंदगी होती है और वहां अितनी बदबू आती है कि अकसर गांवमें जानेवालेको आंख मूंदकर और नाक दबाकर ही जाना पड़ता है। ज्यादातर कांग्रेसी गांवके बाशिन्दे होने चाहिये; अगर अैसा हो तो अुनका फर्ज हो जाता है कि वे अपने गांवोंको सब तरहसे सफाअीके नमूने बनायें। लेकिन गांववालोंके हमेशाके यानी रोज-रोजके जीवनमें शरीक होने या अुनके साथ घुलने-मिलनेको अुन्होंने कभी अपना कर्तव्य माना ही नहीं। हमने राष्ट्रीय या सामाजिक सफाअीको न तो जरूरी गुण माना, और न अुसका विकास ही किया। यों रिवाजके कारण हम अपने ढंगसे नहाभर लेते हैं, मगर जिस नदी, तालाब या कुअेंके किनारे हम श्राद्ध या वैसी ही दूसरी कोअी धार्मिक

किया करते हैं और जिन जलाशयोंमें पवित्र होनेके विचारसे हम नहाते हैं, अुनके पानीको बिगाड़ने या गन्दा करनेमें हमें कोओी हिचक नहीं होती। हमारी अिस कमजोरीको मैं अेक बड़ा दुर्गुण मानता हूं। अिस दुर्गुणका ही यह नतीजा है कि हमारे गांवोंकी और हमारी पवित्र नदियोंके पवित्र तटोंकी लज्जाजनक दुर्दशा और गन्दगीसे पैदा होनेवाली बीमारियां हमें भोगनी पड़ती हैं।

रचनात्मक कार्यक्रम, पृ० २७–२८

गांवोंमें करनेके कार्य ये हैं कि अुनमें जहां-जहां कूड़े-कर्कट तथा गोबरके ढेर हों, वहां-वहांसे अुनको हटाया जाय और कुओं तथा तालावोंकी सफाओ की जाय। अगर कार्यकर्ता लोग नौकर रखे हुअे भंगियोंकी भांति खुद रोज सफाओका काम करना शुरू कर दें और साथ ही गांववालोंको यह भी बतलाते रहें कि अुनसे सफाओके कार्यमें शरीक होनेकी आशा रखी जाती है, ताकि आगे चलकर अन्तमें सारा काम गांववाले स्वयं करने लग जायें, तो यह निश्चित है कि आगे या पीछे गांववाले अिस कार्यमें अवश्य सहयोग देने लगेंगे।

वहांके बाजार तथा गलियोंको सब प्रकारका कूड़ा-कर्कट हटाकर स्वच्छ बना लेना चाहिये। फिर अुस कूड़ेका वर्गीकरण कर देना चाहिये। अुसमें से कुछका तो खाद बनाया जा सकता है, कुछको सिर्फ जमीनमें गाड़ देनाभर बस होगा और कुछ हिस्सा अैसा होगा कि जो सीधा सम्पत्तिके रूपमें परिणत किया जा सकेगा। वहां मिली हुओ प्रत्येक हड्डी अेक बहुमूल्य कच्चा माल होगी, जिससे बहुतसी अुपयोगी चीजें बनाओ जा सकेंगी, या जिसे पीसकर कीमती खाद बनाया जा सकेगा। कपड़ेके फटे-पुराने चिथड़ों तथा रद्दी कागजोंसे कागज बनाये जा सकते हैं और अिधर-अुधरसे अिकट्ठा किया हुआ मल-मूत्र गांवके खेतोंके लिअे सुनहले खादका काम देगा। मल-मूत्रको अुपयोगी बनानेके लिअे यह करना चाहिये कि अुसके साथ — चाहे वह सूखा हो या तरल — मिट्टी मिलाकर अुसे ज्यादासे ज्यादा अेक फुट गहरा गड्ढा खोदकर जमीनमें गाड़ दिया जाय। गांवोंकी स्वास्थ्य-रक्षा पर लिखी हुओ अपनी पुस्तकमें डॉ० पूअरे

कहते हैं कि जमीनमें मल-मूत्रको नौ या वारह अिंचसे अधिक गहरा नहीं गाड़ना चाहिये। (मैं यह वात केवल स्मृतिके आधार पर लिख रहा हूं।) अुनकी मान्यता यह है कि जमीनकी अूपरी सतह सूक्ष्म जीवोंसे परिपूर्ण होती है और हवा अेवं रोशनीकी सहायतासे — जो कि आसानीसे वहां तक पहुंच जाती हैं — ये जीव मल-मूत्रको अेक हफ्तेके अन्दर अेक अच्छी, मुलायम और सुगन्धित मिट्टीमें वदल देते हैं। कोअी भी ग्रामवासी स्वयं अिस वातकी सचाअीका पता लगा सकता है। यह कार्य दो प्रकारसे किया जा सकता है। या तो पाखाने वनाकर अुनमें शौच जानेके लिअे मिट्टी तथा लोहेकी वाल्टियां रख दी जायं और फिर प्रतिदिन अुन वाल्टियोंको पहलेसे तैयार की हुअी जमीनमें खाली करके अूपरसे मिट्टी डाल दी जाय, या फिर जमीनमें चौरस गड्ढा खोदकर सीधे अुसीमें मल-मूत्रका त्याग करके अूपरसे मिट्टी डाल दी जाय। यह मल-मूत्र या तो देहातके सामूहिक खेतोंमें गाड़ा जा सकता है या व्यक्तिगत खेतोंमें। लेकिन यह कार्य तभी संभव है जव कि गांववाले सहयोग दें। कोअी भी अुद्योगी ग्रामवासी कमसे कम अितना काम तो खुद भी कर ही सकता है कि मल-मूत्रको अेकत्र करके अुसको अपने लिअे सम्पत्तिमें परिवर्तित कर दे। आजकल तो यह सारा कीमती खाद, जो लाखों रुपयेकी कीमतका है, प्रतिदिन व्यर्थ जाता है और वदलेमें हवाको गन्दी करता तथा वीमारियां फैलाता रहता है।

गांवोंके तालावोंसे स्त्री और पुरुष सव स्नान करने, कपड़े धोने, पानी पीने तथा भोजन वनानेका काम लिया करते हैं। वहुतसे गांवोंके तालाव पशुओंके काम भी आते हैं। वहुधा अुनमें भैंसें वैठी हुअी पाअी जाती हैं। आश्चर्य तो यह है कि तालावोंका अितना पापपूर्ण दुरुपयोग होते रहने पर भी महामारियोंसे गांवोंका नाश अव तक क्यों नहीं हो पाया है? आरोग्य-विज्ञान अिस विषयमें अेकमत है कि पानीकी सफाअीके संवंधमें गांववालोंकी अुपेक्षा-वृत्ति ही अुनकी वहुतसी वीमारियोंका कारण है।

पाठक अिस वातको स्वीकार करेंगे कि अिस प्रकारका सेवाकार्य शिक्षाप्रद होनेके साथ ही साथ अलौकिक रूपसे आनन्ददायक भी है

अौर अिसमें भारतवर्षके सन्ताप-पीड़ित जन-समाजका अनिर्वचनीय कल्याण भी समाया हुआ है। मुझे अुम्मीद है कि अिस समस्याको सुलझानेके तरीकेका मैंने अूपर जो वर्णन किया है, अुससे अितना तो साफ हो गया होगा कि अगर अैसे अुत्साही कार्यकर्ता मिल जायं, जो झाड़ू और फावड़ेको भी अुतने ही आराम और गर्वके साथ हाथमें ले लें जैसे कि कलम और पेंसिलको लेते हैं, तो अिस कार्यमें खर्चका कोअी सवाल ही नहीं अुठेगा। अगर किसी खर्चकी जरूरत पड़ेगी भी तो वह केवल झाड़ू, फावड़ा, टोकरी, कुदाली और शायद कुछ कीटाणु-नाशक दवाअियां खरीदने तक ही सीमित रहेगा। सूखी राख संभवतः अुतनी ही अच्छी कीटाणु-नाशक दवा है, जितनी कि कोअी रसायनशास्त्री दे सकता है।

हरिजनसेवक, १५-२-'३५

आदर्श भारतीय गांव अिस तरह बसाया और बनाया जाना चाहिये, जिससे वह सम्पूर्णतया नीरोग हो सके। अुसके झोंपड़ों और मकानोंमें काफी प्रकाश और वायु आ-जा सके। ये झोंपड़े अैसी चीजोंके बने हों जो पांच मीलकी सीमाके अन्दर अुपलब्ध हो सकती हैं। हर मकानके आसपास या आगे-पीछे अितना बड़ा आंगन हो, जिसमें गृहस्थ अपने लिअे साग-भाजी लगा सकें और अपने पशुओंको रख सकें। गांवकी गलियों और रास्तों पर जहां तक हो सके धूल न हो। अपनी जरूरतके अनुसार गांवमें कुअें हों, जिनसे गांवके सब लोग पानी भर सकें। सबके लिअे प्रार्थना-घर या मंदिर हों, सार्वजनिक सभा वगैराके लिअे अेक अलग स्थान हो, गांवकी अपनी गोचर-भूमि हो, सहकारी ढंगकी अेक गोशाला हो, अैसी प्राथमिक और माध्यमिक शालायें हों जिनमें अुद्योगकी शिक्षा सर्वप्रधान वस्तु हो, और गांवके अपने मामलोंका निपटारा करनेके लिअे अेक ग्राम-पंचायत भी हो। अपनी जरूरतोंके लिअे अनाज, साग-भाजी, फल, खादी वगैरा खुद गांवमें ही पैदा हों। अेक आदर्श गांवकी मेरी अपनी यह कल्पना है। मौजूदा परिस्थितिमें अुसके मकान ज्योंके त्यों रहेंगे, सिर्फ यहां-वहां थोड़ा-सा सुधार कर देना अभी काफी होगा। अगर कहीं जमींदार हो और वह भला आदमी हो या गांवके लोगोंमें सहयोग और प्रेमभाव हो, तो बगैर सरकारी सहायताके खुद

ग्रामीण ही — जिनमें जमींदार भी शामिल है — अपने बल पर लगभग ये सारी बातें कर सकते हैं। हां, सिर्फ नये सिरेसे मकानोंको बनानेकी बात छोड़ दीजिये। और अगर सरकारी सहायता भी मिल जाय तब तो ग्रामोंकी अिस तरह पुनर्रचना हो सकती है कि जिसकी कोअी सीमा ही नहीं। पर अभी तो मैं यही सोच रहा हूं कि खुद ग्रामनिवासी अपने बल पर परस्पर सहयोगके साथ और सारे गांवके भलेके लिअे हिल-मिलकर मेहनत करें, तो वे क्या क्या कर सकते हैं? मुझे तो यह निश्चय हो गया है कि अगर अुन्हें अुचित सलाह और मार्गदर्शन मिलता रहे, तो गांवकी — मैं व्यक्तियोंकी बात नहीं करता — आय बराबर दूनी हो सकती है। व्यापारी दृष्टिसे काममें आने लायक अखूट साधन-सामग्री हर गांवमें भले ही न हो, पर स्थानीय अुपयोग और लाभके लिअे तो लगभग हर गांवमें है। पर सबसे बड़ी बदकिस्मती तो यह है कि अपनी दशा सुधारनेके लिअे गांवके लोग खुद कुछ नहीं करना चाहते।

अेक गांवके कार्यकर्ताको सबसे पहले गांवकी सफाअी और आरोग्यके सवालको अपने हाथमें लेना चाहिये। यों तो ग्रामसेवकोंको किंकर्तव्य-विमूढ़ बना देनेवाली अनेक समस्यायें हैं, पर यह समस्या अैसी है जिसकी सबसे अधिक लापरवाही की जा रही है। फलतः गांवकी तन्दुरुस्ती बिगड़ती रहती है और रोग फैलते रहते हैं। अगर ग्रामसेवक स्वेच्छापूर्वक भंगी बन जाय, तो वह प्रतिदिन मैला अुठाकर अुसका खाद बना सकता है और गांवके रास्ते बुहार सकता है। वह लोगोंसे कहे कि अुन्हें पाखाना-पेशाब कहां करना चाहिये, किस तरह सफाअी रखनी चाहिये, अुसके क्या लाभ हैं, और अुसके न रखनेसे क्या क्या नुकसान होते हैं। गांवके लोग अुसकी बात चाहे सुनें या न सुनें, वह अपना काम बराबर करता रहे।

हरिजनसेवक, १६–१–’३७

३५
गांवका आरोग्य

मेरी रायमें जिस जगह शरीर-सफाओी, घर-सफाओी और ग्राम-सफाओी हो तथा युक्ताहार और योग्य व्यायाम हो, वहां कमसे कम बीमारी होती है। और, अगर चित्तशुद्धि भी हो, तो कहा जा सकता है कि बीमारी असंभव हो जाती है। रामनामके बिना चित्तशुद्धि नहीं हो सकती। अगर देहातवाले अितनी बात समझ जायं, तो वैद्य, हकीम या डॉक्टरकी जरूरत न रह जाय।

कुदरती अुपचारके गर्भमें यह बात रही है कि मानव-जीवनकी आदर्श रचनामें देहातकी या शहरकी आदर्श रचना आ ही जाती है। और अुसका मध्यबिन्दु तो अीश्वर ही हो सकता है।

कुदरती अिलाजके गर्भमें यह बात रही है कि अुसमें कमसे कम खर्च और ज्यादासे ज्यादा सादगी होनी चाहिये। कुदरती अुपचारका आदर्श ही यह है कि जहां तक संभव हो, अुसके साधन अैसे होने चाहिये कि अुपचार देहातमें ही हो सकें। जो साधन नहीं हैं वे पैदा किये जाने चाहिये। कुदरती अुपचारमें जीवन-परिवर्तनकी बात आती है। यह कोअी वैद्यकी दी हुअी पुड़िया लेनेकी बात नहीं है, और न अस्पताल जाकर मुफ्त दवा लेने या वहां रहनेकी बात है। जो मुफ्त दवा लेता है वह भिक्षुक बनता है। जो कुदरती अुपचार करता है, वह कभी भिक्षुक नहीं बनता। वह अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाता है और अच्छा होनेका अुपाय खुद ही कर लेता है। वह अपने शरीरमें से जहर निकाल कर अैसा प्रयत्न करता है, जिससे दुबारा बीमार न पड़ सके। और कुदरती अिलाजमें मध्यबिन्दु तो रामनाम ही है न?

पथ्य खुराक — युक्ताहार — अिस अुपचारका अनिवार्य अंग है। आज हमारे देहात हमारी ही तरह कंगाल हैं। देहातमें साग-सब्जी, फल, दूध वगैरा पैदा करना कुदरती अिलाजका खास अंग है। अिसमें

जो समय खर्च होता है, वह व्यर्थ नहीं जाता। वल्कि अुससे सारे देहातियोंको और आखिरमें सारे हिन्दुस्तानको लाभ होता है।

हरिजनसेवक, २–६–'४६

निचोड़ यह निकला कि अगर हम सफाअीके नियम जानें, अुनका पालन करें और सही खुराक लें, तो हम खुद अपने डॉक्टर वन जायें। जो आदमी जीनेके लिअे खाता है, जो पांच महाभूतोंका यानी मिट्टी, पानी, आकाश, सूरज और हवाका दोस्त वनकर रहता है, जो अुनको वनानेवाले अीश्वरका दास वनकर जीता है, वह कभी वीमार न पड़ेगा। पड़ा भी तो अीश्वरके भरोसे रहता हुआ शान्तिसे मर जायगा। वह अपने गांवके मैदानों या खेतोंमें मिलनेवाली जड़ी-वूटी या औषधि लेकर ही सन्तोप मानेगा। करोड़ों लोग अिसी तरह जीते और मरते हैं। अुन्होंने तो डॉक्टरका नाम तक नहीं सुना। वे अुसका मुंह कहांसे देखें? हम भी ठीक अैसे ही वन जायं और हमारे पास जो देहाती लड़के और वड़े आते हैं अुनको भी अिसी तरह रहना सिखा दें। डॉक्टर लोग कहते हैं कि १०० में से ९९ रोग गन्दगीसे, न खाने जैसा खानेसे और खाने लायक चीजोंके न मिलने और न खानेसे होते हैं। अगर हम अिन ९९ लोगोंको जीनेकी कला सिखा दें, तो वाकी अेकको हम भूल जा सकते हैं। अुसके लिअे कोअी परोपकारी डॉक्टर मिल जायेगा। हम अुसकी फिकर न करें। आज हमें न तो अच्छा पानी मिलता है, न अच्छी मिट्टी और न साफ हवा ही मिलती है। हम सूरजसे छिप-छिपकर रहते हैं। अगर हम अिन सव वातोंको सोचें और सही खुराक सही तरीकेसे लें, तो समझिये कि हमने जमानोंका काम कर लिया। अिसका ज्ञान पानेके लिअे न तो हमें कोअी डिग्री चाहिये और न करोड़ों रुपये! जरूरत सिर्फ अिस वातकी है कि हममें अीश्वर पर श्रद्धा हो, सेवाकी लगन हो, पांच महाभूतोंका कुछ परिचय हो, और हो सही भोजनका सही ज्ञान। अितना तो हम स्कूल और कॉलेजकी शिक्षाके वनिस्वत खुद ही थोड़ी मेहनतसे और थोड़े समयमें हासिल कर सकते हैं।

हरिजनसेवक, १–९–'४६

जाने-अनजाने कुदरतके कानूनोंको तोड़नेसे ही बीमारी पैदा होती है। अिसलिअे अुसका अिलाज भी यही हो सकता है कि बीमार फिर कुदरतके कानूनों पर अमल करना शुरू कर दे। जिस आदमीने कुदरतके कानूनको हदसे ज्यादा तोड़ा है, अुसे तो कुदरतकी सजा भोगनी ही पड़ेगी, या फिर अुससे बचनेके लिअे अपनी जरूरतके मुताबिक डॉक्टरों या सर्जनोंकी मदद लेनी होगी। वाजिब सजाको सोच-समझकर चुपचाप सह लेनेसे मनकी ताकत बढ़ती है, मगर अुसे टालनेकी कोशिश करनेसे मन कमजोर बनता है।

हरिजनसेवक, १५–९–'४६

मैं यह जानना चाहूंगा कि ये डॉक्टर और वैज्ञानिक लोग देशके लिअे क्या कर रहे हैं? वे हमेशा खास-खास बीमारियोंके अिलाजके नये-नये तरीके सीखनेके लिअे विदेशोंको जानेके लिअे तैयार दिखाअी देते हैं। मेरी सलाह है कि वे हिन्दुस्तानके ७ लाख गांवोंकी तरफ ध्यान दें। अैसा करने पर अुन्हें जल्दी ही मालूम हो जायगा कि डॉक्टरीकी डिग्रियां लिये हुअे सारे मर्द और औरतोंकी, पश्चिमी नहीं बल्कि पूर्वी ढंग पर, ग्रामसेवाके काममें जरूरत है। तब वे अिलाजके बहुतसे देशी तरीकोंको अपना लेंगे। जब हिन्दुस्तानके गांवोंमें ही कअी तरहकी जड़ी-बूटियों और दवाअियोंका अखूट भण्डार मौजूद है, तब अुसे पश्चिमी देशोंसे दवाअियां मंगानेकी कोअी जरूरत नहीं। लेकिन दवाअियोंसे भी ज्यादा अिन डॉक्टरोंको जीनेका सही तरीका गांववालोंको सिखाना होगा।

हरिजनसेवक, १५–६–'४७

मेरा कुदरती अिलाज तो सिर्फ गांववालों और गांवोंके लिअे ही है। अिसलिअे अुसमें खुर्दबीन, अेक्स-रे वगैराकी कोअी जगह नहीं है। और न ही कुदरती अिलाजमें कुनैन, अमिटीन, पेनिसिलीन वगैरा दवा-ओंकी गुंजाअिश है। अुसमें अपनी सफाअी, घरकी सफाअी, गांवकी सफाअी और तन्दुरुस्तीकी हिफाजतका पहला और पूरा-पूरा स्थान है। अिसकी तहमें खयाल यह है कि अगर अितना किया जाय या हो सके, तो कोअी

बीमारी ही न हो। और बीमारी आ जाय तो अुसे मिटानेके लिअे कुदरतके सभी कानूनों पर अमल करनेके साथ-साथ रामनाम ही अुसका असल अिलाज है। यह अिलाज सार्वजनिक या आम नहीं हो सकता। जब तक खुद अिलाज करनेवालेमें रामनामकी सिद्धि न आ जाय, तब तक रामनामरूपी अिलाजको अेकदम आम नहीं बनाया जा सकता।

हरिजनसेवक, १८-८-'४६

३६

गांवोंका आहार

हाथ-कुटाअीका चावल

अगर चावल पुरानी पद्धतिसे गांवोंमें ही कूटा जाय, तो अुसकी मजदूरी हाथ-कुटाअी करनेवाली बहनोंके हाथमें जायगी और चावल खानेवाले लाखों लोगोंको, जिन्हें आज मिलोंके पालिश किये हुअे चावलसे केवल स्टार्च मिलता है, हाथ-कुटे चावलसे कुछ पोषक तत्त्व भी मिलेंगे। चावल पैदा करनेवाले प्रदेशोंमें जहां-तहां जो भयावनी चावलकी मिलें खड़ी दिखायी देती हैं अुनका कारण मनुष्यका वह अमर्यादित लोभ ही है, जो न तो अपनी तृप्तिके लिअे अपने पंजेमें आये हुअे लोगोंके स्वास्थ्यकी परवाह करता है और न अुनके सुखकी। अगर लोकमत शक्तिशाली होता तो वह चावलकी मिलोंके मालिकोंसे अिस व्यापारको — जो समूचे राष्ट्रके स्वास्थ्यको खोखला बनाता है और गरीबोंको जीविकोपार्जनके अेक अीमानदारीपूर्ण साधनसे वंचित करता है — बंद करनेका अनुरोध करता और हाथ-कुटाअीके चावलोंके ही अुपयोगका आग्रह रखकर चावल कूटनेवाली मिलोंका चलना अशक्य कर देता।

हरिजन, २६-१०-'४४

गेहूंका चोकर-युक्त आटा

यह तो सभी डॉक्टरोंकी राय है कि विना चोकरका आटा अुतना ही हानिकर है जितना कि पालिश किया हुआ चावल। बाजारमें जो महीन आटा या मैदा विकता है अुसके मुकावलेमें घरकी चक्कीका पिसा हुआ विना चला गेहूंका आटा अच्छा भी होता है और सस्ता भी। सस्ता अिसलिअे होता है कि पिसाअीका पैसा बच जाता है। फिर घरके पिसे हुअे आटेका वजन कम नहीं होता। महीन आटे या मैदेमें तौल कम हो जाती है। गेहूंका सबसे पौष्टिक अंश अुसके चोकरमें होता है। गेहूंकी भूसी चालकर निकाल डालनेसे अुसके पौष्टिक तत्त्वकी बहुत बड़ी हानि होती है। ग्रामवासी या दूसरे लोग जो घरकी चक्कीका पिसा आटा विना चला हुआ खाते हैं, वे पैसेके साथ-साथ अपना स्वास्थ्य भी नष्ट होनेसे बचा लेते हैं। आज आटेकी मिलें जो लाखों रुपये कमा रही हैं, अुस रकमका काफी बड़ा हिस्सा गांवोंमें हाथकी चक्कियां फिरसे चलने लगनेसे गांवोंमें ही रहेगा और वह सत्पात्र गरीबोंके बीच बंटता रहेगा।

हरिजनसेवक, ८–२–'३५

गुड़

डॉक्टरोंकी रायके अनुसार गुड़ . . . सफेद चीनीकी अपेक्षा कहीं अधिक पौष्टिक है; और अगर गांववालोंने गुड़ बनाना छोड़ दिया तो अुनके बाल-बच्चोंके आहारमें से अेक जरूरी चीज निकल जायगी। वे खुद शायद गुड़के विना अपना काम चला सकेंगे, पर अुनके बच्चोंकी शारीरिक ताकत गुड़के अभावमें निश्चय ही घट जायगी। . . . अगर गुड़ बनाना जारी रहा और लोगोंने अुसका अुपयोग करना न छोड़ा, तो ग्रामवासियोंका करोड़ों रुपया अुनके पास ही रहेगा।

हरिजनसेवक, ८–२–'३५

हरी पत्ता-भाजियां

आहार या विटामिनोंके विषय पर लिखी गयी कोअी भी आधुनिक पाठ्य-पुस्तक अुठाअिये, तो अुसमें आप अिस बातकी जोरदार सिफारिश

पायेंगे कि हरअेक भोजनके साथ थोड़ी-सी कच्ची हरी पत्ता-भाजी जरूर ली जाय। बेशक, खानेसे पहले अुन्हें चार-छह वार अच्छी तरह धो लेना चाहिये, ताकि अुनमें लगी हुअी मिट्टी और दूसरा कचरा बिलकुल साफ हो जाय। ये पत्ता-भाजियां हरअेक गांवमें आसानीसे मिल सकती हैं; सिर्फ अुन्हें तोड़नेकी जरूरत है। फिर भी, हरी पत्ता-भाजियां शहरोंके ही लोगोंके शौककी चीज समझी जाती हैं।

भारतके अधिकांश हिस्सोंमें गांववाले तो दाल, चावल या रोटी पर ही गुजारा करते हैं और अिनके साथ बहुत-सी मिर्चें खाते हैं, जो शरीरको नुकसान पहुंचाती हैं। चूंकि गांवोंके आर्थिक पुनर्गठनका काम आहारके सुधारसे शुरू किया गया है, अिसलिअे सस्ते और सादे अैसे खाद्योंको ढूंढ़ निकालना बहुत जरूरी है जिनसे, गांववाले अपना खोया हुआ स्वास्थ्य पुनः प्राप्त कर सकें। भोजनके साथ थोड़ी-सी हरी पत्ता-भाजी लेनेसे गांवके लोग अैसे अनेक रोगोंसे बच जायेंगे जिनसे वे आज तकलीफ भोगते हैं। गांववालोंके भोजनमें विटामिनोंकी कमी है; अुनमें से अधिकांशकी पूर्ति ताजे हरे पत्तोंसे हो सकती है। मैंने अपने भोजनमें सरसों, सोया, शलजम, गाजर और मूलीकी पत्तियां लेना शुरू किया है। यह कहनेकी जरूरत नहीं कि शलजम, गाजर और मूलीकी सिर्फ पत्तियां ही नहीं, अुनके कंद भी कच्चे खाये जाते हैं। अिनकी पत्तियों या कंदोंको आग पर पकाकर खाना अुनके सुप्रिय स्वादको मारना और पैसेका दुर्व्यय करना है। आग पर पकानेसे अिन भाजियोंके विटामिन बिलकुल या अधिकांश नष्ट हो जाते हैं। अिन्हें पका कर खाना अिनके स्वादकी हत्या करना है। अैसा मैं अिसलिअे कहता हूं कि कच्ची भाजियोंमें अेक प्राकृतिक स्वाद होता है, जो कि पकानेसे नष्ट हो जाता है।

हरिजन, १५-२-'३५

३७
ग्रामसेवक

गांवोंमें जाकर काम करनेसे हम चौंकते हैं। हम शहरी लोगोंको देहाती जीवन अपनाना बहुत मुश्किल मालूम होता है। बहुतोंके शरीर ही गांवकी कठिन चर्याको सहनेसे अिनकार कर देते हैं। परंतु यदि हम स्वराज्यकी स्थापना जनताकी भलाअीके लिअे करना चाहते हैं, सिर्फ शासकोंके मौजूदा दलकी जगह अुनके जैसा ही कोअी दूसरा दल — जो शायद अुनसे भी बुरा सिद्ध हो — नहीं बिठाना चाहते, तो अिस कठिनाअीका मुकाबला हमें साहसके साथ ही नहीं बल्कि वीरताके साथ, अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर करना होगा। आज तक देहाती लोग, हजारों और लाखोंकी संख्यामें, हमारे जीवनका पोषण करनेके लिअे मरते आये हैं, अब अुनके जीवनका पोषण करनेके लिअे हमें मरना होगा। बेशक, अुनके मरनेमें और हमारे मरनेमें बुनियादी फर्क होगा। वे बिन-जाने और अनिच्छापूर्वक मरे हैं। अुनके अिस विवश बलिदानने हमें गिराया है। अब यदि हम ज्ञानपूर्वक और अिच्छापूर्वक मरेंगे, तो हमारा बलिदान हमें और हमारे साथ समूचे राष्ट्रको अूपर अुठायेगा। यदि हम अेक आजाद और स्वावलंबी देशकी तरह जीना चाहते हैं, तो अिस आवश्यक बलिदानसे हमें अपना कदम पीछे नहीं हटाना चाहिये।

यंग अिंडिया, १७-४-२४

सुसंस्कृत घर जैसी कोअी पाठशाला नहीं और अीमानदार तथा सदाचारी माता-पिता जैसे कोअी शिक्षक नहीं। स्कूलोंमें मिलनेवाली प्रचलित शिक्षा गांववालों पर अेक व्यर्थका बोझ है, जिसका अुनके लिअे कोअी अुपयोग नहीं है। अुनके बच्चे अुसे पानेकी आशा नहीं कर सकते। और भगवानको धन्यवाद है कि यदि अुन्हें सुसंस्कृत घरकी तालीम मिल सके, तो अुन्हें कभी भी अुसकी कमी खटकेगी नहीं। अगर ग्रामसेवक संस्कारवान नहीं है, अगर वह अपने घरमें सुसंस्कृत वातावरण पैदा करनेकी क्षमता नहीं रखता, तो अुसे ग्रामसेवक बननेकी, ग्रामसेवक होनेका सम्मान और अधिकार पानेकी, आकांक्षा छोड़ देना चाहिये। . . . अुन्हें

लिखने-पढ़नेके ज्ञानकी नहीं, अपनी आर्थिक स्थिति और अुसे सुधारनेके अुपायोंके ज्ञानकी जरूरत है। आज तो वे यंत्रोंकी तरह जड़वत् काम करते हैं; न तो अुनमें अपने आसपासकी परिस्थितियोंके प्रति अपनी जिम्मेदारीका भान है और न अुन्हें अपने काममें कोअी आनन्द ही आता है।

हरिजन, २३-११-'३५

गांवोंकी अैसी बुरी हालतका कारण यह है कि जिन्हें शिक्षाका सौभाग्य प्राप्त हुआ है, अुन्होंने गांवोंकी बहुत अुपेक्षा की है। अुन्होंने अपने लिअे शहरी जीवन चुना है। ग्राम-आन्दोलन तो अिसी बातका अेक प्रयत्न है कि जो लोग सेवाकी भावना रखते हैं, अुन्हें गांवोंमें बसकर ग्रामवासियोंकी सेवामें लग जानेके लिअे प्रेरित करके गांवोंके साथ स्वास्थ्य-प्रद संपर्क स्थापित किया जाय। जो लोग सेवाभावसे ग्रामोंमें बसे हैं, वे अपने सामने कठिनाअियां देखकर हतोत्साह नहीं होते। वे तो अिस बातको जानकर ही वहां जाते हैं कि अनेक कठिनाअियोंमें, यहां तक कि गांववालोंकी अुदासीनताके होते हुअे भी, अुन्हें वहां काम करना है। जिन्हें अपने मिशनमें और खुद अपने-आपमें विश्वास है, वे ही गांव-वालोंकी सेवा करके अुनके जीवन पर कुछ असर डाल सकेंगे। सच्चा जीवन बिताना खुद अैसा सबक है, जिसका आसपासके लोगों पर जरूर असर पड़ता है। लेकिन अिस नवयुवकके साथ शायद कठिनाअी यह है कि वह किसी सेवाभावसे नहीं, बल्कि सिर्फ अपने जीवन-निर्वाहके लिअे रोजी कमानेको गांवमें गया है। और जो सिर्फ कमाअीके लिअे ही वहां जाते हैं, अुनके लिअे ग्राम-जीवनमें कोअी आकर्षण नहीं है, यह मैं स्वीकार करता हूं। सेवाभावके बगैर जो लोग गांवोंमें जाते हैं, अुनके लिअे तो अुसकी नवीनता नष्ट होते ही ग्राम-जीवन नीरस हो जायगा।

अतः गांवोंमें जानेवाले किसी नवयुवकको कठिनाअियोंसे घबराकर तो कभी अपना रास्ता नहीं छोड़ना चाहिये। सब्रके साथ प्रयत्न जारी रखा जाय, तो मालूम पड़ेगा कि गांववाले शहरवालोंसे बहुत भिन्न नहीं हैं। और अुन पर दया करने और ध्यान देनेसे वे भी साथ देंगे। यह निस्सन्देह सच है कि गांवोंमें देशके बड़े आदमियोंके सम्पर्कका अवसर नहीं मिलता है। हां, ग्राम-मनोवृत्तिकी वृद्धि होने पर नेताओंके लिअे

यह जरूरी हो जायगा कि वे गांवोंमें दौरा करके अुनके साथ जीवित सम्पर्क स्थापित करें। मगर चैतन्य, रामकृष्ण, तुलसीदास, कबीर, नानक, दादू, तुकाराम, तिरुवल्लुवर जैसे सन्तोंके ग्रन्थोंके रूपमें महान और श्रेष्ठ जनोंका सत्संग तो सबको आज भी प्राप्त है। कठिनाअी यही है कि मनको अिन स्थायी महत्त्वकी बातोंको ग्रहण करने लायक कैसे बनाया जाय। अगर आधुनिक विचारोंका राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और वैज्ञानिक साहित्य प्राप्त करनेसे यहां आशय हो, तो कुतूहल शांत करनेके लिअे अैसा साहित्य मिल सकता है। लेकिन मैं यह मंजूर करता हूं कि जिस आसानीसे धार्मिक साहित्य मिल जाता है, वैसे यह साहित्य नहीं मिलता। सन्तोंने तो सर्व-साधारणके ही लिअे लिखा और कहा है। पर आधुनिक विचारोंको सर्व-साधारणके ग्रहण करने योग्य रूपमें अनूदित करनेका शौक अभी पूरे रूपमें सामने नहीं आया है। यह जरूर है कि समय रहते अैसा होना चाहिये। अतअेव नवयुवकोंको मेरी सलाह है कि . . . वे अपना प्रयत्न छोड़ न दें, बल्कि अुसमें लगे रहें और अपनी अुपस्थितिसे गांवोंको अधिक प्रिय और रहने योग्य बना दें। लेकिन यह वे करेंगे अैसी सेवाके ही द्वारा, जो गांववालोंके अनुकूल हो। अपने ही परिश्रमसे गांवोंको अधिक साफ-सुथरा बनाकर और अपनी योग्यतानुसार गांवोंकी निरक्षरता दूर करके हरअेक व्यक्ति, अिसकी शुरुआत कर सकता है। और अगर अुनके जीवन साफ, सुघड़ और परिश्रमी हों, तो अिसमें कोअी शक नहीं कि जिन गांवोंमें वे काम कर रहे होंगे, अुनमें भी अुसकी छूत फैलेगी और गांववाले भी साफ, सुघड़ और परिश्रमी बनेंगे।

हरिजनसेवक, २०–२–'३७

ग्रामसेवाके आवश्यक अंग

ग्राम-अुद्धारमें अगर सफाअी न आवे, तो हमारे गांव कचरेके घूरे जैसे ही रहेंगे। ग्राम-सफाअीका सवाल प्रजाके जीवनका अविभाज्य अंग है। यह प्रश्न जितना आवश्यक है अुतना ही कठिन भी है। दीर्घ कालसे जिस अस्वच्छताकी आदत हमें पड़ गअी है, अुसे दूर करनेके लिअे महान पराक्रमकी आवश्यकता है। जो सेवक ग्राम-सफाअीका शास्त्र

नहीं जानता, खुद भंगीका काम नहीं करता, वह ग्रामसेवाके लायक नहीं वन सकता।

नओी तालीमके विना हिन्दुस्तानके करोड़ों बालकोंको शिक्षण देना लगभग असंभव है, यह चीज सर्वमान्य हो गअी कही जा सकती है। अिसलिअे ग्रामसेवकको अुसका ज्ञान होना ही चाहिये। अुसे नअी तालीमका शिक्षक होना चाहिये। अिस तालीमके पीछे प्रौढ़-शिक्षण तो अपने-आप चला आयेगा। जहां नअी तालीमने घर कर लिया होगा, वहां वच्चे ही माता-पिताके शिक्षक वन जानेवाले हैं। कुछ भी हो, ग्रामसेवकके मनमें प्रौढ़-शिक्षण देनेकी लगन होनी चाहिये।

स्त्रीको अर्धांगिनी माना गया है। जब तक कानूनसे स्त्री और पुरुषके हक समान नहीं माने जाते, जब तक लड़कीके जन्मका लड़केके जन्म जितना ही स्वागत नहीं किया जाता, तब तक समझना चाहिये कि हिन्दुस्तान लकवेके रोगसे ग्रस्त है। स्त्रीकी अवगणना अहिंसाकी विरोधी है। अिसलिअे ग्रामसेवकको चाहिये कि वह हर स्त्रीको मां, वहन या वेटीके समान समझे और अुसके प्रति आदर-भाव रखे। अैसा ग्रामसेवक ही ग्रामवासियोंका विश्वास प्राप्त कर सकेगा।

रोगी प्रजाके लिअे स्वराज्य प्राप्त करना मैं असंभव मानता हूं। अिसलिअे हम लोग आरोग्य-शास्त्रकी जो अवगणना करते हैं वह दूर होनी चाहिये। अतः ग्रामसेवकको आरोग्य-शास्त्रका सामान्य ज्ञान होना चाहिये।

राष्ट्रभाषाके विना राष्ट्र नहीं वन सकता। 'हिन्दी-हिन्दुस्तानी-अुर्दू' के झगड़ेमें न पड़कर ग्रामसेवक, अगर वह राष्ट्रभाषा नहीं जानता, अुसका ज्ञान हासिल करे। अुसकी वोली अैसी होनी चाहिये, जिसे हिन्दू-मुसलमान सब समझ सकें।

हमने अंग्रेजीके मोहमें फंसकर मातृभाषाका द्रोह किया है। अिस द्रोहके प्रायश्चित्तके तौर पर भी ग्रामसेवक मातृभाषाके प्रति लोगोंके मनमें प्रेम अुत्पन्न करेगा। अुसके मनमें हिन्दुस्तानकी सब भाषाओंके लिअे आदर होगा। अुसकी अपनी मातृभाषा जो भी हो, जिस प्रदेशमें वह वसेगा वहांकी मातृभाषा वह स्वयं सीखकर अपनी मातृभाषाके प्रति वहांके लोगोंकी भावना वढ़ायेगा।

अगर अिस सबके साथ-साथ आर्थिक समानताका प्रचार न किया गया, तो यह सब निकम्मा समझना चाहिये। आर्थिक समानताका यह अर्थ हरगिज नहीं कि हरअेकके पास धनकी समान राशि होगी। मगर यह अर्थ जरूर है कि हरअेकके पास अैसा घरबार, वस्त्र और खाने-पीनेका सामान होगा कि जिससे वह सुखसे रह सके। और जो घातक असमानता आज मौजूद है, वह केवल अहिंसक अुपायोंसे ही नष्ट होगी।

हरिजनसेवक, १७–८–'४०

आवश्यक योग्यतायें

[नीचे दी गअी कुछ आवश्यक योग्यतायें गांधीजीने सत्याग्रहियोंके लिअे आवश्यक बतलाअी थीं। लेकिन चूंकि अुनके मतानुसार अेक ग्राम-सेवकको भी सच्चा सत्याग्रही होना चाहिये, अिसलिअे ये योग्यताअें ग्रामसेवक पर भी लागू होनेवाली मानी जा सकती हैं।]

१. अीश्वरमें अुसकी सजीव श्रद्धा होनी चाहिये, क्योंकि वही अुसका आधार है।

२. वह सत्य और अहिंसाको धर्म मानता हो और अिसलिअे अुसे मनुष्य-स्वभावकी सुप्त सात्त्विकतामें विश्वास होना चाहिये। अपनी तपश्चर्याके रूपमें प्रदर्शित सत्य और प्रेमके द्वारा वह अुस सात्त्विकताको जाग्रत करना चाहता है।

३. वह चारित्र्यवान हो और अपने लक्ष्यके लिअे जान और मालको कुरबान करनेके लिअे तैयार हो।

४. वह आदतन खादीधारी हो और कातता हो। हिन्दुस्तानके लिअे यह लाजिमी है।

५. वह निर्व्यसनी हो, जिससे कि अुसकी बुद्धि हमेशा स्वच्छ और स्थिर रहे।

६. अनुशासनके नियमोंका पालन करनेमें हमेशा तत्पर रहता हो।

यह न समझना चाहिये कि अिन शर्तोंमें ही सत्याग्रहीकी योग्यताओंकी परिसमाप्ति हो जाती है। ये तो केवल दिशादर्शक हैं।

हरिजनसेवक, २५–३–'३९

३८

समग्र ग्रामसेवा

गांवमें जितने लोग रहते हैं अुन्हें पहचानना, अुन्हें जो सेवा चाहिये वह देना, अर्थात् अुसके लिअे साधन जुटा देना और अुनको वह काम करना सिखा देना, दूसरे कार्यकर्ता पैदा करना आदि काम ग्रामसेवक करेगा। ग्रामसेवक ग्रामवासियों पर अितना प्रभाव डालेगा कि वे खुद आकर अुससे सेवा मांगेंगे, और अुसके लिअे जो साधन या दूसरे कार्यकर्त्ता चाहिये, अुन्हें जुटानेके लिअे अुसकी पूरी मदद करेंगे। मानो कि मैं देहातमें घानी लगाकर बैठा हूं, तो मैं घानीसे संबंध रखनेवाले सब काम तो कर ही लूंगा। मगर मैं सामान्य १५, २० रुपये कमानेवाला घांची (तेली) नहीं बनूंगा। मैं तो महात्मा घांची बनूंगा। 'महात्मा' शब्द मैंने विनोदमें अिस्तेमाल किया। अिसका अर्थ केवल यह है कि अपने घांचीपनेमें मैं अितनी सिद्धि डाल दूंगा कि गांववाले आश्चर्यचकित हो जायेंगे। मैं गीता पढ़नेवाला, कुरानशरीफ पढ़नेवाला, अुनके लड़कोंको शिक्षा दे सकनेकी शक्ति रखनेवाला घांची होअूंगा। समयके अभावसे मैं लड़कोंको सिखा न सकूं, यह दूसरी बात है। लोग आकर कहेंगे : 'तेली महाशय, हमारे लड़कोंके लिअे अेक शिक्षक तो ला दीजियेगा।' मैं कहूंगा 'शिक्षक मैं ला दूंगा, मगर अुसका खर्च आपको बरदाश्त करना होगा।' वे खुशीसे अुसका स्वीकार करेंगे। मैं अुन्हें कातना सिखा दूंगा। जब वे बुनकरकी मददकी मांग करेंगे, तो शिक्षककी तरह अुन्हें बुनकर ला दूंगा, ताकि जो चाहे सो बुनना भी सीख ले। अुन्हें मैं ग्राम-सफाअीका महत्त्व बताअूंगा। जब वे सफाअीके लिअे भंगी मांगेंगे तो मैं कहूंगा, मैं खुद भंगी हूं, आअिये आपको यह काम भी सिखा दूं। यह है मेरी समग्र ग्रामसेवाकी कल्पना। आप कह सकते हैं कि अिस युगमें तो अैसा घांची पैदा नहीं होनेवाला है, तो मैं आपसे कहूंगा, तब अिस युगमें ग्राम भी अैसे-के-अैसे रहनेवाले हैं।

रशियाके घांचीको लीजिये। तेलकी मिलें चलानेवाले भी तो घांची ही हैं न? अुनके पास पैसे रहते हैं। मगर पैसेको क्या महत्त्व देना था?

पैसा तो मनुष्यके हाथका मैल है। सच्ची शक्ति ज्ञानमें रही है। ज्ञानीके पास नैतिक प्रतिष्ठा और नैतिक बल रहता है, अिसलिअे सब लोग अैसे आदमीकी सलाह पूछने जाते हैं।

हरिजनसेवक, १७–३–'४६

गांवोंमें दलबंदी और मतभेद

यह हिन्दुस्तानकी बदकिस्मती है कि जैसी दलबन्दी और मतभेद शहरोंमें हैं, वैसे ही देहातोंमें भी देखे जाते हैं। और जब गांवोंकी भलाअीका खयाल न रखते हुअे अपनी पार्टीकी ताकत बढ़ानेके लिअे गांवोंका अुपयोग करनेके खयालसे राजनीतिक सत्ताकी बू हमारे देहातोंमें पहुंचती है, तो अुससे देहातियोंको मदद मिलनेके बजाय अुनकी तरक्कीमें रुकावट ही होती है। मैं तो कहूंगा कि चाहे जो नतीजा हो, हमें ज्यादासे ज्यादा मात्रामें स्थानीय मदद लेनी चाहिये। और अगर हम राजनीतिक सत्ता हड़पनेकी बुराअीसे दूर रहें, तो हमारे हाथों कोअी बुराअी होनेकी संभावना नहीं रहती। हमें याद रखना चाहिये कि शहरोंके अंग्रेजी पढ़े-लिखे स्त्री-पुरुषोंने हिन्दुस्तानके आधार बने हुअे गांवोंको भुला देनेका गुनाह किया है। अिसलिअे आज तककी हमारी अिस लापरवाहीको याद करनेसे हममें धीरज पैदा होगा। अभी तक मैं जिस-जिस गांवमें गया हूं, वहां मुझे अेक न अेक सच्चा कार्यकर्ता मिला ही है। लेकिन गांवोंमें भी लेने लायक कोअी अच्छी चीज होती है, अैसा माननेकी नम्रता हममें नहीं है। और यही कारण है कि हमें वहां कोअी नहीं मिलता। बेशक, हमें स्थानीय राजनीतिक मामलोंसे परे रहना चाहिये। लेकिन यह हम तभी कर सकते हैं, जब हम सारी पार्टियोंकी और किसी भी पार्टीमें शामिल न होनेवाले लोगोंकी सच्ची मदद लेना सीख जायेंगे।

हरिजनसेवक, २–३–'४७

३९

युवकोंको आह्वान

मेरी आशा देशके युवकों पर है। अुनमें से जो बुरी आदतोंके शिकार हैं, वे स्वभावसे बुरे नहीं हैं। वे अुनमें लाचारीसे और बिना सोचे-समझे फंस जाते हैं। अुन्हें समझना चाहिये कि असिसे अुनका और देशके युवकोंका कितना नुकसान हुआ है। अुन्हें यह भी समझना चाहिये कि कठोर अनुशासन द्वारा नियमित जीवन ही अुन्हें और राष्ट्रको सम्पूर्ण विनाशसे बचा सकता है; कोअी दूसरी चीज नहीं।

यंग अिंडिया, ९–७–'२५

सबसे बड़ी बात तो यह है कि अुन्हें अीश्वरकी खोज करनी चाहिये और प्रलोभनोंसे बचनेके लिअे अुसकी मदद मांगनी चाहिये। अुसके बिना यंत्रकी तरह केवल अनुशासनका पालन करनेसे विशेष लाभ नहीं होगा। अीश्वरकी खोजका, अुसके ध्यान और दर्शनका अर्थ यह है कि जिस तरह बालक बिना किसी प्रदर्शनकी आवश्यकताके अपनी मांके प्रेमको महसूस करता है, अुसी तरह हम भी यह महसूस करें कि अीश्वर हमारे हृदयोंमें विराजमान है।

यंग अिंडिया, ९–७–'२५

युवकोंको, जो भविष्यके विधाता होनेका दावा करते हैं, राष्ट्रका नमक — रक्षक तत्त्व — होना चाहिये। यदि यह नमक ही अपना खारापन छोड़ दे तो अुसे खारा कैसे बनाया जाय?

यंग अिंडिया, २२–१२–'२७

युवक तो सर्वत्र भावनाके प्रवाहमें बह जानेवाले होते हैं। असीलिअे अध्ययन-कालमें, यानी कमसे कम २५ वर्षकी आयु तक, प्रतिज्ञापूर्वक ब्रह्मचर्यका पालन करनेकी आवश्यकता है।

हरिजन, ६–५–'३३

युवावस्थाकी निर्दोष पवित्रता अेक अमूल्य निधि है। अिन्द्रियोंकी क्षणिक तृप्तिके लिअे, जिसे भूलसे सुखका नाम दिया जाता है, अुसे खोना नहीं चाहिये।

हरिजन, २१-९-'३५

अपना सारा ज्ञान और पांडित्य तराजूके अेक पलड़े पर और सत्य तथा पवित्रताको दूसरे पलड़े पर रखकर देखो। सत्य और पवित्रतावाला पलड़ा पहले पलड़ेसे कहीं भारी पड़ेगा। नैतिक अपवित्रताकी विषैली हवा आज हमारे विद्यार्थियोंमें भी जा पहुंची है और किसी छिपी हुआी महामारीकी तरह अुनकी भयंकर बरबादी कर रही है। अिसलिअे मैं तुम लोगोंसे, लड़कोंसे और लड़कियोंसे, अनुरोध करता हूं कि तुम अपने मन और शरीर पवित्र रखो। तुम्हारा सारा पांडित्य और शास्त्रोंका तुम्हारा सारा अध्ययन बिलकुल बेकार होगा, यदि तुम अुनकी शिक्षाओंको अपने दैनिक जीवनमें न अुतार सको। मैं जानता हूं कि शिक्षक भी अैसे हैं जो पवित्र और स्वच्छ जीवन नहीं बिताते। अुनसे मैं कहूंगा कि वे अपने छात्रोंको दुनियाका सारा ज्ञान सिखा दें, परन्तु यदि वे अुनमें सत्य और पवित्रताकी लगन पैदा न करें, तो यही कहना होगा कि अुन्होंने अपने छात्रोंका द्रोह किया है और अुन्हें अूपर अुठानेके बजाय आत्मनाशके मार्गकी ओर प्रवृत्त किया है। चरित्रके अभावमें ज्ञान बुराअीको ही बढ़ानेवाली शक्ति है, जैसा कि हम अूपरसे भले दिखाअी देनेवाले किन्तु भीतरसे चोरी और बेअीमानीका धंधा करनेवाले अनेक लोगोंके मामलेमें देखते हैं।

यंग अिंडिया, २१-२-'२९

मैं चाहता हूं कि तुम (नवयुवक) गांवोंमें जाओ और वहां जमकर बैठ जाओ — अुनके मालिकों या अुपकारकर्ताओंकी तरह नहीं बल्कि अुनके विनम्र सेवकोंकी तरह। तुम्हारी दैनिक चर्यासे और तुम्हारे रहन-सहनसे अुन्हें समझने दो कि अुन्हें खुद क्या करना है और अपना रहनेका ढंग किस तरह बदलना है। महज भावनाका कोअी अुपयोग नहीं है, ठीक अुसी तरह जैसे कि भापका अपने-आपमें कोअी

अुपयोग नहीं। भापको अुचित नियंत्रणमें रखा जाय तभी अुसमें ताकत पैदा होती है। यही बात भावनाकी है। मैं चाहता हूं कि तुम भारतकी आहत आत्माके लिअे शान्तिदायी लेप लेकर जानेवाले भगवानके दूतोंकी तरह अुनके बीचमें जा पहुंचो।

यंग अिंडिया, २९–१२–'२७

अनेक लड़कों और लड़कियोंके या तुम चाहो तो कह सकते हो कि हजारों लड़कों और लड़कियोंके पिताके नाते मैं तुमसे कहना चाहता हूं कि आखिर तुम्हारा भाग्य तुम्हारे ही हाथोंमें है। यदि तुम केवल दो शर्तोंका पालन करो तो तुम पाठशालामें क्या सीखते हो या क्या नहीं सीखते, अिसकी मैं बिलकुल परवाह नहीं करता। अेक शर्त तो यह कि परिस्थिति कुछ भी क्यों न हो, तुम्हें भारीसे भारी कठिनाअियोंमें भी पूरी निर्भयताके साथ सत्यका ही पालन करना चाहिये। सत्यनिष्ठ लड़का — सच्चा वीर अपने मनमें कभी किसी चींटीको भी चोट पहुंचानेका खयाल नहीं आने देगा। वह अपनी पाठशालाके सारे कमजोर लड़कोंका रक्षक बनकर रहेगा और पाठशालाके भीतर या बाहर अुन सब लोगोंकी मदद करेगा जिन्हें अुसकी मददकी आवश्यकता है। जो लड़का मन, शरीर और कार्यकी पवित्रताकी रक्षा नहीं करता, अुसका पाठशालामें कोअी काम नहीं, अुसे पाठशालासे निकाल देना चाहिये। शूर-वीर लड़का हमेशा अपना मन पवित्र रखेगा, अपनी आंखें पवित्र रखेगा और अपने हाथ पवित्र रखेगा। जीवनके अिन बुनियादी अुसूलोंको सीखनेके लिअे तुम्हें किसी स्कूलमें जानेकी आवश्यकता नहीं। और यदि तुमने अिस त्रिविध पवित्रताको प्राप्त कर लिया, तो तुम यह मान लो कि तुम्हारे जीवनका निर्माण सुदृढ़ नींव पर होगा।

विथ गांधीजी अिन सीलोन, पृ० १०९

हम अेक अूंची ग्राम-सभ्यताके अुत्तराधिकारी हैं। हमारे देशकी विशालता, आबादीकी विशालता और हमारी भूमिकी स्थिति तथा आबहवाने, मेरी रायमें, मानो यह तय कर दिया है कि अुसकी सभ्यता ग्राम-सभ्यता ही होगी। अुसके दोष मशहूर हैं, लेकिन अुनमें कोअी

अैसा नहीं है जिसका अिलाज न हो सकता हो। अिस सभ्यताको मिटा कर अुसकी जगह शहरी सभ्यताको जमाना मुझे तो अशक्य मालूम होता है। हां, हम लोग किन्हीं कठोर अुपायोंके द्वारा अपनी आबादी ३० करोड़से घटाकर ३ करोड़ या ३० लाख करनेको तैयार हो जायं तो दूसरी बात है। अिसलिअे यह मानकर कि हम लोगोंको मौजूदा ग्राम-सभ्यता ही कायम रखना है और अुसके माने हुअे दोषोंको दूर करनेका प्रयत्न करना है, मैं अुन दोषोंके अिलाज सुझा सकता हूं। लेकिन अिन अिलाजोंका अुपयोग तभी हो सकता है जब कि देशका युवक-वर्ग ग्राम-जीवनको अपना ले। और अगर वे अैसा करना चाहते हों तो अुन्हें अपने जीवनका तौर-तरीका बदलना चाहिये और अपनी छुट्टियोंका हरअेक दिन अपने कॉलेज या हाअीस्कूलके आसपासवाले गांवोंमें बिताना चाहिये; और जो अपनी शिक्षा पूरी कर चुके हों या जो शिक्षा ले ही न रहे हों, अुन्हें गांवोंमें बसनेका अिरादा कर लेना चाहिये।

यंग अिंडिया, ७–११–'२९

अगर शारीरिक श्रमके साथ अकारण ही जो शर्मकी भावना जुड़ गयी है वह दूर की जा सके, तो सामान्य बुद्धिवाले हरअेक युवक और युवतीके लिअे अुन्हें जितना चाहिये अुससे कहीं अधिक काम पड़ा हुआ है।

हरिजन, १–३–'३५

जो आदमी अपनी जीविका अीमानदारीसे कमाना चाहता है वह किसी भी श्रमको छोटा यानी अपनी प्रतिष्ठाको घटानेवाला नहीं मानेगा। महत्त्वकी बात यह है कि भगवानने हमें जो हाथ-पांव दिये हैं, हम अुनका अुपयोग करनेके लिअे तैयार रहें।

हरिजन, १९–१२–'३६

४०

राष्ट्रका आरोग्य, स्वच्छता और आहार

अब तो यह बात निर्विवाद सिद्ध हो चुकी है कि तन्दुरुस्तीके नियमोंको न जाननेसे और अुन नियमोंके पालनमें लापरवाह रहनेसे ही मनुष्य-जातिका जिन-जिन रोगोंसे परिचय हुआ है, अुनमें से ज्यादातर रोग अुसे होते हैं। बेशक, हमारे देशकी दूसरे देशोंसे बढ़ी-चढ़ी मृत्युसंख्याका ज्यादातर कारण गरीबी है, जो हमारे देशवासियोंके शरीरको कुरेदकर खा रही है; लेकिन अगर अुनको तन्दुरुस्तीके नियमोंकी ठीक-ठीक तालीम दी जाय, तो अिसमें बहुत कमी की जा सकती है।

मनुष्य-जातिके लिअे साधारणतः पहला नियम यह है कि मन चंगा है तो शरीर भी चंगा है। नीरोग शरीरमें निर्विकार मनका वास होता है, यह अेक स्वयंसिद्ध सचाअी है। मन और शरीरके बीच अटूट सम्बन्ध है। अगर हमारे मन निर्विकार यानी नीरोग हों, तो वे हर तरहकी हिंसासे मुक्त हो जायं; फिर हमारे हाथों तन्दुरुस्तीके नियमोंका सहज भावसे पालन होने लगे और किसी तरहकी खास कोशिशके बिना ही हमारे शरीर तन्दुरुस्त रहने लगें। अिन कारणोंसे मैं यह आशा रखता हूं कि कोअी भी कांग्रेसी रचनात्मक कार्यक्रमके अिस अंगके बारेमें लापरवाह न रहेगा। तन्दुरुस्तीके कायदे और आरोग्यशास्त्रके नियम बिलकुल सरल और सादे हैं और वे आसानीसे सीखे जा सकते हैं। मगर अुन पर अमल करना मुश्किल है। नीचे मैं अैसे कुछ नियम देता हूं:

१. हमेशा शुद्ध विचार करो और तमाम गन्दे व निकम्मे विचारोंको मनसे निकाल दो।

२. दिन-रात ताजीसे ताजी हवाका सेवन करो।

३. शरीर और मनके कामका तौल बनाये रखो, यानी दोनोंको बेमेल न होने दो।

४. तनकर खड़े रहो, तनकर बैठो और अपने हर काममें साफ-सुथरे रहो; और अिन सब आदतोंको अपनी आन्तरिक स्वस्थताका प्रतिबिम्ब बनने दो।

५. खाना असलिअे खाओ कि अपने जैसे अपने मानव-बन्धुओंकी सेवाके लिअे ही जिया जा सके। भोग भोगनेके लिअे जीने और खानेका विचार छोड़ दो। अतअेव अुतना ही खाओ, जितनेसे आपका मन और आपका शरीर अच्छी हालतमें रहे और ठीक-से काम कर सके। आदमी जैसा खाना खाता है, वैसा ही बन जाता है।

६. आप जो पानी पीयें, जो खाना खायें और जिस हवामें सांस लें, वे सब बिलकुल साफ होने चाहिये। आप सिर्फ अपनी निजकी सफाअीसे सन्तोष न मानें, बल्कि हवा, पानी और खुराककी जितनी सफाअी आप अपने लिअे रखें, अुतनी ही सफाअीका शौक आप अपने आसपासके वातावरणमें भी फैलायें।

रचनात्मक कार्यक्रम, पृ० ३५–३६

न्यूनतम आहार

अेक समय अेक ही अनाज अिस्तेमाल करना चाहिये। चपाती, दाल-भात, दूध-घी, गुड़ और तेल ये खाद्य पदार्थ सब्जी-तरकारी और फलोंके अुपरान्त आम तौर पर हमारे घरोंमें अिस्तेमाल किये जाते हैं। आरोग्यकी दृष्टिसे यह मेल ठीक नहीं है। जिन लोगोंको दूध, पनीर, अंडे या मांसके रूपमें 'स्नायुवर्धक तत्त्व' मिल जाते हैं, अुन्हें दालकी बिलकुल जरूरत नहीं रहती। गरीब लोगोंको तो सिर्फ वनस्पति द्वारा ही स्नायुवर्धक तत्त्व मिल सकते हैं। अगर धनिक वर्ग दाल और तेल लेना छोड़ दे, तो गरीबोंको जीवन-निर्वाहके लिअे ये आवश्यक पदार्थ मिलने लगें। अिन बेचारोंको न प्राणियोंके शरीरसे पैदा हुअे स्नायुवर्धक तत्त्व और न चर्बी ही मिल सकती है। अन्नको दलियाकी तरह मुलायम बनाकर कभी न खाना चाहिये। अगर अुसको किसी रसीली या तरल चीजमें डुबोये बगैर सूखा ही खाया जाय, तो आधी मात्रासे ही काम चल जाता है। अन्नको कच्ची सलाद जैसे कि प्याज, गाजर, मूली, लेटिस, हरी पत्तियां और टमाटरके साथ खाया जाय तो अच्छा होता है। कच्ची हरी सब्जियोंकी सलादके अेक दो औंस ही आठ औंस पकाअी हुअी सब्जियोंके बराबर होते हैं। चपाती या डबल रोटी दूधके साथ नहीं लेनी चाहिये। शुरूमें अेक वक्त चपाती या डबल रोटी और कच्ची सब्जियां और दूसरे वक्त

पकाओी हुआी सब्जी दूध या दहीके साथ ले सकते हैं। मिष्टान्न भोजन बिलकुल बन्द कर देने चाहिये। अिसकी जगह गुड़ या थोड़ी मात्रामें शक्कर अकेले या दूध या डबल रोटीके साथ ले सकते हैं।

ताजे फल खाना अच्छा है, परन्तु शरीरके पोषणके लिअे थोड़ा फल-सेवन भी पर्याप्त होता है। यह महंगी वस्तु है और धनिक लोगोंके आवश्यकतासे अत्यन्त अधिक फल-सेवनके कारण गरीबों और बीमारोंको, जिन्हें धनिकोंकी अपेक्षा अधिक फलोंकी जरूरत है, फल मिलना दुश्वार हो गया है।

कोअी भी वैद्य या डॉक्टर, जिसने भोजनके शास्त्रका अध्ययन किया है, प्रमाणके साथ कह सकेगा कि मैंने अूपर जो बताया है, अुससे शरीरको किसी प्रकारका नुकसान नहीं हो सकता। अुलटे, तन्दुरुस्ती अधिक अच्छी अवश्य हो सकती है।

हरिजनसेवक, २५–१–'४२

मनुष्यको अपनी शक्तिके सर्वोच्च स्तर पर कार्य कर सकनेके लिअे पूरा पोषण पहुंचानेकी वनस्पति-जगतकी अपार क्षमताकी आधुनिक औषधि-विज्ञानने अभी तक कोअी जांच-पड़ताल नहीं की है। अुसने तो बस मांस या बहुत हुआ तो दूध और दूधसे प्राप्त दूसरे पदार्थोंका ही सहारा पकड़ रखा है। भारतीय चिकित्सकोंका, जो परम्परासे शाका-हारी हैं, कर्तव्य है कि वे अिस कार्यको पूरा करें। विटामिनोंकी तेजीसे हो रही खोजोंसे, और अिस सम्भावनासे कि अधिक महत्त्वके विटामिनोंको सूर्यसे सीधा पाया जा सकता है, अैसा प्रकट होता है कि आहारके क्षेत्रमें अेक बड़ी क्रान्ति होने जा रही है और अुसके विषयमें अभी तक जो स्वीकृत सिद्धान्त चले आ रहे थे तथा औषधि-विज्ञान अभी तक जिन विश्वासोंका पोषण करता आ रहा था, अुनमें शीघ्र ही परिवर्तन होने-वाला है।

यंग अिंडिया, १८–७–'२९

मुझे अैसा दिखाअी देता है कि अिस रास्तेकी विकट कठिनाअियोंको पार करने और अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर भी अिस विषयके सत्यको

ढूंढ़ निकालनेका काम निष्णात डॉक्टर लोग नहीं, बल्कि सामान्य परन्तु अुत्साही जिज्ञासु ही करनेवाले हैं। यदि सत्यके अिन विनम्र शोधकोंको वैज्ञानिक लोग मदद दें, तो मुझे अुससे ही सन्तोष हो जायगा।

यंग अिंडिया, १५–८–'२९

मेरा यह विश्वास है कि मनुष्योंको शायद ही दवा लेनेकी आवश्यकता रहती है। पथ्य तथा पानी, मिट्टी अित्यादिके घरेलू अुपचारोंसे अेक हजारमें से ९९९ रोगी स्वस्थ हो सकते हैं।

आत्मकथा, पृ० २३२

शरीरका भगवानके मन्दिरकी तरह अुपयोग करनेके बजाय हम अुसका अुपयोग विषय-भोगोंके साधनकी तरह करते हैं और अिन विषय-सुखोंको बढ़ानेकी कोशिशमें डॉक्टरोंके पास दौड़े जानेमें तथा अपने पार्थिव आवास, अिस शरीरका दुरुपयोग करनेमें लज्जाका अनुभव नहीं करते।

यंग अिंडिया, ८–८–'२९

मनुष्य जैसा आहार करता है वैसा ही वह बनता है — अिस कहावतमें काफी सत्य है। आहार जितना तामस होगा, शरीर भी अुतना ही तामस होगा।

हरिजन, ५–८–'३३

मैं यह अवश्य महसूस करता हूं कि आध्यात्मिक प्रगतिके क्रममें अेक अवस्था अैसी जरूर आती है, जिसकी यह मांग होती है कि हम अपने शरीरकी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिअे अपने सहजीवी प्राणियोंकी हत्या करना बन्द कर दें। आपके साथ शाकाहारके प्रति अपने अिस आकर्षणकी चर्चा करते हुअे मुझे गोल्डस्मिथकी सुन्दर पंक्तियां याद आती हैं:

पहाड़की अिस घाटीमें आजादीसे विचरनेवाले
अिन प्राणियोंकी मैं हत्या नहीं करता।
जो परमशक्ति हमें अपनी दयाका दान देती है,

अुससे मैं दयाकी सीख लेता हूं;
और अुन्हें अपनी दया देता हूं।

अिण्डियाज़ केस फॉर स्वराज, पृ० ४०२

किसी भी देशमें, किसी भी जलवायुमें और किसी भी स्थितिमें, जिसमें मनुष्योंका रहना साधारणत: सम्भव हो, मेरी समझमें हम लोगोंके लिअे मांसाहार आवश्यक नहीं है। मेरा विश्वास है कि हमारी नसल (मनुष्य-जाति) के लिअे मांसाहार अनुपयुक्त है। अगर हम पशुओंसे अपनेको अूंचा मानते हैं, तो फिर अुनकी नकल करनेमें भूल करते हैं। यह बात अनुभव-सिद्ध है कि जिन्हें आत्म-संयम अिष्ट है, अुनके लिअे मांसाहार अनुपयुक्त है।

किन्तु चरित्र-गठन और आत्म-संयमके लिअे भोजनके महत्त्वका अनुमान करनेमें अति करना भी भूल है। अिस बातको भूलना नहीं होगा कि अिसके लिअे भोजन अेक मुख्य वस्तु है। मगर जिस प्रकार भोजनमें किसी तरहका संयम न रखना और मनमाना खाना-पीना अनुचित है, अुसी प्रकार सभी धर्म-कर्मका सार भोजनमें ही मान बैठना भी, जैसा कि प्राय: हिन्दुस्तानमें हुआ करता है, गलत है। हिन्दू धर्मके अमूल्य अुपदेशोंमें शाकाहार भी अेक है। अिसे हलके मनसे छोड़ देना ठीक नहीं होगा। अिसलिअे अिस भूलका संशोधन करना परमावश्यक है कि शाकाहारके कारण दिमाग और देहसे हम कमजोर हो गये हैं और कर्मशीलतामें आलसी या निराग्रही बन गये हैं। हिन्दू धर्मके बड़ेसे बड़े सुधारक अपने अपने जमानेके सबसे बड़े कर्मठ पुरुष हुअे हैं। जैसे, शंकर या दयानन्दके जमानेका कौन पुरुष अुनसे अधिक कर्मशीलता दिखा सका था?

यंग अिंडिया, ७–१०–'२६

अुपवास कब किया जाय?

अपने और अपने ही जैसे दूसरे प्रयोगियोंके काफी विस्तृत अनुभवके आधार पर मैं बिना किसी हिचकिचाहटके यह कहता हूं कि नीचे लिखी हालतोंमें अुपवास जरूर किया जाय:

१. यदि कब्जकी शिकायत हो, २. यदि शरीरमें रक्तका अभाव हो और अुसका रंग पीला पड़ गया हो, ३. यदि बुखार मालूम होता हो, ४. यदि अपच हो, ५. यदि सिरमें दर्द हो, ६. यदि संधिवात हो, ७. यदि घुटनोंमें और शरीरके दूसरे जोड़ोंमें दर्दकी बीमारी हो, ८. यदि बेचैनी महसूस होती हो, ९. यदि मन अुदास हो, १०. यदि अतिशय आनन्दके कारण मन ठिकाने न हो।

यदि अिन अवसरों पर अुपवासका आश्रय लिया जाय, तो डॉक्टरोंकी या कोअी दूसरी पेटेण्ट दवाअियां खानेकी कोअी जरूरत न रहेगी।

यंग अिंडिया, १७–१२–'२५

राष्ट्रीय भोजन

मेरा खयाल है कि हमें अैसी टेव डालनी चाहिये कि अपने प्रान्तके सिवा दूसरे प्रान्तोंमें प्रचलित भोजनको भी स्वादसे खा सकें। मैं जानता हूं कि यह सवाल अुतना आसान नहीं है, जितना वह दिखाअी देता है। मैं अैसे कअी दक्षिण-भारतीयोंको जानता हूं जिन्होंने गुजराती भोजन करनेकी आदत डालनेकी बेहद कोशिश की, लेकिन जो अुसमें कामयाब नहीं हो सके। दूसरी तरफ, गुजरातियोंको दक्षिण भारतीयोंकी विधिसे बनायी गयी रसोअी पसन्द नहीं आती। बंगालके लोगोंकी वानगियां दूसरे प्रान्तवालोंको आसानीसे नहीं रुचतीं। लेकिन यदि हम प्रान्तीयतासे अूपर अुठकर अपनी रहन-सहनकी आदतोंमें राष्ट्रीय बनना चाहें, तो हमें अपनी भोजन-सम्बन्धी आदतोंमें फर्क करनेके लिअे तथा अुनके आदान-प्रदानके लिअे तैयार होना पड़ेगा, अपनी रुचियां सादी करना पड़ेंगी, और अैसी वानगियां बनाने और खानेका रिवाज डालना होगा जो स्वास्थ्यप्रद हों और जिन्हें सब लोग निःसंकोच ले सकें। अिसके लिअे पहले तो हमें विविध प्रान्तों, जातियों और समुदायोंके भोजनका सावधानीसे अध्ययन करना होगा। दुर्भाग्यसे या सौभाग्यसे, न सिर्फ हरअेक प्रान्तका अपना विशेष भोजन है बल्कि अेक ही प्रान्तके विविध समुदायोंकी भोजनकी अपनी-अपनी शैलियां हैं। अिसलिअे राष्ट्रीय कार्यकर्ताओंको चाहिये कि वे विविध प्रान्तोंके भोजनोंका और अुन्हें बनानेकी विधियोंका अध्ययन करें तथा

अिन विविध भोजनोंमें पायी जानेवाली अैसी सामान्य, सादी और
वानगियां ढूंढ़ निकालें जिन्हें सब लोग अपने पाचन-यंत्रको वि
खतरा अुठाये विना खा सकें। और जो भी हो, यह तो स्वीकार क
चाहिये कि विविध प्रान्तों और जातियोंके रीति-रिवाजों और रहन
तरीकोंका ज्ञान हमारे कार्यकर्ताओंको होना ही चाहिये और अिस
न होना शर्मकी वात मानी जानी चाहिये।... अिस कोशिशमें
अुद्देश्य सामान्य लोगोंके लिअे कुछ समान वानगियां ढूंढ़ निकालनेक
चाहिये। और हमारी अिच्छा हो तो यह आसानीसे हो सकत
लेकिन अिसे संभव वनानेके लिअे कार्यकर्ताओंको स्वेच्छापूर्वक
करनेकी कला सीखनी पड़ेगी, विविध भोजनोंके पोषक मूल्योंका
करना होगा और आसानीसे वननेवाली सस्ती वानगियां तय करनी

हरिजन, ५-१-'३४

कोढ़का रोग

हिन्दुस्तानमें लाखों आदमी अिस रोगके शिकार हैं। लोग
वीमारीसे और कोढ़ियोंसे नफरत करते हैं। मेरी रायमें जो लो
विचार रखते हैं, वे शरीरके कोढ़ियोंसे ज्यादा बुरे कोढ़ी हैं। किसी
वीमारीके वजाय कोढ़की वीमारीके वारेमें ही कलंककी वात क्यों
जानी चाहिये?

पहले सिर्फ ओसाअी मिशनरी ही कोढ़ियोंकी सेवाका
करीव सारा भार अपने अूपर लिये हुअे थे। मगर वादमें परो
भावनावाले हिन्दुस्तानियोंने भी (अगरचे वहुत कम तादादमें)
सेवाके कामको अपने हाथमें लिया। मैंने अैसी अेक संस्था क
देखी है। अिस तरहके दूसरे जनसेवक श्री मनोहर दीवान हैं।
विनोबाके शिष्य हैं और अुनकी प्रेरणासे अुन्होंने यह काम अपने
लिया है। मैं अुन्हें सच्चा महात्मा मानता हूं।

दिल्ली-डायरी, पृष्ठ ११२-१३

खुजली, हैजा, प्लेग, यहां तक कि मामूली जुकाम भी अैसी
वीमारियां हैं, जिनसे कोढ़की छूत शायद वहुत कम लगती है

छूतकी बीमारियोंके बजाय कोढ़के बारेमें अितनी नफरत क्यों
चाहिये ? मैं आपसे कह चुका हूं कि सच्चे कोढ़ी तो वे हैं जिनवे
गन्दे हैं। किसी अिन्सानको अपनेसे नीचा समझना, किसी जाति या पि
नफरतकी नजरसे देखना बीमार दिमागकी निशानी है, जिसे मैं श
कोढ़से ज्यादा बुरा समझता हूं। अैसे लोग समाजके असली कोढ़ी
खुद तो शब्दोंको ज्यादा महत्त्व नहीं देता। अगर गुलाबको किसी
नामसे पुकारा जाय, तो अुसकी खुशबू चली नहीं जायगी।

दिल्ली-डायरी, पृ० ११५

४१

शराब और अन्य मादक द्रव्य

जैसा कि कहा जाता है, शराब शैतानकी अीजाद है। अिस्ल
किताबोंमें कहा गया है कि जब शैतानने पुरुषों और स्त्रियोंको लल
शुरू किया, तो अुसने अुन्हें शराब दिखायी थी। मैंने कितने ही मा
यह देखा है कि शराब आदमियोंसे न सिर्फ अुनका पैसा छीना लेती है,
अुनकी बुद्धि भी हर लेती है। अुसके नशेमें वे कुछ क्षणोंके लिअे
और अनुचितका, पुण्य और पापका, यहां तक कि मां और स्त्रीका
भी भूल जाते हैं। मैंने शराबके नशेमें मस्त बैरिस्टरोंको नालियोंमें
और पुलिसके द्वारा घर ले जाये जाते हुअे देखा है। दो अवसरों प
जहाजके कप्तानोंको शराबके नशेमें अैसा गर्क देखा है कि अुनकी
जब तक अुनका होश वापिस नहीं आया तब तक अपने जह
नियंत्रण करने योग्य नहीं रह गयी थी। मांसाहार और शराब, व
बारेमें अुत्तम नियम तो यह है कि 'हमें खाने, पीने और आमोद-प्र
लिअे नहीं जीना चाहिये, बल्कि अिसलिअे खाना और पीना
कि हमारे शरीर अीश्वरके मन्दिर बन जायें और हम अुनका
मनुष्यकी सेवामें कर सकें।' औषधिके रूपमें कभी-कभी श
आवश्यकता हो सकती है और मुमकिन है कि जब आदमी

करीब हो तो शरावका घूंट अुसकी जिन्दगीको थोड़ा और वढ़ा दे। लेकिन शरावके पक्षमें अिससे अधिक और कुछ नहीं कहा जा सकता।

अिन्डियाज़ केस फॉर स्वराज, पृ० ४०३

आपको अूपरसे ठीक दिखाअी देनेवाली अिस दलीलके भुलावेमें नहीं आना चाहिये कि शराववन्दी जोर-जवरदस्तीके आधार पर नहीं होनी चाहिये और जो लोग शराव पीना चाहते हैं अुन्हें अुसकी सुविधायें मिलनी ही चाहिये। राज्यका यह कोअी कर्तव्य नहीं है कि वह अपनी प्रजाकी कुटेवोंके लिअे अपनी ओरसे सुविधायें दे। हम वेश्यालयोंको अपना व्यापार चलानेके लिअे अनुमति-पत्र नहीं देते। अिसी तरह हम चोरोंको अपनी चोरीकी प्रवृत्ति पूरी करनेकी सुविधायें नहीं देते। मैं शरावको चोरी और व्यभिचार, दोनोंसे ज्यादा निंद्य मानता हूं। क्या वह अकसर अिन दोनों वुराअियोंकी जननी नहीं होती?

यंग अिंडिया, ८–६–'२१

शरावकी लत कुटेव तो है ही, लेकिन कुटेवसे भी ज्यादा वह अेक वीमारी है। मैं अैसे वीसियों आदमियोंको जानता हूं जो यदि वे छोड़ सकें तो शराव पीना वड़ी खुशीसे छोड़ दें। मैं अैसे भी कुछ लोगोंको जानता हूं, जिन्होंने यह कहा है कि शराव अुनके सामने न लायी जाय। और जब अुनके कहनेके अनुसार शराव अुनके सामने नहीं लायी गयी, तो मैंने अुन्हें लाचार होकर शरावकी चोरी करते हुअे देखा है। लेकिन अिसलिअे मैं यह नहीं मानता कि शराव अुनके पाससे हटा लेना गलत था। वीमारोंको अपने-आपसे यानी अपनी अनुचित अिच्छाओंसे लड़नेमें हमें मदद देनी ही चाहिये।

यंग अिंडिया, १२–१–'२८

मजदूरोंके साथ अपनी आत्मीयताके फलस्वरूप मैं जानता हूं कि शरावकी लतमें फंसे हुअे मजदूरोंके घरोंका शरावने कैसा नाश किया है। मैं जानता हूं कि शराव आसानीसे न मिल सकती होती तो वे शरावको छूते भी नहीं। अिसके सिवा, हमारे पास हालके अैसे प्रमाण मौजूद हैं कि शरावियोंमें से ही कअी खुद शराववन्दीकी मांग कर रहे हैं।

हरिजन, ३–६–'३९

शराबकी आदत मनुष्यकी आत्माका नाश कर देती है। और अुसे धीरे-धीरे पशु बना डालती है, जो पत्नी, मां और बहनमें भेद करना भूल जाता है। शराबके नशेमें यह भेद भूल जानेवाले लोगोंको मैंने खुद देखा है।

हरिजन, ९–३–'३४

शराब और अन्य मादक द्रव्योंसे होनेवाली हानि कअी अंशोंमें मलेरिया आदि बीमारियोंसे होनेवाली हानिकी अपेक्षा असंख्य-गुनी ज्यादा है। कारण, बीमारियोंसे तो केवल शरीरको हानि पहुंचती है जब कि शराब आदिसे शरीर और आत्मा, दोनोंका नाश हो जाता है।

यंग अिंडिया, ३–३–'२७

मैं भारतका गरीब होना पसन्द करूंगा, लेकिन मैं यह बरदाश्त नहीं कर सकता कि हमारे हजारों लोग शराबी हों। अगर भारतमें शराबबन्दी जारी करनेके लिअे लोगोंको शिक्षा देना बन्द करना पड़े तो कोअी परवाह नहीं; मैं यह कीमत चुकाकर भी शराबखोरी बन्द करूंगा।

यंग अिंडिया, १५–९–'२७

जो राष्ट्र शराबकी आदतका शिकार है, कहना चाहिये कि अुसके सामने विनाश मुंह बाये खड़ा है। अितिहासमें अिस बातके कितने ही प्रमाण हैं कि अिस बुराअीके कारण कअी साम्राज्य मिट्टीमें मिल गये हैं। प्राचीन भारतीय अितिहासमें, हम जानते हैं कि वह पराक्रमी जाति जिसमें श्रीकृष्णने जन्म लिया था अिसी बुराअीके कारण नष्ट हो गयी। रोम-साम्राज्यके पतनका अेक सहायक कारण निस्सन्देह यह बुराअी ही थी।

यंग अिंडिया, ४–४–'२९

यदि मुझे अेक घंटेके लिअे भारतका डिक्टेटर बना दिया जाय, तो मेरा पहला काम यह होगा कि शराबकी दुकानोंको बिना मुआवजा दिये बंद करा दिया जाय और कारखानोंके मालिकोंको अपने मजदूरोंके लिअे मनुष्योचित परिस्थितियां निर्माण करने तथा अुनके हितमें अैसे अुपाहार-गृह और मनोरंजन-गृह खोलनेके लिअे मजबूर किया जाय, जहां

मजदूरोंको ताजगी देनेवाले निर्दोष पेय और अुतने ही निर्दोष मनोरंजन प्राप्त हो सकें।

यंग अिंडिया, २५–६–'३१

ताड़ी

अेक पक्ष अैसा है कि जो निश्चित (मर्यादित) मात्रामें शराव पीनेका समर्थन करता है और कहता है कि अिससे फायदा होता है। मुझे अिस दलीलमें कुछ सार नहीं लगता। पर घड़ीभरके लिअे अिस दलीलको मान लें, तो भी अनेक अैसे लोगोंके खातिर, जो कि मर्यादामें रह ही नहीं सकते, अिस चीजका त्याग करना चाहिये।

पारसी भाअियोंने ताड़ीका वहुत समर्थन किया है। वे कहते हैं कि ताड़ीमें मादकता तो है, मगर ताड़ी अेक खुराक है और दूसरी खुराकको हजम करनेमें मदद पहुंचाती है। अिस दलील पर मैंने खूब विचार किया है और अिस वारेमें काफी पढ़ा भी है। मगर ताड़ी पीनेवाले वहुतसे गरीवोंकी मैंने जो दुर्दशा देखी है, अुस परसे मैं अिस निर्णय पर पहुंचा हूं कि ताड़ीको मनुष्यकी खुराकमें स्थान देनेकी कोअी आवश्यकता नहीं है।

ताड़ीमें जो गुण माने हैं, वे सब हमें दूसरी खुराकमें मिल जाते हैं। ताड़ी खजूरीके रससे वनती है। खजूरीके शुद्ध रसमें मादकता विलकुल नहीं होती। अुसे नीरा कहते हैं। ताजी नीराको अैसीकी अैसी पीनेसे कअी लोगोंको दस्त साफ आता है। मैंने खुद नीरा पीकर देखी है। मुझ पर अुसका अैसा असर नहीं हुआ। परन्तु वह खुराकका काम तो अच्छी तरहसे देती है। चाय अित्यादिके वदले मनुष्य सवेरे नीरा पी ले, तो अुसे दूसरा कुछ पीने या खानेकी आवश्यकता नहीं रहनी चाहिये।

नीराको गन्नेके रसकी तरह पकाया जाय, तो अुससे वहुत अच्छा गुड़ तैयार होता है। खजूरी ताड़की अेक किस्म है। हमारे देशमें अनेक प्रकारके ताड़ कुदरती तौर पर अुगते हैं। अुन सवमें से नीरा निकल सकती है। नीरा अैसी चीज है जिसे निकालनेकी जगह पर ही तुरन्त पीना अच्छा है। नीरामें मादकता जल्दी पैदा हो जाती है। अिसलिअे

जहां अुसका तुरंत अुपयोग न हो सके, वहां अुसका गुड़ वना लिया जाय, तो वह गन्नेके गुड़की जगह ले सकता है। कअी लोग मानते हैं कि ताड़-गुड़ गन्नेके गुड़से अधिक गुणकारी है। अुसमें मिठास कम होती है, अिसलिअे वह गन्नेके गुड़की अपेक्षा अधिक मात्रामें खाया जा सकता है। जिन ताड़ोंके रससे ताड़ी वनाअी जाती है अुन्हींसे गुड़ वनाया जाय, तो हिन्दुस्तानमें गुड़ और खांड़की कभी तंगी पैदा न हो और गरीवोंको सस्ते दाममें अच्छा गुड़ मिल सके।

ताड़-गुड़की मिश्री और शक्कर भी वनाअी जा सकती है। मगर गुड़ शक्कर या चीनीसे वहुत अधिक गुणकारी है। गुड़में जो क्षार होते हैं वे शक्कर या चीनीमें नहीं होते। जैसे विना भूसीका आटा और विना भूसीका चावल होता है, वैसे ही विना क्षारकी शक्करको समझना चाहिये। अर्थात् यह कहा जा सकता है कि खुराक जितनी अधिक स्वाभाविक स्थितिमें खाअी जाय, अुतना ही अधिक पोषण अुसमें से हमें मिलता है।

आरोग्यकी कुंजी, पृ० २२–२४

वीड़ी और सिगरेट पीना

शरावकी तरह वीड़ी और सिगरेटके लिअे भी मेरे मनमें गहरा तिरस्कार है। वीड़ी और सिगरेटको मैं कुटेव ही मानता हूं। वह मनुष्यकी विवेक-वुद्धिको जड़ वना देती है और अकसर शरावसे ज्यादा वुरी सिद्ध होती है, क्योंकि अुसका परिणाम अप्रत्यक्ष रीतिसे होता है। यह आदत आदमीको अेक वार लग भर जाय, फिर अुससे पिंड छुड़ाना वहुत कठिन होता है। अिसके सिवा वह ख़र्चीली भी है। वह मुंहको दुर्गन्ध-युक्त वनाती है, दांतोंका रंग विगाड़ती है और कभी-कभी कैंसर जैसी भयानक वीमारीको जन्म देती है। वह अेक गंदी आदत है।

यंग अिंडिया, १२–१–'२१

अेक दृष्टिसे वीड़ी और सिगरेट पीना शरावसे भी ज्यादा वड़ी वुराअी है, क्योंकि अिस व्यसनका शिकार अुससे होनेवाली हानिको समय रहते अनुभव नहीं करता। वह जंगलीपनका चिह्न नहीं मानी जाती,

बल्कि सभ्य लोग तो अुसका गुणगान भी करते हैं। मैं अितना कहूंगा कि जो लोग छोड़ सकते हैं वे अुसे छोड़ दें और दूसरोंके लिअे अुदाहरण पेश करें।

यंग अिंडिया, ४–२–'२६

तम्बाकूने तो गजब ही ढाया है। अिसके पंजेसे भाग्यसे ही कोअी छूटता है। ... टॉल्स्टॉयने अिसे व्यसनोंमें सबसे खराब व्यसन माना है।

हिन्दुस्तानमें हम लोग तम्बाकू केवल पीते ही नहीं, सूंघते भी हैं और जरदेके रूपमें खाते भी हैं। ... आरोग्यका पुजारी दृढ़ निश्चय करके सब व्यसनोंकी गुलामीसे छूट जायगा। बहुतोंको अिसमें से अेक या दो या तीनों व्यसन लगे होते हैं। अिसलिअे अुन्हें अिससे घृणा नहीं होती। मगर शान्त चित्तसे विचार किया जाय तो तम्बाकू फूंकनेकी क्रियामें या लगभग सारा दिन जरदे या पानके बीड़ेसे गाल भर रखनेमें या नसवारकी डिबिया खोलकर सूंघते रहनेमें कोअी शोभा नहीं है। ये तीनों व्यसन गंदे हैं।

आरोग्यकी कुंजी, पृ० २८, २९–३०

४२

शहरोंकी सफाअी

पश्चिमसे हम अेक चीज जरूर सीख सकते हैं और वह हमें सीखनी ही चाहिये — शहरोंकी सफाअीका शास्त्र। पश्चिमके लोगोंने सामुदायिक आरोग्य और सफाअीका अेक शास्त्र ही तैयार कर लिया है, जिससे हमें बहुत-कुछ सीखना है। बेशक, सफाअीकी पश्चिमकी पद्धतियोंको हम अपनी आवश्यकताओंके अनुसार बदल सकते हैं।

यंग अिंडिया, २६–१२–'२४

'भगवत्प्रेमके बाद महत्त्वकी दृष्टिसे दूसरा स्थान स्वच्छताके प्रेमका ही है।' जिस तरह हमारा मन मलिन हो तो हम भगवानका प्रेम सम्पादित नहीं कर सकते, अुसी तरह हमारा शरीर मलिन हो तो

भी हम अुसका आशीर्वाद नहीं पा सकते। और शहर अस्वच्छ हो तो शरीर स्वच्छ रहना संभव नहीं है।

यंग अिंडिया, १९–११–'२५

कोअी भी म्युनिसिपैलिटी शहरकी अस्वच्छता और आवादीकी सघनताका सवाल महज टैक्स वसूल करके और सफाअीका काम करनेवाले नौकरोंको रखकर हल करनेकी आशा नहीं कर सकती। यह जरूरी सुधार तो अमीर और गरीब, सव लोगोंके सम्पूर्ण और स्वेच्छापूर्ण सहयोग द्वारा ही शक्य है।

यंग अिंडिया, २६–११–'२५

हम अछूत भाअियोंकी वस्तीवाले गांवोंकी सफाअी करते हैं, यह अच्छा है। पर वह काफी नहीं है। अछूत लोग समझाने-वुझानेसे समझ जाते हैं। क्या हमें यह कहना पड़ेगा कि तथाकथित अुच्च जातियोंके लोग समझाने-वुझानेसे नहीं समझते; या कि शहरका जीवन वितानेके लिअे आरोग्य और सफाअीके जिन नियमोंका पालन करना जरूरी है, वे अुन पर लागू नहीं होते? गांवोंमें तो हम कअी वातें किसी किस्मका खतरा अुठाये विना कर सकते हैं। लेकिन शहरोंकी घनी आवादीवाली तंग गलियोंमें, जहां सांस लेनेके लिअे साफ हवा भी मुश्किलसे मिलती है, हम अैसा नहीं कर सकते। वहांका जीवन दूसरे प्रकारका है और वहां हमें सफाअीके ज्यादा वारीक नियमोंका पालन करना चाहिये। क्या हम अैसा करते हैं? भारतके हरअेक शहरके मध्यवर्ती भागोंमें सफाअीकी जो दयनीय स्थिति दिखायी देती है, अुसकी जिम्मेदारी हम म्युनिसिपैलिटी पर नहीं डाल सकते। और मेरा खयाल है कि दुनियाकी कोअी भी म्युनिसिपैलिटी लोगोंके अमुक वर्गकी अुन आदतोंका प्रतिकार नहीं कर सकती जो अुन्हें पीढ़ियोंकी परम्परासे मिली हैं।...अिसलिअे मैं कहना चाहता हूं कि अगर हम अपनी म्युनिसिपैलिटियोंसे यह अुम्मीद करते हों कि अिन वड़े शहरोंमें जो सफाअी-सम्वन्धी सुधारका सवाल पेश है अुसे वे अिस स्वेच्छापूर्ण सहयोगकी मददके विना ही हल कर

लेंगी तो यह अशक्य है। अलवत्ता, मेरा मतलव यह विलकुल नहीं है कि म्युनिसिपैलिटियोंकी अिस सम्वन्धमें कोअी जिम्मेदारी नहीं है।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ३७५–७६

मुझे म्युनिसिपैलिटीकी प्रवृत्तियोंमें वहुत दिलचस्पी है। म्युनिसिपैलिटीका सदस्य होना सचमुच बड़ा सौभाग्य है। लेकिन सार्वजनिक जीवनका अनुभव रखनेवाले व्यक्तिके नाते मैं आपसे यह भी कह दूं कि अिस सौभाग्यपूर्ण अधिकारके अुचित निर्वाहकी अेक अनिवार्य शर्त यह है कि अिन सदस्योंको अिस पदसे कोअी निजी स्वार्थ साधनेकी अिच्छा न रखनी चाहिये। अुन्हें अपना कार्य सेवाभावसे ही करना चाहिये। तभी अुसकी पवित्रता कायम रहेगी। अुन्हें अपनेको शहरकी सफाअीका काम करनेवाले भंगी कहनेमें गौरवका अनुभव करना चाहिये। मेरी मातृभाषामें म्युनिसिपैलिटीका अेक सार्थक नाम है; लोग अुसे 'कचरा-पट्टी' कहते हैं, जिसका मतलव है भंगियोंका विभाग। सचमुच म्युनिसिपैलिटीको सफाअी-काम करनेवाली अेक प्रमुख संस्था होना ही चाहिये और अुसमें न सिर्फ शहरकी बाहरी सफाअीका वल्कि सामाजिक और सार्वजनिक जीवनकी भीतरी सफाअीका भी समावेश होना चाहिये।

यंग अिंडिया, २८–३–'२९

यदि मैं किसी म्युनिसिपैलिटी या लोकल वोर्डकी सीमामें रहनेवाला अुसका करदाता होता, तो जव तक करके रूपमें हम अिन संस्थाओंको जो पैसा देते हैं वह अुससे चौगुनी सेवाओंके रूपमें न लौटाया जाता तव तक अतिरिक्त करके रूपमें अेक पाअी भी ज्यादा देनेसे मैं अिनकार कर देता और दूसरोंको भी अैसा ही करनेकी सलाह देता। जो लोकल वोर्डों या म्युनिसिपैलिटियोंमें प्रतिनिधियोंकी हैसियतसे जाते हैं, वे वहां प्रतिष्ठाके लालचसे या आपसमें लड़ने-झगड़नेके लिअे नहीं जाते, वल्कि नागरिकोंकी प्रेमपूर्ण सेवा करनेके लिअे जाते हैं। यह सेवा पैसे पर आधार नहीं रखती। हमारा देश गरीव है। अगर म्युनिसिपैलिटियोंमें जानेवाले सदस्योंमें सेवाकी भावना हो, तो वे अवैतनिक मेहतर, भंगी और सड़कें वनानेवाले वन जायेंगे और अुसमें गौरवका अनुभव करेंगे।

वे दूसरे सदस्योंको, जो कांग्रेसके टिकिट पर न चुने गये हों, अपने काममें शरीक होनेका न्यौता देंगे और अपनेमें और अपने कार्यमें अुन्हें श्रद्धा होगी, तो अुनके अुदाहरणका दूसरों पर अवश्य ही अनुकूल प्रभाव पड़ेगा। अिसका अर्थ यह है कि म्युनिसिपल संस्थाके सदस्यको अपना सारा समय अुसी काममें लगानेवाला होना चाहिये। अुसका अपना कोअी स्वार्थ नहीं होना चाहिये। अुनका दूसरा कदम यह होगा कि म्युनिसिपैलिटी या लोकल बोर्डकी सीमाके अन्दर रहनेवाली सारी वयस्क आबादीकी गणना कर ली जाय और अुन सबसे म्युनिसिपैलिटीकी प्रवृत्तियोंमें योग देनेके लिअे कहा जाय। अिसका अेक व्यवस्थित रजिस्टर रखा जाना चाहिये। जो लोग ज्यादा गरीब हैं और पैसेकी मदद नहीं दे सकते अुनसे, अगर वे सशक्त हों तो, श्रमदान करनेके लिअे कहा जा सकता है।

हरिजन, १८-२-'३९

अगर मैलेका ठीक-ठीक अुपयोग किया जाय तो हमें लाखों रुपयोंकी कीमतका खाद मिले और साथ ही कितनी ही बीमारियोंसे मुक्ति मिल जाय। अपनी गंदी आदतोंसे हम अपनी पवित्र नदियोंके किनारे बिगाड़ते हैं और मक्खियोंकी पैदाअिशके लिअे बढ़िया जमीन तैयार करते हैं। परिणाम यह होता है कि हमारी दण्डनीय लापरवाहीके कारण जो मक्खियां खुले मैले पर बैठती हैं, वे ही हमारे नहानेके बाद हमारे शरीर पर बैठती हैं और अुसे गंदा बनाती हैं। अिस भयंकर गंदगीसे बचनेके लिअे कोअी बड़ा साधन नहीं चाहिये; मात्र मामूली फावड़ेका अुपयोग करनेकी जरूरत है। जहां-तहां शौचके लिअे बैठ जाना, नाक साफ करना या सड़क पर थूकना अीश्वर और मानव-जातिके खिलाफ अपराध है और दूसरोंके प्रति लिहाजकी दयनीय कमी प्रकट करता है। जो आदमी अपनी गंदगीको ढकता नहीं है वह भारी सजाका पात्र है, फिर चाहे वह जंगलमें ही क्यों न रहता हो।

सत्याग्रह अिन साअुथ आफ्रिका, पृ० २४०

४३

विदेशी माध्यमकी बुराअी

करोड़ों लोगोंको अंग्रेजीकी शिक्षा देना अुन्हें गुलामीमें डालने जैसा है। मेकॉलेने शिक्षाकी जो बुनियाद डाली, वह सचमुच गुलामीकी बुनियाद थी। अुसने अिसी अिरादेसे अपनी योजना बनाअी थी, अैसा मैं सुझाना नहीं चाहता। लेकिन अुसके कामका नतीजा यही निकला है। . . . यह क्या कम जुल्मकी बात है कि अपने देशमें अगर मुझे अिन्साफ पाना हो तो मुझे अंग्रेजी भाषाका अुपयोग करना पड़े! बैरिस्टर होने पर मैं स्वभाषा बोल ही नहीं सकूं! दूसरे आदमीको मेरे लिअे तरजुमा कर देना चाहिये! यह कुछ कम दंभ है? यह गुलामीकी हद नहीं तो और क्या है? अिसमें मैं अंग्रेजोंका दोष निकालूं या अपना? हिन्दुस्तानको गुलाम बनानेवाले तो हम अंग्रेजी जाननेवाले लोग हैं। प्रजाकी हाय अंग्रेजों पर नहीं पड़ेगी, बल्कि हम लोगों पर पड़ेगी।

हिन्द स्वराज्य, पृ० ७४–७५, १९५९

विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा पानेमें जो बोझ दिमाग पर पड़ता है वह असह्य है। यह बोझ केवल हमारे ही बच्चे अुठा सकते हैं, लेकिन अुसकी कीमत अुन्हें चुकानी ही पड़ती है। वे दूसरा बोझ अुठानेके लायक नहीं रह जाते। अिससे हमारे ग्रेज्युअेट अधिकतर निकम्मे, कमजोर, निरुत्साही, रोगी और कोरे नकलची बन जाते हैं। अुनमें खोजकी शक्ति, विचार करनेकी ताकत, साहस, धीरज, बहादुरी, निडरता आदि गुण बहुत क्षीण हो जाते हैं। अिससे हम नयी योजनायें नहीं बना सकते। बनाते हैं तो अुन्हें पूरा नहीं कर सकते। कुछ लोग, जिनमें अुपरोक्त गुण दिखाअी देते हैं, अकाल मृत्युके शिकार हो जाते हैं। . . . अंग्रेजी शिक्षा पाये हुअे हम लोग अिस नुकसानका अंदाज नहीं लगा सकते। यदि हम यह अंदाज लगा सकें कि सामान्य लोगों पर हमने कितना कम असर डाला है, तो अुसका कुछ खयाल हो सकता है।

मांके दूधके साथ जो संस्कार मिलते हैं और जो मीठे शब्द सुनाअी देते हैं, अुनके और पाठशालाके बीच जो मेल होना चाहिये, वह विदेशी

भाषा द्वारा शिक्षा लेनेसे टूट जाता है। अिसे तोड़नेवालोंका हेतु पवित्र हो तो भी वे जनताके दुश्मन हैं। हम अैसी शिक्षाके शिकार होकर मातृद्रोह करते हैं। विदेशी भाषा द्वारा मिलनेवाली शिक्षाकी हानि यहीं नहीं रुकती। शिक्षित वर्ग और सामान्य जनताके बीचमें भेद पड़ गया है। हम सामान्य जनताको नहीं पहचानते। सामान्य जनता हमें नहीं जानती। हमें तो वह साहब समझ बैठती है और हमसे डरती है; वह हम पर भरोसा नहीं करती। . . . सौभाग्यसे शिक्षित वर्ग अपनी मूर्च्छासे जागते दिखाअी दे रहे हैं। आम लोगोंके साथ मिलते समय अुन्हें अूपर बताये हुअे दोष स्वयं दिखाअी देते हैं। अुनमें जो जोश है वह जनतामें कैसे भरा जाय? अंग्रेजीसे तो यह काम हो नहीं सकता। . . . यह रुकावट पैदा हो जानेसे राष्ट्रीय-जीवनका प्रवाह रुक गया है।

सच तो यह है कि जब अंग्रेजी अपनी जगह पर चली जायगी और मातृभाषाको अपना पद मिल जायगा, तब हमारे मन जो अभी रुंधे हुअे हैं, कैदसे छूटेंगे और शिक्षित और सुसंस्कृत होने पर भी ताजा रहे हुअे दिमागको अंग्रेजी भाषाका ज्ञान प्राप्त करनेका बोझ भारी नहीं लगेगा। और मेरा तो यह भी विश्वास है कि अुस समय सीखी हुअी अंग्रेजी हमारी आजकी अंग्रेजीसे ज्यादा शोभा देनेवाली होगी।

जब हम मातृभाषा द्वारा शिक्षा पाने लगेंगे, तब हमारे घरके लोगोंके साथ हमारा दूसरा ही संबंध रहेगा। आज हम अपनी स्त्रियोंको अपनी सच्ची जीवन-सहचरी नहीं बना सकते। अुन्हें हमारे कामोंका बहुत कम पता होता है। हमारे माता-पिताको हमारी पढ़ाअीका कुछ पता नहीं होता। यदि हम अपनी भाषाके जरिये सारा अूंचा ज्ञान लेते हों, तो हम अपने धोबी, नाअी, भंगी, सबको सहज ही शिक्षा दे सकेंगे। विलायतमें हजामत कराते-कराते हम नाअीसे राजनीतिकी बातें कर सकते हैं। यहां तो हम अपने कुटुम्बमें भी अैसा नहीं कर सकते। अिसका कारण यह नहीं कि हमारे कुटुम्बी या नाअी अज्ञानी हैं। अुस अंग्रेज नाअीके बराबर ज्ञानी तो ये भी हैं। अिनके साथ हम महाभारत, रामायण और तीर्थोंकी बातें करते हैं, क्योंकि जनताको अिसी दिशाकी

शिक्षा मिलती है। परन्तु स्कूलकी शिक्षा घर तक नहीं पहुंच सकती, क्योंकि अंग्रेजीमें सीखा हुआ हम अपने कुटुम्बियोंको नहीं समझा सकते।

आजकल हमारी धारासभाओंका सारा कामकाज अंग्रेजीमें होता है। बहुतेरे क्षेत्रोंमें यही हाल हो रहा है। अिससे विद्याधन कंजूसकी दौलतकी तरह गड़ा हुआ पड़ा रहता है। . . . अैसा कहते हैं कि भारतमें पहाड़ोंकी चोटियों परसे चौमासेमें पानीके जो प्रपात गिरते हैं, अुनसे हम अपने अविचारके कारण कोअी लाभ नहीं अुठाते। हम हमेशा लाखों रुपयेका सोने जैसा कीमती खाद पैदा करते हैं और अुसका अुचित अुपयोग न करनेके कारण रोगोंके शिकार बनते हैं। अिसी तरह अंग्रेजी भाषा पढ़नेके बोझसे कुचले हुअे हम लोग दीर्घदृष्टि न रखनेके कारण अूपर लिखे अनुसार जनताको जो कुछ मिलना चाहिये वह नहीं दे सकते। अिस वाक्यमें अतिशयोक्ति नहीं है। वह तो मेरी तीव्र भावना बतानेवाला है। मातृभाषाका जो अनादर हम कर रहे हैं, अुसका हमें भारी प्रायश्चित्त करना पड़ेगा। अिससे आम जनताका बड़ा नुकसान हुआ है। अिस नुकसानसे अुसे बचाना मैं पढ़े-लिखे लोगोंका पहला फर्ज समझता हूं।

(२० अक्तूबर, १९१७ में भड़ौचमें हुअी दूसरी गुजरात शिक्षा-परिषद्के अध्यक्ष-पदसे दिये गये भाषणसे।)

सच्ची शिक्षा, प्रक० २, पृ० ११–१७

अंग्रेजी सीखनेके लिअे हमारा जो विचारहीन मोह है अुससे खुद मुक्त होकर और समाजको मुक्त करके हम भारतीय जनताकी अेक बड़ीसे बड़ी सेवा कर सकते हैं। अंग्रेजी हमारी शालाओं और विद्यालयोंमें शिक्षाका माध्यम हो गयी है। वह हमारे देशकी राष्ट्रभाषा हुअी जा रही है। हमारे विचार अुसीमें प्रगट होते हैं। . . . अंग्रेजीके ज्ञानकी आवश्यकताके विश्वासने हमें गुलाम बना दिया है। अुसने हमें सच्ची देशसेवा करनेमें असमर्थ बना दिया है। अगर आदतने हमें अन्धा न बना दिया होता, तो हम यह देखे बिना न रहते कि शिक्षाका माध्यम अंग्रेजी होनेके कारण जनतासे हमारा सम्बन्ध टूट गया है, राष्ट्रका अुत्तम मानस अुपयुक्त भाषाके अभावमें अप्रकाशित रह जाता है और

आधुनिक शिक्षासे हमें जो नये-नये विचार प्राप्त हुअे हैं अुनका लाभ सामान्य लोगोंको नहीं मिलता। पिछले ६० वर्षोंसे हमारी सारी शक्ति ज्ञानोपार्जनके बजाय अपरिचित शब्द और अुनके अुच्चारण सीखनेमें खर्च हो रही है। हमें अपने माता-पितासे जो तालीम मिलती है अुसकी नींव पर नया निर्माण करनेके बजाय हमने अुस तालीमको ही भुला दिया है। अितिहासमें अिस बातकी कोअी दूसरी मिसाल नहीं मिलती। यह हमारे राष्ट्रकी अेक अत्यन्त दुःखपूर्ण घटना है। हमारी पहली और बड़ीसे बड़ी समाज-सेवा यह होगी कि हम अपनी प्रान्तीय भाषाओंका अुपयोग शुरू करें, हिन्दीको राष्ट्रभाषाके रूपमें अुसका स्वाभाविक स्थान दें, प्रान्तीय कामकाज प्रान्तीय भाषाओंमें करें और राष्ट्रीय कामकाज हिन्दीमें करें। जब तक हमारे स्कूल और कॉलिज प्रान्तीय भाषाओंके माध्यमसे शिक्षण देना शुरू नहीं करते, तब तक हमें अिस दिशामें लगातार कोशिश करनी चाहिये। . . . वह दिन शीघ्र ही आना चाहिये जब हमारी विधान-सभायें राष्ट्रीय सवालोंकी चर्चा प्रान्तीय भाषाओंमें या जरूरतके अनुसार हिन्दीमें करेंगी। अभी तक सामान्य जनता तो विधान-सभाओंमें होनेवाली अिन चर्चाओंसे बिलकुल बेखबर ही रही है। स्वदेशी भाषाओंके पत्रोंने अिस बातक भूलको सुधारनेकी कुछ कोशिश की है। लेकिन यह काम अुनकी क्षमताओंसे बड़ा सिद्ध हुआ है। 'पत्रिका' अपना तीखा व्यंग्य और 'बंगाली' अपना पाण्डित्य तो अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगोंके लिअे ही परोसता हैं। गम्भीर विचारकोंकी अिस पुरानी भूमिमें हमारे बीचमें टैगोर, बोस या रायका होना आश्चर्यका विषय नहीं होना चाहिये। दुःखकी बात तो यह है कि अिन मनीषियोंकी संख्या हमारे यहां अितनी कम है।

(२७ दिसम्बर, १९१७ में कलकत्तामें हुअी पहली अ० भा० समाज-सेवा परिषद्के अध्यक्षीय भाषणसे।)

यह मेरा निश्चित मत है कि आजकी अंग्रेजी शिक्षाने शिक्षित भारतीयोंको निर्बल और शक्तिहीन बना दिया है। अिसने भारतीय विद्यार्थियोंकी शक्ति पर भारी बोझ डाला है, और हमें नकलची बना दिया है। देशी भाषाओंको अपनी जगहसे हटाकर अंग्रेजीको बैठानेकी

प्रक्रिया अंग्रेजोंके साथ हमारे सम्बन्धका अेक सबसे दु:खद प्रकरण है। राजा राममोहनराय ज्यादा बड़े सुधारक हुअे होते और लोकमान्य तिलक ज्यादा बड़े विद्वान बने होते, अगर अुन्हें अंग्रेजीमें सोचने और अपने विचारोंको दूसरों तक मुख्यत: अंग्रेजीमें पहुंचानेकी कठिनाअीसे आरम्भ नहीं करना पड़ता। अगर वे थोड़ी कम अस्वाभाविक पद्धतिमें पढ़-लिखकर बड़े होते, तो अपने लोगों पर अुनका असर, जो कि अद्‌भुत था, और भी ज्यादा होता! अिसमें कोअी शक नहीं कि अंग्रेजी साहित्यके समृद्ध भंडारका ज्ञान प्राप्त करनेसे अिन दोनोंको लाभ हुआ। लेकिन अिस भंडार तक अुनकी पहुंच अुनकी अपनी मातृभाषाओंके जरिये होनी चाहिये थी। कोअी भी देश नकलचियोंकी जाति पैदा करके राष्ट्र नहीं बना सकता। जरा कल्पना कीजिये कि यदि अंग्रेजोंके पास बाअिबलका अपना प्रमाणभूत संस्करण न होता तो अुनका क्या होता? मेरा विश्वास है कि चैतन्य, कबीर, नानक, गुरु गोविन्दसिंह, शिवाजी और प्रताप राजा राममोहनराय और तिलककी अपेक्षा ज्यादा बड़े पुरुष थे।

मैं जानता हूं कि तुलनायें करना अच्छा नहीं है। अपने-अपने ढंगसे सभी समान रूपसे बड़े हैं। लेकिन फलकी दृष्टिसे देखें तो जनता पर राममोहनराय या तिलकका असर अुतना स्थायी और दूरगामी नहीं है जितना कि चैतन्य आदिका। अुन्हें जिन बाधाओंका मुकाबला करना पड़ा अुनकी दृष्टिसे वे असाधारण कोटिके महापुरुष थे; और यदि जिस शिक्षा-प्रणालीसे अुन्हें अपनी तालीम लेनी पड़ी अुसकी बाधा अुन्हें न सहनी पड़ी होती, तो अुन्होंने अवश्य ही ज्यादा बड़ी सफलतायें प्राप्त की होतीं। मैं यह माननेसे अिनकार करता हूं कि यदि राजा राममोहन राय और लोकमान्य तिलकको अंग्रेजी भाषाका ज्ञान न होता, तो अुन्हें वे सब विचार सूझते ही नहीं जो अुन्होंने किये। भारत आज जिन वहमोंका शिकार है अुनमें सबसे बड़ा वहम यह है कि स्वातंत्र्यसे सम्बन्धित विचारोंको हृदयंगम करनेके लिअे और तर्कशुद्ध चिन्तनकी क्षमताका विकास करनेके लिअे अंग्रेजी भाषाका ज्ञान आवश्यक है। यह याद रखना जरूरी है कि पिछले पचास वर्षोंसे देशके सामने शिक्षाकी अेक ही प्रणाली रही है और विचारोंकी अभिव्यक्तिके लिअे अुसके पास जबरन

लादा हुआ अेक ही माध्यम रहा है। अिसलिअे हमारे पास अिस बातका निर्णय करनेके लिअे कि मौजूदा स्कूलों और कॉलेजोंमें मिलनेवाली शिक्षा न होती तो हमारी क्या हालत होती, जो सामग्री चाहिये वह है ही नहीं। लेकिन यह हम जरूर जानते हैं कि भारत पचास साल पहलेकी अपेक्षा आज ज्यादा गरीब है, अपनी रक्षा करनेमें आज ज्यादा असमर्थ है और अुसके लड़के-लड़कियोंकी शरीर-सम्पत्ति घट गयी है। अिसके अुत्तरमें कोअी मुझसे यह न कहे कि अिसका कारण मौजूदा शासन-प्रणालीका दोष है। कारण, शिक्षा-प्रणाली अिस शासन-प्रणालीका सबसे दोषयुक्त अंग है।

अिस शिक्षा-प्रणालीका जन्म ही अेक बड़ी भ्रान्तिमें से हुआ है। अंग्रेज शासक अीमानदारीसे यह मानते थे कि देशी शिक्षा-प्रणाली निकम्मीसे भी ज्यादा बुरी है। और अिस शिक्षा-प्रणालीका पोषण पापमें हुआ क्योंकि अुसका अुद्देश्य भारतीयोंको शरीर, मन और आत्मामें बौना बनानेका रहा है।

यंग अिंडिया, २७–४–'२१

रविबाबूको अुत्तर

... आज अगर लोग अंग्रेजी पढ़ते हैं, तो व्यापारी बुद्धिसे और तथा-कथित राजनीतिक फायदेके लिअे ही पढ़ते हैं। हमारे विद्यार्थी अैसा मानने लगे हैं (और अभीकी हालत देखते हुअे यह बिलकुल स्वाभाविक है) कि अंग्रेजीके बिना अुन्हें सरकारी नौकरी हरगिज नहीं मिल सकती। लड़कियोंको तो अिसीलिअे अंग्रेजी पढ़ाअी जाती है कि अुन्हें अच्छा वर मिल जायगा! मैं अैसी कअी मिसालें जानता हूं, जिनमें स्त्रियां अिसलिअे अंग्रेजी पढ़ना चाहती हैं कि अंग्रेजोंके साथ अुन्हें अंग्रेजी बोलना आ जाय। मैंने अैसे कितने ही पति देखे हैं कि जिनकी स्त्रियां अुनके साथ या अुनके दोस्तोंके साथ अंग्रेजीमें न बोल सकें तो अुन्हें दुःख होता है! मैं अैसे कुछ कुटुम्बोंको भी जानता हूं, जिनमें अंग्रेजी भाषाको अपनी मातृ-भाषा 'बना लिया' जाता है! सैकड़ों नौजवान अैसा समझते हैं कि अंग्रेजी जाने बिना हिन्दुस्तानको स्वराज्य मिलना नामुमकिन-सा है। अिस

बुराअीने समाजमें अितना घर कर लिया है, मानो शिक्षाका अर्थ अंग्रेजी भाषाके ज्ञानके सिवा और कुछ है ही नहीं। मेरे खयालसे तो ये सब हमारी गुलामी और गिरावटकी साफ निशानियां हैं। आज जिस तरह देशी भाषाओंकी अुपेक्षा की जाती है और अुनके विद्वानों व लेखकोंको रोटीके भी लाले पड़े हुअे हैं, सो मुझसे देखा नहीं जाता। मां-बाप अपने बच्चोंको और पति अपनी स्त्रीको अपनी भाषा छोड़कर अंग्रेजीमें पत्र लिखे, तो वह मुझसे कैसे बरदाश्त हो सकता है? मुझे लगता है कि कवि-सम्राटके बराबर ही मेरी भी स्वतंत्र और खुली हवा पर श्रद्धा है। मैं नहीं चाहता कि मेरा घर सब तरफ खड़ी हुअी दीवारोंसे घिरा रहे और अुसके दरवाजे और खिड़कियां बन्द कर दी जायं। मैं भी यही चाहता हूं कि मेरे घरके आसपास देश-विदेशकी संस्कृतिकी हवा बहती रहे। पर मैं यह नहीं चाहता कि अुस हवासे जमीन परसे मेरे पैर अुखड़ जायं और मैं औंधे मुंह गिर पडूं। मैं दूसरेके घरमें अतिथि, भिखारी या गुलामकी हैसियतसे रहनेके लिअे तैयार नहीं। झूठे घमण्डके वश होकर या तथाकथित सामाजिक प्रतिष्ठा पानेके लिअे मैं अपने देशकी बहनों पर अंग्रेजी विद्याका नाहक बोझ डालनेसे अिनकार करता हूं। मैं चाहता हूं कि हमारे देशके जवान लड़के-लड़कियोंको साहित्यमें रस हो, तो वे भले ही दुनियाकी दूसरी भाषाओंकी तरह ही अंग्रेजी भी जीभर कर पढ़ें। फिर मैं अुनसे आशा रखूंगा कि वे अपने अंग्रेजी पढ़नेका लाभ डॉ० बोस, राय और खुद कवि-सम्राटकी तरह हिन्दुस्तानको और दुनियाको दें। लेकिन मुझे यह नहीं बरदाश्त होगा कि हिन्दुस्तानका अेक भी आदमी अपनी मातृ-भाषाको भूल जाय, अुसकी हंसी अुड़ावे, अुससे शरमाये या अुसे यह लगे कि वह अपने अच्छेसे अच्छे विचार अपनी भाषामें नहीं रख सकता। मैं संकुचित या बन्द दरवाजेवाले धर्ममें विश्वास ही नहीं रखता। मेरे धर्ममें अीश्वरकी पैदा की हुअी छोटीसे छोटी चीजके लिअे भी जगह है। मगर अुसमें जाति, धर्म, वर्ण या रंगके घमण्डके लिअे कोअी स्थान नहीं।

यंग अिंडिया, १–६–'२१

अिस विदेशी भाषाके माध्यमने बच्चोंके दिमागको शिथिल कर दिया है, अुनके स्नायुओं पर अनावश्यक जोर डाला है, अुन्हें रट्टू और नकलची बना दिया है तथा मौलिक कार्यों और विचारोंके लिअे सर्वथा अयोग्य बना दिया है। अिसकी वजहसे वे अपनी शिक्षाका सार अपने परिवारके लोगों तथा आम जनता तक पहुंचानेमें असमर्थ हो गये हैं। विदेशी माध्यमने हमारे बालकोंको अपने ही घरमें पूरा विदेशी बना दिया है। यह वर्तमान शिक्षा-प्रणालीका सबसे बड़ा करुण पहलू है। विदेशी माध्यमने हमारी देशी भाषाओंकी प्रगति और विकासको रोक दिया है। अगर मेरे हाथोंमें तानाशाही सत्ता हो, तो मैं आजसे ही विदेशी माध्यमके जरिये दी जानेवाली हमारे लड़कों और लड़कियोंकी शिक्षा बन्द कर दूं और सारे शिक्षकों और प्रोफेसरोंसे यह माध्यम तुरन्त बदलवा दूं या अुन्हें बरखास्त करा दूं। मैं पाठ्यपुस्तकोंकी तैयारीका अिन्तजार नहीं करूंगा। वे तो माध्यमके परिवर्तनके पीछे-पीछे अपने-आप चली आयेंगी। यह अेक अैसी बुराअी है, जिसका तुरन्त अिलाज होना चाहिये।

हिन्दी नवजीवन, २–९–'२१

हमें जो कुछ अुच्च शिक्षा मिली है अथवा जो भी शिक्षा मिली है, वह केवल अंग्रेजीके ही द्वारा न मिली होती, तो अैसी स्वयंसिद्ध बातको दलीलें देकर सिद्ध करनेकी कोअी जरूरत न होती कि किसी भी देशके बच्चोंको अपनी राष्ट्रीयता टिकाये रखनेके लिअे नीची या अूंची सारी शिक्षा अुनकी मातृभाषाके जरिये ही मिलनी चाहिये। यह स्वयंसिद्ध बात है कि जब तक किसी देशके नौजवान अैसी भाषामें शिक्षा पाकर अुसे पचा न लें जिसे प्रजा समझ सके, तब तक वे अपने देशकी जनताके साथ न तो जीता-जागता संबंध पैदा कर सकते हैं और न अुसे कायम रख सकते हैं। आज अिस देशके हजारों नौजवान अेक अैसी विदेशी भाषा और अुसके मुहावरे पर अधिकार पानेमें कअी साल नष्ट करनेको मजबूर किये जाते हैं, जो अुनके दैनिक जीवनके लिअे बिलकुल बेकार है और जिसे सीखनेमें अुन्हें अपनी मातृभाषा या अुसके साहित्यकी अुपेक्षा करनी पड़ती है। अिससे होनेवाली राष्ट्रकी अपार हानिका अंदाजा कौन लगा सकता है? अिससे बढ़कर कोअी वहम कभी

था ही नहीं कि अमुक भाषाका विकास हो ही नहीं सकता, या अुसके द्वारा गूढ़ अथवा वैज्ञानिक विचार समझाये ही नहीं जा सकते। भाषा तो अपने बोलनेवालोंके चरित्र और विकासका सच्चा प्रतिबिम्ब है।

विदेशी शासनके अनेक दोषोंमें देशके नौजवानों पर डाला गया विदेशी भाषाके माध्यमका घातक बोझ अितिहासमें अेक सबसे बड़ा दोष माना जायगा। अिस माध्यमने राष्ट्रकी शक्ति हर ली है, विद्यार्थियोंकी आयु घटा दी है, अुन्हें आम जनतासे दूर कर दिया है और शिक्षणको बिना कारण खर्चीला बना दिया है। अगर यह प्रक्रिया अब भी जारी रही, तो जान पड़ता है वह राष्ट्रकी आत्माको नष्ट कर देगी। अिसलिअे शिक्षित भारतीय जितनी जल्दी विदेशी माध्यमके भयंकर वशीकरणसे बाहर निकल जायं, अुतना ही अुनका और जनताका लाभ होगा।

हिन्दी नवजीवन, ५–७–'२८

४४

मेरा अपना अनुभव

१२ बरसकी अुमर तक मैंने जो भी शिक्षा पाअी वह अपनी मातृभाषा -गुजरातीमें पाअी थी। अुस समय गणित, अितिहास और भूगोलका मुझे थोड़ा-थोड़ा ज्ञान था। अिसके बाद मैं अेक हाअीस्कूलमें दाखिल हुआ। अिसमें भी पहले तीन साल तक तो मातृभाषा ही शिक्षाका माध्यम रही। लेकिन स्कूल-मास्टरका काम तो विद्यार्थियोंके दिमागमें जबरदस्ती अंग्रेजी ठूंसना था। अिसलिअे हमारा आधेसे अधिक समय अंग्रेजी और अुसके मनमाने हिज्जों तथा अुच्चारण पर काबू पानेमें लगाया जाता था। अैसी भाषाका पढ़ना हमारे लिअे अेक कष्टपूर्ण अनुभव था, जिसका अुच्चारण ठीक अुसी तरह नहीं होता जैसी कि वह लिखी जाती है। हिज्जोंको कण्ठस्थ करना अेक अजीब-सा अनुभव था। लेकिन यह तो मैं प्रसंगवश कह गया, वस्तुतः मेरी दलीलसे

अिसका कोअी संबंध नहीं है। मगर पहले तीन साल तो तुलनामें ठीक ही निकल गये।

जिल्लत तो चौथे सालसे शुरू हुअी। अलजबरा (बीजगणित), केमिस्ट्री (रसायनशास्त्र), अेस्ट्रानॉमी (ज्योतिष), हिस्ट्री (अितिहास), ज्यॉग्राफी (भूगोल) हरअेक विषय मातृभाषाके बजाय अंग्रेजीमें ही पढ़ना पड़ा। कक्षामें अगर कोअी विद्यार्थी गुजराती, जिसे कि वह समझता था, बोलता तो अुसे सजा दी जाती थी। हां, अंग्रेजीको, जिसे न तो वह पूरी तरह समझ सकता था और न शुद्ध बोल सकता था, अगर वह बुरी तरह बोलता तो भी शिक्षकको कोअी आपत्ति नहीं होती थी। शिक्षक भला अिस बातकी फिक्र क्यों करे? क्योंकि खुद अुसकी ही अंग्रेजी निर्दोष नहीं थी। अिसके सिवा और हो भी क्या सकता था? क्योंकि अंग्रेजी अुसके लिअे भी अुसी तरह विदेशी भाषा थी, जिस तरह कि अुसके विद्यार्थियोंके लिअे थी। अिससे बड़ी गड़बड़ होती थी। हम विद्यार्थियोंको अनेक बातें कण्ठस्थ करनी पड़तीं, हालांकि हम अुन्हें पूरी तरह समझ नहीं सकते थे और कभी-कभी तो बिलकुल ही नहीं समझते थे। शिक्षकके हमें ज्यॉमेटरी (रेखागणित) समझानेकी भरपूर कोशिश करने पर मेरा सिर घूमने लगता था। सच तो यह है कि युक्लिड (रेखागणित) की पहली पुस्तकके १३ वें साध्य तक हम न पहुंच गये, तब तक मेरी समझमें ज्यॉमेटरी बिलकुल नहीं आअी। और पाठकोंके सामने मुझे यह मंजूर करना ही चाहिये कि मातृभाषाके अपने सारे प्रेमके बावजूद आज भी मैं यह नहीं जानता कि ज्यॉमेटरी, अलजबरा आदिकी पारिभाषिक बातोंको गुजरातीमें क्या कहते हैं। हां, यह अब मैं जरूर देखता हूं कि जितना गणित, रेखागणित, बीजगणित, रसायनशास्त्र और ज्योतिष सीखनेमें मुझे चार साल लगे, अगर अंग्रेजीके बजाय गुजरातीमें अुन्हें पढ़ा होता तो अुतना मैंने अेक ही सालमें आसानीसे सीख लिया होता। अुस हालतमें मैं आसानी और स्पष्टताके साथ अिन विषयोंको समझ लेता। गुजरातीका मेरा शब्दज्ञान कहीं ज्यादा समृद्ध हो गया होता, और अुस ज्ञानका मैंने अपने घरमें अुपयोग किया होता। लेकिन अिस अंग्रेजीके माध्यमने तो मेरे और मेरे कुटुम्बियोंके बीच, जो कि अंग्रेजी स्कूलोंमें नहीं पढ़े थे, अेक अगम्य खाअी

खड़ी कर दी। मेरे पिताको कुछ पता न था कि मैं क्या कर रहा हूं। मैं चाहता तो भी अपने पिताकी अिस बातमें दिलचस्पी पैदा नहीं कर सकता था कि मैं क्या पढ़ रहा हूं। क्योंकि यद्यपि बुद्धिकी अुनमें कोअी कमी न थी, मगर वे अंग्रेजी नहीं जानते थे। अिस प्रकार मैं अपने ही घरमें बड़ी तेजीके साथ अजनबी बनता जा रहा था। निश्चय ही मैं औरोंसे अूंचा आदमी बन गया था। यहां तक कि मेरी पोशाक भी अपने-आप बदलने लगी। लेकिन मेरा जो हाल हुआ वह कोअी असाधारण अनुभव नहीं था, बल्कि अधिकांश लोगोंका यही हाल होता है।

हाअीस्कूलके प्रथम तीन वर्षोंमें मेरे सामान्य ज्ञानमें बहुत कम वृद्धि हुअी। यह समय तो लड़कोंको हरअेक चीज अंग्रेजीके जरिये सीखनेकी तैयारी का था। हाअीस्कूल तो अंग्रेजीकी सांस्कृतिक विजयके लिये थे। मेरे हाअीस्कूलके तीन सौ विद्यार्थियोंने जो ज्ञान प्राप्त किया वह तो हमीं तक सीमित रहा, वह सर्व-साधारण तक पहुंचानेके लिअे नहीं था।

अेक-दो शब्द साहित्यके बारेमें भी। अंग्रेजी गद्य और पद्यकी हमें कअी किताबें पढ़नी पड़ी थीं। अिसमें शक नहीं कि यह बढ़िया साहित्य था। लेकिन सर्व-साधारणकी सेवा या अुसके संपर्कमें आनेमें अुस ज्ञानका मेरे लिअे कोअी अुपयोग नहीं हुआ है। मैं यह कहनेमें असमर्थ हूं कि मैंने अंग्रेजी गद्य और पद्य न पढ़ा होता तो मैं अेक बेशकीमती खजानेसे वंचित रह जाता। अिसके बजाय सच तो यह है कि अगर वे सात साल मैंने गुजराती पर प्रभुत्व प्राप्त करनेमें लगाये होते और गणित, विज्ञान तथा संस्कृत आदि विषयोंको गुजरातीमें पढ़ा होता, तो अिस तरह प्राप्त किये हुअे ज्ञानमें अपने अड़ोसी-पड़ोसियोंको आसानीसे हिस्सेदार बनाया होता। अुस हालतमें मैंने गुजराती साहित्यको समृद्ध किया होता, और कौन कह सकता है कि अमलमें अुतारनेकी अपनी आदत तथा देश और मातृ-भाषाके प्रति अपने बेहद प्रेमके कारण सर्व-साधारणकी सेवामें मैं और भी अधिक अपनी देन क्यों न दे सकता?

यह हरगिज न समझना चाहिये कि अंग्रेजी या अुसके श्रेष्ठ साहित्यका मैं विरोधी हूं। 'हरिजन' मेरे अंग्रेजी-प्रेमका पर्याप्त प्रमाण है। लेकिन अुसके साहित्यकी महत्ता भारतीय राष्ट्रके लिअे अुससे अधिक अुपयोगी नहीं

जितना कि अिंग्लैण्डका समशीतोष्ण जलवायु या वहांके सुन्दर दृश्य हो सकते हैं। भारतको तो अपने ही जलवायु, दृश्यों और साहित्यमें तरक्की करनी होगी, फिर चाहे वे अंग्रेजी जलवायु, दृश्यों और साहित्यसे घटिया दरजेके ही क्यों न हों। हमें और हमारे बच्चोंको तो अपनी ही विरासत बनानी चाहिये। अगर हम दूसरोंकी विरासत लेंगे तो हमारी अपनी नष्ट हो जायगी। सच तो यह है कि विदेशी सामग्री पर हम कभी अुन्नति नहीं कर सकते। मैं तो चाहता हूं कि राष्ट्र अपनी ही भाषाका भंडार भरे और अिसके लिअे संसारकी अन्य भाषाओंका भंडार भी अपनी ही देशी भाषाओंमें संचित करे। रवीन्द्रनाथकी अनुपम कृतियोंका सौंदर्य जाननेके लिअे मुझे बंगाली पढ़नेकी कोअी जरूरत नहीं, क्योंकि सुन्दर अनुवादोंके द्वारा मैं अुसे पा लेता हूं। अिसी तरह टॉल्स्टायकी संक्षिप्त कहानियोंकी कदर करनेके लिअे गुजराती लड़के-लड़कियोंको रूसी भाषा पढ़नेकी कोअी जरूरत नहीं, क्योंकि अच्छे अनुवादोंके जरिये वे अुन्हें पढ़ लेते हैं। अंग्रेजोंको अिस बातका गर्व है कि संसारकी सर्वोत्तम साहित्यिक रचनायें प्रकाशित होनेके अेक सप्ताहके अन्दर-अन्दर सरल अंग्रेजीमें अुनके हाथोंमें आ पहुंचती हैं। अैसी हालतमें, शेक्सपीयर और मिल्टनके सर्वोत्तम विचारों और रचनाओंके लिअे मुझे अंग्रेजी पढ़नेकी जरूरत क्यों हो?

यह अेक तरहकी अच्छी मितव्ययिता होगी कि अैसे विद्यार्थियोंका अलग ही अेक वर्ग कर दिया जाय, जिनका काम यह हो कि संसारकी विभिन्न भाषाओंमें पढ़ने लायक जो सर्वोत्तम सामग्री हो अुसको पढ़ें और देशी भाषाओंमें अुसका अनुवाद करें। हमारे प्रभुओंने तो हमारे लिअे गलत ही रास्ता चुना है और आदत पड़ जानेके कारण गलती ही हमें ठीक मालूम पड़ने लगी है।

हमारी अिस झूठी अभारतीय शिक्षासे लाखों आदमियोंका दिन-दिन जो अधिकाधिक नुकसान हो रहा है, अुसके प्रमाण मैं रोज ही पा रहा हूं। जो ग्रेज्युअेट मेरे आदरणीय साथी हैं, अुन्हें जब अपने आन्तरिक विचारोंको व्यक्त करना पड़ता है तब वे खुद ही परेशान हो जाते हैं। वे तो अपने ही घरोंमें अजनबी बन गये हैं। अपनी मातृभाषाके शब्दोंका अुनका ज्ञान अितना सीमित है कि अंग्रेजी शब्दों और वाक्यों तकका सहारा

लिये वगैर वे अपने भाषणको समाप्त नहीं कर सकते। न अंग्रेजी किताबोंके वगैर वे रह सकते हैं। आपसमें भी वे अकसर अंग्रेजीमें ही लिखा-पढ़ी करते हैं। अपने साथियोंका अुदाहरण मैं यह वतानेके लिअे दे रहा हूं कि अिस बुराअीने कितनी गहरी जड़ जमा ली है। क्योंकि हम लोगोंने अपनेको सुधारनेका खुद जान-बूझकर प्रयत्न किया है।

हमारे कॉलेजोंमें जो समयकी वरवादी होती है अुसके पक्षमें दलील यह दी जाती है कि कॉलेजोंमें पढ़नेके कारण अितने विद्यार्थियोंमें से अगर अेक जगदीश बसु भी पैदा हो सके, तो हमें अिस वरवादीकी चिंता करनेकी जरूरत नहीं। अगर यह वरवादी अनिवार्य होती तो मैं जरूर अिस दलीलका समर्थन करता। लेकिन मैं आशा करता हूं कि मैंने यह वतला दिया है कि यह न तो पहले अनिवार्य थी और न आज ही अनिवार्य है। क्योंकि जगदीश वसु कोअी वर्तमान शिक्षाकी अुपज नहीं थे। वे तो भयंकर कठिनाअियों और वाधाओंके बावजूद अपने परिश्रमकी वदौलत अूंचे अुठे, और अुनका ज्ञान लगभग अैसा बन गया जो सर्व-साधारण तक नहीं पहुंच सकता। वल्कि मालूम अैसा पड़ता है कि हम यह सोचने लगे हैं कि जव तक कोअी अंग्रेजी न जाने तव तक वह वसुके सदृश महान वैज्ञानिक होनेकी आशा नहीं कर सकता। यह अैसी मिथ्या धारणा है जिससे अधिक वड़ीकी मैं कल्पना ही नहीं कर सकता। जिस तरह हम अपनेको लाचार समझते मालूम पड़ते हैं, अुस तरह अेक भी ज़ापानी अपनेको नहीं समझता।

शिक्षाका माध्यम तो अेकदम और हर हालतमें वदला जाना चाहिये और प्रान्तीय भाषाओंको अुनका न्यायसंगत स्थान मिलना चाहिये। यह जो दंडनीय बरवादी रोज-बरोज हो रही है अिसके वजाय तो मैं अस्थायी रूपसे अव्यवस्था हो जाना भी ज्यादा पसन्द करूंगा।

प्रान्तीय भाषाओंका दरजा और व्यावहारिक मूल्य बढ़ानेके लिअे मैं चाहूंगा कि अदालतोंकी कार्रवाअी अपने-अपने प्रान्तकी भाषामें हो। प्रान्तीय धारासभाओंकी कार्रवाअी भी प्रान्तीय भाषामें या जहां अेकसे अधिक भाषायें प्रचलित हों वहां अुनमें होनी चाहिये। धारासभाओंके सदस्योंसे मैं कहना चाहता हूं कि वे चाहें तो अेक महीनेके अन्दर-अन्दर

अपने प्रान्तोंकी भाषायें भलीभांति समझ सकते हैं। तामिल-भाषीके लिअे अैसी कोअी रुकावट नहीं, कि वह तेलगू, मलयालम और कन्नड़के, जो कि सब तामिलसे मिलती-जुलती ही हैं, मामूली व्याकरण और कुछ सौ शब्द आसानीसे न सीख सके। केन्द्रमें हिन्दुस्तानीका प्रमुख स्थान रहना चाहिये।

मेरी सम्मतिमें यह कोअी अैसा प्रश्न नहीं है जिसका निर्णय साहित्यज्ञोंके द्वारा हो। वे अिस वातका निर्णय नहीं कर सकते कि किस स्थानके लड़के-लड़कियोंकी पढ़ाअी किस भाषामें हो। क्योंकि अिस प्रश्नका निर्णय तो हरअेक देशमें पहले ही हो चुका है। न वे यही निर्णय कर सकते हैं कि किन विषयोंकी पढ़ाअी हो। क्योंकि यह अुस देशकी आवश्यकताओं पर निर्भर करता है, जिस देशके वालकोंकी पढ़ाअी होती है। अुन्हें तो वस यही सुविधा प्राप्त है कि राष्ट्रकी अिच्छाको यथासंभव सर्वोत्तम रूपमें अमलमें लायें। अतः जव हमारा देश वस्तुतः स्वतंत्र होगा, तव शिक्षाके माध्यमका प्रश्न केवल अेक ही तरहसे हल होगा। साहित्यिक लोग पाठ्यक्रम वनायेंगे और फिर अुसके अनुसार पाठ्यपुस्तकें तैयार करेंगे। और स्वतंत्र भारतकी शिक्षा पानेवाले देशकी जरूरतें अुसी तरह पूरी करेंगे, जिस तरह आज वे विदेशी शासकोंकी जरूरतें पूरी करते हैं। जव तक हम शिक्षित वर्ग अिस प्रश्नके साथ खिलवाड़ करते रहेंगे तव तक मुझे अिस वातका वहुत भय है कि हम जिस स्वतंत्र और स्वस्थ भारतका स्वप्न देखते हैं, अुसका निर्माण नहीं कर पायेंगे। हमें जी-तोड़ प्रयत्न करके अपने वन्धनसे मुक्त होना चाहिये, चाहे वह शिक्षणात्मक हो, आर्थिक हो, सामाजिक हो या राजनीतिक हो। हमारी तीन-चौथाअी लड़ाअी तो वह प्रयत्न होगा जो कि अिसके लिअे किया जायगा।

हरिजनसेवक, ९–७–'३८

४५

भारतकी सांस्कृतिक विरासत

मेरा यह कहना नहीं है कि हम शेष दुनियासे बचकर रहें या अपने आसपास दीवालें खड़ी कर लें। यह तो मेरे विचारोंसे बड़ी दूर भटक जाना है। लेकिन मैं यह जरूर कहता हूं कि पहले हम अपनी संस्कृतिका सम्मान करना सीखें और अुसे आत्मसात् करें। दूसरी संस्कृतियोंके सम्मानकी, अुनकी विशेषताओंको समझने और स्वीकार करनेकी बात अुसके बाद ही आ सकती है, अुसके पहले कभी नहीं। मेरी यह दृढ़ मान्यता है कि हमारी संस्कृतिमें जैसी मूल्यवान निधियां हैं, वैसी किसी दूसरी संस्कृतिमें नहीं हैं। हमने अुसे पहिचाना नहीं है; हमें अुसके अध्ययनका तिरस्कार करना, अुसके गुणोंकी कम कीमत करना सिखाया गया है। अपने आचरणमें अुसका व्यवहार करना तो हमने लगभग छोड़ ही दिया है। आचारके बिना कोरा बौद्धिक ज्ञान अुस निर्जीव देहकी तरह है, जिसे मसाला भरकर सुरक्षित रखा जाता है। वह शायद देखनेमें अच्छा लग सकता है, किन्तु अुसमें प्रेरणा देनेकी शक्ति नहीं होती। मेरा धर्म मुझे आदेश देता है कि मैं अपनी संस्कृतिको सीखूं, ग्रहण करूं और अुसके अनुसार चलूं; अन्यथा अपनी संस्कृतिसे विच्छिन्न होकर हम अेक समाजके रूपमें मानो आत्महत्या कर लेंगे। किन्तु साथ ही वह मुझे दूसरोंकी संस्कृतियोंका अनादर करने या अुन्हें तुच्छ समझनेसे भी रोकता है।

यंग अिंडिया, १–९–'२१

वह अुन विविध संस्कृतियोंके समन्वयकी पोषक है, जो अिस देशमें सुस्थिर हो गयी हैं, जिन्होंने भारतीय जीवनको प्रभावित किया है और जो खुद भी अिस भूमिके वातावरणसे प्रभावित हुआी हैं। जैसा कि स्वाभाविक है, वह समन्वय स्वदेशी ढंगका होगा, अर्थात् अुसमें प्रत्येक संस्कृतिको अपना अुचित स्थान प्राप्त होगा। वह अमरीकी ढंगका नहीं होगा, जिसमें कोअी अेक प्रमुख संस्कृति बाकी सबको पचा डालती है और जिसका

अुद्देश्य सुमेल साधना नहीं बल्कि कृत्रिम और जबरदस्ती लादी जानेवाली अेकता निर्माण करना है।

यंग अिंडिया, १७–११–'२०

हमारे समयकी भारतीय संस्कृति अभी निर्माणकी अवस्थामें है। हम लोगोंमें से कअी अुन सारी संस्कृतियोंका अेक सुन्दर सम्मिश्रण रचनेका प्रयत्न कर रहे हैं, जो आज आपसमें लड़ती दिखायी देती हैं। अैसी कोअी भी संस्कृति, जो सबसे बचकर रहना चाहती हो, जीवित नहीं रह सकती। भारतमें आज शुद्ध आर्य संस्कृति जैसी कोअी चीज नहीं है। आर्य लोग भारतके ही रहनेवाले थे या यहां बाहरसे आये थे और यहांके मूल निवासियोंने अुनका विरोध किया था, अिस सवालमें मुझे ज्यादा दिलचस्पी नहीं है। जिस बातमें मेरी दिलचस्पी है, वह यह है कि मेरे अतिप्राचीन पूर्वज अेक-दूसरेके साथ पूरी आजादीसे घुल-मिल गये थे और हम अुनकी वर्तमान सन्तान अुस मेलका ही परिणाम हैं। अपनी जन्मभूमिका और अिस पृथ्वीमाताका, जो हमारा पोषण करती है, हम कोअी हित कर रहे हैं या अुस पर बोझरूप हैं, यह तो भविष्य ही बतायेगा।

हरिजन, ९–५–'३६

४६
नयी तालीम

अन्य देशोंके बारेमें कुछ भी सही हो, कमसे कम भारतमें तो — जहां अस्सी फीसदी आबादी खेती करनेवाली है और दूसरी दस फीसदी अुद्योगोंमें काम करनेवाली है — शिक्षाको निरी साहित्यिक बना देना तथा लड़कों और लड़कियोंको अुत्तर-जीवनमें हाथके कामके लिअे अयोग्य बना देना गुनाह है। मेरी तो राय है कि चूंकि हमारा अधिकांश समय अपनी रोज़ी कमानेमें लगता है, अिसलिअे हमारे बच्चोंको बचपनसे ही अिस प्रकारके परिश्रमका गौरव सिखाना चाहिये। हमारे बालकोंकी पढ़ाअी अैसी नहीं होनी चाहिये, जिससे वे मेहनतका तिरस्कार करने लगें। कोअी कारण नहीं कि क्यों अेक किसानका बेटा किसी स्कूलमें

जानेके बाद खेतीके मज़दूरके रूपमें आजकलकी तरह निकम्मा बन जाय। यह अफसोसकी बात है कि हमारी पाठशालाओंके लड़के शारीरिक श्रमको तिरस्कारकी दृष्टिसे चाहे न देखते हों, पर नापसन्दगीकी नजरसे तो जरूर देखते हैं।

यंग अिंडिया, १–९–'२१

मेरी रायमें तो अिस देशमें, जहां लाखों आदमी भूखों मरते हैं, बुद्धिपूर्वक किया जानेवाला श्रम ही सच्ची प्राथमिक शिक्षा या प्रौढ़ शिक्षा है।... अक्षर-ज्ञान हाथकी शिक्षाके बाद आना चाहिये, हाथसे काम करनेकी क्षमता — हस्त-कौशल ही तो वह चीज है, जो मनुष्यको पशुसे अलग करती है। लिखना-पढ़ना जाने बिना मनुष्यका सम्पूर्ण विकास नहीं हो सकता, अैसा मानना अेक वहम ही है। अिसमें शक नहीं कि अक्षर-ज्ञानसे जीवनका सौन्दर्य बढ़ जाता है, लेकिन यह बात गलत है कि अुसके बिना मनुष्यका नैतिक, शारीरिक और आर्थिक विकास हो ही नहीं सकता।

हरिजनसेवक, १५–३–'३५

मेरा मत है कि बुद्धिकी सच्ची शिक्षा हाथ, पैर, आंख, कान, नाक आदि शरीरके अंगोंके ठीक अभ्यास और शिक्षणसे ही हो सकती है। दूसरे शब्दोंमें, अिन्द्रियोंके बुद्धिपूर्वक अुपयोगसे बालककी बुद्धिके विकासका अुत्तम और शीघ्रतम मार्ग मिलता है। परन्तु जब तक मस्तिष्क और शरीरका विकास साथ साथ न हो और अुसी प्रमाणमें आत्माकी जाग्रति न होती रहे, तब तक केवल बुद्धिके अेकांगी विकाससे कुछ विशेष लाभ नहीं होगा। आध्यात्मिक शिक्षासे मेरा आशय हृदयकी तालीमसे है। अिसलिअे मस्तिष्कका ठीक और चतुर्मुखी विकास तभी हो सकता है, जब वह बच्चेकी शारीरिक और आध्यात्मिक शक्तियोंकी तालीमोंके साथ साथ होता हो। ये सब बातें अेक और अविभाज्य हैं। अिसलिअे अिस सिद्धान्तके अनुसार यह मान बैठना बिलकुल गलत होगा कि अुनका विकास टुकड़े टुकड़े करके या अेक-दूसरेसे स्वतंत्र रूपमें किया जा सकता है।

हरिजन, ८–५–'३७

शरीर, मन और आत्माकी विविध शक्तियोंमें ठीक ठीक सहकार और सुमेल न होनेके दुष्परिणाम स्पष्ट हैं। वे हमारे चारों ओर विद्यमान हैं; अितना ही है कि वर्तमान विकृत संस्कारोंके कारण वे हमें दिखाअी नहीं देते।

हरिजन, ८–५–'३७

मनुष्य न तो कोरी बुद्धि है, न स्थूल शरीर है और न केवल हृदय या आत्मा ही है। संपूर्ण मनुष्यके निर्माणके लिअे तीनोंके अुचित और अेकरस मेलकी जरूरत होती है और यही शिक्षाकी सच्ची व्यवस्था है।

हरिजन, ८–५–'३७

शिक्षासे मेरा अभिप्राय यह है कि बालककी या प्रौढ़की शरीर, मन तथा आत्माकी अुत्तम क्षमताओंको अुद्घाटित किया जाय और बाहर प्रकाशमें लाया जाय। अक्षर-ज्ञान न तो शिक्षाका अन्तिम लक्ष्य है और न अुसका आरम्भ। वह तो मनुष्यकी शिक्षाके कअी साधनोंमें से केवल अेक साधन है। अक्षर-ज्ञान अपने-आपमें शिक्षा नहीं है। अिसलिअे मैं बच्चेकी शिक्षाका श्रीगणेश अुसे कोअी अुपयोगी दस्तकारी सिखाकर और जिस क्षणसे वह अपनी शिक्षाका आरम्भ करे अुसी क्षणसे अुसे अुत्पादनके योग्य बनाकर करूंगा। मेरा मत है कि अिस प्रकारकी शिक्षा-प्रणालीमें मस्तिष्क और आत्माका अुच्चतम विकास संभव है। अलबत्ता, प्रत्येक दस्तकारी आजकलकी तरह निरे यांत्रिक ढंगसे न सिखाकर वैज्ञानिक तरीके पर सिखानी पड़ेगी, अर्थात् बालकको प्रत्येक क्रियाका क्यों और कैसे बताना होगा।

हरिजन, ३१–७–'३७

शिक्षाकी मेरी योजनामें हाथ अक्षर लिखना सीखनेके पहले औजार चलाना सीखेंगे। आंखें जिस तरह दूसरी चीजोंको तसवीरोंके रूपमें देखती और अुन्हें पहिचानना सीखती हैं, अुसी तरह वे अक्षरों और शब्दोंको तसवीरोंकी तरह देखकर अुन्हें पढ़ना सीखेंगी और कान चीजोंके नाम और वाक्योंका आशय पकड़ना सीखेंगे। गरज यह कि सारी तालीम स्वाभाविक होगी। बालकों पर वह लादी नहीं जायगी, बल्कि वे अुसमें

स्वतः दिलचस्पी लेंगे। और अिसलिअे यह तालीम दुनियाकी दूसरी तमाम शिक्षा-पद्धतियोंसे जल्दी फल देनेवाली और सस्ती होगी।

हरिजन, २८–८–'३७

हाथका काम अिस सारी योजना केन्द्रबिन्दु होगा। . . . हाथकी तालीमका मतलब यह नहीं होगा कि विद्यार्थी पाठशालाके संग्रहालयमें रखने लायक वस्तुयें बनायें या अैसे खिलौने बनायें जिनका कोअी मूल्य नहीं। अुन्हें अैसी वस्तुयें बनाना चाहिये, जो बाजारमें बेची जा सकें। कारखानोंके प्रारम्भिक कालमें जिस तरह बच्चे मारके भयसे काम करते थे, अुस तरह हमारे बच्चे यह काम नहीं करेंगे। वे अुसे अिसलिअे करेंगे कि जिससे अुन्हें आनन्द मिलता है और अुनकी बुद्धिको स्फूर्ति मिलती है।

हरिजन, ११–९–'३७

मैं भारतके लिअे निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षाके सिद्धान्तमें दृढ़तापूर्वक मानता हूं। मैं यह भी मानता हूं कि अिस लक्ष्यको पानेका सिर्फ यही अेक रास्ता है कि हम बच्चोंको कोअी अुपयोगी अुद्योग सिखायें और अुसके द्वारा अुनकी शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक शक्तियोंका विकास सिद्ध करें। अैसा किया जाय तो हमारे गांवोंके लगातार बढ़ रहे नाशकी प्रक्रिया रुकेगी और अैसी न्यायपूर्ण समाज-व्यवस्थाकी नींव पड़ेगी, जिसमें अमीरों और गरीबोंके अस्वाभाविक विभेदकी गुंजाअिश नहीं होगी और हरअेकको जीवन-मजदूरी और स्वतंत्रताके अधिकारोंका आश्वासन दिया जा सकेगा।

हरिजन, ९–१०–'३७

ओटाअी और कताअी आदि गांवोंमें चलने योग्य हाथ-अुद्योगोंके द्वारा प्राथमिक शिक्षणकी मेरी योजनाकी कल्पना चुपचाप चलनेवाली अैसी सामाजिक क्रान्तिके रूपमें की गयी है, जिसके अत्यन्त दूरगामी परिणाम होंगे। वह शहरों और गांवोंमें स्वस्थ और नैतिक सम्बन्धोंकी स्थापनाके लिअे सुदृढ़ आधार पेश करेगी और अिस तरह मौजूदा सामाजिक

अरक्षितता और वर्गोंके पारस्परिक सम्बन्धोंकी मौजूदा कटुताकी बुराअियां बड़ी हद तक दूर होंगी।

हरिजन, ९–१०–'३७

४७

बुनियादी शिक्षा

अिस तालीमकी मंशा यह है कि गांवके बच्चोंको सुधार-संवार कर अुन्हें गांवका आदर्श बाशिन्दा बनाया जाय। अिसकी योजना खासकर अुन्हींको ध्यानमें रखकर तैयार की गअी है। अिस योजनाकी असल प्रेरणा भी गांवोंसे ही मिली है। जो कांग्रेसजन स्वराज्यकी अिमारतको बिलकुल अुसकी नींव या बुनियादसे चुनना चाहते हैं, वे देशके बच्चोंकी अुपेक्षा कर ही नहीं सकते। परदेशी हुकूमत चलानेवालोंने, अनजाने ही क्यों न हो, शिक्षाके क्षेत्रमें अपने कामकी शुरुआत बिना चूके बिलकुल छोटे बच्चोंसे की है। हमारे यहां जिसे प्राथमिक शिक्षा कहा जाता है, वह तो अेक मजाक है; अुसमें गांवोंमें बसनेवाले हिन्दुस्तानकी जरूरतों और मांगोंका जरा भी विचार नहीं किया गया है; और वैसे देखा जाय तो अुसमें शहरोंका भी कोअी विचार नहीं हुआ है। बुनियादी तालीम हिन्दुस्तानके तमाम बच्चोंको, फिर वे गांवोंके रहनेवाले हों या शहरोंके, हिन्दुस्तानके सभी श्रेष्ठ और स्थायी तत्त्वोंके साथ जोड़ देती है। यह तालीम बालकके मन और शरीर दोनोंका विकास करती है; बालकको अपने वतनके साथ जोड़ रखती है; अुसे अपने और देशके भविष्यका गौरवपूर्ण चित्र दिखाती है; और अुस चित्रमें देखे हुअे भविष्यके हिन्दुस्तानका निर्माण करनेमें बालक या बालिका अपने स्कूल जानेके दिनसे ही हाथ बंटाने लगें, अिसका अिन्तजाम करती है।

रचनात्मक कार्यक्रम, पृ० २८–२९

बुनियादी शिक्षाका अुद्देश्य दस्तकारीके माध्यमसे बालकोंका शारीरिक, बौद्धिक और नैतिक विकास करना है। लेकिन मैं मानता हूं कि

कोअी भी पद्धति, जो शैक्षणिक दृष्टिसे सही हो और जो अच्छी तरह चलायी जाय, आर्थिक दृष्टिसे भी अुपयुक्त सिद्ध होगी। अुदाहरणके लिअे, हम अपने बच्चोंको मिट्टीके खिलौने बनाना भी सिखा सकते हैं, जो बादमें तोड़कर फेंक दिये जाते हैं। अिससे भी अुनकी बुद्धिका विकास तो होगा। लेकिन अिसमें अिस महत्त्वपूर्ण नैतिक सिद्धान्तकी अुपेक्षा होती है कि मनुष्यके श्रम और साधन-सामग्रीका अपव्यय कदापि न होना चाहिये। अुनका अनुत्पादक अुपयोग कभी नहीं करना चाहिये। अपने जीवनके प्रत्येक क्षणका सदुपयोग ही होना चाहिये, अिस सिद्धान्तके पालनका आग्रह नागरिकताके गुणका विकास करनेवाली सर्वोत्तम शिक्षा है, साथ ही अिससे बुनियादी तालीम स्वावलम्बी भी बनती है।

हरिजन, ६–४–'४०

यहां हम बुनियादी तालीमके खास खास सिद्धान्तों पर विचार करें:

१. पूरी शिक्षा स्वावलम्बी होनी चाहिये। यानी, आखिरमें पूंजीको छोड़कर अपना सारा खर्च अुसे खुद देना चाहिये।

२. अिसमें आखिरी दरजे तक हाथका पूरा-पूरा अुपयोग किया जाय। यानी, विद्यार्थी अपने हाथोंसे कोअी न कोअी अुद्योग-धंधा आखिरी दरजे तक करें।

३. सारी तालीम विद्यार्थियोंकी प्रान्तीय भाषा द्वारा दी जानी चाहिये।

४. अिसमें साम्प्रदायिक धार्मिक शिक्षाके लिअे कोअी जगह नहीं होगी। लेकिन बुनियादी नैतिक तालीमके लिअे क़ाफी गुंजाअिश होगी।

५. यह तालीम, फिर अुसे बच्चे लें या बड़े, औरतें लें या मर्द, विद्यार्थियोंके घरोंमें पहुंचेगी।

६. चूंकि अिस तालीमको पानेवाले लाखों-करोड़ों विद्यार्थी अपने-आपको सारे हिन्दुस्तानके नागरिक समझेंगे, अिसलिअे अुन्हें अेक आंतर-प्रांतीय भाषा सीखनी होगी। सारे देशकी यह अेक भाषा नागरी या अुर्दूमें लिखी जानेवाली हिन्दुस्तानी ही हो सकती है। अिसलिअे विद्यार्थियोंको दोनों लिपियां अच्छी तरह सीखनी होंगी।

हरिजन, २–११–'४७

हमारे जैसे गरीब देशमें हाथकी तालीम जारी करनेसे दो हेतु सिद्ध होंगे। अुससे हमारे बालकोंकी शिक्षाका खर्च निकल आयेगा और वे अैसा धंधा सीख लेंगे, जिसका अगर वे चाहें तो अुत्तर-जीवनमें अपनी जीविकाके लिअे सहारा ले सकते हैं। अिस पद्धतिसे हमारे बालक आत्म-निर्भर अवश्य हो जायेंगे। राष्ट्रको कोअी चीज अितना कमजोर नहीं बनायेगी, जितना यह बात कि हम श्रमका तिरस्कार करना सीखें।

यंग अिंडिया, १–९–'२१

४८

अुच्च शिक्षा

मैं कॉलेजकी शिक्षामें कायापलट करके अुसे राष्ट्रीय आवश्यकताओंके अनुकूल बनाअूंगा। यंत्रविद्याके तथा अन्य अिंजीनियरोंके लिअे डिग्रियां होंगी। वे भिन्न भिन्न अुद्योगोंके साथ जोड़ दिये जायंगे और अुन अुद्योगोंको जिन स्नातकोंकी जरूरत होगी अुनके प्रशिक्षणका खर्च वे अुद्योग ही देंगे। अिस प्रकार टाटावालोंसे आशा की जायगी कि वे राज्यकी देखरेखमें अिंजीनियरोंको तालीम देनेके लिअे अेक कॉलेज चलायें। अिसी तरह मिलोंके संघ अपनी जरूरतोंके स्नातकोंको तालीम देनेके लिअे अपना कॉलेज चलायेंगे।

अिसी तरह और अुद्योगोंके नाम लिये जा सकते हैं। वाणिज्य-व्यवसायवालोंका अपना कॉलेज होगा। अब रह जाते हैं कला, औषधि और खेती। कअी खानगी कला-कॉलेज आज भी स्वावलम्बी हैं। अिसलिअे राज्य अैसे कॉलेज चलाना बन्द कर देगा। डॉक्टरीके कॉलेज प्रामाणिक अस्पतालोंके साथ जोड़ दिये जायंगे। चूंकि ये धनवानोंमें लोकप्रिय हैं, अिसलिअे अुनसे आशा रखी जाती है कि वे स्वेच्छासे दान देकर डॉक्टरीके कॉलेजोंको चलायेंगे। और कृषि-कॉलेज तो अपने नामको सार्थक करनेके लिअे स्वावलम्बी होने ही चाहिये। मुझे कुछ कृषि-स्नातकोंका दुःखद अनुभव है। अुनका ज्ञान अूपरी होता है। अुनमें व्यावहारिक अनुभवकी कमी होती है। परन्तु यदि वे देशकी जरूरतोंके अनुसार चलनेवाले और

स्वावलम्बी खेतों पर तालीम लें, तो अुन्हें अपनी डिग्रियां लेनेके बाद और अपने मालिकोंके खर्च पर तजुरबा हासिल नहीं करना पड़ेगा।

हरिजन, ३१–७–'३७

राज्यके विश्वविद्यालय खालिस परीक्षा लेनेवाली संस्थायें रहें और वे अपना खर्च परीक्षा-शुल्कसे ही निकाल लिया करें।

विश्वविद्यालय शिक्षाके सारे क्षेत्रकी देखरेख रखेंगे और शिक्षाके विभिन्न विभागोंके पाठ्यक्रम तैयार करके अुन्हें मंजूरी देंगे। कोअी खानगी स्कूल अपने-अपने विश्वविद्यालयोंसे पूर्व-स्वीकृति लिये बिना नहीं चलाये जाने चाहिये। विश्वविद्यालयके स्वीकृति-पत्र प्रमाणित योग्यतावाले और प्रामाणिक व्यक्तियोंकी किसी भी संस्थाको अुदारतापूर्वक दिये जाने चाहिये। और हमेशा यह समझकर चला जायगा कि विश्वविद्यालयोंका राज्य पर कोअी खर्च नहीं पड़ेगा। अुसे सिर्फ अेक केन्द्रीय शिक्षा-विभागका खर्च ही अुठाना होगा।

हरिजन, २–१०–'३७

नये विश्वविद्यालय

प्रान्तोंमें नये विश्वविद्यालय कायम करनेकी लोगों पर सनक-सी सवार हो गअी मालूम होती है। गुजरात गुजरातीके लिअे, महाराष्ट्र मराठीके लिअे, कर्नाटक कन्नड़के लिअे, अुड़ीसा अुड़ियाके लिअे और आसाम आसामीके लिअे विश्वविद्यालय चाहता है। मैं अवश्य मानता हूं कि अगर अिन संपन्न प्रांतीय भाषाओं और अुन्हें बोलनेवाले लोगोंकी पूरी अुन्नति करनी हो तो ये विश्वविद्यालय होने चाहिये।

साथ ही मुझे डर है कि अिस लक्ष्यको पूरा करनेमें हम अनुचित जल्दबाजी कर रहे हैं। अिसके लिअे पहला कदम प्रान्तोंका भाषावार राजनीतिक बंटवारा होना चाहिये। अुनका शासन अलग हो जायगा तो स्वाभाविक तौर पर जहां विश्वविद्यालय नहीं हैं वहां वे कायम हो जायंगे।

नये विश्वविद्यालयोंके लिअे अुचित पृष्ठभूमि होनी चाहिये। विश्व-विद्यालय हों अुसके पहले अुनका पोषण करनेवाले स्कूल और कॉलेज होने

चाहिये, जहां अपनी अपनी प्रान्तीय भाषाओंके माध्यमसे शिक्षा दी जाय। तभी विश्वविद्यालयोंका आवश्यक वातावरण खड़ा हुआ माना जा सकता है। विश्वविद्यालय चोटी पर होता है। शानदार चोटी तभी कायम रह सकती है जब बुनियाद अच्छी हो।

हम राजनीतिक दृष्टिसे तो स्वतंत्र हो गये, परन्तु पश्चिमके सूक्ष्म प्रभावसे मुक्त नहीं हुअे हैं। मुझे अुस विचारधाराके राजनीतिज्ञोंसे कुछ नहीं कहना है, जो यह मानते हैं कि ज्ञान पश्चिमसे ही आ सकता है। मैं अिस विश्वाससे भी सहमत नहीं हूं कि पश्चिमसे कोअी अच्छी बात नहीं मिल सकती। मगर मुझे यह डर जरूर है कि अभी तक अिस मामलेमें हम किसी निर्णय पर नहीं पहुंच सके हैं। आशा है कोअी यह दावा नहीं करेगा कि चूंकि हमें विदेशी प्रभुतासे राजनीतिक मुक्ति मिल गयी मालूम होती है, सिर्फ अिसलिअे हम विदेशी भाषा और विदेशी विचारोंके प्रभावसे भी मुक्त हो गये हैं। क्या यह बुद्धिमानी नहीं है, क्या देशके प्रति हमारे कर्तव्यकी यह मांग नहीं है कि नये विश्वविद्यालय खड़े करनेसे पहले हम जरा सुस्ता कर अपनी नवप्राप्त स्वतंत्रताके प्राणवायुसे अपने फेफड़ोंको भर लें? विश्वविद्यालयको बहुतसी शानदार अिमारतों और सोने-चांदीके खजानेकी कभी आवश्यकता नहीं होती। अुसे सबसे ज्यादा जरूरत लोकमत द्वारा समझ कर दिये गये सहारेकी रहती है। अुसके पास शिक्षकोंका अेक बड़ा भण्डार होना चाहिये। अुसके संस्थापक दूरदर्शी होने चाहिये।

मेरी रायमें विश्वविद्यालयोंकी स्थापनाके लिअे रुपया जुटाना लोकतांत्रिक राज्यका काम नहीं है। लोगोंको अुनकी जरूरत होगी तो वे आवश्यक पैसा खुद जुटा लेंगे। अिस प्रकार स्थापित विश्वविद्यालय देशके भूषण होंगे। जहां शासन विदेशियोंके हाथोंमें होता है, वहां लोगोंको जो कुछ मिलता है वह सब अूपरसे आता है और अिस प्रकार वे अधिकाधिक पराधीन हो जाते हैं। जहां अुसका आधार जनताकी अिच्छा पर होता है और अिसलिअे व्यापक होता है, वहां हर चीज नीचेसे अुठती है और अिस-लिअे टिकती है। वह दीखनेमें भी अच्छी होती है और लोगोंको शक्ति देती है। अैसी लोकतांत्रिक योजनामें विद्या-प्रचारमें लगाया हुआ रुपया लोगोंको दस गुना लाभ पहुंचाता है, जैसे अच्छी जमीनमें बोया हुआ बीज बढ़िया

फसल देता है। विदेशी प्रभुताके अधीन कायम किये गये विश्वविद्यालय अुलटी दिशामें चले हैं। शायद दूसरा कोअी परिणाम हो भी नहीं सकता था। अिसलिअे जब तक भारतवर्ष अपनी नवप्राप्त स्वतंत्रताको पचा न ले, विश्वविद्यालय कायम करनेके बारेमें हर दृष्टिसे सावधान रहना चाहिये।

हरिजन, २–११–'४७

प्रौढ़शिक्षा

अगर बड़ी अुमरके स्त्री-पुरुषोंको तालीम देने या पढ़ानेका काम मेरे जिम्मे हो, तो मैं अपने विद्यार्थियोंको अपने देशके विस्तार और अुसकी महत्ताका बोध कराकर अुनकी पढ़ाअी शुरू करूं। हमारे देहातियोंके खयालमें अुनका गांव ही अुनका समूचा देश होता है। जब वे किसी दूसरे गांवको जाते हैं तो अिस तरह बात करते हैं, मानो अुनका अपना गांव ही अुनका समूचा देश या वतन हो। 'हिन्दुस्तान' तो अुनके खयालसे भूगोलकी किताबोंमें बरता जानेवाला अेक शब्दमात्र है। हमारे गांवोंमें कितना घोर अज्ञान घुसा हुआ है, अिसका हमें अंदाज भी नहीं है। हमारे देहाती भाअी और बहन नहीं जानते कि अिस देशमें जो विदेशी हुकूमत चल रही है, अुसका देश पर कितना बुरा असर हुआ है। . . . वे नहीं जानते कि अिस हुकूमतके पंजेसे, अिसकी बलासे, कैसे छूटा जाय। फिर, अुन्हें अिस बातका भी तो खयाल नहीं है कि विदेशियोंकी जो हुकूमत यहां कायम है, अुसका अेक कारण अुनकी अपनी कमजोरियां और खामियां भी हैं; और दूसरे, वे यह भी नहीं जानते कि अिस परदेशी हुकूमतकी बलाको दूर करनेकी ताकत खुद अुनमें है। अिसलिअे बड़ी अुमरके अपने देशवासियोंकी शिक्षाका सबसे पहला अर्थ मैं यह करता हूं कि अुन्हें जबानी तौर पर यानी सीधी बातचीतके जरिये सच्ची राजनीतिक तालीम दी जाय। . . . अिस जबानी तालीमके साथ ही साथ लिखने-पढ़नेकी तालीम भी चलेगी। अिसके लिअे खास लियाकतकी जरूरत है। अिस सिलसिलेमें पढ़ाअीके वक्तको भरसक कम करनेके खयालसे कअी तरीके आजमाये जा रहे हैं।

रचनात्मक कार्यक्रम, पृ० ३०–३१

जन-साधारणमें फैली हुअी व्यापक निरक्षरता भारतका कलंक है। वह मिटना ही चाहिये। बेशक, साक्षरताकी मुहिमका आरम्भ और अन्त वर्णमालाके ज्ञानके साथ ही नहीं हो जाना चाहिये। वह अुपयोगी ज्ञानके प्रचारके साथ-साथ चलनी चाहिये। लिखने-पढ़ने और अंकगणितका शुष्क ज्ञान देहातियोंके जीवनका स्थायी अंग न आज है और न कभी हो सकता है। अुन्हें अैसा ज्ञान देना चाहिये जिसका अुन्हें रोज अुपयोग करना पड़े। वह अुन पर थोपा नहीं जाना चाहिये। अुसकी अुन्हें भूख होनी चाहिये। आजकल अुन्हें जो कुछ मिलता है वह अैसा है, जिसकी न तो अुन्हें आवश्यकता है और न कदर है। ग्रामवासियोंको गांवका गणित, गांवका भूगोल, गांवका अितिहास और साहित्यका वह ज्ञान सिखाअिये जिसे अुन्हें रोज काममें लेना पड़े, अर्थात् चिट्ठी-पत्री लिखना और पढ़ना बताअिये। वे अिस ज्ञानको जुटाकर रखेंगे और आगेकी मंजिलोंकी तरफ बढ़ेंगे। जिन पुस्तकोंसे अुन्हें दैनिक अुपयोगकी कोअी सामग्री नहीं मिलती, वे अुनके लिअे किसी कामकी नहीं।

हरिजन, २२–६–'४०

धार्मिक शिक्षा

. . . अिसमें कोअी शक नहीं कि सरकारी स्कूल-कॉलेजोंसे निकले हुअे अधिकतर लड़के धार्मिक शिक्षणसे कोरे ही होते हैं। . . . मैं जानता हूं कि अिस विचारवाले लोग भी हैं कि सार्वजनिक स्कूलोंमें सिर्फ अपने-अपने विषयोंकी ही शिक्षा देना चाहिये। मैं यह भी जानता हूं कि हिन्दुस्तान जैसे देशमें, जहां पर संसारके अधिकतर धर्मोंके अनुयायी मिलते हैं और जहां अेक ही धर्मके अितने भेद और अुपभेद हैं, धार्मिक शिक्षणका प्रबन्ध करना कठिन होगा। लेकिन अगर हिन्दुस्तानको आध्यात्मिकताका दिवाला नहीं निकालना है, तो अुसे धार्मिक शिक्षाको भी विषयोंके शिक्षणके बराबर ही महत्त्व देना पड़ेगा। यह सच है कि धार्मिक पुस्तकोंके ज्ञानकी तुलना धर्मसे नहीं की जा सकती। मगर जब हमें धर्म नहीं मिल सकता तो हमें अपने लड़कों और लड़कियोंको अुससे दूसरे नम्बरकी वस्तु देनेमें ही संतोष मानना पड़ेगा। और फिर स्कूलोंमें अैसी शिक्षा दी जाय या नहीं,

मगर सयाने लड़कोंको तो जैसे और विषयोंमें वैसे धार्मिक विषयमें भी स्वावलम्बनकी आदत डालनी ही पड़ेगी। जैसे आज अुनकी वाद-विवाद, या चरखा-समितियां हैं, वैसे ही वे धार्मिक वर्ग भी खोलें।

हिन्दी नवजीवन, २५–८–'२७

मैं नहीं मानता कि सरकार मजहबी तालीमसे सम्बन्ध रख सकती है या अुस तालीमको निभा सकती है। मेरा विश्वास है कि मजहबी तालीम पूरी तरहसे सिर्फ मजहबी अंजुमनोंका ही विषय होनी चाहिये। धर्म और नीतिको मिलाना नहीं चाहिये। मेरे विश्वासके मुताबिक बुनियादी नीति सब धर्मोंमें अेक ही है। बुनियादी नीतिकी तालीम देना बेशक सरकारका काम है। धर्मसे मेरा मतलब बुनियादी नीति नहीं, बल्कि वह है जिसका सिक्का लगाकर अलग-अलग जमातें बनाअी जाती हैं। हमने सरकारी मदद पानेवाले मजहब और सरकारी मजहबके बहुत नतीजे सहे हैं। जो समाज या समूह अपने धर्मकी हिफाजतके लिअे किसी हद तक या पूरी तौर पर सरकारी मदद पर निर्भर रहता है, वह धर्म जैसी कोअी चीज रखनेका अधिकारी नहीं है, या यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि, अुसका कोअी धर्म नहीं होता।

हरिजनसेवक, २३–३–'४७

धार्मिक शिक्षाके पाठ्यक्रममें अपने सिवा दूसरे धर्मोंके सिद्धान्तोंका अध्ययन भी शामिल होना चाहिये। अिसके लिअे विद्यार्थियोंको अैसी तालीम दी जानी चाहिये जिससे वे संसारके विभिन्न महान धर्मोंके सिद्धान्तोंको आदर और अुदारतापूर्ण सहनशीलताकी भावना रखकर समझने और अुनकी कदर करनेकी आदत डालें। यह काम ठीक ढंगसे किया जाय तो अिससे अुनकी आध्यात्मिक निष्ठा दृढ़ होगी और स्वयं अपने धर्मकी अधिक अच्छी समझ प्राप्त करनेमें मदद मिलेगी। परन्तु अेक नियम अैसा है, जिसे सब महान धर्मोंका अध्ययन करते समय हमेशा ध्यानमें रखना चाहिये; और वह यह है कि अलग अलग धर्मोंका अध्ययन अुनके माने हुअे भक्तोंकी रचनाओंके द्वारा ही करना चाहिये।

यंग अिंडिया, ६–१२–'२८

पाठ्यपुस्तकें

अिसमें कोअी सन्देह नहीं है कि आम स्कूलोंमें जो पुस्तकें खास तौर पर बच्चोंके लिअे अिस्तेमाल की जाती हैं, वे जब हानिकारक नहीं होतीं हैं तो अधिकांशमें निकम्मी अवश्य होती हैं। अिससे अिनकार नहीं किया जा सकता कि अुनमें से बहुतसी होशियारीके साथ लिखी जाती हैं। जिन लोगों और जिन परिस्थितियोंके लिअे वे लिखी जाती हैं, अुनके लिअे वे सबसे अच्छी भी हो सकती हैं। परन्तु वे भारतीय लड़कों और लड़कियोंके लिअे और भारतीय परिस्थितियोंके लिअे नहीं लिखी जातीं। जब वे अिस तरह लिखी जाती हैं तो वे आम तौर पर अधकचरी नकल होती हैं और अुनसे विद्यार्थियोंकी आवश्यकतायें पूरी नहीं होतीं।

अिसलिअे मैं अिस नतीजे पर पहुंचा हूं कि पुस्तकोंकी आवश्यकता विद्यार्थियोंकी अपेक्षा शिक्षकोंके लिअे अधिक है। और प्रत्येक शिक्षकको, यदि अपने विद्यार्थियोंके प्रति वह पूरा न्याय करना चाहता है, अुपलब्ध सामग्रीसे अपना दैनिक पाठ खुद तैयार करना होगा। अिसे भी अुसे अपनी कक्षाकी विशेष आवश्यकताओंके अनुकूल बनाना होगा। सच्ची शिक्षाका काम शिक्षा पानेवाले लड़कों और लड़कियोंके अुत्तम गुणोंको बाहर लाना है। यह काम विद्यार्थियोंके दिमागमें अनाप-शनाप और अनचाही जानकारी ठूंस देनेसे कभी नहीं हो सकता। अिस तरहकी जानकारी अेक जड़ बोझ बन जाती है, जो अुनकी सारी मौलिकताको कुचल डालती है और अुन्हें निरी मशीनें बना देती है।

हरिजन, १-१२-'३३

अध्यापक

अध्यापक कैसे हों अिस सम्बन्धमें मैं अिस पुराने विचारका माननेवाला हूं कि अुन्हें अध्यापन, अध्यापन-कार्यके लिअे अपने अनिवार्य प्रेमके कारण ही करना चाहिये और अिस क़ार्यसे अपने जीवन-निर्वाहके लिअे जितना आवश्यक हो अुतना ही लेकर संतुष्ट रहना चाहिये। रोमन कैथलिकोंमें यह विचार अभी तक बचा रहा है और वे दुनियाकी कुछ सर्वोत्तम संस्थायें चला रहे हैं। प्राचीन भारतीय ऋषियोंने तो और भी

अूंचा आदर्श स्वीकार किया था। वे विद्यार्थियोंको अपने परिवारमें ही शामिल कर लेते थे। लेकिन जो शिक्षा वे अुन दिनों दिया करते थे वह सामान्य जनताके लिअे नहीं थी। अुन्होंने तो मनुष्य-जातिके सच्चे शिक्षकोंकी अेक पूरी जातिका ही निर्माण कर दिया। सामान्य जनताको अुसकी तालीम घरोंमें और अपने परम्परागत अुद्योग-धंधोंमें मिलती थी। अुन दिनोंके लिअे वह काफी अच्छी व्यवस्था थी। अब परिस्थितियां बदल गयी हैं। साहित्यिक तालीमके लिअे आम मांग है और यह मांग जोरदार भी है। विशिष्ट वर्गोंकी शिक्षा पर जैसा ध्यान दिया जाता था, सामान्य लोग भी अब अपनी शिक्षा पर वैसा ही ध्यान चाहते हैं। यह बात कहां तक सम्भव है और मनुष्य-जातिके लिअे कहां तक कल्याणकारी है, अिस प्रश्नकी चर्चा यहां नहीं हो सकती। लोगोंमें ज्ञानकी अिच्छा पैदा हो और वे अुसकी मांग करें, अिसमें कोअी बुराअी नहीं है। अगर अिस अिच्छाको अुचित दिशामें मोड़ा गया तो अुससे लाभ ही होगा। अिसलिअे अब हमें जो अनिवार्य है अुसे टालनेके अुपाय ढूंढ़ना छोड़कर अिस स्थितिका अच्छेसे अच्छा अुपयोग करना चाहिये। अिस कामके लिअे हजारों शिक्षकोंकी आवश्यकता होगी और वे महज कहनेसे नहीं मिल जायेंगे। और न वे अपना जीवन-निर्वाह भीख मांग कर करेंगे। हमें अुन्हें अेक निश्चित वेतन देनेकी पूरी व्यवस्था करनी होगी। हमें शिक्षकोंकी मानो अेक पूरी सेना ही लगेगी। अुनके कार्यके महत्त्व और मूल्यके अनुसार अुन्हें पैसा दिया जाय यह तो अशक्य है। राष्ट्र अपनी आर्थिक क्षमताके अनुसार ही अुन्हें यथाशक्ति देगा। अलबत्ता, यह आशा रखी जा सकती है कि ज्यों-ज्यों लोग दूसरे धंधोंके मुकाबलेमें अिस कार्यके महत्त्वको समझेंगे, त्यों-त्यों वे अुन्हें ज्यादा पैसा देनेको भी तैयार होंगे। लेकिन सम्भव है अुनकी आयमें यह अपेक्षित वृद्धि बहुत धीरे-धीरे हो। अिसलिअे अैसे अनेक पुरुषों और स्त्रियोंको आगे आना चाहिये, जो आर्थिक लाभकी परवाह न करके शुद्ध देशसेवाके भावसे अध्यापनका धंधा अपनायें। यदि अैसा हो तो राष्ट्र शिक्षकके धंधेको छोटा नहीं समझेगा, बल्कि अिन त्यागी स्त्रियों और पुरुषोंको अपना प्रेम और आदर प्रदान करेगा। और अिस तरह विचार करने पर हम अिस नतीजे पर

पहुंचते हैं कि जिस तरह स्वराज्य हमें मुख्यतः अपने ही प्रयत्नोंसे मिलेगा, अुसी तरह शिक्षकोंके दर्जेकी वृद्धि भी मुख्यतः अुनके ही प्रयत्नोंसे संभव होगी। अुन्हें सफलता तक पहुंचनेके लिअे मार्गकी कठिनाअियोंसे वीरतापूर्वक जूझना चाहिये और धीरज रखकर आगे बढ़ते जाना चाहिये।

यंग अिंडिया, ६–८–'२५

स्वावलम्बी शिक्षा

यह सुझाव अकसर दिया गया है . . . कि यदि शिक्षा अनिवार्य करनी हो या शिक्षाप्राप्तिकी अिच्छा रखनेवाले सब लड़के-लड़कियोंके लिअे अुसे सुलभ बनाना हो, तो हमारे स्कूल और कॉलेज पूरे नहीं तो करीब-करीब स्वावलम्बी हो जाने चाहिये। दान, राजकीय सहायता अथवा विद्यार्थियोंसे ली जानेवाली फीसके द्वारा भी अुन्हें स्वावलम्बी बनाया जा सकता है, लेकिन यहां वैसा स्वावलम्बन अिष्ट नहीं है। विद्यार्थियोंको खुद कुछ अैसा काम करते रहना चाहिये, जिससे आर्थिक प्राप्ति हो और अिस तरह स्कूल तथा कॉलेज स्वावलम्बी बनें। औद्योगिक तालीमको अनिवार्य बनाकर ही अैसा किया जा सकता है। विद्यार्थियोंको साहित्यिक तालीमके साथ-साथ औद्योगिक तालीम भी मिलनी चाहिये, अिस आवश्यकताके सिवा — और आजकल अिस बातका महत्त्व अधिकाधिक स्वीकार किया जा रहा है — हमारे देशमें तो औद्योगिक तालीमकी आवश्यकता शिक्षाको स्वावलंबी बनानेके लिअे भी है। लेकिन यह तभी हो सकता है जब हमारे विद्यार्थी श्रमका गौरव अनुभव करना सीखें और हाथ-अुद्योगके अज्ञानको अप्रतिष्ठाका चिह्न माना जाने लगे। अमेरिकामें, जो कि दुनियाका सबसे धनी देश है और अिसलिअे जहां शिक्षाको स्वावलम्बी बनानेकी आवश्यकता कम-से-कम है, विद्यार्थी प्रायः अपनी पढ़ाअीका पूरा अथवा आंशिक खर्च खुद कोअी अुद्योग करके निकालते हैं। . . . अगर अमेरिका अपने स्कूल और कॉलेज अिस तरह चलाता है कि विद्यार्थी अपनी पढ़ाअीका खर्च खुद निकाल लिया करें, तो हमारे स्कूलों और कॉलेजोंमें तो अिस बातकी आवश्यकता और अधिक मानी जानी चाहिये। हम गरीब विद्यार्थियोंको फीसकी माफी आदिकी सुविधा दें, अुससे क्या यह ज्यादा अच्छा नहीं होगा कि हम अुनके लिअे अैसा कोअी

काम दें जिसे करके वे अपना खर्च खुद निकाल लें? भारतीय युवकोंके मनमें यह वहम भरकर कि अपनी जीविका अथवा पढ़ाअीका खर्च कमानेके लिअे हाथ-पावोंकी मेहनत करना भद्रोचित नहीं है हम अुनका अपार अहित करते हैं। यह अहित नैतिक भी है और भौतिक भी है; तथा भौतिककी अपेक्षा नैतिक ज्यादा है। फीस आदिकी माफी धर्मबुद्धि रखनेवाले विद्यार्थीके मन पर आजीवन बोझकी तरह पड़ी रहती है, और अैसा होना भी चाहिये। अपने अुत्तर-जीवनमें कोअी अिस बातका स्मरण कराना पसन्द नहीं करता कि अुसे अपनी शिक्षाके लिअे दानका आधार लेना पड़ा था। लेकिन यदि अुसने अपनी शिक्षाके लिअे परिश्रमपूर्वक अुद्योग किया हो और अिस तरह अपनी पढ़ाअीका खर्च निकालनेके साथ-साथ अपनी बुद्धि, शरीर और आत्माका विकास भी सिद्ध किया हो, तो अैसा कौन है जो अपने अुन दिनोंको गर्वसे याद न करेगा?

यंग अिंडिया, २–८–'२८

४९

शिक्षाका आश्रमी आदर्श

शिक्षाके बारेमें मेरी अपनी कुछ मान्यतायें हैं। अिन्हें मेरे सहकारियोंने पूरा-पूरा स्वीकार तो नहीं किया है, फिर भी यहां देता हूं:

१. लड़कों और लड़कियोंको अेक साथ शिक्षा देनी चाहिये। यह बाल्यावस्था आठ वर्ष तक मानी जाय।

२. अुनका समय मुख्यतः शारीरिक काममें बीतना चाहिये और यह काम भी शिक्षककी देखरेखमें होना चाहिये। शारीरिक कामको शिक्षाका अंग माना जाय।

३. हर लड़के और लड़कीकी रुचिको पहचानकर अुसे काम सौंपना चाहिये।

४. हरअेक काम लेते समय अुसके कारणकी जानकारी करानी चाहिये।

५. लड़का या लड़की समझने लगे, तभीसे अुसे साधारण ज्ञान देना चाहिये। अुसका यह ज्ञान अक्षर-ज्ञानसे पहले शुरू होना चाहिये।

६. अक्षर-ज्ञानको सुन्दर लेखन-कलाका अंग समझकर पहले बच्चेको भूमितिकी आकृतियां खींचना सिखाया जाय; और अुसकी अंगुलियों पर अुसका काबू हो जाय, तब अुसे वर्णमाला लिखना सिखाया जाय। यानी अुसे शुरूसे ही शुद्ध अक्षर लिखना सिखाया जाय।

७. लिखनेसे पहले बच्चा पढ़ना सीखे। यानी अक्षरोंको चित्र समझकर अुन्हें पहचानना सीखे और फिर चित्र खींचे।

८. अिस तरहसे जो बच्चा शिक्षकके मुंहसे ज्ञान पायेगा, वह आठ वर्षके भीतर अपनी शक्तिके अनुसार काफी ज्ञान पा लेगा।

९. बच्चोंको जबरन् कुछ न सिखाया जाय।

१०. वे जो सीखें अुसमें अुन्हें रस आना ही चाहिये।

११. बच्चोंको शिक्षा खेल जैसी लगनी चाहिये। खेल-कूद भी शिक्षाका अंग है।

१२. बच्चोंकी सारी शिक्षा मातृभाषा द्वारा होनी चाहिये।

१३. बच्चोंको हिन्दी-अुर्दूका ज्ञान राष्ट्रभाषाके तौर पर दिया जाय। अुसका आरम्भ अक्षर-ज्ञानसे पहले होना चाहिये।

१४. धार्मिक शिक्षा जरूरी मानी जाय। वह पुस्तक द्वारा नहीं बल्कि शिक्षकके आचरण और अुसके मुंहसे मिलनी चाहिये।

१५. नौसे सोलह वर्षका दूसरा काल है।

१६. दूसरे कालमें भी अन्त तक लड़के-लड़कियोंकी शिक्षा साथ-साथ हो तो अच्छा है।

१७. दूसरे कालमें हिन्दू बालकको संस्कृतका और मुसलमान बालकको अरबीका ज्ञान मिलना चाहिये।

१८. अिस कालमें भी शारीरिक काम तो चालू ही रहेगा। पढ़ाअी-लिखाअीका समय जरूरतके अनुसार बढ़ाया जाना चाहिये।

१९. अिस कालमें माता-पिताका धंधा यदि निश्चित हुआ जान पड़े, तो बच्चेको अुसी धंधेका ज्ञान मिलना चाहिये; और अुसे अिस तरह तैयार किया जाय कि वह अपने बाप-दादाके धंधेसे जीविका चलाना पसन्द करे। यह नियम लड़की पर लागू नहीं होता।

२०. सोलह वर्ष तक लड़के-लड़कियोंको दुनियाके अितिहास और भूगोलका तथा वनस्पति-शास्त्र, खगोल-विद्या, गणित, भूमिति और बीज-गणितका साधारण ज्ञान हो जाना चाहिये।

२१. सोलह वर्षके लड़के-लड़कीको सीना-पिरोना और रसोअी बनाना आ जाना चाहिये।

२२. सोलहसे पचीस वर्षके समयको मैं तीसरा काल मानता हूं। अिस कालमें प्रत्येक युवक और युवतीको अुसकी अिच्छा और स्थितिके अनुसार शिक्षा मिले।

२३. नौ वर्षके बाद आरम्भ होनेवाली शिक्षा स्वावलम्बी होनी चाहिये। यानी विद्यार्थी पढ़ते हुअे अैसे अुद्योगोंमें लगे रहें, जिनकी आमदनीसे शालाका खर्च चले।

२४. शालामें आमदनी तो पहलेसे ही होने लगनी चाहिये। किन्तु शुरूके वर्षोंमें खर्च पूरा होने लायक आमदनी नहीं होगी।

२५. शिक्षकोंको बड़ी-बड़ी तनखाहें नहीं मिल सकतीं, किन्तु वे जीविका चलाने लायक तो होनी ही चाहिये। शिक्षकोंमें सेवा-भावना होनी चाहिये। प्राथमिक शिक्षाके लिअे कैसे भी शिक्षकसे काम चलानेका रिवाज निन्दनीय है। सभी शिक्षक चरित्रवान होने चाहिये।

२६. शिक्षाके लिअे बड़ी और खर्चीली अिमारतोंकी जरूरत नहीं है।

२७. अंग्रेजीका अभ्यास भाषाके रूपमें ही हो सकता है और अुसे पाठ्यक्रममें जगह मिलनी चाहिये। जैसे हिन्दी राष्ट्रभाषा है, वैसे ही अंग्रेजीका अुपयोग दूसरे राष्ट्रोंके साथके व्यवहार और व्यापारके लिअे है।

सच्ची शिक्षा, पृ० ७–९; १९५९

*

स्त्रियोंकी विशेष शिक्षा कैसी हो और कहांसे शुरू हो, अिसके विषयमें मैं खुद निश्चय नहीं कर सका हूं। लेकिन यह मेरा दृढ़ मत है कि जितनी सुविधा पुरुषको मिलती है अुतनी ही स्त्रीको भी मिलनी चाहिये और जहां विशेष सुविधाकी जरूरत हो वहां विशेष सुविधा भी मिलनी चाहिये।

प्रौढ़ आयुवाले निरक्षर स्त्री-पुरुषोंके लिअे रात्रिवर्गोंकी जरूरत है ही। किन्तु मैं अैसा नहीं मानता कि अुन्हें अक्षर-ज्ञान होना ही चाहिये। अुनके लिअे भाषणों आदिके जरिये साधारण ज्ञान मिलनेकी सुविधा होनी चाहिये। और जिन्हें पढ़ना-लिखना सीखनेकी अिच्छा हो, अुनके लिअे अुसकी पूरी सुविधा होनी चाहिये।

आश्रममें हमने आज तक जितने प्रयोग किये हैं अुनसे हमें अिस अेक बातका निश्चय हो गया है कि शिक्षामें अुद्योगको और खासकर कताअीको बड़ा स्थान मिलना चाहिये। शिक्षा ज्यादातर स्वावलम्बी, देहाती जीवनको ताकत पहुंचानेवाली और अुस जीवनके साथ सम्बन्ध रखनेवाली होनी चाहिये।

*

सच्ची शिक्षा तो स्कूल छोड़नेके बाद शुरू होती है। जिसने अुसका महत्त्व समझा है वह सदा ही विद्यार्थी है। अपना कर्तव्य-पालन करते हुअे अुसे अपना ज्ञान रोज बढ़ाना चाहिये। जो सब काम समझकर करता है अुसका ज्ञान रोज बढ़ना ही चाहिये।

शिक्षाकी प्रगतिमें अेक चीज रुकावट डालती है। शिक्षकके बिना शिक्षा ली ही नहीं जा सकती, यह वहम समाजकी वृद्धिको रोक रहा है। मनुष्यका सच्चा शिक्षक वह खुद ही है। आजकल तो अपने-आप शिक्षा प्राप्त करनेके साधन खूब बढ़ गये हैं। बहुतसी बातोंका ज्ञान लगनसे हरअेकको मिल सकता है और जहां शिक्षककी ही जरूरत होती है वहां वह खुद शिक्षक ढूंढ़ लेता है। अनुभव बड़े-से-बड़ा स्कूल है। कअी धन्धे अैसे हैं जो स्कूलमें नहीं सीखे जा सकते, बल्कि अुन धंधोंकी दुकानों पर या कारखानोंमें ही सीखे जा सकते हैं। अुनका स्कूलमें पाया हुआ ज्ञान अकसर तोतेका-सा होता है। अिसलिअे बड़ी अुमरवालोंके लिअे स्कूलके बजाय अिच्छाकी, लगनकी और आत्म-विश्वासकी जरूरत है।

बच्चोंकी शिक्षा मां-बापका धर्म है। अैसा सोचें तो हमें बेशुमार पाठशालाओंकी अपेक्षा सच्ची शिक्षाका वायुमण्डल पैदा करनेकी ज्यादा जरूरत है। वह पैदा हुआ फिर तो जहां पाठशाला चाहिये वहां वह जरूर खड़ी हो जायगी।

आश्रमकी शिक्षा अिस दृष्टिसे होती है और अिस दृष्टिसे सोचने पर सफलता भी अेक हद तक अच्छी मिली है। आश्रमका हर विभाग अेक स्कूल है।

सत्याग्रह आश्रमका अितिहास, पृ० ६९–७०, ७२; १९५९

५०

राष्ट्रभाषा और लिपि

अगर हमें अेक राष्ट्र होनेका अपना दावा सिद्ध करना है, तो हमारी अनेक बातें अेकसी होनी चाहिये। भिन्न-भिन्न धर्म और सम्प्रदायोंको अेक सूत्रमें बांधनेवाली हमारी अेक सामान्य संस्कृति है। हमारी त्रुटियां और बाधायें भी अेकसी हैं। मैं यह बतानेकी कोशिश कर रहा हूं कि हमारी पोशाकके लिअे अेक ही तरहका कपड़ा न केवल वांछनीय है, बल्कि आवश्यक भी है। हमें अेक सामान्य भाषाकी भी जरूरत है, देशी भाषाओंकी जगह पर नहीं परन्तु अुनके सिवा। अिस बातमें साधारण सहमति है कि यह माध्यम हिन्दुस्तानी ही होना चाहिये, जो हिन्दी और अुर्दूके मेलसे बने और जिसमें न तो संस्कृतकी और न फारसी या अरबीकी ही भरामर हो। हमारे रास्तेकी सबसे बड़ी रुकावट हमारी देशी भाषाओंकी कअी लिपियां हैं। अगर अेक सामान्य लिपि अपनाना संभव हो, तो अेक सामान्य भाषाका हमारा जो स्वप्न है — अभी तो वह स्वप्न ही है — अुसे पूरा करनेके मार्गकी अेक बड़ी बाधा दूर हो जायगी।

भिन्न-भिन्न लिपियोंका होना कअी तरहसे बाधक है। वह ज्ञानकी प्राप्तिमें अेक कारगर रुकावट है। आर्य भाषाओंमें अितनी समानता है कि अगर भिन्न-भिन्न लिपियां सीखनेमें बहुतसा समय बरबाद न करना पड़े, तो हम सब किसी बड़ी कठिनाअीके बिना कअी भाषायें जान लें। अुदाहरणके लिअे, जो लोग संस्कृतका थोड़ा भी ज्ञान रखते हैं, अुनमें

से अधिकांशको रवीन्द्रनाथ टागोरकी अद्वितीय कृतियोंको समझनेमें कोअी कठिनाअी न हो, अगर वे सब देवनागरी लिपिमें छपें। परन्तु बंगला लिपि मानो गैर-बंगालियोंके लिअे 'दूर रहो' की सूचना है। अिसी तरह यदि बंगाली लोग देवनागरी लिपि जानते हों, तो वे तुलसीदासकी रचनाओंकी अद्‌भुत सुन्दरता और आध्यात्मिकताका तथा अन्य अनेक हिन्दुस्तानी लेखकोंका आनन्द अनायास लूट सकते हैं। . . . समस्त भारतके लिअे अेक सामान्य लिपि अेक दूरका आदर्श है। परन्तु जो भारतीय संस्कृतसे अुत्पन्न भाषायें और दक्षिणकी भाषायें बोलते हैं, अुन सबके लिये अेक सामान्य लिपि अेक व्यावहारिक आदर्श है, अगर हम सिर्फ अपनी-अपनी प्रान्तीयता छोड़ दें। अुदाहरणके लिअे, किसी गुज-रातीका गुजराती लिपिसे चिपटे रहना अच्छी बात नहीं है। प्रान्तप्रेम वहां अच्छा है जहां वह अखिल भारतीय देशप्रेमकी बड़ी धाराको पुष्ट करता है। अिसी प्रकार अखिल भारतीय प्रेम भी अुसी हद तक अच्छा है, जहां तक वह विश्वप्रेमके और भी बड़े लक्ष्यकी पूर्ति करता है। परन्तु जो प्रान्तप्रेम यह कहता है कि "भारत कुछ नहीं, गुजरात ही सर्वस्व है", वह बुरी चीज है। . . . मैं मानता हूं कि जिस बातका कोअी प्रत्यक्ष प्रमाण देनेकी जरूरत नहीं कि देवनागरी ही सर्वसामान्य लिपि होनी चाहिये, क्योंकि अुसके पक्षमें निर्णायक बात यह है कि अुसे भारतके अधिकांश भागके लोग जानते हैं। . . . जो वृत्ति अितनी वर्जनशील और संकीर्ण हो कि हर बोलीको चिरस्थायी बनाना और विकसित करना चाहती हो, वह राष्ट्र-विरोधी और विश्व-विरोधी है। मेरी विनम्र सम्मतिमें तमाम अविकसित और अलिखित बोलियोंका बलिदान करके अुन्हें हिन्दुस्तानीकी बड़ी धारामें मिला देना चाहिये। यह आत्मोत्कर्षके लिअे की गयी कुरबानी होगी, आत्महत्या नहीं। अगर हमें सुसंस्कृत भारतके लिअे अेक सामान्य भाषा बनानी हो, तो हमें भाषाओं और लिपियोंकी संख्या बढ़ानेवाली या देशकी शक्तियोंको छिन्न-भिन्न करने-वाली किसी भी क्रियाका बढ़ना रोकना होगा। हमें अेक सामान्य भाषाकी वृद्धि करनी होगी। . . . अगर मेरी चले तो जमी हुअी प्रान्तीय लिपिके साथ-साथ मैं सब प्रान्तोंमें देवनागरी लिपि और अुर्दू लिपिका सीखना

अनिवार्य कर दूं और विभिन्न देशी भाषाओंकी मुख्य-मुख्य पुस्तकोंको अुनके शब्दशः हिन्दुस्तानी अनुवादके साथ देवनागरीमें छपवा दूं।

यंग अिंडिया, २७–८–'२५

हमें राष्ट्रभाषाका भी विचार करना चाहिये। यदि अंग्रेजी राष्ट्र-भाषा बननेवाली हो, तो अुसे हमारे स्कूलोंमें अनिवार्य स्थान मिलना चाहिये। तो अब हम पहले यह सोचें कि क्या अंग्रेजी हमारी राष्ट्रभाषा हो सकती है?

कुछ स्वदेशाभिमानी विद्वान कहते हैं कि अंग्रेजी राष्ट्रभाषा हो सकती है या नहीं, यह प्रश्न ही अज्ञानताको बताता है। अुनकी रायमें अंग्रेजी तो राष्ट्रभाषा बन ही चुकी है।

हमारे पढ़े-लिखे लोगोंकी दशाको देखते हुअे अैसा लगता है कि अंग्रेजीके बिना हमारा कारबार बन्द हो जायेगा। अैसा होने पर भी जरा गहरे जाकर देखेंगे, तो पता चलेगा कि अंग्रेजी राष्ट्रभाषा न तो हो सकती है, और न होनी चाहिये।

तब फिर हम यह देखें कि राष्ट्रभाषाके क्या लक्षण होने चाहिये:

१. वह भाषा सरकारी नौकरोंके लिअे आसान होनी चाहिये।
२. अुस भाषाके द्वारा भारतका आपसी धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक कामकाज हो सकना चाहिये।
३. अुस भाषाको भारतके ज्यादातर लोग बोलते हों।
४. वह भाषा राष्ट्रके लिअे आसान हो।
५. अुस भाषाका विचार करते समय क्षणिक या कुछ समय तक रहनेवाली स्थिति पर जोर न दिया जाय।

अंग्रेजी भाषामें अिनमें से अेक भी लक्षण नहीं है।

पहला लक्षण मुझे अन्तमें रखना चाहिये था। परन्तु मैंने अुसे पहले अिसलिअे रखा है कि वह लक्षण अंग्रेजी भाषामें दिखाअी पड़ सकता है। ज्यादा सोचने पर हम देखेंगे कि आज भी राज्यके नौकरोंके लिअे वह भाषा आसान नहीं है। यहांके शासनका ढांचा अिस तरह सोचा गया है कि अुसमें अंग्रेज कम होंगे, यहां तक कि अन्तमें वाअिसरॉय और

दूसरे अंगुलियों पर गिनने लायक अंग्रेज ही अुसमें रहेंगे। अधिकतर कर्मचारी आज भी भारतीय हैं और वे दिन-दिन बढ़ते ही जायेंगे। यह तो सभी मानेंगे कि अिस वर्गके लिअे भारतकी किसी भी भाषासे अंग्रेजी ज्यादा कठिन है।

दूसरा लक्षण विचारते समय हम देखते हैं कि जब तक आम लोग अंग्रेजी बोलनेवाले न हो जायं, तब तक हमारा धार्मिक व्यवहार अंग्रेजीमें नहीं हो सकता। अिस हद तक अंग्रेजी भाषाका समाजमें फैल जाना असंभव मालूम होता है।

तीसरा लक्षण अंग्रेजीमें नहीं हो सकता, क्योंकि वह भारतके अधिकतर लोगोंकी भाषा नहीं है।

चौथा लक्षण भी अंग्रेजीमें नहीं है, क्योंकि सारे राष्ट्रके लिअे वह अितनी आसान नहीं है।

पांचवें लक्षण पर विचार करते समय हम देखते हैं कि अंग्रेजी भाषाकी आजकी सत्ता क्षणिक है। सदा बनी रहनेवाली स्थिति तो यह है कि भारतमें जनताके राष्ट्रीय काममें अंग्रेजी भाषाकी जरूरत थोड़ी ही रहेगी। अंग्रेजी साम्राज्यके कामकाजमें अुसकी जरूरत रहेगी। यह दूसरी बात है कि वह साम्राज्यके राजनीतिक कामकाज (डिप्लोमेसी) की भाषा होगी। अुस कामके लिअे अंग्रेजीकी जरूरत रहेगी। हमें अंग्रेजी भाषासे कुछ भी वैर नहीं है। हमारा आग्रह तो अितना ही है कि अुसे हदसे बाहर न जाने दिया जाय। साम्राज्यकी भाषा तो अंग्रेजी ही होगी और अिसलिअे हम अपने मालवीयजी, शास्त्रीजी, बेनर्जी आदिको यह भाषा सीखनेके लिअे मजबूर करेंगे और यह विश्वास रखेंगे कि ये लोग भारतकी कीर्ति विदेशोंमें फैलायेंगे। परन्तु राष्ट्रकी भाषा अंग्रेजी नहीं हो सकती। अंग्रेजीको राष्ट्रभाषा बनाना 'अेस्पेरेण्टो' दाखिल करने जैसी बात है। यह कल्पना ही हमारी कमजोरीको बताती है कि अंग्रेजी राष्ट्रभाषा हो सकती है। 'अेस्पेरेण्टो' के लिअे प्रयत्न करना हमारी अज्ञानताका और निर्बलताका सूचक होगा।

तो फिर कौनसी भाषा अुन पांच लक्षणोंवाली है? यह माने बिना काम नहीं चल सकता कि हिन्दी भाषामें ये सारे लक्षण मौजूद हैं।

ये पांच लक्षण रखनेमें हिन्दीकी होड़ करनेवाली और कोअी भाषा नहीं है। हिन्दीके बाद दूसरा दर्जा बंगलाका है। फिर भी बंगाली लोग बंगालके बाहर हिन्दीका ही अुपयोग करते हैं। हिन्दी बोलनेवाले जहां जाते हैं वहां हिन्दीका ही अुपयोग करते हैं और अिससे किसीको अचम्भा नहीं होता। हिन्दीके धर्मोपदेशक और अुर्दूके मौलवी सारे भारतमें अपने भाषण हिन्दीमें ही देते हैं और अपढ़ जनता अुन्हें समझ लेती है। जहां अपढ़ गुजराती भी अुत्तरमें जाकर थोड़ी-बहुत हिन्दीका अुपयोग कर लेता है, वहां अुत्तरका 'भैया' बम्बअीके सेठकी नौकरी करते हुअे भी गुजराती बोलनेसे अिनकार करता है और सेठ 'भैया' के साथ टूटी-फूटी हिन्दी बोल लेता है। मैंने देखा है कि ठेठ द्राविड़ प्रान्तमें भी हिन्दीकी आवाज सुनाअी देती है। यह कहना ठीक नहीं कि मद्रासमें तो अंग्रेजीसे ही काम चलता है। वहां भी मैंने अपना सारा काम हिन्दीसे चलाया है। सैकड़ों मद्रासी मुसाफिरोंको मैंने दूसरे लोगोंके साथ हिन्दीमें बोलते सुना है। अिसके सिवा, मद्रासके मुसलमान भाअी तो अच्छी तरह हिन्दी बोलना जानते हैं। यहां यह ध्यानमें रखना चाहिये कि सारे भारतके मुसलमान अुर्दू बोलते हैं और अुनकी संख्या सारे प्रान्तोंमें कुछ कम नहीं है।

अिस तरह हिन्दी भाषा पहलेसे ही राष्ट्रभाषा बन चुकी है। हमने वर्षों पहले अुसका राष्ट्रभाषाके रूपमें अुपयोग किया है। अुर्दू भी हिन्दीकी अिस शक्तिसे ही पैदा हुअी है।

मुसलमान बादशाह भारतमें फारसी-अरबीको राष्ट्रभाषा नहीं बना सके। अुन्होंने हिन्दीके व्याकरणको मानकर अुर्दू लिपि काममें ली और फारसी शब्दोंका ज्यादा अुपयोग किया। परन्तु आम लोगोंके साथ अपना व्यवहार वे विदेशी भाषाके द्वारा नहीं चला सके। यह हालत अंग्रेज अधिकारियोंसे छिपी हुअी नहीं है। जिन्हें लड़ाकू वर्गोंका अनुभव है, वे जानते हैं कि सैनिकोंके लिअे चीजोंके नाम हिन्दी या अुर्दूमें रखने पड़ते हैं।

अिस तरह हम देखते हैं कि हिन्दी ही राष्ट्रभाषा हो सकती है। फिर भी मद्रासके पढ़े-लिखोंके लिअे यह सवाल कठिन है। लेकिन दक्षिणी,

बंगाली, सिंधी और गुजराती लोगोंके लिअे तो वह बड़ा आसान है। कुछ महीनोंमें वे हिन्दी पर अच्छा काबू करके राष्ट्रीय कामकाज अुसमें चला सकते हैं। तामिल भाअियोंके बारेमें यह अुतना आसान नहीं। तामिल आदि द्राविड़ी हिस्सोंकी अपनी भाषायें हैं और अुनकी बनावट और अुनका व्याकरण संस्कृतसे अलग है। शब्दोंकी अेकताके सिवा और कोअी अेकता संस्कृत भाषाओं और द्राविड़ भाषाओंमें नहीं पाअी जाती।

परन्तु यह कठिनाअी सिर्फ आजके पढ़े-लिखे लोगोंके लिअे ही है। अुनके स्वदेशाभिमान पर भरोसा करने और विशेष प्रयत्न करके हिन्दी सीख लेनेकी आशा रखनेका हमें अधिकार है। भविष्यमें यदि हिन्दीको अुसका राष्ट्रभाषाका पद मिले, तो हर मद्रासी स्कूलमें हिन्दी पढ़ाअी जायगी और मद्रास तथा दूसरे प्रान्तोंके बीच विशेष परिचय होनेकी संभावना बढ़ जायगी। अंग्रेजी भाषा द्राविड़ जनतामें नहीं घुस सकी। पर हिन्दीको घुसनेमें देर नहीं लगेगी। तेलगू जाति तो आज भी यह प्रयत्न कर रही है।

सच्ची शिक्षा, पृ० १९–२१, २२–२३; १९५९

[२० अक्तूबर, १९१७ में भड़ौचमें हुअी दूसरी गुजरात शिक्षा-परिषदके अध्यक्षपदसे दिये गये भाषणसे।]

जितने साल हम अंग्रेजी सीखनेमें बरबाद करते हैं, अुतने महीने भी अगर हम हिन्दुस्तानी सीखनेकी तकलीफ न अुठायें, तो सचमुच कहना होगा कि जन-साधारणके प्रति अपने प्रेमकी जो डींगें हम हांका करते हैं वे निरी डींगें ही हैं।

रचनात्मक कार्यक्रम, पृ० ३९

५१

प्रान्तीय भाषायें

हमने अपनी मातृभाषाओंके मुकाबले अंग्रेजीसे ज्यादा मुहब्बत रखी, जिसका नतीजा यह हुआ कि पढ़े-लिखे और राजनीतिक दृष्टिसे जागे हुअे अूंचे तबकेके लोगोंके साथ आम लोगोंका रिश्ता बिलकुल टूट गया और अुन दोनोंके बीच अेक गहरी खाअी बन गअी। यही वजह है कि हिन्दुस्तानकी भाषायें गरीब बन गअी हैं, और अुन्हें पूरा पोषण नहीं मिला। अपनी मातृभाषामें दुर्बोध और गहरे तात्त्विक विचारोंको प्रकट करनेकी अपनी व्यर्थ चेष्टामें हम गोते खाते हैं। हमारे पास विज्ञानके निश्चित पारिभाषिक शब्द नहीं हैं। अिस सबका नतीजा खतरनाक हुआ है। हमारी आम जनता आधुनिक मानससे यानी नये जमानेके विचारोंसे बिलकुल अछूती रही है। हिन्दुस्तानकी महान भाषाओंकी जो अवगणना हुअी है और अुसकी वजहसे हिन्दुस्तानको जो बेहद नुकसान पहुंचा है, अुसका कोअी अंदाजा या माप आज हम निकाल नहीं सकते, क्योंकि हम अिस घटनाके बहुत नजदीक हैं। मगर अितनी बात तो आसानीसे समझी जा सकती है कि अगर आज तक हुअे नुकसानका अिलाज नहीं किया गया, यानी जो हानि हो चुकी है अुसकी भरपाअी करनेकी कोशिश हमने न की, तो हमारी आम जनताको मानसिक मुक्ति नहीं मिलेगी। वह रूढ़ियों और वहमोंसे घिरी रहेगी। नतीजा यह होगा कि आम जनता स्वराज्यके निर्माणमें कोअी ठोस मदद नहीं पहुंचा सकेगी। अहिंसाकी बुनियाद पर रचे गये स्वराज्यकी चर्चामें यह बात शामिल है कि हमारा हरअेक आदमी आजादीकी हमारी लड़ाअीमें खुद स्वतंत्र रूपसे सीधा हाथ बंटाये। लेकिन अगर हमारी आम जनता लड़ाअीके हर पहलू और अुसकी हर सीढ़ीसे परिचित न हो और अुसके रहस्यको भलीभांति न समझती हो, तो स्वराज्यकी रचनामें वह अपना हिस्सा किस तरह अदा करेगी? और जब तक सर्व-साधारणकी अपनी

बोलीमें लड़ाअीके हर पहलू व कदमको अच्छी तरह समझाया नहीं जाता, तब तक अुनसे यह अुम्मीद कैसे की जाय कि वे अुसमें हाथ बंटायेंगे?

रचनात्मक कार्यक्रम, पृ० ३७–३८

मेरी मातृभाषामें कितनी ही खामियां क्यों न हों, मैं अुससे अुसी तरह चिपटा रहूंगा जिस तरह अपनी मांकी छातीसे। वही मुझे जीवनदायी दूध दे सकती है। मैं अुसकी जगह अंग्रेजीको भी प्यार करता हूं। लेकिन अगर अंग्रेजी अुस जगहको हड़पना चाहती है जिसकी वह हकदार नहीं है, तो मैं अुससे सख्त नफरत करूंगा। यह बात मानी हुअी है कि अंग्रेजी आज सारी दुनियाकी भाषा बन गअी है। अिसलिअे मैं अुसे दूसरी जबानके तौर पर जगह दूंगा — लेकिन विश्वविद्यालयके पाठ्यक्रममें, स्कूलोंमें नहीं। वह कुछ लोगोंके सीखनेकी चीज हो सकती है, लाखों-करोड़ोंकी नहीं। आज जब हमारे पास प्राअिमरी शिक्षाको भी मुल्कमें लाजिमी बनानेके जरिये नहीं हैं, तो हम अंग्रेजी सिखानेके जरिये कहांसे जुटा सकते हैं? रूसने बिना अंग्रेजीके विज्ञानमें अितनी अुन्नति की है। आज अपनी मानसिक गुलामीकी वजहसे ही हम यह मानने लगे हैं कि अंग्रेजीके बिना हमारा काम चल नहीं सकता। मैं अिस चीजको नहीं मानता।

हरिजनसेवक, २५–८–'४६

अगर सरकारें और अुनके दफ्तर सावधानी नहीं लेंगे, तो मुमकिन है कि अंग्रेजी भाषा हिन्दुस्तानीकी जगहको हड़प ले। अिससे हिन्दुस्तानके अुन करोड़ों लोगोंको बेहद नुकसान होगा, जो कभी भी अंग्रेजी समझ नहीं सकेंगे। मेरे खयालमें प्रान्तीय सरकारोंके लिअे यह बहुत आसान बात होनी चाहिये कि वे अपने यहां अैसे कर्मचारी रखें, जो सारा काम प्रान्तीय भाषाओंमें और अन्तर-प्रान्तीय भाषामें कर सकें। मेरी रायमें अन्तर-प्रान्तीय भाषा सिर्फ नागरी या अुर्दू लिपिमें लिखी जानेवाली हिन्दुस्तानी ही हो सकती है।

यह जरूरी फेरफार करनेमें अेक दिन भी खोना देशको भारी सांस्कृतिक नुकसान पहुंचाना है। सबसे पहली और जरूरी चीज यह

है कि हम अपनी अुन प्रान्तीय भाषाओंका संशोधन करें, जो हिन्दुस्तानक
वरदानकी तरह मिली हुअी हैं। यह कहना दिमागी आलसके सिवा औ
कुछ नहीं है कि हमारी अदालतों, हमारे स्कूलों और यहां तक कि हमा
दफ्तरोंमें भी यह भाषा-सम्बन्धी फेरफार करनेके लिअे कुछ समय, शाय
कुछ वरस चाहिये। हां, जब तक प्रान्तोंका भाषाके आधार पर फिर
बंटवारा नहीं होता, तब तक बम्बअी और मद्रास जैसे प्रान्तोंमें, जह
बहुतसी भाषायें बोली जाती हैं, थोड़ी मुश्किल जरूर होगी। प्रान्ती
सरकारें अैसा कोअी तरीका खोज सकती हैं, जिससे अुन प्रान्तोंके लो
वहां अपनापन अनुभव कर सकें। जब तक हिन्दुस्तानी संघ अिस सवालक
हल न कर ले कि अन्तर-प्रान्तीय भाषा नागरी या अुर्दू लिपिमें लिख
जानेवाली हिन्दुस्तानी हो, या सिर्फ नागरी लिपिमें लिखी जानेवाल
हिन्दी, तब तक प्रान्तीय सरकारें ठहरी न रहें। अिसकी वजहसे अुन
जरूरी सुधार करनेमें देर न लगानी चाहिये। भाषाके बारेमें यह अे
बिलकुल गैर-जरूरी विवाद खड़ा हो गया है, जिसकी वजहसे हिन्दु
स्तानमें अंग्रेजी भाषा घुस सकती है। और अगर अैसा हुआ तो अिस
देशके लिअे वह अेक अैसे कलंककी बात होगी, जिसे धोना हमेशाके
लिअे असंभव होगा। अगर सारे सरकारी दफ्तरोंमें प्रांतीय भाषा अिस्ते
माल करनेका कदम अिसी वक्त अुठाया जाय, तो अन्तर-प्रान्तीय भाषाक
अुपयोग तो अुसके बाद तुरन्त ही होने लगेगा। प्रान्तोंको केन्द्रसे सम्बन्ध
रखना ही पड़ेगा। और अगर केन्द्रीय सरकारने शीघ्र ही यह महसूस
करनेकी समझदारी की कि अुन मुट्ठीभर हिन्दुस्तानियोंके लिअे हिन्दु
स्तानकी संस्कृतिको नुकसान नहीं पहुंचाना चाहिये, जो अितने आलसी
हैं कि जिस भाषाको किसी भी पार्टी या वर्गका दिल दुखाये बगैर सारे
हिन्दुस्तानमें आसानीसे अपनाया जा सकता है अुसे भी नहीं सीख सकते
तो अैसी हालतमें प्रान्तीय सरकारें केन्द्रीय सरकारसे अंग्रेजीमें अपना
व्यवहार रखनेका साहस नहीं कर सकेंगी। मेरा मतलब यह है कि
जिस तरह हमारी आजादीको जबरदस्ती छीननेवाले अंग्रेजोंकी सियासी
हुकूमतको हमने सफलतापूर्वक अिस देशसे निकाल दिया, अुसी तरह
हमारी संस्कृतिको दबानेवाली अंग्रेजी भाषाको भी हमें यहांसे निकाल

बाहर करना चाहिये। हां, व्यापार और राजनीतिकी अन्तर-राष्ट्रीय भाषाके नाते समृद्ध अंग्रेजीका अपना स्वाभाविक स्थान हमेशा कायम रहेगा।

हरिजनसेवक, २१–९–'४७

संस्कृतका स्थान

मेरी रायमें धार्मिक बातोंमें संस्कृतका अुपयोग करना छोड़ा नहीं जा सकता। अनुवाद कितना ही शुद्ध क्यों न हो, किन्तु वह मूल मंत्रोंका स्थान नहीं ले सकता। मूल मंत्रोंमें अपनी अेक विशेषता है, जो अनुवादमें नहीं आ सकती। अिसके सिवा यदि हम अिन मंत्रोंको, जिनका पाठ शताब्दियों तक संस्कृतमें ही होता रहा है, अब अपनी देशी भाषाओंमें दुहराने लगें, तो अिससे अुनकी गंभीरतामें कमी आयेगी। लेकिन साथ ही मेरा स्पष्ट मत है कि मंत्रका पाठ और विधिका अनुष्ठान करनेवालेको मंत्रका अर्थ और विधिका तात्पर्य अच्छी तरह समझाया जाना चाहिये। हिन्दू बालककी शिक्षा संस्कृतके प्रारंभिक ज्ञानके बिना अधूरी मानी जानी चाहिये। संस्कृत भाषा और संस्कृत साहित्यका अध्ययन यथेष्ट मात्रामें न चलता रहा तो हिन्दू धर्मका नाश हो जायगा। मौजूदा शिक्षा-पद्धतिकी कमियोंके कारण ही संस्कृत सीखना कठिन मालूम होता है; असलमें वह कठिन नहीं है। लेकिन कठिन हो तो भी धर्मका आचरण और ज्यादा कठिन है। अिसलिअे जो धर्मका आचरण करना चाहता है, अुसे अपने मार्गकी तमाम सीढ़ियोंको, फिर वे कितनी भी कठिन क्यों न दिखाअी दें, आसान ही समझना चाहिये।

यंग अिंडिया, १३–५–'२६

दक्षिणमें हिन्दी*

मुझे पक्का विश्वास है कि किसी दिन द्रविड़ भाओी-वहन गंभीर भावसे हिन्दीका अभ्यास करने लग जायेंगे। आज अंग्रेजी पर प्रभुत्व

---

*अंग्रेजीका ज्ञान

नीचे दिये जा रहे आंकड़े, जो कि १९५१ की जन-गणना पर आधारित हैं, राजभाषा कमीशनकी रिपोर्टके पृ० ४६८ से लिये गये हैं। (आंकड़े हजारके माने जायें)

राज्य	आबादी	पढ़े-लिखोंकी संख्या	अंग्रेजी पढ़े-लिखों की संख्या (मैट्रिक या कोओी समकक्ष परीक्षा)	पढ़े-लिखोंमें अंग्रेजी पढ़े-लिखोंका शतमान	कुल आबादीमें अंग्रेजी पढ़े-लिखोंका शतमान
१	२	३	४	५	६
वम्बअी	३५९५६.	८८२९	४५८	५.१९	१.२७
पंजाब	१२६४१	२०३९	३२५	१५.९३	२.५६
पश्चिमी बंगाल	२४८१०	६०८८	५९७	९.८१	२.४१
अजमेर	६९३	१३९	१८	१३.११	२.६३
दक्षिण भारत (मद्रास, मैसूर, त्रावन-कोर-कोचीन और कुर्ग)	७५६००	१७२३४	८७६	५.०८	१.१५
मद्रास (आन्ध्रके विभाजनके बाद)	३५७३५	७८००	४००	५.१३	१.१२
आन्ध्र	२०५०८	३१०८	१६५	५.३२	०.८१
मैसूर (बेलारी तालुकाके साथ)	९८४९	१९५६	१३६	६.९४	१.३८

प्राप्त करनेके लिअे वे जितनी मेहनत करते हैं, अुसका आठवां हिस्सा भी हिन्दी सीखनेमें करें, तो बाकी हिन्दुस्तानके जो दरवाजे आज अुनके लिये बन्द हैं वे खुल जायं और वे अिस तरह हमारे साथ अेक हो जायं जैसे पहले कभी न थे। मैं जानता हूं कि अिस पर कुछ लोग यह कहेंगे कि यह दलील तो दोनों ओर लागू होती है। द्रविड़ लोगोंकी संख्या कम है; अिसलिअे राष्ट्रकी शक्तिके मितव्ययकी दृष्टिसे यह जरूरी है कि हिन्दुस्तानके बाकी सब लोगोंको द्रविड़ भारतके साथ बातचीत करनेके लिअे तामिल, तेलगू, कन्नड़ और मलयालम सिखानेके बदले द्रविड़ भारतवालोंको शेष हिन्दुस्तानकी आम भाषा सीख लेनी चाहिये। यही कारण है कि मद्रास प्रदेशमें हिन्दी-प्रचारका कार्य तीव्रतासे किया जा रहा है।

कोअी भी द्रविड़ यह न सोचे कि हिन्दी सीखना जरा भी मुश्किल है। अगर रोजके मनोरंजनके समयमें से नियमपूर्वक थोड़ा समय निकाला जाय, तो साधारण आदमी अेक सालमें हिन्दी सीख सकता है। मैं तो यह भी सुझानेकी हिम्मत करता हूं कि अब बड़ी-बड़ी म्युनिसिपैलिटियां

हिन्दीका ज्ञान

दक्षिणमें हिन्दी-प्रचारके ये आंकड़े दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रासकी रिपोर्टसे लिये गये हैं और १९१८–१९५५ के कालमें हिन्दी-प्रचारका प्रमाण बतलाते हैं।

(आंकड़े लाखके माने जायें)

	आबादी	पढ़े-लिखोंकी संख्या	हिन्दी पढ़े-लिखोंकी संख्या
आन्ध्र	२०३.२	३०.४	८.०२
तामिलनाड	२७७.७	५१.८	८.९८
केरल	१४०.१	७२.८	१४.२२
कर्नाटक	२२८.४	४८.७	९.८७
तेलंगाना	८०.०	१३.३	१.३६
मद्रास शहर	१४.२	४.३	१.७५

अपने मदरसोंमें हिन्दीकी पढ़ाअीको वैकल्पिक बना दें। मैं अपने अनुभवसे यह कह सकता हूं कि द्रविड़ बालक अद्‌भुत सरलतासे हिन्दी सीख लेते हैं। शायद कुछ ही लोग यह जानते होंगे कि दक्षिण अफ्रीकामें रहनेवाले लगभग सभी तामिल-तेलगू-भाषी लोग हिन्दी समझते हैं, और अुसमें बातचीत कर सकते हैं। अिसलिअे मैं यह आशा करता हूं कि अुदार मारवाड़ियोंने मुफ्त हिन्दी सीखनेकी जो सहूलियत पैदा कर दी है, मद्रासके नौजवान अुसकी कदर करेंगे — यानी वे अिस सहूलियतसे लाभ अुठायेंगे।

यंग अिंडिया, १६–६–'२०

हिन्दुस्तानकी दूसरी कोअी भाषा न सीखनेके बारेमें बंगालका अपना जो पूर्वग्रह है और द्रविड़ लोगोंको हिन्दुस्तानी सीखनेमें जो कठिनाअी मालूम होती है, अुसकी वजहसे हिन्दुस्तानी न जाननेके कारण शेष हिन्दुस्तानसे अलग पड़ जानेवाले दो प्रान्त हैं — बंगाल और मद्रास। अगर कोअी साधारण बंगाली हिन्दुस्तानी सीखनेमें रोज तीन घण्टे खर्च करे, तो सचमुच ही दो महीनोंमें वह अुसे सीख लेगा; और अिसी रफ्तारसे सीखनेमें द्रविड़को छह महीने लगेंगे। कोअी बंगाली या द्रविड़ अितने समयमें अंग्रेजी सीख लेनेकी आशा नहीं कर सकता। हिन्दुस्तानी जाननेवालोंके मुकाबले अंग्रेजी जाननेवाले हिन्दुस्तानियोंकी संख्या कम है। अंग्रेजी जाननेसे अिन थोड़े लोगोंके साथ ही विचार-विनिमयके द्वार खुलते हैं। अिसके विपरीत हिन्दुस्तानीका कामचलाअू ज्ञान अपने देशके बहुत ही ज्यादा भाअी-बहनोंके साथ बातचीत करनेकी शक्ति प्रदान करता है। . . . मैं द्रविड़ भाअियोंकी कठिनाअीको समझता हूं; लेकिन मातृभूमिके प्रति अुनके प्रेम और अुद्यमके सामने कोअी चीज कठिन नहीं है।

यंग अिंडिया, २–२–'२१

अंग्रेजी आन्तर-राष्ट्रीय व्यापारकी भाषा है, कूटनीतिकी भाषा है, अुसमें अनेक बढ़िया साहित्यिक रत्न भरे हैं और अुसके द्वारा हमें पाश्चात्य विचार और संस्कृतिका परिचय होता है। अिसलिअे हममें से कुछ लोगोंके लिअे अंग्रेजी जानना जरूरी है। वे राष्ट्रीय व्यापार और

आन्तर-राष्ट्रीय कूटनीतिके विभाग चला सकते हैं और राष्ट्रको पश्चिमका अुत्तम साहित्य, विचार और विज्ञान दे सकते हैं। यह अंग्रेजीका अुचित अुपयोग होगा। आजकल तो अंग्रेजीने हमारे हृदयोंमें सबसे प्रिय स्थान जबरदस्ती छीनकर हमारी मातृभाषाओंको सिंहासन-च्युत कर दिया है। अंग्रेजोंके साथ हमारे बराबरीके संबंध न होनेके कारण वह अिस अस्वाभाविक स्थान पर बैठ गयी है। अंग्रेजीके ज्ञानके बिना ही भारतीय मस्तिष्कका अुच्चसे अुच्च विकास संभव होना चाहिये। हमारे लड़कों और लड़कियोंको यह सोचनेमें प्रोत्साहन देना कि अंग्रेजी जाने बिना अुत्तम समाजमें प्रवेश करना असंभव है, भारतके पुरुष-समाजके और खास तौर पर नारी-समाजके प्रति हिंसा करना है। यह विचार अितना अपमानजनक है कि सहन नहीं किया जा सकता। अंग्रेजीके मोहसे छुटकारा पाना स्वराज्यके लिअे अेक जरूरी शर्त है।

यंग अिंडिया, २-२-'२१

अगर हम बनावटी वातावरणमें न रहते होते, तो दक्षिणवासी लोगोंको न तो हिन्दी सीखनेमें कोअी कष्ट मालूम होता, और न अुसकी व्यर्थताका अनुभव ही होता। हिन्दी-भाषी लोगोंको दक्षिणकी भाषा सीखनेकी जितनी जरूरत है, अुसकी अपेक्षा दक्षिणवालोंको हिन्दी सीखनेकी आवश्यकता अवश्य ही अधिक है। सारे हिन्दुस्तानमें हिन्दी बोलने और समझनेवालोंकी संख्या दक्षिणकी भाषा बोलनेवालोंसे दुगुनी है। प्रान्तीय भाषा या भाषाओंके **बदलेमें नहीं,** बल्कि अुनके **अलावा** अेक प्रान्तका दूसरे प्रान्तसे सम्बन्ध जोड़नेके लिअे अेक सर्व-सामान्य भाषाकी आवश्यकता है। अैसी भाषा तो हिन्दी-हिन्दुस्तानी ही हो सकती है।

कुछ लोग, जो अपने मनसे सर्व-साधारणका खयाल ही भुला देते हैं, अंग्रेजीको हिन्दीकी बराबरीसे चलनेवाली ही नहीं, बल्कि अेकमात्र शक्य राष्ट्रभाषा मानते हैं। परदेशी जुअेकी मोहिनी न होती, तो अिस बातकी कोअी कल्पना भी न करता। दक्षिण-भारतकी सर्व-साधारण जनताके लिअे, जिसे राष्ट्रीय कार्यमें ज्यादासे ज्यादा हाथ बंटाना होगा, कौनसी भाषा सीखना आसान है — जिस भाषामें अपनी भाषाओंके बहुतेरे शब्द अेकसे

हैं और जो अुन्हें अेकदम लगभग सारे अुत्तरी हिन्दुस्तानके सम्पर्कमें लाती है वह हिन्दी, या मुट्ठीभर लोगों द्वारा बोली जानेवाली सब तरहसे विदेशी अंग्रेजी ?

अिस पसन्दका सच्चा आधार मनुष्यकी स्वराज्य-विषयक कल्पना पर निर्भर है। अगर स्वराज्य अंग्रेजी बोलनेवाले भारतीयोंका और अुन्हींके लिअे होनेवाला हो, तो निस्सन्देह अंग्रेजी ही राष्ट्रभाषा होगी। लेकिन अगर स्वराज्य करोड़ों भूखों मरनेवालोंका, करोड़ों निरक्षरोंका, निरक्षर बहनोंका और दलितों व अन्त्यजोंका हो और अिन सबके लिअे हो, तो हिन्दी ही अेकमात्र राष्ट्रभाषा हो सकती है।

यंग अिंडिया, १८–६–'३१

यद्यपि मैं अिन दक्षिणकी भाषाओंको संस्कृतकी पुत्रियां मानता हूं, तो भी ये हिन्दी, अुड़िया, बंगला, आसामी, पंजाबी, सिन्धी, मराठी और गुजरातीसे भिन्न हैं। अिनका व्याकरण हिन्दीसे बिलकुल भिन्न है। अिनको संस्कृतकी पुत्रियां कहनेसे मेरा अभिप्राय अितना ही है कि अिन सबमें संस्कृत शब्द काफी हैं, और जब संकट आ पड़ता है तब ये संस्कृत माताको पुकारती हैं और नये शब्दोंके रूपमें अुसका दूध पीती हैं। प्राचीन कालमें भले ये स्वतंत्र भाषायें रही हों, पर अब तो ये संस्कृतसे शब्द लेकर अपना गौरव बढ़ा रही हैं। अिसके अतिरिक्त और भी तो कअी कारण अिनको संस्कृतकी पुत्रियां कहनेके हैं, पर अुन्हें अिस समय जाने दीजिये।

मैं हमेशासे यह मानता रहा हूं कि हम किसी भी हालतमें प्रांतीय भाषाओंको नुकसान पहुंचाना या मिटाना नहीं चाहते। हमारा मतलब तो सिर्फ यह है कि विभिन्न प्रान्तोंके पारस्परिक सम्बन्धके लिअे हम हिन्दी भाषा सीखें। अैसा कहनेसे हिन्दीके प्रति हमारा कोअी पक्षपात प्रकट नहीं होता। हिन्दीको हम राष्ट्रभाषा मानते हैं। वह राष्ट्रीय होनेके लायक है। वही भाषा राष्ट्रीय बन सकती है, जिसे अधिक संख्यामें लोग जानते-बोलते हों, और जो सीखनेमें सुगम हो। और अिसका कोअी वजन देने लायक विरोध आज तक सुननेमें नहीं आया है।

यदि हिन्दी अंग्रेजीका स्थान ले, तो कमसे कम मुझे तो अच्छा ही लगेगा। लेकिन अंग्रेजी भाषाके महत्त्वको हम अच्छी तरह जानते हैं।

आधुनिक ज्ञानकी प्राप्ति, आधुनिक साहित्यके अध्ययन, सारे जगतके परिचय, अर्थप्राप्ति तथा राज्याधिकारियोंके साथ सम्पर्क रखने और अैसे ही अन्य कार्योंके लिअे हमें अंग्रेजीके ज्ञानकी आवश्यकता है। अिच्छा न रहते हुअे भी हमको अंग्रेजी पढ़नी होगी। यही हो भी रहा है। अंग्रेजी अन्तर-राष्ट्रीय भाषा है।

लेकिन अंग्रेजी राष्ट्रभाषा कभी नहीं बन सकती। आज अुसका साम्राज्य-सा जरूर दिखाओी देता है। अिससे बचनेके लिअे काफी प्रयत्न करते हुअे भी हमारे राष्ट्रीय कार्योंमें अंग्रेजीने बहुत स्थान ले रखा है। लेकिन अिससे हमें अिस भ्रममें कभी न पड़ना चाहिये कि अंग्रेजी राष्ट्रभाषा बन रही है।

अिसकी परीक्षा प्रत्येक प्रान्तमें हम आसानीसे कर सकते हैं। बंगाल अथवा दक्षिण भारतको ही लीजिये, जहां अंग्रेजीका प्रभाव सबसे अधिक है। यदि वहां जनताके मारफत हम कुछ भी काम करना चाहते हैं, तो वह आज हिन्दी द्वारा भले ही न कर सकें, पर अंग्रेजी द्वारा तो कर ही नहीं सकते। हिन्दीके दो-चार शब्दोंसे हम अपना भाव कुछ तो प्रगट कर ही देंगे। पर अंग्रेजीसे तो अितना भी नहीं कर सकते।

हां, यह अवश्य माना जा सकता है कि अब तक हमारे यहां अेक भी भाषा राष्ट्रभाषा नहीं बन पाओी है। अंग्रेजी राजभाषा है। अैसा होना स्वाभाविक भी है। अंग्रेजीका अिससे आगे बढ़ना मैं असंभव समझता हूं, चाहे कितना भी प्रयत्न क्यों न किया जाय। अगर हिन्दुस्तानको सचमुच अेक राष्ट्र बनाना है, तो चाहे कोओी माने या माने, राष्ट्रभाषा तो हिन्दी ही बन सकती है; क्योंकि जो स्थान हिन्दीको प्राप्त है, वह किसी दूसरी भाषाको कभी नहीं मिल सकता। हिन्दू-मुसलमान दोनोंको मिलाकर करीब बाओीस करोड़ मनुष्योंकी भाषा थोड़े-बहुत फेरफारसे हिन्दी-हिन्दुस्तानी ही है।

अिसलिअे अुचित और संभव तो यही है कि प्रत्येक प्रान्तमें अुस प्रान्तकी भाषाका, सारे देशके पारस्परिक व्यवहारके लिअे हिन्दीका और अन्तर-राष्ट्रीय अुपयोगके लिअे अंग्रेजीका व्यवहार हो। हिन्दी बोलनेवालोंकी

संख्या करोड़ोंकी रहेगी, किन्तु अंग्रेजी बोलनेवालोंकी संख्या कुछ लाखसे आगे कभी नहीं बढ़ सकेगी। अिसका प्रयत्न भी करना जनताके साथ अन्याय करना होगा।

(अिन्दौरमें सन् १९३५ में हुअे हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके २४ वें अधिवेशनमें अध्यक्षपदसे दिये गये गांधीजीके मूल हिन्दी भाषणसे।)

हिन्दुस्तानी हमारी राष्ट्रभाषा है या होगी, अैसी घोषणायें यदि हमने सचाअीके साथ की हैं, तो फिर हिन्दुस्तानीकी पढ़ाअी अनिवार्य करनेमें कोअी बुराअी नहीं हैं। अिग्लैण्डके स्कूलोंमें लेटिन सीखना अनिवार्य था और शायद अब भी है। अुसके अध्ययनसे अंग्रेजीके अध्ययनमें कोअी बाधा नहीं पड़ी। अुलटे, अिस सुसंस्कृत भाषाके ज्ञानसे अंग्रेजीकी समृद्धि ही हुअी है। 'मातृभाषा खतरेमें है' अैसा जो शोर मचाया जाता है, वह या तो अज्ञानवश मचाया जाता है या अुसमें पाखण्ड है। और जो लोग अीमानदारीसे अैसा सोचते हैं, अुनकी देशभक्ति पर, यह देखकर कि वे बच्चों द्वारा हिन्दुस्तानी सीखनेके लिअे रोज अेक घंटा दिया जाना भी पसन्द नहीं करते, हमें तरस आता है। अगर हमें अखिल भारतीय राष्ट्रीयता प्राप्त करनी है, तो हमें अिस प्रान्तीयताकी दीवारको तोड़ना ही होगा। सवाल यह है कि हिन्दुस्तान अेक देश और अेक राष्ट्र है या अनेक देशों और राष्ट्रोंका समूह है?

हरिजन, १०-९-'३८

५३

विद्यार्थियोंके लिअे अनुशासनके नियम

१. विद्यार्थियोंको दलबन्दीवाली राजनीतिमें कभी शामिल नहीं होना चाहिये। विद्यार्थी विद्याके खोजी और ज्ञानकी शोध करनेवाले हैं, राजनीतिके खिलाड़ी नहीं।

२. अुन्हें राजनीतिक हड़तालें न करनी चाहिये। विद्यार्थी वीरोंकी पूजा चाहे करें, अुन्हें करनी चाहिये; लेकिन जब अुनके वीर जेलोंमें जायं, या मर जायं, या यों कहिये कि अुन्हें फांसी पर लटकाया जाय, तब अुनके प्रति अपनी भक्ति प्रकट करनेके लिअे अुनको अुन वीरोंके अुत्तम गुणोंका अनुकरण करना चाहिये, हड़ताल नहीं। अैसे मौकों पर विद्यार्थियोंका शोक असह्य हो जाय और हरअेक विद्यार्थीकी वैसी भावना बन जाय, तो अपनी संस्थाके अधिकारीकी सम्मतिसे स्कूल और कॉलेज बन्द रखे जायं। संस्थाके अधिकारी विद्यार्थियोंकी बात न सुनें, तो अुन्हें छूट है कि वे अुचित रीतिसे, सभ्यतापूर्वक, अपनी-अपनी संस्थाओंसे बाहर निकल आयें और तब तक वापस न जायें जब तक संस्थाके व्यवस्थापक पछताकर अुन्हें वापस न बुलायें। किसी भी हालतमें और किसी भी विचारसे अुन्हें अपनेसे भिन्न मत रखनेवाले विद्यार्थियों या स्कूल-कॉलेजके अधिकारियोंके साथ जबरदस्ती न करनी चाहिये। अुन्हें यह विश्वास होना चाहिये कि अगर वे अपनी मर्यादाके अनुरूप व्यवहार करेंगे और मिलकर रहेंगे तो जीत अुन्हींकी होगी।

३. सब विद्यार्थियोंको सेवाके खातिर शास्त्रीय तरीकेसे कातना चाहिये। कताअीके अपने साधनों और दूसरे औजारोंको अुन्हें हमेशा साफ-सुथरा, सुव्यवस्थित और अच्छी हालतमें रखना चाहिये। संभव हो तो वे अपने हथियारों, औजारों या साधनोंको खुद ही बनाना सीख लें। अलबत्ता, अुनका काता हुआ सूत सबसे बढ़िया होगा। कताअी-सम्बन्धी सारे साहित्यका और अुसमें छिपे आर्थिक, सामाजिक, नैतिक और राजनीतिक सब रहस्योंका अुन्हें अध्ययन करना चाहिये।

४. अपने पहनने-ओढ़नेके लिअे वे हमेशा खादीका ही अुपयोग करें, और गांवोंमें बनी चीजोंके बदले परदेशकी या यंत्रोंकी बनी वैसी चीजोंको कभी न बरतें।

५. वन्देमातरम् गाने या राष्ट्रीय झण्डा फहरानेके मामलेमें वे दूसरों पर जबरदस्ती न करें। राष्ट्रीय झण्डेके बिल्ले वे खुद अपने बदन पर चाहे लगायें, लेकिन दूसरोंको अुसके लिअे मजबूर न करें।

६. तिरंगे झण्डेके संदेशको अपने जीवनमें अुतारकर दिलमें साम्प्रदायिकता या अस्पृश्यताको घुसने न दें। दूसरे धर्मोंवाले विद्यार्थियों और हरिजनोंको अपने भाअी समझकर अुनके साथ सच्ची दोस्ती कायम करें।

७. अपने दुःखी-दर्दी पड़ोसियोंकी सहायताके लिअे वे तुरन्त दौड़ जायं; आसपासके गांवोंमें सफाअीका और भंगीका काम करें और गांवके बड़ी अुमरवाले स्त्री-पुरुषों व बच्चोंको पढ़ावें।

८. आज हिन्दुस्तानीका जो दोहरा स्वरूप तय हुआ है, अुसके अनुसार अुसकी दोनों शैलियों और दोनों लिपियोंके साथ वे राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी सीख लें, ताकि जब हिन्दी या अुर्दू बोली जाय अथवा नागरी या अुर्दू लिपि लिखी जाय, तब अुन्हें वह नअी न मालूम हो।

९. विद्यार्थी जो भी कुछ नया सीखें, अुस सबको अपनी मातृभाषामें लिख लें; और जब वे हर हफ्ते अपने आसपासके गावोंमें दौरा करने निकलें, तो अुसे अपने साथ ले जायं और लोगों तक पहुंचायें।

१०. वे लुक-छिपकर कुछ न करें; जो करें खुल्लम-खुल्ला करें। अपने हर काममें अुनका व्यवहार बिलकुल शुद्ध हो। वे अपने जीवनको संयमी और निर्मल बनायें। किसी चीजसे न डरें और निर्भय रहकर अपने कमजोर साथियोंकी रक्षा करनेमें मुस्तैद रहें; और दंगोंके अवसर पर अपनी जानकी परवाह न करके अहिंसक रीतिसे अुन्हें मिटानेको तैयार रहें। और, जब स्वराज्यकी आखिरी लड़ाअी छिड़ जाय, तब अपनी शिक्षण-संस्थायें छोड़कर लड़ाअीमें कूद पड़ें और जरूरत पड़ने पर देशकी आजादीके लिअे अपनी जान कुरबान कर दें।

११. अपने साथ पढ़नेवाली विद्यार्थिनी बहनोंके प्रति वे अपना व्यवहार बिलकुल शुद्ध और सभ्यतापूर्ण रखें।

अूपर विद्यार्थियोंके लिअे मैंने जो कार्यक्रम सुझाया है, अुस पर अमल करनेके लिअे अुन्हें समय निकालना होगा। मैं जानता हूं कि वे अपना बहुतसा समय यों ही बरबाद कर देते हैं। अपने समयमें सख्त काट-कसर करके वे मेरे द्वारा सुझाये गये कामके लिअे कअी घण्टोंका समय निकाल सकते हैं। लेकिन किसी भी विद्यार्थी पर मैं बेजा बोझा लादना नहीं चाहता। अिसलिअे देशसे प्रेम रखनेवाले विद्यार्थियोंको मेरी यह सलाह है कि वे अपने अभ्यासके समयमें से अेक सालका समय अिस कामके लिअे अलग निकाल लें; मैं यह नहीं कहता कि अेक ही बारमें वे सारा साल दे दें। मेरी सलाह यह है कि वे अपने समूचे अभ्यास-कालमें अिस सालको बांट लें और थोड़ा-थोड़ा करके पूरा करें। अुन्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि अिस तरह बिताया हुआ साल व्यर्थ नहीं गया। अिस समयमें की गअी मेहनतके जरिये वे देशकी आजादीकी लड़ाअीमें अपना ठोस हिस्सा अदा करेंगे, और साथ ही अपनी मानसिक, नैतिक और शारीरिक शक्तियां भी बहुत-कुछ बढ़ा लेंगे।

रचनात्मक कार्यक्रम, पृ० ५२–५६

पश्चिमकी भद्दी नकल और शुद्ध तथा परिष्कृत अंग्रेजी बोलने व लिखनेकी योग्यतासे स्वतंत्रता देवीके मंदिरकी रचनामें अेक भी अींट नहीं जुड़ेगी। विद्यार्थी-जगतको आज जो शिक्षा मिल रही है, वह भूखे-नंगे भारतके लिअे बेहद महंगी है। अुसे बहुत ही थोड़े लोग प्राप्त करनेकी आशा रख सकते हैं। अिसलिअे विद्यार्थियोंसे यह आशा रखी जाती है कि वे राष्ट्रके लिअे अपना जीवन तक न्योछावर करके अपनेको अुस शिक्षाके योग्य बनायेंगे। विद्यार्थियोंको समाजकी रक्षा करनेवाले सुधार-कार्यमें तो अगुआ बनना ही चाहिये। वे राष्ट्रमें जो कुछ अच्छा है अुसकी रक्षा करें और समाजमें जो बेशुमार बुराअियां घुस गअी हैं अुनसे निर्भयता पूर्वक समाजको मुक्त करें।

विद्यार्थियोंको देशके करोड़ों मूक लोगों पर असर डालना होगा। अुन्हें किसी प्रान्त, नगर, वर्ग या जातिकी दृष्टिसे नहीं, बल्कि अेक महाद्वीप और करोड़ों मनुष्योंकी दृष्टिसे सोचना सीखना चाहिये। अिन करोड़ों लोगोंमें अछूत, शराबी, गुंडे और वेश्यायें भी शामिल हैं, हमारे बीच जिनके

अस्तित्वके लिअे हम सभी जिम्मेदार हैं। प्राचीन कालमें विद्यार्थी ब्रह्मचारी अर्थात् अीश्वरके साथ और अुससे डरकर चलनेवाले कहलाते थे। राजा और बड़े-बूढ़े लोग अुनकी अिज्जत करते थे। राष्ट्र खुशी-खुशी अुनका खर्च बरदाश्त करता था और बदलेमें वे राष्ट्रको सौ गुनी बलवान आत्मायें, सौ गुने बलवान मस्तिष्क और सौ गुनी बलिष्ठ भुजायें देते थे। आधुनिक संसारमें गिरे हुअे राष्ट्रोंके विद्यार्थी अुन राष्ट्रोंके आशादीप समझे जाते हैं और जीवनके हर क्षेत्रमें वे सुधारोंके त्यागी नेता बन गये हैं। भारतमें भी अैसे विद्यार्थियोंके अुदाहरण मौजूद हैं। परन्तु वे अिने-गिने हैं। मेरा कहना अितना ही है कि विद्यार्थी-सम्मेलनोंको अिस प्रकारके संगठित कार्योंकी हिमायत करनी चाहिये, जो ब्रह्मचारियोंकी प्रतिष्ठाके योग्य हों।

यंग अिंडिया, ९–६–'२७

विद्यार्थियोंको अपनी सारी छुट्टियां ग्रामसेवामें लगानी चाहिये। अिसके लिअे अुन्हें मामूली रास्तों पर घूमने जानेके बजाय अुन गांवोंमें जाना चाहिये, जो अुनकी संस्थाओंके पास हों। वहां जाकर अुन्हें गांवके लोगोंकी हालतका अध्ययन करना चाहिये और अुनसे दोस्ती करनी चाहिये। अिस आदतसे वे देहातवालोंके सम्पर्कमें आयेंगे । और जब विद्यार्थी सचमुच अुनमें जाकर रहेंगे तब पहलेके कभी-कभीके सम्पर्कके कारण गांववाले अुन्हें अपना हितैषी समझकर अुनका स्वागत करेंगे, न कि अजनवी मानकर अुन पर सन्देह करेंगे। लम्बी छुट्टियोंमें विद्यार्थी देहातमें ठहरें, प्रौढ़शिक्षाके वर्ग चलायें, ग्रामवासियोंको सफाअीके नियम सिखायें और मामूली बीमारियोंके बीमारोंकी दवा-दारू और देखभाल करें। वे अुनमें चरखा भी जारी करें और अुन्हें अपने हर फालतू समयका अुपयोग करना सिखायें। यह काम कर सकनेके लिअे विद्यार्थियों और शिक्षकोंको छुट्टियोंके अुपयोगके बारेमें अपने विचार बदलने होंगे। अकसर विचारहीन शिक्षक छुट्टियोंमें घर करनेके लिअे विद्यार्थियोंको पढ़ाअीका काम दे देते हैं। मेरी रायमें यह आदत हर तरहसे बुरी है। छुट्टियोंका समय ही तो अैसा होता है, जब विद्यार्थियोंका मन पढ़ाअीके रोजमर्राके कामकाजसे मुक्त रहना चाहिये और स्वावलम्बन तथा मौलिक विकासके लिअे स्वतंत्र रहना चाहिये।

मैंने जिस ग्रामसेवाका जिक्र किया है, वह मनोरंजनका और बोझ न मालूम होनेवाली शिक्षाका अुत्तम रूप है। स्पष्ट ही यह सेवा पढ़ाअी पूरी करनेके बाद केवल ग्रामसेवाके काममें लग जानेकी सबसे अच्छी तैयारी है।

यंग अिडिया, २६–१२–'२९

अपनी योग्यताओंको रुपया-आन्ना-पाअीमें भुनानेके बजाय देशकी सेवामें अर्पित करो। यदि तुम डॉक्टर हो तो देशमें अितनी बीमारी है कि अुसे दूर करनेमें तुम्हारी सारी डॉक्टरी विद्या काम आ सकती है। यदि तुम वकील हो तो देशमें लड़ाअी-झगड़ोंकी कमी नहीं है। अुन्हें बढ़ानेके बजाय तुम लोगोंमें आपसी समझौता कराओ और अिस तरह विनाशक मुकदमेबाजीको दूर करके लोगोंकी सेवा करो। यदि तुम अिंजीनियर हो तो अपने देशवासियोंकी आवश्यकताओंके अनुरूप आदर्श घरोंका निर्माण करो। ये घर अुनके साधनोंकी सीमाके अन्दर होने चाहिये और फिर भी शुद्ध हवा और प्रकाशसे भरपूर तथा स्वास्थ्यप्रद होने चाहिये। तुमने जो भी सीखा है अुसमें अैसा कुछ नहीं है, जिसका देशकी सेवाके काममें सदुपयोग न हो सके।

यंग अिडिया, ५–११–'३१

विद्यार्थी और राजनीति

विद्यार्थियोंको अपनी राय रखने और अुसे प्रगट करनेकी पूरी आजादी होनी चाहिये। अुन्हें जो भी राजनीतिक दल अच्छा लगता हो, अुसके साथ वे खुले तौर पर सहानुभूति रख सकते हैं। लेकिन मेरी रायमें जब तक वे अध्ययन कर रहे हैं, तब तक अुन्हें कार्यकी स्वतंत्रता नहीं दी जा सकती। कोअी विद्यार्थी अपना अध्ययन भी करता रहे और साथ ही सक्रिय राजनीतिक कार्यकर्ता भी हो यह शक्य नहीं है।

हरिजन, २–१०–'३७

विद्यार्थियोंका दलगत राजनीतिमें पड़नेसे काम नहीं चल सकता। जैसे वे सब प्रकारकी पुस्तकें पढ़ते हैं, वैसे सब दलोंकी बात सुन सकते हैं। परन्तु अुनका काम यह है कि सबकी सचाअीको हजम करें और बाकीको फेंक दें। यही अेकमात्र अुचित रवैया है जिसे वे अपना सकते हैं।

सत्ताकी राजनीति विद्यार्थी-संसारके लिअे अपरिचित होनी चाहिये। वे ज्यों ही अिस तरहके काममें पड़ेंगे, त्यों ही विद्यार्थीके पदसे च्युत हो जायंगे और अिसलिअे देशके संकट-कालमें अुसकी सेवा करनेमें असफल होंगे।

विद्यार्थियोंसे, पृ० ८९

५४

भारतीय स्त्रियोंका पुनरुत्थान

जिस रूढ़ि और कानूनके बनानेमें स्त्रीका कोअी हाथ नहीं था और जिसके लिअे सिर्फ पुरुष ही जिम्मेदार है, अुस कानून और रूढ़िके जुल्मोंने स्त्रीको लगातार कुचला है। अहिंसाकी नींव पर रचे गये जीवनकी योजनामें जितना और जैसा अधिकार पुरुषको अपने भविष्यकी रचनाका है, अुतना और वैसा ही अधिकार स्त्रीको भी अपना भविष्य तय करनेका है। लेकिन अहिंसक समाजकी व्यवस्थामें जो अधिकार मिलते हैं, वे किसी न किसी कर्तव्य या धर्मके पालनसे प्राप्त होते हैं। अिसलिअे यह भी मानना चाहिये कि सामाजिक आचार-व्यवहारके नियम स्त्री और पुरुष दोनों आपसमें मिलकर और राजी-खुशीसे तय करें। अिन नियमोंका पालन करनेके लिअे बाहरकी किसी बातकी सत्ता या हुकूमतकी जबरदस्ती काम न देगी। स्त्रियोंके साथ अपने व्यवहार और बरतावमें पुरुषोंने अिस सत्यको पूरी तरह पहचाना नहीं है। स्त्रीको अपना मित्र या साथी माननेके बदले पुरुषने अपनेको अुसका स्वामी माना है। कांग्रेस-वालोंका यह खास हक है कि वे हिन्दुस्तानकी स्त्रियोंको अुनकी अिस गिरी हुअी हालतसे हाथ पकड़कर अूपर अुठावें। पुराने जमानेका गुलाम नहीं जानता था कि अुसे आजाद होना है, या कि वह आजाद हो सकता है। औरतोंकी हालत भी आज कुछ अैसी ही है। जब अुस गुलामको आजादी मिली तो कुछ समय तक अुसे अैसा मालूम हुआ, मानो अुसका सहारा ही जाता रहा। औरतोंको यह सिखाया गया है कि वे अपनेको

पुरुषोंकी दासी समझें। अिसलिअे कांग्रेसवालोंका यह फर्ज है कि वे स्त्रियोंको अुनकी मौलिक स्थितिका पूरा बोध करावें और अुन्हें अिस तरहकी तालीम दें, जिससे वे जीवनमें पुरुषोंके साथ बराबरीके दरजेसे हाथ बंटाने लायक बनें।

अेक बार मनका निश्चय हो जानेके बाद अिस क्रान्तिका काम आसान है। अिसलिअे कांग्रेसवाले अिसकी शुरुआत अपने घरसे करें। वे अपनी पत्नियोंको मन बहलानेकी गुड़िया या भोग-विलासका साधन माननेके बदले अुनको सेवाके समान कार्यमें अपना सम्मान्य साथी समझें। अिसके लिअे जिन स्त्रियोंको स्कूल या कॉलेजकी शिक्षा नहीं मिली है, वे अपने पतियोंसे जितना बन पड़े सीखें। जो बात पत्नियोंके लिअे कही है, वही जरूरी परिवर्तनके साथ माताओं और बेटियोंके लिअे भी समझनी चाहिये।

यह कहनेकी जरूरत नहीं कि हिन्दुस्तानकी स्त्रियोंकी लाचारीका यह अेकतरफा चित्र ही मैंने यहां दिया है। मैं भलीभांति जानता हूं कि गांवोंमें औरतें अपने मर्दोंके साथ बराबरीसे टक्कर लेती हैं; कुछ मामलोंमें वे अुनसे बढ़ी-चढ़ी हैं और अुन पर हुकूमत भी चलाती हैं। लेकिन हमें बाहरसे देखनेवाला कोअी भी तटस्थ आदमी यह कहेगा कि हमारे समूचे समाजमें कानून और रूढ़िकी रूसे औरतोंको जो दरजा मिला है, अुसमें कअी खामियां हैं और अुन्हें जड़मूलसे सुधारनेकी जरूरत है।

रचनात्मक कार्यक्रम, पृ० ३२–३४

कानूनकी रचना ज्यादातर पुरुषोंके द्वारा हुअी है। और अिस कामको करनेमें, जिसे करनेका जिम्मा मनुष्यने अपने अूपर खुद ही अुठा लिया है, अुसने हमेशा न्याय और विवेकका पालन नहीं किया है। स्त्रियोंमें नये जीवनका संचार करनेके हमारे प्रयत्नका अधिकांश भाग अुन दूषणोंको दूर करनेमें खर्च होना चाहिये, जिनका हमारे शास्त्रोंने स्त्रियोंके जन्मजात और अनिवार्य लक्षण कहकर वर्णन किया है। अिस कामको कौन करेगा और कैसे करेगा? मेरी नम्र रायमें अिस प्रयत्नकी सिद्धिके लिअे हमें सीता, दमयन्ती और द्रौपदी जैसी पवित्र और दृढ़ता तथा संयम आदि गुणोंसे युक्त स्त्रियां प्रकट करनी होंगी। यदि हम अपने

बीचमें अैसी स्त्रियां प्रगट कर सके, तो अिन आधुनिक देवियोंको वही मान्यता मिलेगी जो अभी तक शास्त्रोंको प्राप्त है। अुस हालतमें हमारी स्मृतियोंमें स्त्री-जातिके सम्बन्धमें यहां-वहां जो असम्मान-सूचक अुक्तियां मिलती हैं, अुन पर हम लज्जित होंगे। अैसी क्रान्तियां हिन्दू धर्ममें प्राचीन कालमें हो चुकी हैं और भविष्यमें भी होंगी और हमारे धर्मको ज्यादा स्थायी बनायेंगी।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ४२४

स्त्री पुरुषकी साथिन है, जिसकी बौद्धिक क्षमतायें पुरुषकी वैसी ही क्षमताओंसे किसी तरह कम नहीं हैं। पुरुषकी प्रवृत्तियोंमें, अुन प्रवृत्तियोंके प्रत्येक अंग और अुपांगमें भाग लेनेका अुसे अधिकार है; और आजादी तथा स्वाधीनताका अुसे अुतना ही अधिकार है जितना पुरुषको। जिस तरह पुरुष अपनी प्रवृत्तिके क्षेत्रमें सर्वोच्च स्थानका अधिकारी माना गया है, अुसी तरह स्त्री भी अपनी प्रवृत्तिके क्षेत्रमें मानी जानी चाहिये। स्त्रियां पढ़ना-लिखना सीखें और अुसके परिणामस्वरूप यह स्थिति आये, अैसा नहीं होना चाहिये। यह तो हमारी सामाजिक व्यवस्थाकी सहज अवस्था ही होनी चाहिये। महज अेक दूषित रूढ़ि और रिवाजके कारण बिलकुल ही मूर्ख और नालायक पुरुष भी स्त्रियोंसे बड़े माने जाते हैं, यद्यपि वे अिस बड़प्पनके पात्र नहीं होते और न वह अुन्हें मिलना चाहिये। हमारे कअी आन्दोलनोंकी प्रगति हमारे स्त्री-समाजकी पिछड़ी हुअी हालतके कारण बीचमें ही रुक जाती है। अिसी तरह हमारे किये हुअे कामका जैसा और जितना फल आना चाहिये, वैसा और अुतना नहीं आता। हमारी दशा अुस कंजूस व्यापारीके जैसी है, जो अपने व्यापारमें पर्याप्त पूंजी नहीं लगाता और अिसलिअे नुकसान अुठाता है।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ४२५

स्त्री और पुरुषकी समानता

स्त्रियोंके अधिकारोंके सवाल पर मैं किसी तरहका समझौता स्वीकार नहीं कर सकता। मेरी रायमें अुन पर अैसा कोअी कानूनी प्रतिबन्ध नहीं लगाया जाना चाहिये, जो पुरुषों पर न लगाया गया हो। पुत्रों

और कन्याओंमें किसी तरहका भेद नहीं होना चाहिये। अुनके साथ पूरी समानताका व्यवहार होना चाहिये।

यंग अिंडिया, १७–१०–'२९

पुरुष और स्त्रीकी समानताका यह अर्थ नहीं कि वे समान धन्धे भी करें। स्त्रीके शस्त्र धारण करने या शिकार करनेके खिलाफ कोओी कानूनी बाधा न होनी चाहिये। लेकिन जो काम पुरुषके करनेके हैं, अुनसे वह स्वभावतः विरत होगी। प्रकृतिने स्त्री और पुरुषको अेक-दूसरेके पूरकके रूपमें सिरजा है। जिस तरह अुनके आकारमें भेद है, अुसी तरह अुनके कार्य भी मर्यादित हैं।

हरिजन, २–१२–'३९

विवाह

यदि हम स्त्री-पुरुषके सम्बन्धोंके सवालको स्वस्थ और शुद्ध मनसे देखें और अपनेको भावी पीढ़ियोंके कल्याणका ट्रस्टी मानें, तो आज जिस क्षेत्रमें जो दुःख नजर आते हैं, अुनमें से अधिकांश टाले जा सकते हैं।

यंग अिंडिया, २७–९–'२८

विवाह जीवनकी अेक स्वाभाविक घटना है और अुसे किसी भी तरह दूषित या कुत्सित मानना गलत है।. . . आदर्श यह है कि विवाहको अेक पवित्र संस्कार समझा जाय और तदनुसार विवाहित अवस्थामें संयमका पालन किया जाय।

हरिजन, २२–३–'४२

परदा

पवित्रता स्त्रियोंको बाहरी मर्यादाओंमें जकड़कर रखनेसे अुत्पन्न होने-वाली चीज नहीं है। अुसकी रक्षा अुन्हें परदेकी दीवालसे घेरकर नहीं की जा सकती। अुसकी अुत्पत्ति और अुसका विकास भीतरसे होना चाहिये। और अुसकी कसौटी यह है कि वह पवित्रता किसी भी प्रलोभनसे डिगे

नहीं। अिस कसौटी पर वह खरी सिद्ध हो तभी अुसका कोअी मूल्य माना जा सकता है।

यंग अिंडिया, ३–२–'२७

और स्त्रियोंकी पवित्रताके विषयमें पुरुष मानसिक अस्वस्थताकी सूचक अितनी चिन्ता क्यों दिखाते हैं? क्या पुरुषोंकी पवित्रताके विषयमें स्त्रियोंको कुछ कहनेका अधिकार है? पुरुषोंके शीलकी पवित्रताके विषयमें हम स्त्रियोंको तो कोअी चिन्ता करते हुअे नहीं सुनते। स्त्रियोंके शीलकी पवित्रताके नियमनका अधिकार अपने हाथोंमें लेनेकी अिच्छा पुरुषोंको क्यों करनी चाहिये? पवित्रता कोअी अैसी चीज नहीं है जो अूपरसे लादी जा सके। वह तो भीतरसे विकसित होनेवाली और अिसलिअे वैयक्तिक प्रयत्नसे सिद्ध होनेवाली चीज है।

यंग अिंडिया, २५–११–'२६

दहेजकी प्रथा

यह प्रथा नष्ट होनी चाहिये। विवाह लड़के-लड़कीके माता-पिताओं द्वारा पैसे ले-देकर किया हुआ सौदा नहीं होना चाहिये। अिस प्रथाका जातिप्रथासे गहरा सम्बन्ध है। जब तक चुनावका क्षेत्र अमुक जातिके अिने-गिने लड़कों या लड़कियों तक ही मर्यादित रहेगा तब तक यह प्रथा भी रहेगी, भले अुसके खिलाफ जो भी कहा जाय। यदि अिस बुराअीका अुच्छेद करना हो तो लड़कियोंको या लड़कोंको या अुनके माता-पिताओंको जातिके बन्धन तोड़ने पड़ेंगे। सबका मतलब यह है कि अैसी तालीमकी जरूरत है, जो देशके युवकों और युवतियोंके मानसमें आमूल प्ररिवर्तन कर दे।

हरिजन, २३–५–'३६

कोअी भी युवक, जो दहेजको विवाहकी शर्त बनाता है, अपनी शिक्षाको कलंकित करता है, अपने देशको कलंकित करता है और नारी-जातिका अपमान करता है। देशमें आजकल बहुतेरे युवक-आन्दोलन चल रहे हैं। मैं चाहता हूं कि ये आन्दोलन अिस किस्मके सवालोंको

अपने हाथमें लें। अैसे संगठनोंको किसी ठोस सुधार-कार्यका प्रतिनिधि होना चाहिये और यह सुधार-कार्य अुन्हें अपने अन्दरसे ही शुरू करना चाहिये। लेकिन देखा गया है कि अिस तरहके सुधार-कार्यके प्रतिनिधि होनेके बजाय वे अकसर आत्म-प्रशंसा करनेवाली समितियोंका रूप ले लेते हैं।... दहेजकी अिस नीचे गिरानेवाली प्रथाके खिलाफ बलवान लोकमत पैदा करना चाहिये; और जो युवक अिस पापके सोनेसे अपने हाथ गंदे करते हैं, अुनका समाजसे बहिष्कार किया जाना चाहिये। लड़कियोंके माता-पिताओंको अंग्रेजी डिग्रियोंका मोह छोड़ देना चाहिये, और अपनी कन्याओंके लिअे सच्चे और स्त्री-जातिके प्रति सम्मानकी भावना रखनेवाले सुयोग्य वरोंकी खोजमें अपनी जाति या प्रान्तके भी तंग दायरेके बाहर जानेमें संकोच नहीं करना चाहिये।

यंग अिंडिया, २१-६-'२८

विधवाओंका पुनर्विवाह

जिस स्त्रीने अपने पतिके प्रेमका अनुभव किया हो अुसके द्वारा स्वेच्छासे और समझ-बूझकर स्वीकार किया गया वैधव्य जीवनको सौन्दर्य और गौरव प्रदान करता है, घरको पवित्र बनाता है और धर्मको अूपर अुठाता है। लेकिन धर्म या रिवाजके द्वारा अूपरसे लादा हुआ वैधव्य अेक असह्य बोझ है; वह गुप्त पापाचारके द्वारा घरको अपवित्र करता है और धर्मको गिराता है।

यदि हम पावित्र्यकी और हिन्दू धर्मकी रक्षा करना चाहते हैं, तो अिस जबरदस्ती लादे जानेवाले वैधव्यके विषसे हमें मुक्त होना ही होगा। अिस सुधारकी शुरुआत अुन लोगोंको करनी चाहिये, जिनके यहां बाल-विधवायें हों। अुन्हें साहसपूर्वक अिन बाल-विधवाओंका योग्य लड़कोंसे विवाह करा देना चाहिये। बाल-विधवाओंके अिस विवाहको मैं पुनर्विवाहका नाम नहीं देना चाहता, क्योंकि मैं मानता हूं कि अुनका विवाह तो कभी हुआ ही नहीं था।

यंग अिंडिया, ५-८-'२६

तलाक

विवाह विवाह-सूत्रसे बंधे हुअे दोनों साथियोंको अेक-दूसरेके साथ शरीर-सम्बन्धका अधिकार देता है। लेकिन अिस अधिकारकी अेक मर्यादा है। अिस अधिकारका अुपभोग तभी हो जब दोनों साथी अिस सम्बन्धकी अिच्छा रखते हों। अेक साथी दूसरेसे अुसकी अनिच्छा होते हुअे भी अिस सम्बन्धकी मांग करे, अैसा अधिकार विवाह नहीं देता। जब अिनमें से कोअी भी अेक साथी नैतिक अथवा अन्य किसी कारणसे दूसरेकी अैसी अिच्छाका पालन करनेमें असमर्थ हो तब क्या करना चाहिये, यह अेक अलग सवाल है। व्यक्तिगत तौर पर यदि तलाक ही अिस सवालका अेकमात्र अुपाय हो, तो अपनी नैतिक प्रगतिको रोकनेके बजाय मैं अिस अुपायको ही स्वीकार कर लूंगा — बशर्ते कि मेरे संयमका कारण नैतिक ही हो।

यंग अिंडिया, ८–१०–'२५

मैं विवाहित अवस्थाको भी जीवनके दूसरे हिस्सोंकी तरह साधनाकी ही अवस्था मानता हूं। जीवन कर्तव्य-पालन है, अेक लगातार चलनेवाली परीक्षा है। विवाहित जीवनका लक्ष्य दोनों साथियोंका पारस्परिक कल्याण साधना है — यहां अिस जीवनमें और अिस जीवनके बाद भी। यह संस्था मानव-जातिके हितके लिअे है। दोमें से कोअी अेक साथी विवाहके अनुशासनको तोड़े, तो दूसरेको विवाह-सम्बन्ध भंग करनेका अधिकार हो जाता है। यहां विवाह-सम्बन्धका भंग नैतिक है, शारीरिक नहीं; लेकिन अिसमें तलाककी बात नहीं है। स्त्री या पुरुष अपने साथीसे अलग हो जायगा, लेकिन अुसी अुद्देश्यकी सिद्धिके लिअे जिसके लिअे वे विवाह-सूत्रमें बंधे थे। हिन्दू धर्म स्त्री-पुरुष दोनोंको अेक-दूसरेका समकक्ष मानता है; कोअी किसीसे न तो कम है, न ज्यादा। बेशक, न जाने कबसे स्त्रीको छोटा और पुरुषको बड़ा माननेवाला अेक भिन्न रिवाज चल पड़ा है। लेकिन अैसी तो और कितनी ही बुराअियां समाजमें घुस आयी हैं। जो भी हो, मैं यह जरूर जानता हूं कि हिन्दू धर्म व्यक्तिको अिस बातकी पूरी आजादी देता है कि वह आत्म-साक्षात्कारके

लिअे जो कुछ करना आवश्यक हो सो करे, क्योंकि वही मानव-जन्मका सच्चा अुद्देश्य है।

यंग अिंडिया, २१–१०–'२६

स्त्रियोंके शीलकी रक्षा

मैंने हमेशा यह माना है कि किसी स्त्रीकी अिच्छाके खिलाफ अुसका शील भंग नहीं किया जा सकता। अिस अत्याचारकी शिकार वह तब होती है जब अुसके मन पर डर छा जाता है या जब अुसे अपने नैतिक बलकी प्रतीति नहीं होती। अगर वह आक्रमणकारीके शारीरिक बलका मुकाबला नहीं कर सकती, तो अुसकी पवित्रता अुसे, आक्रमणकारी अुसके शीलका भंग कर सके अुसके पहले ही, मरनेका अिच्छाबल अवश्य दे सकती है। सीताका अुदाहरण लीजिये। शारीरिक दृष्टिसे रावणकी तुलनामें वे कुछ भी नहीं थीं, किन्तु अुनकी पवित्रता रावणके अपार राक्षसी बलसे भी ज्यादा शक्तिशाली सिद्ध हुअी। रावणने अुन्हें अनेक तरहके प्रलोभन देकर जीतना चाहा, लेकिन अुन्हें वासना-पूर्तिके लिअे छूनेकी हिम्मत वह नहीं कर सका। दूसरी ओर, यदि स्त्री अपने शारीरिक बल पर या हथियार पर भरोसा करे, तो अपनी शक्तिके चूक जाने पर वह निश्चय ही हार जायेगी।

हरिजन, १४–१–'४०

किसी स्त्री पर जब आक्रमण हो अुस समय अुसे हिंसा और अहिंसाका विचार करनेकी जरूरत नहीं। अुसका पहला कर्तव्य आत्मरक्षा करना है। अपने शीलकी रक्षाके लिअे अुसे जो भी अुपाय सूझे अुसका अुपयोग करनेकी अुसे पूरी आजादी है। भगवानने अुसे दांत और नाखून तो दिये ही हैं। अुसे अपनी पूरी ताकतके साथ अुनका अुपयोग करना चाहिये और यदि जरूरत पड़ जाय तो प्रयत्न करते हुअे मर जाना चाहिये। जिस पुरुष या स्त्रीने मरनेका सारा डर छोड़ दिया है, वह न केवल अपनी ही रक्षा कर सकेगी, बल्कि अपने प्राणोंका बलिदान करके दूसरोंकी रक्षा भी कर सकेगी।

हरिजन, १–३–'४२

वेश्यावृत्ति

वेश्यावृत्ति दुनियामें हमेशा रही है, यह सही है। लेकिन आजकी तरह वह कभी शहरी जीवनका अभिन्न अंग भी रही होगी, अिसमें मुझे शंका है। जो भी हो, अेक अैसा समय जरूर आना चाहिये और आयेगा जब कि मानव-जाति अिस अभिशापके खिलाफ अुठ खड़ी होगी; और जिस तरह अुसने दूसरे अनेक बुरे रिवाजोंको, भले वे कितने भी पुराने रहे हों, मिटा दिया है, अुसी तरह वेश्यावृत्तिको भी वह भूतकालकी चीज बना देगी।

यंग अिंडिया, २८-५-'२५

५५

स्त्रियोंकी शिक्षा

मैंने समय-समय पर यह बताया है कि स्त्रीमें विद्याका अभाव अिस बातका कारण नहीं होना चाहिये कि पुरुष स्त्रीसे मनुष्य-समाजके स्वाभाविक अधिकार छीन ले या अुसे वे अधिकार न दे। किन्तु अिन स्वाभाविक अधिकारोंको काममें लानेके लिअे, अुनकी शोभा बढ़ानेके लिअे और अुनका प्रचार करनेके लिअे स्त्रियोंमें विद्याकी जरूरत अवश्य है। साथ ही, विद्याके बिना लाखोंको शुद्ध आत्मज्ञान भी नहीं मिल सकता।

स्त्री और पुरुष समान दरजेके हैं, परन्तु अेक नहीं; अुनकी अनोखी जोड़ी है। वे अेक-दूसरेकी कमी पूरी करनेवाले हैं और दोनों अेक-दूसरेका सहारा हैं। यहां तक कि अेकके बिना दूसरा रह नहीं सकता। किन्तु यह सिद्धान्त अूपरकी स्थितिमें से ही निकल आता है कि पुरुष या स्त्री कोअी अेक अपनी जगहसे गिर जाय तो दोनोंका नाश हो जाता है। अिसलिअे स्त्री-शिक्षाकी योजना बनानेवालोंको यह बात हमेशा याद रखनी चाहिये। दम्पतीके बाहरी कामोंमें पुरुष सर्वोपरि है। बाहरी कामोंका विशेष ज्ञान अुसके लिअे जरूरी है। भीतरी कामोंमें स्त्रीकी प्रधानता है। अिसलिअे गृह-व्यवस्था, बच्चोंकी देखभाल, अुनकी शिक्षा वगैराके बारेमें

स्त्रीको विशेष ज्ञान होना चाहिये। यहां किसीको कोअी भी ज्ञान प्राप्त करनेसे रोकनेकी कल्पना नहीं है। किन्तु शिक्षाका क्रम अिन विचारोंको ध्यानमें रखकर न बनाया गया हो, तो स्त्री-पुरुष दोनोंको अपने-अपने क्षेत्रमें पूर्णता प्राप्त करनेका मौका नहीं मिलता।

मुझे अैसा लगा है कि हमारी मामूली पढ़ाअीमें स्त्री या पुरुष किसीके लिअे भी अंग्रेजी जरूरी नहीं है। कमाअीके खातिर या राजनीतिक कामोंके लिअे ही पुरुषोंको अंग्रेजी भाषा जाननेकी जरूरत हो सकती है। मैं नहीं मानता कि स्त्रियोंको नौकरी ढूंढ़ने या व्यापार करनेकी झंझटमें पड़ना चाहिये। अिसलिअे अंग्रेजी भाषा थोड़ी ही स्त्रियां सीखेंगी। और जिन्हें सीखना होगा वे पुरुषोंके लिअे खोली हुअी शालाओंमें ही सीख सकेंगी। स्त्रियोंके लिअे खोली हुअी शालामें अंग्रेजी जारी करना हमारी गुलामीकी अुमर बढ़ानेका कारण बन जायगा। यह वाक्य मैंने बहुतोंके मुंहसे सुना है और बहुत जगह सुना है कि अंग्रेजी भाषामें भरा हुआ खजाना पुरुषोंकी तरह स्त्रियोंको भी मिलना चाहिये। मैं नम्रताके साथ कहूंगा कि अिसमें कहीं न कहीं भूल है। यह तो कोअी नहीं कहता कि पुरुषोंको अंग्रेजीका खजाना दिया जाय और स्त्रियोंको न दिया जाय।

जिसे साहित्यका शौक है वह अगर सारी दुनियाका साहित्य समझना चाहे, तो अुसे रोककर रखनेवाला अिस दुनियामें कोअी पैदा नहीं हुआ है। परन्तु जहां आम लोगोंकी जरूरतें समझकर शिक्षाका क्रम तैयार किया गया हो, वहां अूपर बताये हुअे साहित्य-प्रेमियोंके लिअे योजना तैयार नहीं की जा सकती। स्त्री या पुरुषको अंग्रेजी भाषा सीखनेमें अपना समय नहीं लगाना चाहिये। यह बात मैं अुनका आनन्द कम करनेके लिअे नहीं कहता, बल्कि अिसलिअे कहता हूं कि जो आनन्द अंग्रेजी शिक्षा पानेवाले बड़े कष्टसे लेते हैं वह हमें आसानीसे मिले। पृथ्वी अमूल्य रत्नोंसे भरी है। सारे साहित्य-रत्न अंग्रेजी भाषामें ही नहीं हैं। दूसरी भाषायें भी रत्नोंसे भरी हैं। मुझे ये सारे रत्न आम जनताके लिअे चाहिये। अैसा करनेके लिअे अेक ही अुपाय है और वह यह कि हममें से कुछ अैसी शक्तिवाले लोग वे भाषायें सीखें और अुनके रत्न हमें अपनी भाषामें दें।

सच्ची शिक्षा, पृ० १५८–६१

मैं स्त्रियोंकी समुचित शिक्षाका हिमायती हूं, लेकिन मैं यह भी मानता हूं कि स्त्री दुनियाकी प्रगतिमें अपना योग पुरुषकी नकल करके या अुसकी प्रतिस्पर्धा करके नहीं दे सकती। वह चाहे तो प्रतिस्पर्धा कर सकती है। लेकिन पुरुषकी नकल करके वह अुस अूंचाअी तक नहीं अुठ सकती, जिस अूंचाअी तक अुठना अुसके लिअे सम्भव है। अुसे पुरुषकी पूरक बनना चाहिये।

हरिजन, २७–२–'३७

सहशिक्षा

मैं अभी तक निश्चयपूर्वक यह नहीं कह सकता कि सहशिक्षा सफल होगी या नहीं होगी। पश्चिममें वह सफल हुअी हो अैसा नहीं लगता। वर्षों पहले मैंने खुद अुसका प्रयोग किया था और वह भी अिस हद तक कि लड़के और लड़कियां अुसी बरामदेमें सोते थे। अुनके बीचमें कोअी आड़ नहीं होती थी; अलबत्ता, मैं और श्रीमती गांधी भी अुनके साथ अुसी बरामदेमें सोते थे। मुझे कहना चाहिये कि अिस प्रयोगके परिणाम अच्छे नहीं आये।

. . . सहशिक्षा अभी प्रयोगकी ही अवस्थामें है और अुसके परिणामोंके बारेमें पक्ष अथवा विपक्षमें निश्चयपूर्वक हम कुछ नहीं कह सकते। मेरा खयाल है कि अिस दिशामें हमें आरम्भ परिवारसे करना चाहिये। परिवारमें लड़के-लड़कियोंको साथ-साथ स्वाभाविक तौर पर और आजादीके वातावरणमें बढ़ने देना चाहिये। सहशिक्षा अिस तरह अपने-आप आयेगी।

अमृतबाजार पत्रिका, १२–१–'३५

अगर आप स्कूलोंमें अिकट्ठी तालीम दें और ट्रेनिंग स्कूलोंमें न दें, तो बच्चे समझेंगे कि कहीं कुछ-न-कुछ गड़बड़ है।

मेरे बच्चे अगर बुरे भी हैं तो भी मैं अुन्हें खतरेमें पड़ने दूंगा। अेक दिन हमें काम-प्रवृत्तिको छोड़ना होगा। हमें हिन्दुस्तानके लिअे पश्चिमकी मिसालें नहीं ढूंढ़नी चाहिये। ट्रेनिंग स्कूलोंमें अगर सिखानेवाले शिक्षक लायक और पवित्र हों, नयी तालीमकी भावनासे भरे हों, तो कोअी खतरा नहीं। दुर्भाग्यसे कुछ घटनायें अैसी हो भी जायें तो कोअी परवाह नहीं। वे

तो हर जगह होंगी। मैं यह बात साहसपूर्वक कहता तो हूं, लेकिन मैं अिसके खतरोंसे बेखबर नहीं हूं।

हरिजनसेवक, ९-११-'४७

५६
संतति-नियमन

सन्ततिके जन्मको मर्यादित करनेकी आवश्यकताके बारेमें दो मत हो ही नहीं सकते। परन्तु अिसका अेकमात्र अुपाय है आत्म-संयम या ब्रह्मचर्य, जो कि युगोंसे हमें प्राप्त है। यह रामबाण और सर्वोपरि अुपाय है और जो यिसका सेवन करते हैं अुन्हें लाभ ही लाभ होता है। डॉक्टर लोगोंका मानव-जाति पर बड़ा अुपकार होगा, यदि वे सन्तति-नियमनके लिअे कृत्रिम साधनोंकी तजवीज करनेके बजाय आत्म-संयमके साधन निर्माण करें।

कृत्रिम साधनोंकी सलाह देना मानो बुराअीका हौसला बढ़ाना है। अुससे पुरुष और स्त्री दोनों अुच्छृंखल हो जाते हैं। और अिन कृत्रिम साधनोंको जो प्रतिष्ठा दी जा रही है, अुससे अुस संयमके ह्रासकी गति बढ़े बिना न रहेगी, जो कि लोकमतके कारण हम पर रहता है। कृत्रिम साधनोंके अवलंबनका कुफल होगा नपुंसकता और क्षीणवीर्यता। यह दवा रोगसे भी ज्यादा बदतर साबित हुअे बिना न रहेगी।

अपने कर्मके फलको भोगनेसे दुम दबाना दोष है, अनीतिपूर्ण है। जो शख्स जरूरतसे ज्यादा खा लेता है, अुसके लिअे यही अच्छा है कि अुसके पेटमें दर्द हो और अुसे लंघन करना पड़े। जबानको काबूमें न रख कर अनाप-शनाप खा लेना और फिर बलवर्धक या दूसरी दवाअियां खाकर अुसके नतीजेसे बचना बुरा है। पशुकी तरह विषय-भोगमें गर्क रहकर अपने अिस कृत्यके फलसे बचना और भी बुरा है। प्रकृति बड़ी कठोर शासक है। वह अपने कानून-भंगका पूरा बदला बिना आगा-पीछा देखे चुकाती है। केवल नैतिक संयमके द्वारा ही हमें नैतिक फल

मिल सकता है। संयमके दूसरे तमाम साधन अपने हेतुके ही विनाशक सिद्ध होंगे।

हिन्दी नवजीवन, १२–३–'२५

विषय-भोग करते हुअे भी कृत्रिम अुपायोंके द्वारा प्रजोत्पत्ति रोकनेकी प्रथा पुरानी है। मगर पूर्वकालमें वह गुप्त रूपसे चलती थी। आधुनिक सभ्यताके अिस जमानेमें अुसे अूंचा स्थान मिल गया है, और कृत्रिम अुपायोंकी रचना भी व्यवस्थित तरीकेसे की गयी है। अिस प्रथाको परमार्थका जामा पहनाया गया है। अिन अुपायोंके हिमायती कहते हैं कि भोगेच्छा स्वाभाविक वस्तु है, शायद अुसे अीश्वरका वरदान भी कहा जा सकता है। अुसे निकाल फेंकना अशक्य है। अुस पर संयमका अंकुश रखना कठिन है। और अगर संयमके सिवा दूसरा कोअी अुपाय न ढूंढ़ा जाय, तो असंख्य स्त्रियोंके लिअे प्रजोत्पत्ति बोझरूप हो जायगी; और भोगसे अुत्पन्न होनेवाली प्रजा अितनी बढ़ जायगी कि मनुष्य-जातिके लिअे पूरी खुराक ही नहीं मिल सकेगी। अिन दो आपत्तियोंको रोकनेके लिअे कृत्रिम अुपायोंकी योजना करना मनुष्यका धर्म हो जाता है।

मुझ पर अिस दलीलका असर नहीं हुआ है। क्योंकि अिन अुपायोंके द्वारा मनुष्य अनेक दूसरी मुसीबतें मोल लेता है। मगर सबसे बड़ा नुकसान तो यह है कि कृत्रिम अुपायोंके प्रचारसे संयम-धर्मके लोप हो जानेका भय पैदा होगा। अिस रत्नको बेचकर चाहे जैसा तात्कालिक लाभ मिले, तो भी यह सौदा करने योग्य नहीं है। . . . कठिनाअी आत्म-वंचनासे पैदा होती है। अिसमें त्यागका आरम्भ विचार-शुद्धिसे नहीं होता, केवल बाह्याचारको रोकनेके निष्फल प्रयत्नसे होता है। विचारकी दृढ़ताके साथ आचारका संयम शुरू हो, तो सफलता मिले बिना रह ही नहीं सकती। स्त्री-पुरुषकी जोड़ी विषय-सेवनके लिअे हरगिज नहीं बनी है।

आरोग्यकी कुंजी, पृ० ३७–३८;, १९५९

मुझे मालूम है कि गुप्त पापने पाठशालाके लड़के-लड़कियोंका कैसा भयंकर विनाश किया है। विज्ञानके नाम पर कृत्रिम साधनोंके प्रचलित

होने और समाजके प्रसिद्ध नताओंकी अुस पर मुहर लग जानेसे समस्या और वढ़ गअी है; और जो सुधारक सामाजिक जीवनकी शुद्धिका काम करते हैं, अुनका कार्य आज असंभव-सा हो गया है। मैं पाठकोंको यह सूचना देते हुअे कोअी विश्वासघात नहीं कर रहा हूं कि अैसी कुंवारी लड़कियां हैं, जिन पर आसानीसे किसी भी बातका प्रभाव पड़ सकता है और जो स्कूल-कॉलेजोंमें पढ़ती हैं, परन्तु जो बड़ी अुत्सुकतासे संतति-निग्रहके साहित्य और पत्रिकाओंका अध्ययन करती हैं और जिनके पास अुसके साधन भी मौजूद हैं। अिन साधनोंके प्रयोगको विवाहित स्त्रियों तक सीमित रखना असंभव है। जब विवाहके अुद्देश्य और अुच्चतम अुपयोगकी कल्पना ही पाशविक विकारकी तृप्ति हो और यह विचार तक न किया जाय कि अिस प्रकारकी तृप्तिका कुदरती नतीजा क्या होगा, तब विवाहकी सारी पवित्रता नष्ट हो जाती है।

मुझे अिसमें जरा भी शक नहीं कि जो विद्वान पुरुष और स्त्रियां मिशनरी अुत्साहके साथ कृत्रिम साधनोंके पक्षमें आन्दोलन कर रहे हैं, वे देशके युवकोंकी अपार हानि कर रहे हैं। अुनका यह विश्वास झूठा है कि अैसा करके वे अुन गरीब स्त्रियोंको संकटसे बचा लेंगे, जिन्हें अपनी अिच्छाके विरुद्ध मजबूरन् बच्चे पैदा करने पड़ते हैं। जिन्हें बच्चोंकी संख्या मर्यादित करनेकी जरूरत है, अुनके पास तो अिनकी आसानीसे पहुंच नहीं होगी। हमारी गरीब औरतोंके पास न तो वह ज्ञान होता है और न वह तालीम होती है, जो पश्चिमकी स्त्रियोंके पास होती है। अवश्य ही यह आन्दोलन मध्यम श्रेणीकी स्त्रियोंकी तरफसे नहीं किया जा रहा है, क्योंकि अुन्हें अिस ज्ञानकी अुतनी जरूरत नहीं है जितनी निर्धन वर्गोंकी स्त्रियोंको है।

परन्तु सबसे बड़ी हानि, जो यह आन्दोलन कर रहा है, यह है कि पुराना आदर्श छोड़कर यह अुसके स्थान पर अेक अैसा आदर्श स्थापित कर रहा है, जिस पर अमल हुआ तो मानव-जातिका नैतिक और शारीरिक विनाश निश्चित है। वीर्यके व्यर्थ व्ययको प्राचीन साहित्यमें जो अितना भयंकर कृत्य माना गया है, वह कोअी अज्ञानजन्य अंधविश्वास नहीं था। कोअी किसान अगर अपने पासका बढ़ियासे बढ़िया बीज

पथरीली जमीनमें बोये या कोअी खेतका मालिक बढ़िया जमीनवाले अपने खेतमें अैसी परिस्थितियोंमें अच्छा बीज डाले जिनमें अुसका अुगना असंभव हो, तो अुसके लिअे क्या कहा जायगा? भगवानने पुरुषको अूंचीसे अूंची शक्तिवाला बीज प्रदान किया है और स्त्रीको अैसा खेत दिया है जिसके बराबर अुपजाअू धरती अिस दुनियामें और कहीं नहीं है। अवश्य ही पुरुषकी यह भयंकर मूर्खता है कि वह अपनी अिस सबसे कीमती संपत्तिको व्यर्थ जाने देता है। अुसे अपने अत्यन्त मूल्यवान जवाहरात और मोतियोंसे भी अधिक सावधानीके साथ अिसकी रक्षा करनी चाहिये। अिसी तरह वह स्त्री भी अक्षम्य मूर्खता करती है, जो अपने जीवोत्पादक क्षेत्रमें बीजको नष्ट होने देनेके अिरादेसे ही ग्रहण करती है। वे दोनों अीश्वर-प्रदत्त प्रतिभाके दुरुपयोगके अपराधी माने जायंगे और जो चीज अुन्हें दी गअी है वह अुनसे छीन ली जायगी। कामकी प्रेरणा अेक सुन्दर और अुदात्त वस्तु है। अुसमें लज्जित होनेकी कोअी बात नहीं है। परन्तु वह संतानोत्पत्तिके लिअे ही बनाअी गअी है। अुसका और कोअी अुपयोग करना अीश्वर और मानवता दोनोंके प्रति पाप है। सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधन पहले भी थे और आगे भी रहेंगे। परन्तु पहले अुन्हें काममें लेना पाप समझा जाता था। पापको पुण्य कहकर अुसका गौरव बढ़ाना हमारी पीढ़ीके ही भाग्यमें बदा है। मेरे खयालसे कृत्रिम साधनोंके हिमायती भारतके युवकोंकी सबसे बड़ी कुसेवा यह कर रहे हैं कि अुनके दिमागोंमें वे गलत विचारधारा भर रहे हैं। भारतके युवा स्त्री-पुरुषोंको, जिनके हाथमें देशका भाग्य है, अिस झूठे देवतासे सावधान रहना चाहिये, अीश्वरने अुन्हें जो ख़जाना दिया है अुसकी रक्षा करनी चाहिये और अिच्छा हो तो अुसका अुसी काममें अुपयोग करना चाहिये जिसके लिअे वह बनाया गया है।

हरिजन, २८–३–’३६

मैं यह नहीं मानता कि स्त्री काम-विकारकी अुतनी ही शिकार बनती है जितना पुरुष। पुरुषके बनिस्बत स्त्रीके लिअे आत्म-संयम पालना ज्यादा आसान होता है। मैं मानता हूं कि अिस देशमें स्त्रीको दी जाने

लायक सही शिक्षा यह होगी कि अुसे अपने पतिको भी 'नहीं' कहनेकी कला सिखाअी जाय; अुसे यह सिखाया जाय कि पतिके हाथोंमें केवल विषय-भोगका साधन या गुड़िया बनकर रहना अुसका कर्तव्य बिलकुल नहीं है। यदि स्त्रीके कर्तव्य हैं तो अुसके अधिकार भी हैं।

पहली बात है अुसे मानसिक गुलामीसे मुक्त करना, अुसे अपने शरीरको पवित्र माननेकी शिक्षा देना और राष्ट्र तथा मानव-जातिकी सेवाकी प्रतिष्ठा और गौरव सिखाना। यह मान लेना अनुचित होगा कि भारतकी स्त्रियां अिस गुलामीसे कभी छूट ही नहीं सकतीं और अिसलिअे प्रजोत्पत्तिको रोकने तथा अपनी बची-खुची तन्दुरुस्तीकी रक्षा करनेके लिअे अुन्हें कृत्रिम साधनोंका अुपयोग सिखानेके सिवा दूसरा कोअी रास्ता नहीं है।

जिन बहनोंका पुण्य-प्रकोप अैसी स्त्रियोंके कष्टोंको देखकर जिन्हें अिच्छा या अनिच्छासे बच्चे पैदा करने पड़ते हैं — जाग्रत हुआ है, वे अुतावली न बनें। कृत्रिम साधनोंके पक्षमें किया जानेवाला प्रचार भी वांछित हेतुको अेक दिनमें सिद्ध नहीं कर देगा। हर पद्धतिके लिअे लोगोंको शिक्षा देना जरूरी होगा। मेरा कहना अितना ही है कि यह शिक्षा सही रास्ते ले जानेवाली होनी चाहिये।

हरिजन, २–५–'३६

वन्ध्यीकरण

लोगों पर वन्ध्यीकरण (वह क्रिया जिससे पुरुषके वीर्यमें निहित प्रजनन-शक्तिका नाश कर दिया जाता है) का कानून लादनेको मैं अमानुषिक मानता हूं। परन्तु जो व्यक्ति पुराने रोगोंके मरीज हों, वे यदि स्वीकार कर लें तो अुनका वन्ध्यीकरण वांछनीय होगा। वन्ध्यीकरण अेक प्रकारका कृत्रिम साधन है। यद्यपि मैं स्त्रियोंके सम्बन्धमें कृत्रिम साधनोंके अुपयोगके खिलाफ हूं, फिर भी मैं पुरुषके सम्बन्धमें स्वेच्छासे किये जानेवाले वन्ध्यीकरणके खिलाफ नहीं हूं, क्योंकि पुरुष आक्रामक है।

अमृतबाजार पत्रिका, १२–१–'३५

अधिक जनसंख्याका हौवा

यदि यह कहा जाय कि जनसंख्याकी अतिवृद्धिके कारण कृत्रिम
ाधनों द्वारा सन्तति-नियमनकी राष्ट्रके लिअे आवश्यकता है, तो मुझे
अस बातमें पूरा शक है। यह बात अब तक साबित ही नहीं की गअी
। मेरी रायमें तो यदि जमीन-सम्बन्धी कानूनोंमें समुचित सुधार कर
दया जाय, खेतीकी दशा सुधारी जाय और अेक सहायक धन्धेकी तज-
ोज कर दी जाय, तो हमारा यह देश अपनी जनसंख्यासे दूने लोगोंका
रण-पोषण कर सकता है।

यंग अिंडिया, २–४–'२५

हमारा यह छोटासा पृथ्वी-मंडल कुछ समयका बना हुआ खिलौना
हीं है। अनगिनत युगोंसे यह अैसा ही चला आ रहा है। जनसंख्याकी
द्धिके भारसे अुसने कभी कष्टका अनुभव नहीं किया। तब कुछ लोगोंके
ानमें अेकाअेक अिस सत्यका अुदय कहांसे हो गया कि यदि सन्तति-
नयमनके कृत्रिम साधनोंसे जनसंख्याकी वृद्धिको रोका न गया, तो अन्न
ा मिलनेसे पृथ्वी-मंडलका नाश हो जायगा?

हरिजनसेवक, २०–९–'३५

बढ़ती हुअी जनसंख्याका हौवा कोअी नअी चीज नहीं है। अकसर
ाह हमारे सामने खड़ा किया गया है। जनसंख्याकी वृद्धि कोअी टालने
ायक संकट नहीं है; न होना चाहिये। अुसे कृत्रिम अुपायोंसे रोकना अेक
हान संकट है, फिर चाहे हम अुसे जानते हों या न जानते हों। अगर
कृत्रिम अुपायोंका अुपयोग आम तौर पर होने लगे, तो वह समूचे
राष्ट्रको पतनकी ओर ले जायगा। खुशी अिस बातकी है कि अिसकी
कोअी सम्भावना नहीं है। अेक ओर हम विषय-भोगसे पैदा होनेवाली
अनचाही सन्ततिका पाप अपने सिर ओढ़ते हैं, और दूसरी ओर अीश्वर
अुस पापको मिटानेके लिअे हमें अनाजकी तंगी, महामारी और लड़ाअीके
जरिये सजा करता है। अगर अिस तिहरे शापसे बचना हो, तो संयम-
रूपी कारगर अुपायके जरिये अनचाही सन्ततिको रोकना चाहिये। देखने-
ालोंको आज भी यह दिखाअी पड़ता है कि कृत्रिम अुपायोंके कैसे बुरे

नतीजे होते हैं। नीतिकी चर्चामें पड़े विना मैं यही कहा चाहता हूं कि कुत्ते-विल्लीकी तरह होनेवाली अिस सन्तान-वृद्धिको जरूर रोकना चाहिये। लेकिन अिस वातका खयाल रखना होगा कि अैसा करनेसे अुसका ज्यादा वुरा नतीजा न निकले। अिस वढ़ती हुअी प्रजोत्पत्तिको अैसे अुपायोंसे रोकना चाहिये जिनसे जनता अूपर अुठे; यानी अिसके लिअे जनताको अुसके जीवनसे सम्वन्ध रखनेवाली तालीम मिलनी चाहिये, जिससे अेक शापके मिटते ही दूसरे सव शाप अपने-आप मिट जायं। यह सोचकर कि रास्ता पहाड़ी है और अुसमें चढ़ाअियां हैं, अुससे दूर नहीं भागना चाहिये। मनुष्यकी प्रगतिका मार्ग कठिनाअियोंसे भरा पड़ा है। अुनसे डरना क्या? अुनका तो स्वागत करना चाहिये।

हरिजनसेवक, ३१–३–'४६

५७

काम-विज्ञानकी शिक्षा

काम-विज्ञानकी शिक्षाका हमारी शिक्षा-प्रणालीमें क्या स्थान है, या अुसका कोअी स्थान है भी या नहीं? काम-विज्ञान दो प्रकारका होता है। अेक वह जो काम-विकारको कावूमें रखने या जीतनेके काम आता है और दूसरा वह जो अुसे अुत्तेजन और पोषण देनेके काम आता है। पहले प्रकारके काम-विज्ञानकी शिक्षा वाल-शिक्षाका अुतना ही आवश्यक अंग है, जितनी दूसरे प्रकारकी शिक्षा हानिकारक और खतरनाक है और अिसलिअे दूर रहनेके योग्य है। सभी वड़े धर्मोंने कामको मनुष्यका घोर शत्रु माना है, और वह ठीक ही माना है। क्रोध या द्वेपका स्थान दूसरा ही रखा गया है। गीताके अनुसार क्रोध कामकी सन्तान है। वेशक, गीताने काम शब्दका प्रयोग अिच्छामात्रके व्यापक अर्थमें किया है। परन्तु जिस संकुचित अर्थमें वह यहां अिस्तेमाल किया गया है अुसमें भी यह वात लागू होती है।

परन्तु फिर भी अिस प्रश्नका अुत्तर देना रह ही जाता है कि छोटी अुमरके विद्यार्थियोंको जननेंद्रियके कार्य और अुपयोगके वारेमें ज्ञान

देना वांछनीय है या नहीं। मेरे खयालसे अेक हद तक अिस प्रकारका ज्ञान देना जरूरी है। आज तो वे जैसे-तैसे अिधर-अुधरसे यह ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। नतीजा यह होता है कि पथभ्रष्ट होकर वे कुछ बुरी आदतें सीख लेते हैं। हम काम-विकार पर अुसकी ओरसे आंखें बन्द कर लेनेसे ठीक तरह नियंत्रण प्राप्त नहीं कर सकते। अिसलिअे मेरा यह दृढ़ मत है कि नौजवान लड़के-लड़कियोंको अुनकी जननेंद्रियोंका महत्त्व और अुचित अुपयोग सिखाया जाय। और अपने ढंगसे मैंने अुन अल्पायु बालक-बालिकाओंको, जिनकी तालीमकी जिम्मेदारी मुझ पर थी, यह ज्ञान देनेकी कोशिश की है।

जिस काम-विज्ञानकी शिक्षाके पक्षमें मैं हूं, अुसका लक्ष्य यही होना चाहिये कि अिस विकार पर विजय प्राप्त की जाय और अुसका सदुपयोग हो। अैसी शिक्षाका स्वभावत: यह अुपयोग होना चाहिये कि वह बच्चोंके दिलोंमें अिन्सान और हैवानके बीचका फर्क अच्छी तरह बैठा दे और अुन्हें यह अच्छी तरह समझा दे कि हृदय और मस्तिष्क दोनोंकी शक्तियोंसे विभूषित होना मनुष्यका विशेष अधिकार है; वह जितना विचारशील प्राणी है अुतना ही भावनाशील भी है — जैसा कि मनुष्य शब्दके धात्वर्थसे प्रगट होता है — और अिसलिअे ज्ञानहीन प्राकृतिक अिच्छाओं पर बुद्धिका प्रभुत्व छोड़ देना मानवको औश्वरसे प्राप्त हुअी सम्पत्तिको छोड़ देना है। बुद्धि मनुष्यमें भावनाको जाग्रत करती है और अुसे रास्ता दिखाती है। पशुमें आत्मा सुषुप्त रहती है। हृदयको जाग्रत करनेका अर्थ है सोअी हुअी आत्माको जाग्रत करना, बुद्धिको जाग्रत करना और बुराअी-भलाअीका विवेक पैदा करना।

यह सच्चा काम-विज्ञान कौन सिखाये? स्पष्ट है कि वही सिखाये जिसने अपने विकारों पर प्रभुत्व पा लिया है। ज्योतिष और अन्य विज्ञान सिखानेके लिअे हम अैसे शिक्षक रखते हैं, जिन्होंने अिन विषयोंकी तालीम पाअी है और जो अपनी कलामें प्रवीण हैं। अिसी तरह हमें काम-विज्ञान अर्थात् काम-विकारको काबूमें रखनेका विज्ञान सिखानेके लिअे अैसे ही लोगोंको शिक्षक बनाना चाहिये, जिन्होंने अिसका अध्ययन किया है और अिन्द्रियों पर प्रभुत्व प्राप्त कर लिया है। अूंचे दर्जेका भाषण

भी, यदि अुसके पीछे हृदयकी सचाअी और अनुभव नहीं है, निष्क्रिय और निर्जीव होगा और वह मनुष्योंके हृदयोंमें घुसकर अुन्हें जगा नहीं सकेगा, जब कि आत्म-दर्शन और सच्चे अनुभवसे निकलनेवाली वाणी सदा सफल होती है।

आज तो हमारे सारे वातावरणका — हमारे पढ़ने, हमारे सोचने और हमारे सामाजिक व्यवहारका — सामान्य हेतु कामेच्छाकी पूर्ति करना होता है। अिस जालको तोड़कर निकलना आसान काम नहीं है। परन्तु यह हमारे अुच्चतम प्रयत्नके योग्य कार्य है। यदि व्यावहारिक अनुभव-वाले मुट्ठीभर शिक्षक भी अैसे हों, जो आत्म-संयमके आदर्शको मनुष्यका सर्वोच्च कर्तव्य मानते हों और अपने कार्यमें सच्चे और अमिट विश्वाससे अनुप्राणित हों, तो अुनके परिश्रमसे . . . बालकोंका मार्ग प्रकाशमान हो जायगा, वे भोलेभाले लोगोंको आत्म-पतनके कीचड़में फंसनेसे बचा लेंगे, और जो पहले ही फंस चुके हैं अुनका अुद्धार कर देंगे।

हरिजन, २१-११-’३६

५८

बालक

जिस प्रकार बच्चोंको माता-पिताकी सूरत-शकल विरासतमें मिलती है, अुसी प्रकार अुनके गुण-दोष भी अुन्हें विरासतमें मिलते हैं। अवश्य ही आसपासके वातावरणके कारण अिसमें अनेक प्रकारकी घट-बढ़ होती है, पर मूल पूंजी तो वही होती है जो बाप-दादा आदिसे मिलती है। मैंने देखा है कि कुछ बालक अपनेको अैसे दोषोंकी विरासतसे बचा लेते हैं। यह आत्माका मूल स्वभाव है, अुसकी बलिहारी है।

आत्मकथा, पृ० २७२; १९५७

मां-बाप अपने बालकोंको जो सच्ची सम्पत्ति समान रूपसे दे सकते हैं, वह है अुनका अपना चरित्र और शिक्षाकी सुविधायें। . . . माता-पिताको अपने लड़कों और लड़कियोंको स्वावलम्बी बनानेकी, शरीर-

श्रमके द्वारा निर्दोष जीविका कमाने लायक वनानेकी कोशिश करनी चाहिये।

यंग अिंडिया, २९-१०-'३१

मैं पूरी तरह यह मानता हूं कि वालक जन्मसे वुरा नहीं होता। यदि माता-पिता वालकके जन्मके पहले और जन्मके पश्चात् जिस समय वह बड़ा हो रहा हो सदाचारका पालन करें, तो यह जानी-मानी वात है कि वालक स्वभावतः सत्य और प्रेमके नियमोंका ही पालन करेगा। . . . और मेरा विश्वास कीजिये कि सैकड़ों — या कहूं कि हजारों — वालकोंके अनुभव परसे मैं यह जानता हूं कि वालकोंमें हमारी और आपकी अपेक्षा धर्माचारका ज्यादा सूक्ष्म ज्ञान होता है। यदि हम अपना अहंकार छोड़कर कुछ नम्र वन जायें, तो जीवनके बड़े-से-बड़े पाठ हम वुजुर्गों और विद्वानोंसे नहीं वल्कि जिन्हें अज्ञान माना जाता है अुन वालकोंसे सीख सकते हैं। ज्ञान वालकोंके मुंहसे प्रगट होता है, भगवान अीसाके अिस वचनमें जो सत्य है अुससे ज्यादा अुदात्त या अूंचा दूसरा सत्य अुन्होंने शायद ही कहा हो। मैं अिस वचनको स्वीकार करता हूं। मैंने खुद ही देखा है कि यदि हम वच्चोंके पास नम्र होकर जायें, तो हम अुनसे ज्ञान पा सकते हैं। मैंने तो यह अेक पाठ सीखा है कि मनुष्यके लिअे जो असंभव है, भगवानके लिअे वह वच्चेका खेल है; और यदि हमारा अुस विधातामें, जो अपनी सृष्टिके क्षुद्रतम जीवके भी भाग्य पर दृष्टि रखता है, विश्वास हो, तो मुझे अिसमें कोअी सन्देह नहीं है कि सव वातें संभव हैं। और अिसी आशाके आधार पर मैं अपना जीवन यापन कर रहा हूं और अुसकी अिच्छाका पालन करनेका प्रयत्न कर रहा हूं। यदि हमें अिस दुनियामें सच्ची शान्ति प्राप्त करना है और यदि हमें युद्धके खिलाफ सचमुच युद्ध चलाना है, तो हमें अपने कार्यका आरम्भ वालकोंसे करना होगा। और यदि वालक अपनी स्वाभाविक पवित्रता कायम रखते हुअे वड़े होते हैं, तो हमें अपने अुद्देश्यके लिअे संघर्ष नहीं करना पड़ेगा, निरर्थक और निष्फल सिद्ध होनेवाले प्रस्ताव पास नहीं करने पड़ेंगे। तव हम प्रेमसे ज्यादा प्रेमकी दिशामें, शान्तिसे ज्यादा शान्तिकी दिशामें अनायास वढ़ते चले जायेंगे और अन्तमें हम देखेंगे

कि अिस छोरसे अुस छोर तक सारी दुनिया अुस शान्ति और प्रेमसे प्लावित हो गयी है, जिसके लिअे जाने-अनजाने वह तरस रही है।

यंग अिंडिया, १९-११-'३१

५९

साम्प्रदायिक अेकता

कौमी या साम्प्रदायिक अेकताकी जरूरतको सब कोअी मंजूर करते हैं। लेकिन सब लोगोंको अभी यह बात जंची नहीं कि अेकताका मतलब सिर्फ राजनीतिक अेकता नहीं है। राजनीतिक अेकता तो जोर-जबरदस्तीसे भी लादी जा सकती है। मगर अेकताके सच्चे मानी तो हैं वह दिली दोस्ती, जो किसीके तोड़े न टूटे। अिस तरहकी अेकता पैदा करनेके लिअे सबसे पहली जरूरत अिस बातकी है कि कांग्रेसजन, फिर वे किसी भी धर्मके माननेवाले हों, अपनेको हिन्दू, मुसलमान, अीसाअी, पारसी, यहूदी वगैरा सभी कौमोंके नुमाअिन्दा समझें। हिन्दुस्तानके करोड़ों बाशिन्दोंमें से हरअेकके साथ वे अपनेपनका — आत्मीयताका — अनुभव करें; यानी वे अुनके सुख-दुःखमें अपनेको अुनका साथी समझें। अिस तरहकी आत्मीयता सिद्ध करनेके लिअे हरअेक कांग्रेसीको चाहिये कि वह अपने धर्मसे भिन्न धर्मका पालन करनेवाले लोगोंके साथ निजी दोस्ती कायम करे, और अपने धर्मके लिअे अुसके मनमें जैसा प्रेम हो, ठीक वैसा ही प्रेम वह दूसरे धर्मसे भी करे।

रचनात्मक कार्यक्रम, पृ० ११-१२

हिन्दू, मुसलमान, अीसाअी, सिक्ख, पारसी आदिको अपने मतभेद हिंसाका आश्रय लेकर और लड़ाअी-झगड़ा करके नहीं निपटाने चाहिये। . . . हिन्दू और मुसलमान मुंहसे तो कहते हैं कि धर्ममें जबरदस्तीको कोअी स्थान नहीं है। लेकिन यदि हिन्दू गायको बचानेके लिअे मुसलमानकी हत्या करें, तो यह जबरदस्तीके सिवा और क्या है? यह तो

मुसलमानको बलात् हिन्दू बनाने जैसी ही बात है। और अिसी तरह यदि मुसलमान जोर-जबरदस्तीसे हिन्दुओंको मसजिदोंके सामने बाजा बजानेसे रोकनेकी कोशिश करते हैं, तो यह भी जबरदस्तीके सिवा और क्या है? धर्म तो अिस बातमें है कि आसपास चाहे जितना शोरगुल होता रहे, फिर भी हम अपनी प्रार्थनामें तल्लीन रहें। यदि हम अेक-दूसरेको अपनी धार्मिक अिच्छाओंका सम्मान करनेके लिअे बाध्य करनेकी बेकार कोशिश करते रहे, तो भावी पीढ़ियां हमें धर्मके तत्त्वसे बेखबर जंगली ही समझेंगी।

यदि अपने अन्तरका आदेश मानकर कोअी आर्यसमाजी प्रचारक अपने धर्मका और मुसलमान प्रचारक अपने धर्मका अुपदेश करता है, और अुससे हिन्दू-मुस्लिम-अेकता खतरेमें पड़ जाती है, तो कहना चाहिये कि यह अेकता बिलकुल ही अूपरी है। अैसी प्रचार-प्रवृत्तियोंसे हमें विचलित क्यों होना चाहिये? अलबत्ता, ये प्रवृत्तियां सचाअीसे प्रेरित होनी चाहिये। यदि मलकाना जातिके लोग हिन्दू धर्ममें वापिस आना चाहते हैं, तो अुन्हें अिसका पूरा अधिकार है; वे जब भी आना चाहें आ सकते हैं। लेकिन अिस सिलसिलेमें अैसे किसी प्रचारकी अनुमति नहीं दी जा सकती, जिसमें दूसरे धर्मोंको गालियां दी जाती हों। कारण, दूसरे धर्मोंकी निंदामें परमत-सहिष्णुताके सिद्धान्तका भंग होता है। अैसे प्रचारसे निपटनेका सबसे अच्छा अुपाय यह है कि अुसकी सार्वजनिक रीतिसे निन्दा की जाय। हरअेक आन्दोलन सामाजिक प्रतिष्ठाका जामा पहनकर आगे आनेकी कोशिश करता है। यदि लोग अुसके अिस नकली आवरणको फाड़ दें, तो प्रतिष्ठाके अभावमें वह मर जाता है।

अब हिन्दू-मुसलमानोंके झगड़ोंके दो स्थायी कारणोंका क्या अिलाज हो सकता है, अिसकी जांच करें।

पहले गोवधको लीजिये। गोरक्षाको मैं हिन्दू धर्मका प्रधान अंग मानता हूं। प्रधान अिसलिअे कि अुच्च वर्गों और आम जनता दोनोंके लिअे यह समान है। फिर भी अिस बारेमें हम जो केवल मुसलमानों पर ही रोष करते हैं, यह बात किसी भी तरह मेरी समझमें नहीं आती। अंग्रेजोंके लिअे रोज कितनी ही गायें कटती हैं। परन्तु अिस

वारेमें तो हम कभी जवान तक भी शायद ही हिलाते होंगे। केवल जव कोअी मुसलमान गायकी हत्या करता है, तभी हम क्रोधके मारे लाल-पीले हो जाते हैं। गायके नामसे जितने झगड़े हुअे हैं, अुनमें से प्रत्येकमें निरा पागलपनभरा शक्तिक्षय हुआ है। अिससे अेक भी गाय नहीं वची। अुलटे, मुसलमान ज्यादा जिद्दी वने हैं और अिस कारण ज्यादा गायें कटने लगी हैं।

गोरक्षाका प्रारंभ तो हमीको करना है। हिन्दुस्तानमें ढोरोंकी जो दुर्दशा है, वैसी दुनियाके किसी भी दूसरे हिस्सेमें नहीं है। हिन्दू गाड़ीवानोंको थककर चूर हुअे वैलोंको लोहेकी तेज आरवाली लकड़ीसे निर्दयताके साथ हांकते देखकर मैं कअी बार रोया हूं। हमारे अधभूखे रहनेवाले जानवर हमारी जीती-जागती वदनामीके प्रतीक हैं। हम हिन्दू गायको वेचते हैं अिसीलिअे गायोंकी गर्दन कसाअीकी छुरीका शिकार होती है।

अैसी हालतमें अेकमात्र सच्चा और शोभास्पद अुपाय यही है कि मुसलमानोंके दिल हम जीत लें और गायका वचाव करना अुनकी शराफत पर छोड़ दें। गोरक्षा-मंडलोंको ढोरोंको खिलाने-पिलाने, अुन पर होनेवाली निर्दयताको रोकने, गोचर-भूमिके दिन-दिन होनेवाले लोपको रोकने, पशुओंकी नसल सुधारने, गरीव ग्वालोंसे अुन्हें खरीद लेने और मौजूदा पिंजरापोलोंको दूधकी आदर्श स्वावलंवी डेरियां वनानेकी तरफ ध्यान देना चाहिये। अूपर वताअी हुअीं वातोंमें से अेकके भी करनेमें हिन्दू चूकेंगे, तो वे अीश्वर और मनुष्य दोनोंके सामने अपराधी ठहरेंगे। मुसलमानोंके हाथसे होनेवाले गोवधको वे रोक न सकें, तो अिसमें अुनके मत्थे पाप नहीं चढ़ता। लेकिन जव वे गायको वचानेके लिअे मुसलमानोंके साथ झगड़ा करने लगते हैं, तव वे जरूर भारी पाप करते हैं।

मसजिदोंके सामने वाजे वजनेके सवाल पर — अव तो मन्दिरोंके भीतर होनेवाली आरतीका भी विरोध किया जाता है — मैंने गम्भीरतापूर्वक सोचा है। जिस तरह हिन्दू गोवधसे दुःखी होते हैं, अुसी तरह मुसलमानोंको मसजिदोंके सामने वाजा वजने पर वुरा लगता है। लेकिन जिस तरह हिन्दू मुसलमानोंको गोवध न करनेके लिअे वाध्य नहीं कर

सकते, अुसी तरह मुसलमान भी हिन्दुओंको डरा-धमकाकर बाजा या आरती बन्द करनेके लिअे बाध्य नहीं कर सकते। अुन्हें हिन्दुओंकी सदिच्छाका विश्वास करना चाहिये। हिन्दूके नाते मैं हिन्दुओंको यह सलाह जरूर दूंगा कि वे सौदेबाजीकी भावना रखे बिना अपने मुसलमान पड़ोसियोंके भावोंको समझें और जहां सम्भव हो वहां अुनका खयाल रखें। मैंने सुना है कि कअी जगह हिन्दू लोग जान-बूझकर और मुसलमानोंका जी दुखानेके अिरादेसे ही आरती ठीक अुस समय करते हैं जब कि मुसलमानोंकी नमाज शुरू होती है। यह अेक हृदयहीन और शत्रुतापूर्ण कार्य है। मित्रतामें मित्रके भावोंका पूरा-पूरा खयाल रखा ही जाना चाहिये। अिसमें तो कुछ सोच-विचारकी भी बात नहीं है। लेकिन मुसलमानोंको हिन्दुओंसे डरा-धमकाकर बाजा बंद करवानेकी आशा नहीं रखनी चाहिये। धमकियों अथवा वास्तविक हिंसाके आगे झुक जाना अपने आत्म-सम्मान और धार्मिक विश्वासोंका हनन है। लेकिन जो आदमी धमकियोंके आगे नहीं झुकेगा, वह जिनसे प्रतिपक्षीको चिढ़ होती हो अैसे मौके हमेशा यथासंभव कम करनेकी और संभव हो तो टालनेकी भी पूरी कोशिश करेगा।

मुझे अिस बातका पूरा निश्चय है कि यदि नेता न लड़ना चाहें तो आम जनताको लड़ना पसंद नहीं है। अिसलिअे यदि नेता लोग अिस बात पर राजी हो जायें कि दूसरे सभ्य देशोंकी तरह हमारे देशमें भी आपसी लड़ाअी-झगड़ोंका सार्वजनिक जीवनसे पूरा अुच्छेद कर दिया जाना चाहिये और वे जंगलीपन और अधार्मिकताके चिह्न माने जाने चाहिये, तो मुझे अिसमें कोअी सन्देह नहीं कि आम जनता शीघ्र ही अुनका अनुकरण करेगी।

क्या जब ब्रिटिश शासन नहीं था और अंग्रेज लोग यहां दिखायी नहीं पड़ते थे, तब हिन्दू, मुसलमान और सिक्ख हमेशा अेक-दूसरेसे लड़ते ही रहते थे? हिन्दू अितिहासकारों और मुसलमान अितिहासकारोंने अुदाहरण देकर यह सिद्ध किया है कि अुस समयमें हम बहुत हद तक हिल-मिलकर और शांतिपूर्वक ही रहते थे। और गांवोंमें तो हिन्दू-मुसलमान आज भी नहीं लड़ते। अुन दिनों वे बिलकुल ही नहीं लड़ते थे। . . .

यह लड़ाओी-झगड़ा पुराना नहीं है। . . . मैं तो हिम्मतके साथ यह कहता हूं कि वह ब्रिटिश शासकोंके आगमनके साथ ही शुरू हुआ है; और जब ग्रेट ब्रिटेन और भारतके बीच आज जो दुर्भाग्यपूर्ण, कृत्रिम और अस्वाभाविक सम्बन्ध है वह बदलकर सही और स्वाभाविक बन जायगा, जब अुसका रूप अेक अैसी स्वेच्छापूर्ण साझेदारीका हो जायगा, जो किसी भी समय दोनोंमें से किसी भी पक्षकी अिच्छा पर तोड़ी जा सके, अुस समय आप देखेंगे कि हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, अीसाअी, अछूत, अेंग्लो-अिंडियन और यूरोपियन सब हिल-मिलकर अेक हो गये हैं।

यंग अिंडिया, २४–१२–’३१

मुझे अिस बातमें रंचमात्र भी सन्देह नहीं है कि साम्प्रदायिक मतभेदोंका कुहासा आजादीके सूर्यका अुदय होते ही दूर हो जायगा।

यंग अिंडिया, २९–१०–’३१

६०

वर्णाश्रम धर्म

मैं अैसा मानता हूं कि हरअेक आदमी दुनियामें कुछ स्वाभाविक प्रवृत्तियां लेकर जन्म लेता है। अिसी तरह हरअेक आदमीकी कुछ निश्चित सीमायें होती हैं, जिन्हें जीतना अुसके लिअे शक्य नहीं होता। अिन सीमाओंके ही अध्ययन और अवलोकनसे वर्णका नियम निष्पन्न हुआ है। वह अमुक प्रवृत्तियोंवाले अमुक लोगोंके लिअे अलग-अलग कार्यक्षेत्रोंकी स्थापना करता है। अैसा करके अुसने समाजमें से अनुचित प्रतिस्पर्धाको टाला है। वर्णका नियम आदमियोंकी अपनी स्वाभाविक सीमायें तो मानता है, लेकिन वह अुनमें अूंचे और नीचेका भेद नहीं मानता। अेक ओर तो वह अैसी व्यवस्था करता है कि हरअेकको अुसके परिश्रमका फल अवश्य मिल जाये, और दूसरी ओर वह अुसे अपने पड़ोसियों पर भाररूप बननेसे रोकता है। यह अूंचा नियम आज गिर गया है और निंदाका पात्र बन गया है। लेकिन मेरा विश्वास है कि आदर्श समाज-व्यवस्थाका

विकास तभी किया जा सकेगा, जब अिस नियमके रहस्योंको पूरी तरह समझा जायगा और अुन्हें कार्यान्वित किया जायगा।

दि माडर्न रिव्यू, अक्तूबर १९३५, पृ० ४१३

वर्णाश्रम धर्म बताता है कि दुनियामें मनुष्यका सच्चा लक्ष्य क्या है। अुसका जन्म अिसलिअे नहीं हुआ है कि वह रोज-रोज ज्यादा पैसा अिकट्ठा करनेके रास्ते खोजे और जीविकाके नये-नये साधनोंकी खोज करे। अुसका जन्म तो अिसलिअे हुआ है कि वह अपनी शक्तिका प्रत्येक अणु अपने निर्माताको जाननेमें लगाये। अिसलिअे वर्णाश्रम-धर्म कहता है कि अपने शरीरके निर्वाहके लिअे मनुष्य अपने पूर्वजोंका ही धन्धा करे। बस, वर्णाश्रम धर्मका आशय अितना ही है।

यंग अिंडिया, २७-१०-'२७

वर्ण-व्यवस्थामें समाजकी चौमुखी रचना ही मुझे तो असली, कुदरती और जरूरी चीज दीखती है। बेशुमार जातियों और अुपजातियोंसे कभी-कभी कुछ आसानी हुआी होगी, लेकिन अिसमें शक नहीं कि ज्यादातर तो जातियोंसे अड़चन ही पैदा होती है। अैसी अुपजातियां जितनी अेक हो जायें अुतना ही अुसमें समाजका भला है।

यंग अिंडिया, ८-१२-'२०

आज तो ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रोंके केवल नाम ही रह गये हैं। वर्णका मैं जो अर्थ करता हूं अुसकी दृष्टिसे देखें, तो वर्णोंका पूरा संकर हो गया है और अैसी हालतमें मैं तो यह चाहता हूं कि सब हिन्दू अपनेको स्वेच्छापूर्वक शूद्र कहने लगें। ब्राह्मण-धर्मकी सचाअीको अुजागर करने और सच्चे वर्णधर्मको पुनः जीवित करनेका यही अेक रास्ता है।

हरिजन, २५-३-'३३

जातपांत

जातपांतके बारेमें मैंने बहुत बार कहा है कि आजके अर्थमें मैं जात-पांतको नहीं मानता। यह समाजका 'फालतू अंग' है और तरक्कीके रास्तेमें रुकावट जैसा है। अिसी तरह आदमी आदमीके बीच अूंच-नीचका भेद भी मैं

नहीं मानता। हम सब पूरी तरह बराबर हैं। लेकिन बराबरी आत्माकी है, शरीरकी नहीं। अिसलिअे यह मानसिक अवस्थाकी बात है। बराबरीका विचार करनेकी और अुसे जोर देकर जाहिर करनेकी जरूरत पड़ती है, क्योंकि दुनियामें अूंच-नीचके भारी भेद दिखाअी देते हैं। अिस बाहरसे दीखनेवाले अूंच-नीचपनमें से हमें बराबरी पैदा करनी है। कोअी भी मनुष्य अपनेको दूसरेसे अूंचा मानता है, तो वह अीश्वर और मनुष्य दोनोंके सामने पाप करता है। अिस तरह जातपांत जिस हद तक दरजेका फर्क जाहिर करती है, अुस हद तक वह बुरी चीज है।

लेकिन वर्णको मैं अवश्य मानता हूं। वर्णकी रचना पीढ़ी-दर-पीढ़ीके धंधोंकी बुनियाद पर हुअी है। मनुष्यके चार धंधे सार्वत्रिक हैं — विद्या-दान करना, दुखीको बचाना, खेती तथा व्यापार और शरीरकी मेहनतसे सेवा। अिन्हींको चलानेके लिअे चार वर्ण बनाये गये हैं। ये धंधे सारी मानव-जातिके लिअे समान हैं, पर हिन्दू धर्मने अुन्हें जीवन-धर्म करार देकर अुनका अुपयोग समाजके संबंधों और आचार-व्यवहारको नियमनमें लानेके लिअे किया है। गुरुत्वाकर्षणके कानूनको हम जानें या न जानें, अुसका असर तो हम सभी पर होता है। लेकिन वैज्ञानिकोंने अुसके भीतरसे अैसी बातें निकाली हैं, जो दुनियाको चौंकानेवाली हैं। अिसी तरह हिन्दू धर्मने वर्ण-धर्मकी तलाश करके और अुसका प्रयोग करके दुनियाको चौंकाया है। जब हिन्दू अज्ञानके शिकार हो गये, तब वर्णके अनुचित अुपयोगके कारण अनगिनत जातियां बनीं और रोटी-बेटी-व्यवहारके अनावश्यक और हानिकारक बन्धन पैदा हो गये। वर्ण-धर्मका अिन पाबन्दियोंके साथ कोअी नाता नहीं है। अलग अलग वर्णके लोग आपसमें रोटी-बेटी-व्यवहार रख सकते हैं। चरित्र और तन्दुरुस्तीके खातिर ये बन्धन जरूरी हो सकते हैं। लेकिन जो ब्राह्मण शूद्रकी लड़कीसे या शूद्र ब्राह्मणकी लड़कीसे ब्याह करता है, वह वर्णधर्मको नहीं मिटाता।

वर्ण-व्यवस्था, पृ० ४९-५०; १९५९

अस्पृश्यताकी बुराअीसे खीझ कर जाति-व्यवस्थाका ही नाश करना अुतना ही गलत होगा, जितना कि शरीरमें कोअी कुरूप वृद्धि हो जाय तो

शरीरका या फसलमें ज्यादा घास-पात अुगा हुआ दिखे तो फसलका ही नाश कर डालना है। अिसलिअे अस्पृश्यताका नाश तो जरूर करना है। सम्पूर्ण जाति-व्यवस्थाको बचाना हो तो समाजमें बढ़ी हुअी अिस हानिकारक बुराअीको दूर करना ही होगा। अस्पृश्यता जाति-व्यवस्थाकी अुपज नहीं है, बल्कि अुस अूंच-नीच-भेदकी भावनाका परिणाम है, जो हिन्दू धर्ममें घुस गयी है और अुसे भीतर ही भीतर कुतर रही है। अिसलिअे अस्पृश्यताके खिलाफ हमारा आक्रमण अिस अूंच-नीचकी भावनाके खिलाफ ही है। ज्यों ही अस्पृश्यता नष्ट होगी, जाति-व्यवस्था स्वयं शुद्ध हो जायगी; यानी मेरे सपनेके अनुसार वह चार वर्णोंवाली सच्ची वर्ण-व्यवस्थाका रूप ले लेगी। ये चारों वर्ण अेक-दूसरेके पूरक और सहायक होंगे, अुनमें से कोअी किसीसे छोटा-बड़ा नहीं होगा; प्रत्येक वर्ण हिन्दू धर्मके शरीरके पोषणके लिअे समान रूपसे आवश्यक होगा।

हरिजन, ११–२–'३३

आर्थिक दृष्टिसे जातिप्रथाका किसी समय बहुत मूल्य था। अुसके फलस्वरूप नयी पीढ़ियोंको अुनके परिवारोंमें चले आये परम्परागत कला-कौशलकी शिक्षा सहज ही मिल जाती थी और स्पर्धाका क्षेत्र सीमित बनता था। गरीबी और कंगालीसे होनेवाली तकलीफको दूर करनेका वह अेक अुत्तम अिलाज थी। और पश्चिममें प्रचलित व्यापारियोंके संघोंकी संस्थाके सारे लाभ अुसमें भी मिलते थे। यद्यपि यह कहा जा सकता है कि वह साहस और आविष्कारकी वृत्तिको बढ़ावा नहीं देती थी, लेकिन हम जानते हैं कि वह अुनके आड़े भी नहीं आती थी।

अितिहासकी दृष्टिसे जातिप्रथाको भारतीय समाजकी प्रयोग-शालामें किया गया मनुष्यका अैसा प्रयोग कहा जा सकता है, जिसका अुद्देश्य समाजके विविध वर्गोंका पारस्परिक अनुकूलन और संयोजन था। यदि हम अुसे सफल बना सकें तो दुनियामें आजकल लोभके कारण जो क्रूर प्रतिस्पर्धा और सामाजिक विघटन होता दिखाअी देता है, अुसके अुत्तम अिलाजकी तरह अुसे दुनियाको भेंटमें दिया जा सकता है।

यंग अिंडिया, ५–१–'२१

आन्तर-जातीय विवाह और खान-पान

वर्णाश्रममें आन्तर-जातीय विवाहों या खान-पानका निषेध नहीं है, लेकिन अिसमें कोअी जोर-जबरदस्ती भी नहीं हो सकती। व्यक्तिको अिस बातका निश्चय करनेकी पूरी छूट मिलनी चाहिये कि वह कहां शादी करेगा और कहां खायगा।

हरिजन, १६-११-'३५

६१

अस्पृश्यताका अभिशाप

आजकल हिन्दू धर्ममें जो अस्पृश्यता देखनेमें आती है, वह अुसका अेक अमिट कलंक है। मैं यह माननेसे अिनकार करता हूं कि वह हमारे समाजमें स्मरणातीत कालसे चली आयी है। मेरा खयाल है कि अस्पृश्यताकी यह घृणित भावना हम लोगोंमें तब आयी होगी जब हम अपने पतनकी चरम सीमा पर रहे होंगे। और तबसे यह बुराअी हमारे साथ लग गयी और आज भी लगी हुअी है। मैं मानता हूं कि यह अेक भयंकर अभिशाप है। और यह अभिशाप जब तक हमारे साथ रहेगा तब तक मुझे लगता है कि अिस पावन भूमिमें हमें जब जो भी तकलीफ सहना पड़े, वह हमारे अिस अपराधका, जिसे हम आज भी कर रहे हैं, अुचित दण्ड होगी।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ३८७

मेरी रायमें हिन्दू धर्ममें दिखायी पड़नेवाला अस्पृश्यताका वर्तमान रूप अीश्वर और मनुष्यके खिलाफ किया गया भयंकर अपराध है और अिसलिअे वह अेक अैसा विष है जो धीरे-धीरे हिन्दू धर्मके प्राणको ही निःशेष किये दे रहा है। मेरी रायमें शास्त्रोंमें, यदि हम सब शास्त्रोंको मिलाकर पढ़ें तो, अिस बुराअीका कहीं कोअी समर्थन नहीं है। शास्त्रोंमें अेक तरहकी हितकारी अस्पृश्यताका विधान जरूर है, लेकिन अुस तरहकी अस्पृश्यता सब धर्मोंमें पायी जाती है। वह अस्पृश्यता तो स्वच्छताके

नियमका ही अेक अंग है। वह तो सदा रहेगी। लेकिन भारतमें हम आज जैसी अस्पृश्यता देख रहे हैं वह अेक भयंकर चीज है और अुसके हरअेक प्रान्तमें, यहां तक कि हरअेक जिलेमें, अलग-अलग कितने ही रूप हैं। अुसने अस्पृश्यों और स्पृश्यों, दोनोंको नीचे गिराया है। अुसने लगभग चार करोड़ मनुष्योंका विकास रोक रखा है। अुन्हें जीवनकी सामान्य सुविधायें भी नहीं दी जातीं। अिसलिअे अिस बुराअीको जितनी जल्दी निर्मूल कर दिया जाय, अुतना ही हिन्दू धर्म, भारत और शायद समग्र मानव-जातिके लिअे वह कल्याणकारी सिद्ध होगा।

हरिजन, ११–२–'३३

यदि हम भारतकी आबादीके पांचवें हिस्सेको स्थायी गुलामीकी हालतमें रखना चाहते हैं और अुन्हें जान-बूझकर राष्ट्रीय संस्कृतिके फलोंसे वंचित रखना चाहते हैं, तो स्वराज्य अेक अर्थहीन शब्दमात्र होगा। आत्मशुद्धिके अिस महान आन्दोलनमें हम भगवानकी मददकी आकांक्षा रखते हैं, लेकिन अुसकी प्रजाके सबसे ज्यादा सुपात्र अंशको हम मानवताके अधिकारोंसे वंचित रखते हैं। यदि हम स्वयं मानवीय दयासे शून्य हैं, तो अुसके सिंहासनके निकट दूसरोंकी निष्ठुरतासे मुक्ति पानेकी याचना हम नहीं कर सकते।

यंग अिंडिया, २५–५–'२१

अिस बातसे कभी किसीने अिनकार नहीं किया कि अस्पृश्यता अेक पुरानी प्रथा है। लेकिन यदि वह अेक अनिष्ट वस्तु है, तो अुसकी प्राचीनताके आधार पर अुसका बचाव नहीं किया जा सकता। यदि अस्पृश्य लोग आर्योंके समाजके बाहर हैं, तो अिसमें अुस समाजकी ही हानि है। और यदि यह कहा जाय कि आर्योंने अपनी प्रगति-यात्रामें किसी मंजिल पर किसी वर्ग-विशेषको दण्डके तौर पर समाजसे बहिष्कृत कर दिया था, तो अुनके पूर्वजोंको किसी भी कारणसे दण्डित किया गया हो परन्तु वह दण्ड अुस वर्गकी सन्तानको देते रहनेका कोअी कारण नहीं हो सकता। अस्पृश्य लोग भी आपसमें अस्पृश्यताका जो पालन करते हैं, अुससे अितना ही सिद्ध होता है कि किसी अनिष्ट

वस्तुको सीमित नहीं रखा जा सकता और अुसका घातक प्रभाव सर्वत्र फैल जाता है। अस्पृश्योंमें भी अस्पृश्यताका होना अिस बातके लिअे अेक अतिरिक्त कारण है कि सुसंस्कृत हिन्दू समाजको अिस अभिशापसे जल्दीसे जल्दी मुक्त हो जाना चाहिये। यदि अस्पृश्योंको अस्पृश्य अिसलिअे माना जाता है कि वे जानवरोंको मारते हैं और मांस, रक्त, हड्डियां और मैला आदि छूते हैं, तब तो हरअेक नर्स और डॉक्टरको भी अस्पृश्य माना जाना चाहिये; और अिसी तरह मुसलमानों, अीसाअियों और तथाकथित अूंचे वर्गोंके अुन हिन्दुओंको भी अस्पृश्य माना जाना चाहिये, जो आहार अथवा बलिके लिअे जानवरोंकी हत्या करते हैं। कसाअीखाने, शराबकी दुकानें, वेश्यालय आदि बस्तीसे अलग होते हैं या होने चाहिये, अिसलिअे अस्पृश्योंको भी समाजसे दूर और अलग रखा जाना चाहिये — यह दलील अस्पृश्योंके खिलाफ लोगोंके मनमें चले आ रहे अुत्कट पूर्वग्रहको ही बताती है। कसाअीखाने और ताड़ी-शराबकी दुकानें आदि जरूर बस्तीसे दूर तथा अलग होते हैं और होने चाहिये। लेकिन कसाअियों और ताड़ी अथवा शराबके विक्रेताओंको शेष समाजसे अलग नहीं रखा जाता।

यंग अिंडिया, २९–७–'२६

हम आन्तरिक प्रलोभनों तथा मोहमें लिप्त हैं और अत्यंत अस्पृश्य और पापपूर्ण विचारोंके प्रवाह हमारे मनमें चलते हैं और अुसे कलुषित करते हैं। हमें समझना चाहिये कि हमारी कसौटी हो रही है। अैसी स्थितिमें हम अभिमानके आवेशमें अपने अुन भाअियोंके स्पर्शके प्रभावके बारेमें, जिन्हें हम अकसर अज्ञानवश और ज्यादातर तो दुर-भिमानके कारण अपनेसे नीचा समझते हैं, अत्युक्ति न करें। भगवानके दरबारमें हमारी अच्छाअी-बुराअीका निर्णय अिस बातसे नहीं किया जायगा कि हम क्या खाते-पीते रहे हैं या कि हमें किस-किसने छुआ है; अुसका निर्णय तो अिस आधार पर किया जायगा कि हमने किन-किनकी सेवा की है और किस तरह की है। यदि हमने अेक भी दीन-दुखी आदमीकी सेवा की होगी, तो हमें भगवानकी कृपादृष्टि प्राप्त होगी। . . . अमुक वस्तुअें न खानेकी बातका अुपयोग हम कपट-जाल,

पाखण्ड और अुससे भी अधिक पापपूर्ण कार्योंको छिपानेके लिअे नहीं कर सकते। अिस आशंकासे कि कहीं अुनका स्पर्श हमारी आध्यात्मिक अुन्नतिमें बाधक न हो, हम किसी पतित अथवा गंदी रहन-सहनवाले भाअी-बहनकी सेवासे अिनकार नहीं कर सकते।

यंग अिंडिया, ५-१-'२२

भंगी

जिस समाजमें भंगीका अलग पेशा माना गया है वहां कोअी बड़ा दोष पैठ गया है, अैसा मुझे तो बरसोंसे लगता रहा है। अिस जरूरी और तन्दुरुस्ती बढ़ानेवाले कामको सबसे नीच काम पहले-पहल किसने माना, अिसका अितिहास हमारे पास नहीं है। जिसने भी माना अुसने हम पर अुपकार तो नहीं ही किया। हम सब भंगी हैं, यह भावना हमारे मनमें बचपनसे ही जम जानी चाहिये; और अुसका सबसे आसान तरीका यह है कि जो समझ गये हैं वे जात-मेहनतका आरम्भ पाखाना-सफाअीसे करें। जो समझ-बूझकर ज्ञानपूर्वक यह करेगा, वह अुसी क्षणसे धर्मको निराले ढंगसे और सही तरीकेसे समझने लगेगा।

मंगल-प्रभात, प्रक० ९, पृ० ४३-४४

प्रारम्भमें अस्पृश्यता स्वच्छताके नियमोंमें से अेक थी और भारतके बाहर दुनियाके कअी हिस्सोंमें आज भी अुसका यही रूप है। वह नियम यह है कि चीज गंदी हो गयी हो या आदमी किसी कारण गंदा हो गया हो तो अुसे छूना नहीं चाहिये, लेकिन ज्यों ही अुसका गंदापन दूर हो जाय या कर दिया जाय त्यों ही अुसे छू सकते हैं। अिसलिअे भंगीकाम करनेवाले व्यक्ति — फिर चाहे वह भंगी हो जिसे कि अुस कामका पैसा मिलता है या मां हो जिसे अपने अिस कामका कोअी पैसा नहीं मिलता — तब तक गंदे और अस्पृश्य माने जायंगे, जब तक वे नहा-धोकर अिस गंदगीको दूर नहीं कर देते। अिसलिअे भंगी हमेशाके लिअे अस्पृश्य न माना जाय, बल्कि अुसे हम अपना भाअी मानें। वह समाजकी अेक अैसी सेवा करता है जिसमें अुसका शरीर गंदा हो जाता है; हमें चाहिये कि हम अुसे अिस गंदगीको साफ करनेका

मौका दें, बल्कि अुस कार्यमें अुसकी सहायता करें और फिर अुसे समाजके किसी भी दूसरे सदस्यकी तरह स्वीकार करें।

हरिजन, ११-२-'३३

६२

भारतमें धार्मिक सहिष्णुता

हिन्दू धर्म

मैं जितने धर्मोंको जानता हूं, अुन सबमें हिन्दू धर्म सबसे अधिक सहिष्णु है। अिसमें कट्टरताका जो अभाव है वह मुझे बहुत पसन्द आता है, क्योंकि अिससे अुसके अनुयायीको आत्माभिव्यक्तिके लिअे अधिकसे अधिक अवसर मिलता है। हिन्दू धर्म अेकांगी धर्म न होनेके कारण अुसके अनुयायी न सिर्फ अन्य सब धर्मोंका आदर कर सकते हैं, परन्तु दूसरे धर्मोंमें जो कुछ अच्छाअी हो अुसकी प्रशंसा भी कर सकते हैं और अुसे हजम भी कर सकते हैं। अहिंसा सब धर्मोंमें समान है। परन्तु हिन्दू धर्ममें वह सर्वोच्च रूपमें प्रगट हुअी है और अुसका प्रयोग भी हुआ है। (मैं जैन धर्म या बौद्ध धर्मको हिन्दू धर्मसे अलग नहीं मानता।) हिन्दू धर्म न केवल मनुष्यमात्रकी बल्कि प्राणीमात्रकी अेकतामें विश्वास रखता है। मेरी रायमें गायकी पूजा करके अुसने दयाधर्मके विकासमें अद्‌भुत सहायता की है। यह प्राणीमात्रकी अेकतामें और अिसलिअे पवित्रतामें विश्वास रखनेका व्यावहारिक प्रयोग है। पुनर्जन्मकी महान धारणा अिस विश्वासका सीधा परिणाम है। अन्तमें वर्णाश्रम धर्मका आविष्कार सत्यकी निरन्तर शोधका भव्य परिणाम है।

यंग अिंडिया, २०-१०-'२७

बौद्ध धर्म

मेरा दृढ़ मत है कि बौद्ध धर्म या बुद्धकी शिक्षाका पूरा परिणत विकास भारतमें ही हुआ; अिससे भिन्न कुछ हो भी नहीं सकता था,

क्योंकि गौतम स्वयं अेक श्रेष्ठ हिन्दू ही तो थे। वे हिन्दू धर्ममें जो कुछ अुत्तम है अुससे ओतप्रोत थे और अुन्होंने अपना जीवन कतिपय अैसी शिक्षाओंकी शोध और प्रसारके लिअे दिया, जो वेदोंमें छिपी पड़ी थीं और जिन्हें समयकी काओीने ढंक दिया था।...बुद्धने हिन्दू धर्मका कभी त्याग नहीं किया; अुन्होंने तो अुसके आधारका विस्तार किया। अुन्होंने अुसे नया जीवन और नया अर्थ दिया।

यंग अिंडिया, २४–११–'२७

बेशक, अुन्होंने अिस धारणाको अस्वीकार कर दिया था कि अीश्वर नामधारी कोअी प्राणी द्वेषवश काम करता है, अपने कर्मों पर पश्चात्ताप कर सकता है, पार्थिव राजाओंकी तरह वह भी प्रलोभनों और रिश्वतोंमें फंस सकता है और अुसका कृपापात्र बना जा सकता है। अुनकी सारी आत्माने अिस विश्वासके विरुद्ध प्रबल विद्रोह किया था कि अीश्वर नामधारी प्राणीको अपने ही पैदा किये हुअे जीवित प्राणियोंका ताजा खून अच्छा लगता है और अिससे वह प्रसन्न होता है। अिसलिअे बुद्धने अीश्वरको फिरसे अुचित स्थान पर बैठा दिया और जिस अनधिकारीने अुस सिंहासनको हस्तगत कर लिया था अुसे पदभ्रष्ट कर दिया। अुन्होंने जोर देकर पुनः अिस बातकी घोषणा की कि अिस विश्वका नैतिक शासन शाश्वत है और अपरिवर्तनीय है। अुन्होंने निःसंकोच यह कहा कि नियम ही अीश्वर है।

यंग अिंडिया, २४–११–'२७

अीसाअी धर्म

मैं यह नहीं मान सकता कि केवल अीसामें ही देवांश था। अुनमें अुतना ही दिव्यांश था जितना कृष्ण, राम, मुहम्मद या जरथुस्त्रमें था। अिसी तरह जैसे मैं वेदों या कुरानके प्रत्येक शब्दको अीश्वर-प्रेरित नहीं मानता, वैसे ही बाअिबलके प्रत्येक शब्दको भी अीश्वर-प्रेरित नहीं मानता। बेशक, अिन पुस्तकोंकी समस्त वाणी अीश्वर-प्रेरित है, परन्तु अलग अलग वस्तुओंको देखने पर अुनमें से अनेकोंमें मुझे अीश्वर-प्रेरणा

नहीं मिलती। मेरे लिअे बाअिबल अुतनी ही आदरणीय धर्म-पुस्तक है, जितनी गीता है और कुरान है।

हरिजन, ६–३–'३७

यह मेरी पक्की राय है कि आजका यूरोप न तो अीश्वरकी भावनाका प्रतिनिधि है, न अीसाअी धर्मकी भावनाका, बल्कि शैतानकी भावनाका प्रतीक है। और शैतानकी सफलता तब सबसे अधिक होती है, जब वह अपनी जबान पर खुदाका नाम लेकर सामने आता है। यूरोप आज नाममात्रको ही अीसाअी है। वह सचमुच धनकी पूजा कर रहा है। 'अूंटके लिअे सुअीकी नोकमें होकर निकलना आसान है, मगर किसी धनवानका स्वर्गमें जाना मुश्किल है।' अीसा मसीहने यह बात ठीक ही कही थी। अुनके तथाकथित अनुयायी अपनी नैतिक प्रगतिको अपनी धन-दौलतसे ही नापते हैं।

यंग अिंडिया, ८–९–'२०

अिस्लाम

अवश्य ही मैं अिस्लामको अुसी अर्थमें शांतिका धर्म मानता हूं, जिस अर्थमें अीसाअी, बौद्ध और हिन्दू धर्म शांतिके धर्म हैं। बेशक, मात्राका फर्क है, परन्तु अिन सब धर्मोंका अुद्देश्य शांति ही है।

यंग अिंडिया, २०–१–'२७

भारतकी राष्ट्रीय संस्कृतिके लिअे अिस्लामकी विशेष देन तो यह है कि वह अेक अीश्वरमें शुद्ध और विश्वास रखता है और जो लोग अुसके दायरेके भीतर हैं अुनके लिअे व्यवहारमें वह मानव-भ्रातृत्वके सत्यको लागू करता है। अिन्हें मैं अिस्लामकी दो विशेष देनें मानता हूं, क्योंकि हिन्दू धर्ममें भ्रातृभाव बहुत अधिक दार्शनिक बन गया है। अिसी तरह दार्शनिक हिन्दू धर्ममें अीश्वरके सिवा और कोअी देवता नहीं है, फिर भी अिससे अिनकार नहीं किया जा सकता कि व्यावहारिक हिन्दू धर्म अिस मामलेमें अितना कट्टर और दृढ़ आग्रह नहीं रखता जितना अिस्लाम रखता है।

यंग अिंडिया, २१–३–'२९

मैं अैसी आशा नहीं करता हूं कि मेरे सपनोंके आदर्श भारतमें केवल अेक ही धर्म रहेगा, यानी वह संपूर्णतः हिन्दू या अीसाअी या मुसलमान बन जायगा। मैं तो यह चाहता हूं कि वह पूर्णतः अुदार और सहिष्णु बने और अुसके सब धर्म साथ-साथ चलते रहें।

यंग अिंडिया, २२–१२–'२७

मूर्तिपूजा

हम सब मूर्तिपूजक हैं। अपने आध्यात्मिक विकासके लिअे और अीश्वरमें अपने विश्वासको दृढ़ करनेके लिअे हमें मन्दिरों, मसजिदों, गिरजाघरों आदिकी जरूरत महसूस होती है। अपने मनमें अीश्वरके प्रति भक्तिभाव प्रेरित करनेके लिअे कुछ लोगोंको पत्थर या धातुकी मूर्तियां चाहिये, कुछको वेदी चाहिये, तो कुछको किताब या तसवीर चाहिये।

यंग अिंडिया, २८–८–'२४

मंदिर, मसजिद या गिरजाघर . . . अीश्वरके अिन विभिन्न निवास-स्थानोंमें मैं कोअी फर्क नहीं करता। मनुष्यकी श्रद्धाने अुनका निर्माण किया है और अुसने अुन्हें जो माना है वही वे हैं। वे मनुष्यकी किसी तरह 'अदृश्य शक्ति' तक पहुंचनेकी आकांक्षाके परिणाम हैं।

हरिजन, १८–३–'३३

मेरे खयालसे मूर्ति-पूजक और मूर्ति-भंजक शब्दोंका जो सच्चा अर्थ है अुस अर्थमें मैं दोनों ही हूं। मैं मूर्तिपूजाकी भावनाकी कद्र करता हूं। अिसका मानव-जातिके अुत्थानमें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग रहता है। और मैं चाहूंगा कि मुझमें हमारे देशको पवित्र करनेवाले हजारों पावन देवालयोंकी रक्षा अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर भी करनेका सामर्थ्य हो। . . . मैं मूर्ति-भंजक अिस अर्थमें हूं कि कट्टरताके रूपमें मूर्तिपूजाका जो सूक्ष्म रूप प्रचलित है अुसे मैं तोड़ता हूं। अैसी कट्टरता रखनेवालेको अपने ही ढंगके सिवा और किसी भी रूपमें अीश्वरकी पूजा करनेमें कोअी अच्छाअी नजर नहीं आती। मूर्तिपूजाका यह रूप अधिक सूक्ष्म होनेके कारण पूजाके अुस ठोस और स्थूल रूपसे अधिक घातक है, जिसमें

अीश्वरको पत्थरके अेक छोटेसे टुकड़ेके साथ या सोनेकी मूर्तिके साथ अेक समझ लिया जाता है।

यंग अिंडिया, २८–८–'२४

जब हम किसी पुस्तकको पवित्र समझकर अुसका आदर करते हैं, तो हम मूर्तिकी पूजा ही करते हैं। पवित्रता या पूजाके भावसे मंदिरों या मसजिदोंमें जानेका भी वही अर्थ है। लेकिन अिन सब बातोंमें मुझे कोअी हानि दिखाअी नहीं देती। अुलटे, मनुष्यकी बुद्धि सीमित है, अिसलिअे वह और कुछ कर ही नहीं सकता। अैसी हालतमें वृक्षपूजामें कोअी मौलिक बुराअी या हानि दिखाअी देनेके बजाय मुझे तो अिसमें अेक गहरी भावना और काव्यमय सौन्दर्य ही दिखाअी देता है। वह समस्त वनस्पति-जगतके लिअे सच्चे पूजाभावका प्रतीक है। वनस्पति-जगत तो सुन्दर रूपों और आकृतियोंका अनन्त भण्डार है; अुनके द्वारा वह मानो असंख्य जिह्वाओंसे अीश्वरकी महानता और गौरवकी घोषणा करता है। वनस्पतिके बिना अिस पृथ्वी पर जीवधारी अेक क्षणके लिअे भी नहीं रह सकते। अिसलिये अैसे देशमें, जहां खास तौर पर पेड़ोंकी कमी है, वृक्षपूजाका अेक गहरा आर्थिक महत्त्व हो जाता है।

यंग अिंडिया, २६–९–'२९

६३

धर्म-परिवर्तन

मेरी हिन्दू धर्मवृत्ति मुझे सिखाती है कि थोड़े या बहुत अंशोंमें सभी धर्म सच्चे हैं। सबकी अुत्पत्ति अेक ही अीश्वरसे हुअी है, परन्तु सब धर्म अपूर्ण हैं; क्योंकि वे अपूर्ण मानव-माध्यमके द्वारा हम तक पहुंचे हैं। सच्चा शुद्धिका आन्दोलन यह होना चाहिये कि हम सब अपने अपने धर्ममें रहकर पूर्णता प्राप्त करनेका प्रयत्न करें। अिस प्रकारकी योजनामें अेक-मात्र चरित्र ही मनुष्यकी कसौटी होगा। अगर अेक बाड़ेसे निकलकर दूसरेमें चले जानेसे कोअी नैतिक अुत्थान न होता हो तो जानेसे क्या

लाभ? शुद्धि या तबलीगका फलितार्थ अीश्वरकी सेवा ही होना चाहिये। अिसलिअे मैं अीश्वरकी सेवाके खातिर यदि किसीका धर्म बदलनेकी कोशिश करूं तो अुसका क्या अर्थ होगा, जब मेरे ही धर्मको माननेवाले रोज अपने कर्मोंसे अीश्वरका अिनकार करते हैं? दुनियावी बातोंके बनिस्बत धर्मके मामलोंमें यह कहावत अधिक लागू होती है कि 'वैद्यजी, पहले अपना अिलाज कीजिये'।

यंग अिंडिया, २९–५–'२४

मैं धर्म-परिवर्तनकी आधुनिक पद्धतिके खिलाफ हूं। दक्षिण अफ्रीकामें और भारतमें लोगोंका धर्म-परिवर्तन जिस तरह किया जाता है, अुसके अनेक वर्षोंके अनुभवसे मुझे अिस बातका निश्चय हो गया है कि अुससे नये अीसाअियोंकी नैतिक भावनामें कोअी सुधार नहीं होता; वे यूरोपीय सभ्यताकी अूपरी बातोंकी नकल करने लगते हैं, किन्तु अीसाकी मूल शिक्षासे अछूते ही रहते हैं। मैं सामान्यतः जो परिणाम आता है अुसीकी बात कर रहा हूं; अिस नियमके कुछ अुत्तम अपवाद तो होते ही हैं। दूसरी ओर अीसाअी मिशनरियोंके प्रयत्नसे भारतको अप्रत्यक्ष प्रकारका लाभ बहुत हुआ है। अुसने हिन्दुओं और मुसलमानोंको अपने-अपने धर्मकी शोध करनेके लिअे अुत्साहित किया है। अुसने हमें अपने घरको साफ-सुथरा और व्यवस्थित बनानेके लिअे मजबूर किया है। अीसाअी मिशनरियों द्वारा चलायी जानेवाली शिक्षा-संस्थाओं तथा अस्पतालों आदिको भी मैं अप्रत्यक्ष लाभोंमें ही गिनता हूं, क्योंकि अुनकी स्थापना शिक्षा-प्रचार या स्वास्थ्य-संवर्धनके लिअे नहीं, बल्कि धर्म-परिवर्तनकी अुनकी मुख्य प्रवृत्तिके सहायक साधनके रूपमें ही हुअी है।

यंग अिंडिया, १७–१२–'२५

मेरी रायमें मानव-दयाके कार्योंकी आड़में धर्म-परिवर्तन करना कमसे कम अहितकर तो है ही। अवश्य ही यहांके लोग अिसे नाराजीकी दृष्टिसे देखते हैं। आखिर तो धर्म अेक गहरा व्यक्तिगत मामला है, अुसका सम्बन्ध हृदयसे है। कोअी अीसाअी डॉक्टर मुझे किसी बीमारीसे अच्छा कर दे तो मैं अपना धर्म क्यों बदल लूं, या जिस समय मैं अुसके असरमें

रहूं तब वह डॉक्टर मुझसे अिस तरहके परिवर्तनकी आशा क्यों रखे या अैसा सुझाव क्यों दे? क्या डॉक्टरी सेवा अपने-आपमें ही अेक पारितोषिक और संतोष नहीं है? या जब मैं किसी औसाअी शिक्षा-संस्थामें शिक्षा लेता होअूं तब मुझ पर औसाअी शिक्षा क्यों थोपी जाय? मेरी रायमें ये बातें अूपर अुठानेवाली नहीं हैं, और अगर भीतर ही भीतर शत्रुता पैदा नहीं करतीं तो भी सन्देह अवश्य अुत्पन्न करती हैं। धर्म-परिवर्तनके तरीके अैसे होने चाहिये, जिन पर सीजरकी पत्नीकी तरह किसीको कोअी शक न हो सके। धर्मकी शिक्षा लौकिक विषयोंकी तरह नहीं दी जाती। वह हृदयकी भाषामें दी जाती है। अगर किसी आदमीमें जीता-जागता धर्म है तो अुसकी सुगन्ध गुलाबके फूलकी तरह अपने-आप फैलती है। सुगन्ध दिखाअी नहीं देती, अिसलिअे फूलकी पंखुड़ियोंके रंगकी प्रत्यक्ष सुन्दरतासे अुसकी सुगन्धका प्रभाव अधिक व्यापक होता है।

मैं धर्म-परिवर्तनके विरुद्ध नहीं हूं, परन्तु मैं अुसके आधुनिक अुपायोंके विरुद्ध हूं। आजकल और बातोंकी तरह धर्म-परिवर्तनने भी अेक व्यापारका रूप ले लिया है। मुझे औसाअी धर्म-प्रचारकोंकी अेक रिपोर्ट पढ़ी हुअी याद है, जिसमें बताया गया था कि प्रत्येक व्यक्तिका धर्म बदलनेमें कितना खर्च हुआ, और फिर 'अगली फसल' के लिअे बजट पेश किया गया था।

(हां, मेरी यह राय जरूर है कि भारतके महान धर्म अुसके लिअे सब तरहसे काफी हैं। औसाअी और यहूदी धर्मके अलावा हिन्दू धर्म और अुसकी शाखायें, अिस्लाम और पारसी धर्म सब सजीव धर्म हैं। दुनियामें कोअी भी अेक धर्म पूर्ण नहीं है। सभी धर्म अुनके माननेवालोंके लिअे समान रूपसे प्रिय हैं। अिसलिअे जरूरत संसारके महान धर्मोंके अनुयायियोंमें सजीव और मित्रतापूर्ण संपर्क स्थापित करनेकी है, न कि हर सम्प्रदाय द्वारा दूसरे धर्मोंकी अपेक्षा अपने धर्मकी श्रेष्ठता जतानेकी व्यर्थ कोशिश करके आपसमें संघर्ष पैदा करनेकी। अैसे मित्रतापूर्ण संबंधके द्वारा हमारे लिअे अपने अपने धर्मोंकी कमियां और बुराअियां दूर करना संभव होगा।)

मैंने अूपर जो कुछ कहा है अुससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जिस प्रकारका धर्म-परिवर्तन मेरी दृष्टिमें है अुसकी हिन्दुस्तानमें जरूरत

नहीं है। आजकी सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि आत्मशुद्धि, आत्म-साक्षात्कारके अर्थमें धर्म-परिवर्तन किया जाय। परन्तु धर्म-परिवर्तन करने-वालोंका यह हेतु कभी नहीं होता। जो भारतका धर्म-परिवर्तन करना चाहते हैं, अुनसे क्या यह नहीं कहा जा सकता कि 'वैद्यजी, आप अपना ही अिलाज कीजिये?'

यंग अिंडिया, २३–४–'३१

कोअी ओीसाअी किसी हिन्दूको ओीसाअी धर्ममें लानेकी या हिन्दू किसी ओीसाअीको हिन्दू धर्ममें लानेकी अिच्छा क्यों रखे? वह हिन्दू यदि सज्जन है या भगवद्-भक्त है, तो अुक्त ओीसाअीको अिसी बातसे सन्तोष क्यों नहीं हो जाना चाहिये। यदि मनुष्यका नैतिक आचार कैसा है, अिस बातकी परवाह न की जाय, तो फिर पूजाकी पद्धति-विशेष — वह पूजा गिरजाघर, मसजिद या मंदिरमें कहीं भी क्यों न की जाय — अेक निरर्थक कर्मकांड ही होगी। अितना ही नहीं, वह व्यक्ति या समाजकी अुन्नतिमें बाधारूप भी हो सकती है और पूजाकी अमुक पद्धतिके पालनका अथवा अमुक धार्मिक सिद्धान्तके अुच्चारणका आग्रह हिंसापूर्ण लड़ाअी-झगड़ोंका अेक बड़ा कारण बन सकता है। ये लड़ाअी-झगड़े आपसी रक्तपातकी ओर ले जाते हैं और अिस तरह अुनकी परिसमाप्ति मूल धर्ममें यानी ओीश्वरमें ही घोर अश्रद्धाके रूपमें होती है।

हरिजन, ३०–१–'३७

६४

शासन-सम्बन्धी समस्यायें

मुझे डर है कि अगले कअी वर्षों तक दबी हुअी और गिरी हुअी जनताको दुःख और गरीबीके कीचड़से अुठानेके लिअे आवश्यक कानून-कायदे बनानेका कार्य करते रहना होगा। अिस कीचड़में अुसे अेक हद तक तो पूंजीपतियों, जमींदारों और तथाकथित अुच्च वर्गोंने और बादमें ब्रिटिश शासकोंने फंसाया है; अलबत्ता, ब्रिटिश शासकोंने अपना यह काम बहुत वैज्ञानिक रीतिसे किया है। अगर हमें अिस जनताका अुसकी अिस दुरवस्थासे अुद्धार करना है, तो अपना घर सुव्यवस्थित करनेकी दृष्टिसे भारतकी राष्ट्रीय सरकारका यह कर्तव्य होगा कि वह लगातार अुसको ही तरजीह देती रहे और जिन बोझोंके भारसे अुसकी कमर टूटी जा रही है, अुनसे अुसे मुक्त भी कर दे। और यदि जमींदारोंको, अमीरोंको और अुन लोगोंको जो आज विशेषाधिकार भोग रहे हैं — वे यूरोपीय हों या भारतीय — अैसा मालूम हो कि अुनके साथ निष्पक्षताका व्यवहार नहीं हो रहा है, तो मैं अुनसे सहानुभूति रखूंगा। लेकिन मैं अुनकी कोअी सहायता नहीं कर सकूंगा। क्योंकि मैं तो अिस प्रयत्नमें अुनकी मदद चाहूंगा और सच तो यह है कि अुनकी मददके बिना अिस जनताका अुद्धार करना सम्भव ही नहीं होगा।

अिसलिअे धन या अधिकारोंके रूपमें जिनके पास कोअी सम्पत्ति है अुनके तथा जिनके पास अैसी कोअी सम्पत्ति नहीं है अुन गरीबोंके बीच संघर्ष तो अवश्य होगा और यदि अिस संघर्षका भय रखा जाता हो और सब वर्ग मिलकर करोड़ों बेजबान लोगोंके सिर पर पिस्तौल तानकर अैसा कहना चाहते हों कि तुम लोगोंको तुम्हारी अपनी सरकार तब तक नहीं मिलेगी, जब तक कि तुम अिस बातका आश्वासन नहीं देते कि हमारी सम्पत्ति और हमारे अधिकारोंको कोअी आंच नहीं आयेगी, तब तो मुझे लगता है कि राष्ट्रीय सरकारका निर्माण ही नहीं हो सकता।

दि नेशन्स व्हाअिस, पृ० ७१

गवर्नर

. . . अिसके बावजूद कि लोगोंकी तिजोरीकी कौड़ी-कौड़ीको बचाना मुझे बहुत पसन्द है, पैसेकी बचतके लिअे प्रान्तीय गवर्नरोंकी संस्थाको अेकदम अुड़ा देना सही अर्थशास्त्र नहीं होगा। गवर्नरोंको दखल देनेका बहुत अधिकार देना ठीक नहीं है। वैसे ही अुनको सिर्फ शोभाके लिअे पुतला बना देना भी ठीक नहीं होगा। मंत्रियोंके कामको दुरुस्त करनेका अधिकार अुन्हें होना चाहिये। सूबेकी खटपटसे अलग होनेके कारण भी वे सूबेका कारबार ठीक तरहसे देख सकेंगे और मंत्रियोंको गलतियोंसे बचा सकेंगे। गवर्नर लोग अपने अपने सूबोंकी नीतिके रक्षक होने चाहिये।

हरिजनसेवक, २१–१२–'४७

मंत्रीगण

अगर कांग्रेसको लोकसेवाकी ही संस्था रहना है, तो मंत्री 'साहब लोगों' की तरह नहीं रह सकते और न सरकारी साधनोंका अुपयोग निजी कामोंके लिअे ही कर सकते हैं।

हरिजन, २९–९–'४६

भाअी-भतीजावाद

पद-ग्रहणसे यदि पदका सदुपयोग किया जाय तो कांग्रेसकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी और यदि अुसका दुरुपयोग होगा तो वह अपनी पुरानी प्रतिष्ठा भी खो देगी। यदि दूसरे परिणामसे बचना हो तो मंत्रियों और विधान-सभाके सदस्योंको अपने वैयक्तिक और सार्वजनिक आचरणकी जांच करते रहना होगा। अुन्हें, जैसा अंग्रेजी लोकोक्तिमें कहा जाता है, सीजरकी पत्नीकी तरह अपने प्रत्येक व्यवहारमें सन्देहके परे होना चाहिये। वे अपने पदका अुपयोग अपने या अपने रिश्तेदारों अथवा मित्रोंके लाभके लिअे नहीं कर सकते। अगर रिश्तेदारों या मित्रोंकी नियुक्ति किसी पद पर होती है, तो अुसका कारण यही होना चाहिये कि अुस पदके तमाम अुम्मीदवारोंमें वे सबसे ज्यादा योग्य हैं और बाजारमें अुनका मूल्य अुस सरकारी पदसे अुन्हें जो-कुछ मिलेगा अुससे कहीं ज्यादा है।

मंत्रियों और कांग्रेसके टिकट पर चुने गये विधान-सभाके सदस्योंको अपने कर्तव्यके पालनमें निर्भय होना चाहिये। अुन्हें हमेशा ही अपना स्थान या पद खोनेके लिअे तैयार रहना चाहिये। विधान-सभाओंकी सदस्यता या अुसके आधार पर मिलनेवाले पदका अेकमात्र मूल्य यही है कि वह सम्बन्धित व्यक्तियोंको कांग्रेसकी प्रतिष्ठा और ताकत बढ़ानेकी योग्यता प्रदान करता है; अिससे अधिक मूल्य अुसका नहीं है। और चूंकि ये दोनों चीजें पूरी तरह वैयक्तिक और सार्वजनिक नीतिमत्ता पर निर्भर हैं, अिसलिअे सम्बन्धित व्यक्तियोंकी प्रत्येक नैतिक त्रुटिसे कांग्रेसकी हानि होगी।

हरिजन, २३–४–'३८

कर-निर्धारण

मंत्रि-मंडल धारासभाके सदस्योंके मातहत रहकर काम करता है। अुनकी अिजाजतके बिना वह कुछ कर नहीं सकता। और हरअेक मेम्बर अपने वोटरोंके यानी लोकमतके अधीन है। चुनांचे अुसके हरअेक काम पर गहराअीके साथ सोचनेके बाद ही अुसका विरोध करना मुनासिब होगा। आम लोगोंकी अेक खराब आदत पर भी अिस सिल-सिलेमें गौर किया जाना चाहिये। टैक्स चुकानेवालेको टैक्सके नामसे नफरत होती है। फिर भी जहां अच्छा अिन्तजाम है, वहां अकसर यह दिखाया जा सकता है कि टैक्स देनेवाला खुद टैक्स या करके रूपमें जो कुछ देता है, अुसका पूरा-पूरा मुआवजा अुसे मिल जाता है। शहरोंमें पानी पर वसूल किया जानेवाला टैक्स अिसी ढंगका है। शहरमें जिस दरसे मुझे पानी मिलता है, अुस दरमें मैं अपनी जरूरतका पानी खुद पैदा नहीं कर सकता। मतलब यह है कि पानी मुझे सस्ता पड़ता है। अुसकी यह दर मुझे अपनी यानी वोटरोंकी अिच्छाके मुताबिक तय करनी पड़ती है। तिस पर भी जब पानीका टैक्स जमा करनेकी नौबत आती है, तब आम शहरियोंमें अुसके खिलाफ अेक नफरत-सी पैदा हो जाती है। वही हाल दूसरे टैक्सोंका भी है। यह सच है कि सभी तरहके टैक्सोंका अैसा सीधा हिसाब नहीं किया जा सकता। जैसे-जैसे समाजका और

अुसकी सेवाका दायरा बढ़ता-जाता है, वैसे-वैसे यह बताना मुश्किल हो जाता है कि टैक्स चुकानेवालेको अुसका सीधा मुआवजा किस तरह मिलता है। लेकिन अितना जरूर कहा जा सकता है कि समाज पर जो अेक खास कर या टैक्स बैठाया जाता है, समाजको अुसका पूरा-पूरा मुआवजा मिलता ही है। अगर अैसा न होता हो तो जरूर ही यह कहा जा सकता है कि वह समाज लोकमतकी बुनियाद पर नहीं चल रहा है।

हरिजनसेवक, ८–९–'४६

अपराध और अुसका दण्ड

अहिंसाकी नीति पर चलनेवाले आजाद भारतमें अपराध तो होते रहेंगे, लेकिन अुन्हें करनेवालोंके साथ अपराधियों-जैसा व्यवहार नहीं किया जायगा। अुन्हें दण्ड नहीं दिया जायगा। दूसरी व्याधियोंकी तरह अपराध भी अेक बीमारी है और प्रचलित समाज-व्यवस्थाकी अुपज है। अिसलिअे सारे अपराधोंका, जिनमें हत्या भी शामिल है, बीमारियोंकी तरह अिलाज किया जायगा। भारत अिस मंजिल तक कभी पहुंचेगा कि नहीं, यह अेक अलग सवाल है।

हरिजन, ५–५–'४६

आजाद हिन्दुस्तानमें कैदियोंके जेल कैसे हों? बहुत समयसे मेरी यह राय रही है कि सारे अपराधियोंके साथ बीमारों-जैसा बरताव किया जाय और जेल अुनके अस्पताल हों, जहां अिस वर्गके बीमार अिलाजके लिअे भरती किये जायं। कोअी आदमी अपराध अिसलिअे नहीं करता कि अैसा करनेमें अुसे मजा आता है। अपराध अुसके रोगी दिमागकी निशानी है। जेलमें अैसी किसी खास बीमारीके कारणोंका पता लगाकर अुन्हें दूर करना चाहिये। जब अपराधियोंके जेल अुनके अस्पताल बन जायंगे, तब अुनके लिअे आलीशान अिमारतोंकी जरूरत नहीं होगी। कोअी देश यह नहीं कर सकता। तब हिन्दुस्तान जैसा गरीब देश तो अपराधियोंके लिअे बड़ी बड़ी अिमारतें कहांसे बनावे? लेकिन जेलके कर्मचारियोंकी दृष्टि अस्पतालके डॉक्टरों और नर्सों जैसी होनी चाहिये। कैदियोंको महसूस करना चाहिये कि जेलके अफसर अुनके दोस्त हैं।

अफसर वहां अिसलिअे हैं कि वे अपराधियोंको फिरसे दिमागी तन्दुरुस्ती हासिल करनेमें मदद करें। अुनका काम अपराधियोंको किसी तरह सतानेका नहीं है। लोकप्रिय सरकारोंको अिसके लिअे जरूरी हुक्म निकालने होंगे। लेकिन अिस बीच जेलके कर्मचारी अपने बन्दोबस्तको अिन्सानियत भरा बनानेके लिअे बहुत कुछ कर सकते हैं।

कैदियोंका क्या फर्ज है? पहले कैदी रह चुकनेके नाते मैं अपने साथी कैदियोंको सलाह दूंगा कि वे जेलमें आदर्श कैदियों-जैसा बरताव करें। अुन्हें जेलके अनुशासनको तोड़नेसे बचना चाहिये। जो भी काम अुन्हें सौंपा जाय, अुसमें अुन्हें अपना दिल और आत्मा, दोनों लगा देने चाहिये। मिसालके लिअे, कैदी अपना खाना खुद पकाते हैं। अुन्हें चावल, दाल या दूसरे मिलनेवाले अनाजको साफ करना चाहिये, ताकि अुसमें कंकड़, रेत, भूसी या कीड़े न रह जायं। कैदियोंको अपनी सारी शिकायतें जेलके अधिकारियोंके सामने अुचित ढंगसे रखनी चाहिये। अुन्हें अपने छोटेसे समाजमें अैसा काम करना चाहिये कि जेल छोड़ते समय वे जैसे आये थे अुससे ज्यादा अच्छे आदमी बनकर जायें।

दिल्ली-डायरी, पृ० ११७–१८

वयस्क मताधिकार

मैं वयस्क मताधिकारका हिमायती हूं। . . . वयस्क मताधिकार अनेक कारणोंसे जरूरी है। और अुसके पक्षमें जो निर्णायक कारण दिये जा सकते हैं, अुनमें से अेक यह है कि वह मुझे न सिर्फ मुसलमानोंकी बल्कि तथाकथित अस्पृश्यों, अीसाअियों और सभी वर्गोंके मेहनत-मजदूरी करके रोजी कमानेवालोंकी अुचित आकांक्षाओंको संतुष्ट करनेका सामर्थ्य देता है। मैं अिस विचारको बरदाश्त ही नहीं कर सकता कि अैसे किसी आदमीको, जो चरित्रवान है किन्तु जिसके पास धन या अक्षर-ज्ञान नहीं है, मताधिकार न दिया जाय; या कि कोअी आदमी, जो अीमानदारीके साथ शरीर-श्रम करके रोजी कमाता है, महज गरीब होनेके अपराधके कारण मताधिकारसे वंचित रहे।

यंग अिंडिया, ८–१०–’३१

मृत्यु-कर

किसी आदमीके पास अत्यधिक धनका होना और देशोंकी अपेक्षा हमारे देशमें ज्यादा निंदनीय माना जाना चाहिये। मैं तो कहूंगा कि वह भारतीय मानव-समाजके खिलाफ किया जानेवाला गुनाह है। अिसलिअे अेक नियत राशिके अूपर जितना धन हो अुस पर कितना कर लगाया जाय, अिसकी अुच्चतम सीमा आ ही नहीं सकती। मुझे मालूम हुआ है कि अिंग्लैण्डमें नियत राशिके अूपर होनेवाली कमाअीका ७० प्रतिशत तक करके रूपमें वसूल करते हैं। कोअी कारण नहीं कि भारत अिससे भी ज्यादा क्यों न वसूल करे। मृत्यु-कर क्यों नहीं लगाया जाना चाहिये? अमीरोंके जिन लड़कोंको वयस्क हो जाने पर भी बाप-दादोंके धनकी विरासत मिलती है, अुनकी अिस प्राप्तिसे सचमुच तो हानि ही होती है। अिस तरह देखें तो राष्ट्रको दोहरा नुकसान होता है। क्योंकि वह विरासत न्यायसे तो राष्ट्रको मिलनी चाहिये। राष्ट्रको दूसरा नुकसान यह होता है कि विरासत पानेवाले अुत्तराधिकारीकी सारी शक्तियां खिलतीं नहीं, प्रकाशमें नहीं आतीं। वे धन-सम्पत्तिके बोझके नीचे कुचल जाती हैं।

हरिजन, ३१–७–'३७

कानून द्वारा सुधार

लोग अैसा सोचते मालूम होते हैं कि किसी बुराअीके खिलाफ कानून बना दिया जाय, तो वह अपने-आप निर्मूल हो जाती है। अुस सम्बन्धमें और अधिक कुछ करनेकी आवश्यकता नहीं रहती। लेकिन अिससे ज्यादा बड़ी कोअी आत्म-वंचना नहीं हो सकती। कानून तो अज्ञानमें फंसे हुअे या बुरी वृत्तिवाले अल्पसंख्यक लोगोंको ध्यानमें रखकर यानी अुनसे अुनकी बुराअी छुड़वानेके अुद्देश्यसे बनाया जाता है और अुसी स्थितिमें वह कारगर भी होता है। बुद्धिमान और संघटित लोकमत अथवा धर्मकी आड़ लेकर दुराग्रही बहुसंख्यक लोग जिस कानूनका विरोध करते हैं वह कभी सफल नहीं हो सकता।

यंग अिंडिया, ३०–६–'२७

पहली चीज तो यह है कि हमारे प्रयत्नमें जवरदस्ती या असत्यका लेश भी नहीं होना चाहिये। मेरी नम्र रायमें आज तक जबरदस्तीके द्वारा कोअी भी महत्त्वपूर्ण सुधार नहीं कराया जा सका है। कारण यह है कि जवरदस्तीके द्वारा अूपरी सफलता होती दिखाअी दे यह तो संभव है, किंतु अुससे दूसरी अनेक वुराअियां पैदा हो जाती हैं, जो मूल वुराअीसे भी ज्यादा हानिकारक सिद्ध होती हैं।

यंग अिंडिया, ८–१२–'२७

जूरी द्वारा न्याय-विचारकी पद्धति

जूरी द्वारा न्याय-विचारकी पद्धतिसे अकसर न्यायकी हानि होती है। सारी दुनियाका अिस विषयमें यही अनुभव है। लेकिन अुसकी अिस कमीके वावजूद लोगोंने सब जगह अुसे खुशीके साथ स्वीकार किया है। क्योंकि अेक तो लोगोंमें अुससे स्वातंत्र्यकी भावनाका विकास होता है, जो अेक महत्त्वपूर्ण लाभ है; और दूसरे, अिस समुचित भावनाकी तृप्ति होती है कि विचार अपने ही जैसे यानी समकक्ष लोगों द्वारा किया जा रहा है।

यंग अिंडिया, १२–८–'२६

मैं अिस वातको नहीं मानता कि न्यायाधीशोंकी अपेक्षा जूरी द्वारा न्याय-विचारकी पद्धतिमें ज्यादा लाभ है। हमें . . . अंग्रेजोंकी हरअेक रीतिका अन्धानुकरण नहीं करना चाहिये। जहां सम्पूर्ण निष्पक्षता, समचित्तता, गवाहीकी छान-बीन करने और मनुष्य-स्वभावको पहचाननेकी योग्यता अपेक्षित है, वहां प्रशिक्षित न्यायाधीशोंकी जगह अैसी तालीमसे शून्य और संयोगवश अेकत्र किये गये लोगोंको नहीं विठाया जा सकता। हमारा अुद्देश्य यह होना चाहिये कि नीचेसे लगाकर अूपर तक हमारे न्याय-विभागमें अैसे लोग हों जिनकी न्यायनिष्ठा किसी भी कारणसे विचलित न हो, जो सर्वथा निष्पक्ष हों और योग्य हों।

यंग अिंडिया, २७–८–'३१

न्यायालय

यदि हमारे मन पर वकीलोंका और न्यायालयोंका मोह न छाया होता और यदि हमें लुभाकर अदालतोंके दलदलमें ले जानेवाले तथा हमारी नीच वृत्तियोंको अुत्साहित करनेवाले दलाल न होते, तो हमारा जीवन आज जैसा है अुसकी अपेक्षा ज्यादा सुखी होता। जो लोग अदालतोंमें ज्यादा आते-जाते हैं, अुनकी यानी अुनमें से अच्छे आदमियोंकी गवाही लीजिये तो वे अिस बातकी पुष्टि करेंगे कि अदालतोंका वायुमण्डल बिलकुल सड़ा हुआ होता है। दोनों पक्षोंकी ओरसे सौगन्ध खाकर झूठ बोलनेवाले गवाह खड़े किये जाते हैं, जो धन या मित्रताके खातिर अपनी आत्माको बेच डालते हैं।

यंग अिंडिया, ६-१०-'२६

अब अगर आप कानून या वकालतके पेशेको धार्मिक बनाना चाहते हैं, तो आपके लिअे सबसे पहले यह आवश्यक है कि आप अपने अिस पेशेको धन बटोरनेका नहीं, बल्कि देशसेवाका अेक साधन मानिये। सभी देशोंमें अैसे बहुत ही योग्य वकीलोंके अुदाहरण मिलेंगे, जिन्होंने बहुत बड़े स्वार्थ-त्यागका जीवन बिताया, अपने कानूनी ज्ञानको देश-सेवामें लगाया यद्यपि अिससे अुनके हिस्सेमें गरीबी ही गरीबी पड़ी।... रस्किनने कहा है, क्यों कोअी वकील दो-दो सौ रुपये अपना मेहनताना लेगा जब कि अेक बढ़अीको अुतने पैसे भी नहीं मिलते? वकीलोंकी फीस हर जगह अुनके कामके हिसाबसे बहुत ज्यादा होती है। दक्षिण अफ्रीकामें, अिंग्लैण्डमें, बल्कि सभी कहीं मैंने देखा है कि चाहे जान-बूझकर या अनजाने वकीलोंको अपने मुवक्किलोंके खातिर झूठ बोलना पड़ता है। अेक प्रसिद्ध अंग्रेज वकीलने तो यहां तक लिखा है कि अपने मुवक्किलको अपराधी जानकर भी अुसका बचाव करना वकीलका धर्म है, कर्त्तव्य है। मेरा मत दूसरा है। वकीलका काम तो यह है कि वह हमेशा जजोंके आगे सच्ची बातें रख दे, सचकी तह तक पहुंचनेमें अुनकी मदद करे। अपराधीको निर्दोष साबित करना अुसका काम कभी नहीं है।

हिन्दी नवजीवन, २९-१२-'२७

साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व

आजाद भारत साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्वकी प्रणालीको प्रश्रय नहीं दे सकता। किंतु यह भी सही है कि यदि अल्पसंख्यक लोगों पर जबरदस्ती नहीं करना है, तो अुसे सभी सम्प्रदायोंको पूरा संतोष देना चाहिये।

यंग अिंडिया, १९-१-'३०

सैनिक खर्च

हमारे नेता पिछली दो पीढ़ियोंसे ब्रिटिश शासनके अन्तर्गत होनेवाले भारी फौजी खर्चकी जोरदार निंदा करते आये हैं। लेकिन अब जब कि हम राजनीतिक गुलामीसे आजाद हो गये हैं हमारा सैनिक खर्च बढ़ गया है और मालूम होता है कि अभी और बढ़ेगा। आश्चर्य यह है कि हमें अिसका गर्व है। अिस बातके खिलाफ हमारी विधान-सभाओंमें अेक भी आवाज नहीं अुठाअी जाती। लेकिन अिस पागलपन और पश्चिमकी अूपरी चमक-दमकके निरर्थक अनुकरणके बावजूद मुझमें और अन्य अनेकोंमें यह आशा बाकी है कि भारत विनाशके अिस ताण्डवसे सुरक्षित बाहर निकल जायगा और अुस नैतिक अूंचाअीको प्राप्त करेगा, जो सन् १९१५ से लगातार ३२ वर्ष तक अहिंसाकी तालीम — यह तालीम कितनी भी अधूरी क्यों न रही हो — लेनेके बाद अुसे प्राप्त करनी ही चाहिये।

हरिजन, ७-१२-'४७

जलसेना

जलसेनाके बारेमें तो मैं नहीं जानता। लेकिन यह मैं जरूर जानता हूं कि भावी भारतकी स्थल सेनामें आजकी तरह दूसरे देशोंसे अुनकी स्वतंत्रता छीननेके लिअे और भारतको गुलामीके पाशमें बांधे रखनेके लिअे किरायेके सैनिक नहीं होंगे। अुसकी संख्या बहुत-कुछ घटा दी जायगी और अुसकी रचना देशसेवाके लिअे स्वेच्छापूर्वक भरती हुअे सैनिकोंके आधार पर होगी, जिनका अुपयोग देशमें ही पुलिस-व्यवस्थाके लिअे किया जायगा।

यंग अिंडिया, ९-३-'२२

६५

प्रान्तोंका पुनर्घटन

कांग्रेसने २० सालसे यह तय कर लिया था कि देशमें जितनी बड़ी-बड़ी भाषायें हैं अुतने प्रान्त होने चाहिये। कांग्रेसने यह भी कहा था कि हुकूमत हमारे हाथमें आते ही अैसे प्रान्त बनाये जायंगे। वैसे तो आज भी ९ या १० प्रान्त बने हुअे हैं और वे अेक केन्द्रके अधीन हैं। अिसी तरहसे अगर नये प्रान्त बनें और दिल्लीके मातहत रहें, तब तो कोअी हर्जकी बात नहीं। लेकिन वे सब अलग अलग होकर आजाद हो जायं और अेक केन्द्रके अधीन न रहें, तो फिर वह अेक निकम्मी बात हो जाती है। अलग-अलग प्रान्त बननेके बाद वे यह न समझ लें कि बम्बअीका महाराष्ट्रसे कोअी सम्बन्ध नहीं, महाराष्ट्रका कर्नाटकसे कोअी सम्बन्ध नहीं और कर्नाटकका आंध्रसे कोअी सम्बन्ध नहीं। तब तो हमारा काम बिगड़ जाता है। अिसलिअे सब आपसमें अेक-दूसरेको भाअी भाअी समझें। अिसके अलावा, भाषावार प्रान्त बन जाते हैं, तो प्रान्तीय भाषाओंकी भी तरक्की होती है। वहांके लोगोंको हिन्दुस्तानीमें तालीम देना वाहियात बात है और अंग्रेजीमें देना तो और भी वाहियात है।

अब सीमाबन्दी-कमीशनोंकी बात तो हमें भूल जानी चाहिये। लोग आपसमें मिल-जुलकर नकशे बना लें और अुन्हें पंडित जवाहरलालजीके सामने रख दें। वे हुकूमतकी तरफसे अुन पर दस्तखत दे देंगे। वास्तवमें अिसीका नाम तो आजादी है। अगर आप केन्द्रीय सरकारको सीमायें तय करनेके लिअे कहें, तब तो काम बहुत कठिन हो जायगा।

दिल्ली-डायरी, पृ० ३९२–९३

मुझे यह कबूल है कि जो अुचित है, अुसे अब करना चाहिये। बगैर कारणके रुकना ठीक नहीं। अिससे नुकसान भी हो सकता है। पापके साथ हमारा कोअी सरोकार नहीं हो सकता।

फिर भी भाषावार सूबोंके विभागमें देर होती है अुसका सबब है। अुसका कारण आजका बिगड़ा हुआ वायुमंडल है। आज हरअेक आदमी

अपना ही देखता है। मुल्ककी ओर जानेवाले, अुसका भला सोचनेवाले लोग हैं जरूर, लेकिन अुनकी सुने कौन? अपनी ओर खींचनेवाले लोग शोर मचाते हैं, अिसीलिअे अुनकी वात सव सुनते हैं। दुनिया अैसी ही है न?

आज भाषावार सूबोंका विभाग करनेमें झगड़ेका डर रहता है। अुड़िया भाषाको ही लीजिये। अुड़ीसा अलग सूवा वन गया है, फिर भी कुछ न कुछ खींचातानी रही ही है। अेक ओर आंध्र, दूसरी ओर विहार और तीसरी ओर वंगाल है। कांग्रेसने तो भाषावार विभाग सन् १९२० में किया। वाकानून विभाग तो अुड़िया वोलनेवाले सूबेका ही हुआ। मद्रासके चार विभाग कैसे हों? वम्बअीके कैसे हों? आपसमें मिलकर सव सूबे आवें और अपनी हद वना लें, तो वाकानून विभाग आज वन सकते हैं। आज हुकूमत क्या यह वोझ अुठा सकती है? कांग्रेसकी जो ताकत १९२० में थी वह क्या आज है? आज अुसकी चलती है?

आज तो दूसरे हकदार भी पैदा हो गये हैं। अैसे मौके पर हिन्दुस्तान वेहाल-सा लगता है। आज तो संप (मेल) के वदले मौत है। जब कौमी झगड़े वन्द होंगे तव हम समझ सकेंगे कि सव ठीक हुआ है। अैसी हालतमें भाषावार विभाग लोग आपसमें मिलकर कर लें, तो कानून आसान होगा अन्यथा शायद नहीं।

हरिजनसेवक, ३०-११-'४७

अैसा लगता है कि अगर यूनियनके सारे सूबोंको हर दिशामें अेकसी तरक्की करनी हो, तो हर सूबेकी नौकरियां, पूरे हिन्दुस्तानकी तरक्कीके खयालसे, ज्यादातर वहांके रहनेवालोंको ही दी जानी चाहिये। अगर हिन्दुस्तानको दुनियाके सामने स्वाभिमानसे सिर अूंचा रखना है, तो किसी सूबे और किसी जाति या तवकेको पिछड़ा हुआ नहीं रखा जा सकता। लेकिन अपने अुन हथियारोंके वल पर हिन्दुस्तान अैसा नहीं कर सकता, जिनसे दुनिया अूब चुकी है। अुसे अपने हर नागरिकके जीवनमें और हालमें ही मेरे द्वारा वताये गये समाजवादमें प्रकट होनेवाली अपनी कुदरती तहजीव या संस्कृतिके द्वारा ही चमकना चाहिये। अिसका

यह मतलब है कि अपनी योजनाओं या अुसूलोंको जनप्रिय बनानेके लिअे किसी भी तरहकी ताकत या दवावको काममें न लिया जाय। जो चीज सचमुच जनप्रिय है अुसे सबसे मनवानेके लिअे जनताकी रायके सिवा दूसरी किसी ताकतकी शायद ही जरूरत हो। अिसलिअे विहार, अुड़ीसा और आसाममें कुछ लोगों द्वारा की जानेवाली हिंसाके जो बुरे दृश्य देखे गये, वे कभी नहीं दिखाओ देने चाहिये थे। अगर कोओ आदमी नियमके खिलाफ काम करता है या दूसरे सूबोंके लोग किसी सूबेमें आकर वहांके लोगोंके हक मारते हैं, तो अुन्हें सजा देने और व्यवस्था कायम रखनेके लिअे जनप्रिय सरकारें सूबोंमें राज्य कर रही हैं। सूबोंकी सरकारोंका यह फर्ज है कि वे दूसरे सूबोंसे अपने यहां आनेवाले सब लोगोंकी पूरी-पूरी हिफाजत करें। "जिस चीजको तुम अपनी समझते हो, अुसका अैसा अिस्तेमाल करो कि दूसरेको नुकसान न पहुंचे" यह समानताका जाना-पहचाना अुसूल है। यह नैतिक बरतावका भी सुन्दर नियम है। आजकी हालतमें यह कितना अुचित मालूम होता है!

"रोममें रोमनोंकी तरह रहो" यह कहावत जहां तक रोमन बुराअियोंसे दूर रहती है वहां तक समझदारीसे भरी और फायदा पहुंचानेवाली कहावत है। अेक-दूसरेके साथ घुल-मिलकर तरक्की करनेके काममें यह ध्यान रखना चाहिये कि बुराअियोंको छोड़ दिया जाय और अच्छाअियोंको पचा लिया जाय। बंगालमें अेक गुजरातीके नाते मुझे बंगालकी सारी अच्छाअियोंको तुरत पचा लेना चाहिये और अुसकी बुराओको कभी छूना भी नहीं चाहिये। मुझे हमेशा बंगालकी सेवा करनी चाहिये; अपने फायदेके लिअे अुसे चूसना नहीं चाहिये। दूसरोंसे बिलकुल अलग रहनेवाली हमारी प्रान्तीयता जिन्दगीको बरबाद करनेवाली चीज है। मेरी कल्पनाके सूबेकी हद सारे हिन्दुस्तानकी हदों तक फैली हुआी होगी, ताकि अन्तमें अुसकी हद सारे विश्वकी हदों तक फैल जाय। वर्ना वह खतम हो जायगा।

हरिजनसेवक, २१–९–'४७

मेरी रायमें अेक हिन्दुस्तानी हिन्दुस्तानका नागरिक है और देशके हर हिस्सेमें अुसे बराबरका हक हासिल है। अिसलिअे अेक बंगालीको

बिहारमें अेक बिहारीके नाते सभी हक हासिल हैं। मगर मैं अिस बात पर जोर देना चाहता हूं कि अुस बंगालीको बिहारियोंके साथ पूरी तरह घुलमिल जाना चाहिये। अुसे अपनो मतलब साधनेके लिअे बिहारियोंका अुपयोग करनेका गुनाह नहीं करना चाहिये, या बिहारियोंके बीच अपने आपको अजनबी समझना या अुनसे अजनबी जैसा बरताव नहीं करना चाहिये। . . . सारे हक अुन फर्जोंसे निकलते हैं, जिन्हें हम पहलेसे पूरी तरह अदा कर चुकते हैं। अेक बात पर मैं जरूर जोर दूंगा कि अगर आपको किसी तरह आगे बढ़ना है, तो हिन्दुस्तानके दोनों अुपनिवेशोंमें जोर-जबरदस्तीसे अपने हक आजमानेकी बातको पूरी तरह छोड़ देना होगा। अिस तरह न तो बंगाली और न बिहारी तलवारके जोरसे अपने हक आजमा सकते और न तलवारके जोरसे सीमा-कमीशनके फैसलेको बदला जा सकता। लोकशाहीवाले आजाद हिन्दुस्तानमें सबसे पहले आपको यही सबक सीखना होगा। . . . आजादीका यह मतलब कभी नहीं होता कि आपको अपनी मर्जीसे चाहे जो करनेकी छुट्टी मिल गयी। आजादीका मतलब यह है कि आप बिना किसी बाहरी दबावके अपने अूपर काबू रखें और अनुशासन पालें; और राजीखुशीसे अुन कानूनों पर अमल करें जिन्हें पूरे हिन्दुस्तानने अपने चुने हुअे नुमाअिन्दोंके जरिये बनाया है। प्रजातंत्र या लोकशाहीमें अेकमात्र ताकत लोकमतकी होती है। खुले या छिपे तौर पर जोर-जबरदस्तीका अिस्तेमाल करनेसे सत्याग्रह, सिविल नाफरमानी और अुपवासोंका कोअी संबंध नहीं है। मगर लोकशाहीमें अिनके अिस्तेमाल पर भी काबू रखनेकी जरूरत है। जब सरकारें जम रही हों और साम्प्रदायिक दंगोंका रोग अेक सूबेसे दूसरे सूबेमें फैल रहा हो, तब तो अिनके बारेमें सोचा भी नहीं जा सकता।

(ता० २९–८–'४७ को कलकत्तेमें दिये गये प्रार्थना-प्रवचनसे)

हरिजनसेवक, ७–९–'४७

द्राविड़िस्तान?

अिसके बाद गांधीजीने द्राविड़िस्तानके आन्दोलनका जिक्र किया। यह दक्षिण हिन्दुस्तानका वह हिस्सा है, जहांके लोग तेलगू, तामिल,

मलयालम और कन्नड़ चार द्राविड़ी भाषायें बोलते हैं। अुन्होंने कहा, हिन्दुस्तानका अिन चार भाषाओंको बोलनेवाला हिस्सा बाकीके हिन्दुस्तानसे अलग क्यों किया जाय? क्या ज्यादातर संस्कृतसे निकलनेके कारण ही ये भाषायें अुन्नत नहीं हुअी हैं? मैंने अिन चारों सूबोंका दौरा किया है। मुझे अुनमें और दूसरे सूबोंमें कोअी फर्क नहीं मालूम हुआ। पुराने जमानेमें अैसा माना जाता था कि विन्ध्याचलके दक्षिणमें रहनेवाले अनार्य और अुसके अुत्तरमें रहनेवाले आर्य हैं। पुराने जमानेमें हम कोअी भी रहे हों, आज तो हम अितने घुलमिल गये हैं कि हिन्दुस्तानके दो भाग हो जाने पर भी हम काश्मीरसे कन्याकुमारी तक अेक ही राष्ट्र हैं। देशके और ज्यादा टुकड़े करना मूर्खता होगी। अगर मौजूदा बंटवारेके बाद भी हम देशके छोटे-छोटे टुकड़े करते रहे, तो अनगिनत स्वतंत्र सार्वभौम राज्य बन जायेंगे, जो हिन्दुस्तान और दुनियाके लिअे बेकार साबित होंगे। दुनियाको हम अपने बारेमें यह कहनेका मौका न दें कि हिन्दुस्तानी सिर्फ गुलामीमें ही अेक सियासी हुकूमतके मातहत रह सकते थे, लेकिन आजाद होकर वे जंगलियोंकी तरह जितने चाहें अुतने गिरोहोंमें बंट जायंगे और हर गिरोह अपने रास्ते जायगा। या, क्या हिन्दुस्तानी अैसे निरंकुश राज्यके गुलाम बनकर रहेंगे, जिसके पास अुन्हें गुलामीमें जकड़ने लायक बड़ी भारी फौज होगी?

मैं सब हिन्दुस्तानियों और खासकर दक्षिणके लोगोंसे अपील करता हूं कि वे अंग्रेजी भाषाकी गुलामी छोड़ दें, जो अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और राजनीतिके लिअे ही अच्छी भाषा है। वह हिन्दुस्तानके करोड़ों लोगोंकी भाषा कभी नहीं बन सकती। अंग्रेजोंका अेक या डेढ़ सदीका राज्य भी हिन्दुस्तानी जन-समुद्रके कुछ लाखसे ज्यादा लोगोंको अंग्रेजी बोलनेवाले नहीं बना सका। अगर आप जनगणनाके आंकड़े देखें तो आपको पता चलेगा कि कअी लाख आदमी हिन्दी और अुर्दूकी मिलावटवाली और नागरी या अुर्दू लिपिमें लिखी जानेवाली हिन्दुस्तानी बोलते हैं। संस्कृतके शब्दोंसे लदी हुअी हिन्दी या फारसीके शब्दोंसे भरी हुअी अुर्दू बहुत कम लोग बोलते हैं। मुझसे दक्षिणके लोगोंने पूछा है कि क्या हम अपने सूबेकी लिपिमें हिन्दुस्तानी सीख सकते हैं? मुझे तो कोअी

अेतराज नहीं है। सच पूछा जाय तो हिन्दुस्तानी प्रचार-सभाने दक्षिणके लड़कोंको अुनके सूबेकी लिपिमें हिन्दुस्तानी सीखनेकी अिजाजत दे दी है। बादमें वे नागरी और अुर्दू लिपि सीखते हैं, ताकि वे आसानीसे अुत्तर हिन्दुस्तानके साहित्यकी जानकारी हासिल कर सकें। देशप्रेमका अितना तो अुनसे तकाजा है ही। आज दक्षिणके लोगोंके संकुचित प्रान्तीयताके शिकार होनेका भारी खतरा है। अगर सभी संकुचित बन जायंगे, तो हमारा प्यारा हिन्दुस्तान कहां रह जायगा? मैं खुले तौर पर यह मंजूर करता हूं कि अगर दक्षिणके लोगोंके लिअे हिन्दुस्तानीका न सीखना गलत चीज है — जैसा कि सचमुच है, तो अुत्तरके लोगोंके लिअे दक्षिणकी अुत्तम साहित्यवाली चार भाषाओंमें से अेक या अधिक भाषायें न सीखना भी अुतना ही गलत है। मैंने दक्षिणके सदस्योंसे अपील की है कि वे हिन्दुस्तानियोंकी सभामें अंग्रेजी भाषाकी कभी मांग न करनेकी प्रतिज्ञा कर लें। तभी वे जल्दी हिन्दुस्तानी सीख सकेंगे। हमें याद रखना चाहिये कि आजाद हिन्दुस्तान तभी अेक बनकर काम कर सकेगा, जब वह नैतिक शासनको मानेगा। गुलामीके खिलाफ लड़नेवाली संस्थाके नाते कांग्रेस अपनी नैतिक ताकतसे ही आज तक संगठित रह सकी है। लेकिन जब अुसने राजनीतिक आजादी करीब करीब ले ली है, तब क्या अुसका संगठन खतम हो जायगा — वह बिखर जायगी?

(ता० १६–७–'४७ को नअी दिल्लीमें दिये गये प्रार्थना-प्रवचनसे)

हरिजनसेवक, २७–७–'४७

६६
अल्पसंख्यकोंकी समस्यायें

अगर हिन्दू लोग विविध जातियोंके बीच अेकता चाहते हैं, तो अुनमें अल्पसंख्यक जातियोंका विश्वास करनेकी हिम्मत होनी चाहिये। किसी भी दूसरी बुनियाद पर आधारित मेल सच्चा मेल नहीं होगा। करोड़ों सामान्य जन न तो विधान-सभाके सदस्य होना चाहते हैं और न म्युनिसिपल कौंसिलर बनना चाहते हैं। और यदि हम सत्याग्रहका सही अुपयोग करना सीख गये हैं, तो हमें जानना चाहिये कि अुसका अुपयोग किसी भी अन्यायी शासकके खिलाफ — वह हिन्दू, मुसलमान या अन्य किसी भी कौमका हो — किया जा सकता है और किया जाना चाहिये। अिसी तरह न्यायी शासक या प्रतिनिधि हमेशा और समान रूपसे अच्छा होता है, फिर वह हिन्दू हो या मुसलमान। हमें साम्प्रदायिक भावना छोड़नी चाहिये। अिसलिअे अिस प्रयत्नमें बहुसंख्यक समाजको पहल करके अल्पसंख्यक जातियोंमें अपनी अीमानदारीके विषयमें विश्वास पैदा करना चाहिये। मेल और समझौता तभी हो सकता है जब कि ज्यादा बलवान पक्ष दूसरे पक्षके जवाबकी राह देखे बिना सही दिशामें बढ़ना शुरू कर दे।

जहां तक सरकारी महकमोंमें नौकरियोंका सवाल है, मेरी राय है कि यदि हम साम्प्रदायिक भावनाको यहां भी दाखिल करेंगे, तो यह चीज सुशासनके लिअे घातक सिद्ध होगी। शासन सुचारु रूपसे चले, अिसके लिअे यह जरूरी है कि वह सबसे योग्य आदमियोंके हाथमें रहे। अुसमें किसी तरहका पक्षपात तो होना ही नहीं चाहिये। अगर हमें पांच अिजीनियरोंकी जरूरत हो तो अैसा नहीं होना चाहिये कि हम हरअेक जातिसे अेक-अेक लें; हमें तो पांच सबसे सुयोग्य अिजीनियर चुन लेने चाहिये, भले वे सब मुसलमान हों या पारसी हों। सबसे निचले दरजेकी जगहें, यदि जरूरी मालूम हो तो, परीक्षाके जरिये भरी जायं और यह परीक्षा किसी अैसी समितिकी निगरानीमें हो जिसमें विविध जातियोंके लोग हों। लेकिन नौकरियोंका यह बंटवारा विविध जातियोंकी संख्याके अनुपातमें नहीं होना

चाहिये। राष्ट्रीय सरकार बनेगी तब शिक्षामें पिछड़ी हुआी जातियोंको शिक्षाके मामलेमें जरूर दूसरोंकी अपेक्षा विशेष सुविधायें पानेका अधिकार होगा। अैसी व्यवस्था करना कठिन नहीं होगा। लेकिन जो लोग देशके शासन-तंत्रमें बड़े-बड़े पदोंको पानेकी आकांक्षा रखते हैं, अुन्हें अुसके लिअे जरूरी परीक्षा अवश्य पास करनी चाहिये।

यंग अिंडिया, २९-५-'२४

स्वतंत्र भारत साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्वकी प्रथाको कोअी प्रश्रय नहीं दे सकता। लेकिन यदि अल्पसंख्यकों पर जोर-जबरदस्ती नहीं करना है, तो अुसे सब जातियोंको पूरा संतोष देना पड़ेगा।

यंग अिंडिया, १९-१-'३०

हिन्दुस्तान अुन सब लोगोंका है, जो यहां पैदा हुअे और पले हैं और जो दूसरे किसी देशका आसरा नहीं ताक सकते। अिसलिअे वह जितना हिन्दुओंका है अुतना ही पारसियों, बेनी अिजरायलों, हिन्दुस्तानी अीसाअियों, मुसलमानों और दीगर गैर-हिन्दुओंका भी है। आजाद हिन्दुस्तानमें राज्य हिन्दुओंका नहीं, बल्कि हिन्दुस्तानियोंका होगा; और अुसका आधार किसी धार्मिक पंथ या संप्रदायके बहुमत पर नहीं, बल्कि बिना किसी धार्मिक भेदभावके समूचे राष्ट्रके प्रतिनिधियों पर होगा। मैं अेक अैसे मिश्र बहुमतकी कल्पना कर सकता हूं, जो हिन्दुओंको अल्पमत बना दे। स्वतन्त्र हिन्दुस्तानमें लोग अपनी सेवा और योग्यताके आधार पर ही चुने जायंगे। धर्म अेक निजी विषय है, जिसका राजनीतिमें कोअी स्थान नहीं होना चाहिये। विदेशी हुकूमतकी वजहसे देशमें जो अस्वाभाविक परिस्थिति पाअी जाती है, अुसीकी बदौलत हमारे यहां धर्मके अनुसार अितने बनावटी फिरके बन गये हैं। जब देशसे विदेशी हुकूमत अुठ जायगी, तो हम अिन झूठे नारों और आदर्शोंसे चिपके रहनेकी अपनी अिस बेवकूफी पर खुद ही हंसेंगे।

हरिजनसेवक, ९-८-'४२

अपने धर्म पर मेरा अटूट विश्वास है। मैं अुसके लिअे अपने प्राण दे सकता हूं। लेकिन वह मेरा निजी मामला है। राज्यको अुससे कुछ

लेना-देना नहीं है। राज्य हमारे लौकिक कल्याणकी — स्वास्थ्य, आवागमन, विदेशोंसे सम्बन्ध, करेंसी (मुद्रा) आदिकी देखभाल करेगा, लेकिन हमारे या तुम्हारे धर्मकी नहीं। धर्म हरअेकका निजी मामला है।

हरिजन, २२–९–'४६

अॅंग्लो-अिण्डियन समाज और विदेशी लोग

सब विदेशियोंको यहां रहने और बसनेकी पूरी आजादी है, बशर्ते कि वे अपनेको अिस देशकी जनतासे अभिन्न समझें। जो विदेशी यहां अपने अधिकारोंके लिअे विशेष संरक्षण चाहते हों, अुन्हें भारत आश्रय नहीं दे सकता। अधिकारोंके लिअे संरक्षण मांगनेका अर्थ यह होगा कि वे यहां अूंचे दरजेके आदमियोंकी तरह रहना चाहते हैं। लेकिन अुन्हें अैसा नहीं करने दिया जा सकता, क्योंकि अुससे संघर्ष पैदा होगा।

हरिजन, २९–९–'४६

अगर अेक यूरोपियन अैसा कर सकता है, तो अेंग्लो-अिन्डियन और वे दूसरे लोग तो और भी अैसा कर सकते हैं, जिन्होंने यूरोपियन आचार-व्यवहार और रीति-रिवाज महज अिसलिअे अपनाये हैं कि विदेशी सरकारसे अच्छे व्यवहारकी मांग करनेवाले यूरोपियनोंमें अुनकी गिनती हो सके। अगर अैसे लोग यह अुम्मीद रखें कि अब तक जो खास सहूलियतें अुन्हें मिलती रही हैं वैसी आगे भी मिलती रहें, तो अुन्हें परेशानी ही होगी। अुन्हें तो अिस बातके लिअे अपनेको धन्य समझना चाहिये कि जिन खास सहूलियतोंको भोगनेका अुन्हें किसी भी तर्कसम्मत कानूनसे कोअी हक नहीं था, और जो अुनकी अिज्जतको बट्टा लगानेवाली थीं, अुनका बोझ अुनके सिरसे अुतर जायगा।

हरिजनसेवक, ७–४–'४६

अुसके राजनीतिक अधिकारोंको कोअी खतरा नहीं है। अुसे अपनी सामाजिक स्थितिकी चिन्ता है, जो कि फिलहाल अस्तित्वमें ही नहीं है। अुसे अेक ओर तो अिस बात पर बहुत गुस्सा आता है कि अुसकी मां या अुसके पिता भारतीय थे और दूसरी ओर यूरोपियन लोग अुसे अपने

समाजमें स्वीकार नहीं करते। अिस तरह अुसकी स्थिति कुअें और खाओीके बीच खड़े रहने जैसी है। मुझे अुससे अकसर मिलनेका मौका आता है। यूरोपियनोंकी तरह रहने और यूरोपियन दिखनेकी कोशिशमें अुसे अपने साधनोंकी सीमासे ज्यादा खर्चीला जीवन बिताना पड़ता है और अुसका नतीजा यह है कि वह नैतिक और आर्थिक दृष्टिसे बिलकुल कमजोर हो गया है। मैंने अुसे समझाया है कि अुसे चुनाव कर लेना चाहिये और अपना भाग्य भारतकी विशाल जनताके साथ जोड़ देना चाहिये। अगर अिन लोगोंमें अिस अत्यंत सीधी और स्वाभाविक स्थितिको समझने और स्वीकार करनेका साहस और दूरदर्शिता होगी, तो वे न सिर्फ अपना बल्कि भारतका भी भला करेंगे और अपनी मौजूदा अपमानजनक स्थितिसे भी अपना अुद्धार कर सकेंगे। बेजबान अेंग्लो-अिन्डियनके सामने सबसे बड़ा सवाल अपनी सामाजिक स्थितिका निर्णय करनेका है। ज्यों ही वह अपनेको भारतीय समझने और मानने लगेगा और अेक भारतीयकी ही तरह रहने लगेगा, त्यों ही वह महसूस करेगा कि वह सुरक्षित है।

यंग अिंडिया, २९–८–'२९

६७

भारतीय गवर्नर

१. हिन्दुस्तानी गवर्नरको चाहिये कि वह खुद पूरे संयमका पालन करे और अपने आसपास संयमका वातावरण खड़ा करे। अिसके बिना शराबबन्दीके बारेमें सोचा भी नहीं जा सकता।

२. अुसे अपनेमें और अपने आसपास हाथ-कताओी और हाथ-बुनाओीका वातावरण पैदा करना चाहिये, जो हिन्दुस्तानके करोड़ों गूंगोंके साथ अुसकी अेकताकी प्रकट निशानी हो, 'मेहनत करके रोटी कमाने' की जरूरतका और संगठित हिंसाके खिलाफ — जिस पर आजका समाज टिका हुआ मालूम होता है — संगठित अहिंसाका जीता-जागता प्रतीक हो।

३. अगर गवर्नरको अच्छी तरह काम करना है, तो अुसे लोगोंकी नगाहोंसे बचे हुअे, फिर भी सबकी पहुंचके लायक, छोटेसे मकानमें रहना

चाहिये। ब्रिटिश गवर्नर स्वभावसे ही ब्रिटिश ताकतको दिखाता था। अुसके लिअे और अुसके लोगोंके लिअे सुरक्षित महल बनाया गया था — अैसा महल जिसमें वह और अुसके साम्राज्यको टिकाये रखनेवाले अुसके सेवक रह सकें। हिन्दुस्तानी गवर्नर राजा-नवाबों और दुनियाके राजदूतोंका स्वागत करनेके लिअे थोड़ी शान-शौकतवाली अिमारतें रख सकते हैं। गवर्नरके मेहमान बननेवाले लोगोंको अुसके व्यक्तित्व और आसपासके वातावरणसे 'अीवन अण्टु दिस लास्ट' (सर्वोदय) — सबके साथ समान बरताव — की सच्ची शिक्षा मिलनी चाहिये। अुसके लिअे देशी या विदेशी महंगे फर्नीचरकी जरूरत नहीं। 'सादा जीवन और अूंचे विचार' अुसका आदर्श होना चाहिये। यह आदर्श सिर्फ अुसके दरवाजेकी ही शोभा न बढ़ाये, बल्कि अुसके रोजके जीवनमें भी दिखाअी दे।

४. अुसके लिअे न तो किसी रूपमें छुआछूत हो सकती है और न जाति, धर्म या रंगका भेद। हिन्दुस्तानका नागरिक होनेके नाते अुसे सारी दुनियाका नागरिक होना चाहिये। हम पढ़ते हैं कि खलीफा अुमर अिसी तरह सादगीसे रहते थे, हालांकि अुनके कदमों पर लाखों-करोड़ोंकी दौलत लोटती रहती थी। अुसी तरह पुराने जमानेमें राजा जनक रहते थे। अिसी सादगीसे अीटनके मुख्याधिकारी, जैसा कि मैंने अुन्हें देखा था, अपने भवनमें ब्रिटिश द्वीपोंके लॉर्ड और नवाबोंके लड़कोंके बीच रहा करते थे। तब क्या करोड़ों भूखोंके देश हिन्दुस्तानके गवर्नर अितनी सादगीसे नहीं रहेंगे?

५. वह जिस प्रान्तका गवर्नर होगा, अुसकी भाषा और हिन्दुस्तानी बोलेगा, जो हिन्दुस्तानकी राष्ट्रभाषा है और नागरी या अुर्दू लिपिमें लिखी जाती है। वह न तो संस्कृत शब्दोंसे भरी हुअी हिन्दी है और न फारसी शब्दोंसे लदी हुअी अुर्दू। हिन्दुस्तानी दरअसल वह भाषा है, जिसे विन्ध्याचलके अुत्तरमें करोड़ों लोग बोलते हैं।

हिन्दुस्तानी गवर्नरमें जो जो गुण होने चाहिये, अुनकी यह पूरी सूची नहीं है। यह तो सिर्फ मिसालके तौर पर दी गअी है।

हरिजनसेवक, २४–८–'४७

६८

समाचार-पत्र

माचार-पत्र सेवाभावसे ही चलाने चाहिये। समाचार-पत्र अेक
। शक्ति है; किन्तु जिस प्रकार निरंकुश पानीका प्रवाह गांवके
ो देता है और फसलको नष्ट कर देता है, अुसी प्रकार कलमका
प्रवाह भी नाशकी सृष्टि करता है। यदि अैसा अंकुश बाहरसे
, तो वह निरंकुशतासे भी अधिक विषैला सिद्ध होता है। अंकुश
ही लाभदायक हो सकता है।

ादि यह विचारधारा सच हो, तो दुनियाके कितने समाचार-पत्र
सौटी पर खरे अुतर सकते हैं? लेकिन निकम्मोंको बन्द कौन
कौन किसे निकम्मा समझे? अुपयोगी और निकम्मे दोनों —
और बुराअीकी तरह — साथ-साथ ही चलते रहेंगे। अुनमें से
ो अपना चुनाव करना होगा।

मकथा, पृ० २४८; १९५७

आधुनिक पत्रकार-कलामें गहराअीका अभाव, विषयका कोअी अेक ही
श करना, तथ्योंके वर्णनमें भूलें और अकसर बेअीमानी आदि जो
ा गये हैं, वे अुन अीमानदार व्यक्तियोंको लगातार गुमराह करते हैं
द्ध न्याय होते देखना चाहते हैं।

। अिंडिया, १२–५–'२०

मेरे सामने विविध पत्रोंके अैसे अुद्धरण हैं, जिनमें बहुतसी आपत्ति-
बातें हैं। अुनमें साम्प्रदायिक भावनाओंको अुभाड़नेकी कोशिश है,
थ्तोंको अत्यंत गलत ढंगसे पेश किया गया है और हत्याकी हद तक
ीतिक हिंसाको अुत्तेजना दी गयी है। सरकार चाहे तो अैसे लेखोंके
ोंके खिलाफ मुकदमे चला सकती है या अुन्हें रोकनेके लिअे दमनकारी
न पास कर सकती है। लेकिन जिन अुपायोंसे अभीष्ट लक्ष्यकी सिद्धि
तो होती नहीं या बहुत अस्थायी तौर पर होती है। और अुन

लेखकोंका मानस-परिवर्तन तो अिनसे कभी नहीं होता। कारण, जब अुन्हें अपनी बातके प्रचारके लिअे समाचार-पत्रोंका सबके लिअे खुला हुआ स्थान नहीं मिलता, तो वे अकसर गुप्त प्रचारका आश्रय लेते हैं।

अिस बुराअीका सच्चा अिलाज तो अैसे स्वस्थ लोकमतका निर्माण है, जो अिस किस्मके जहरीले पत्रोंको आश्रय देनेसे अिनकार कर दे। हमारा पत्रकारोंका अपना संघ है। अिस संघको अपना अेक अैसा विभाग क्यों नहीं खोलना चाहिये, जो सब पत्रोंको ध्यानसे पढ़े, आपत्तिजनक लेखोंको ढूंढ़ निकाले और अुन्हें अुन पत्रोंके सम्पादकोंकी नजरमें लाये? अिस विभागका कार्य अपराधी पत्रोंसे सम्पर्क स्थापित करने तक और जहां अभीष्ट सुधार अिस सम्पर्कसे सिद्ध न किया जा सके, वहां अुन आपत्तिजनक लेखोंकी सार्वजनिक आलोचना करने तक सीमित रहे। समाचार-पत्रोंकी स्वतंत्रता अैसा कीमती अधिकार है जिसे कोअी भी देश छोड़ना नहीं चाहेगा। लेकिन अिस अधिकारके दुरुपयोगको रोकनेके लिअे मामूली प्रकारकी कानूनी रोकके सिवा कोअी दूसरी कानूनी रोक न हो, तो मैंने जैसी आन्तरिक रोक सुझाअी है, वैसी आन्तरिक रोक असंभव नहीं होनी चाहिये। और वह लगायी जाय तब अुसका विरोध नहीं होना चाहिये।

यंग अिंडिया, २८–५–'३१

मैं अवश्य ही यह मानता हूं कि अनीतिसे भरे हुअे विज्ञापनोंकी मददसे समाचार-पत्रोंको चलाना अुचित नहीं है। मैं यह भी मानता हूं कि विज्ञापन यदि लेने ही हों तो अुन पर समाचार-पत्रोंके मालिकों और संपादकोंकी तरफसे बड़ी सख्त चौकीदारी होना आवश्यक है और केवल शुद्ध और पवित्र विज्ञापन ही लिये जाने चाहिये।... आज अच्छे प्रतिष्ठित गिने जानेवाले समाचार-पत्रों और मासिकों पर भी यह दूषित विज्ञापनोंका अनिष्ट हावी हो रहा है। यह अनिष्ट तो समाचार-पत्रोंके मालिकों और संपादकोंकी विवेक-बुद्धिको शुद्ध करके ही दूर किया जा सकता है। मेरे जैसे नौसिखुवे संपादकके प्रभावसे यह शुद्धि नहीं हो सकती। लेकिन जब अुनकी विवेक-बुद्धि अिस बढ़नेवाले अनिष्टके प्रति जाग्रत होगी, अथवा जब राष्ट्रका शुद्ध प्रतिनिधित्व करनेवाला और राष्ट्रकी नैतिकता पर सदा

ध्यान रखनेवाला राज्यतंत्र अुस विवेक-बुद्धिको जाग्रत करेगा तभी वह जाग्रत हो सकेगी।

हिन्दी नवजीवन, १–४–'२६

मेरा आग्रह है कि विज्ञापनोंमें सत्यका यथेष्ट ध्यान रखा जाना चाहिये। हमारे लोगोंकी अेक आदत यह है कि वे पुस्तक या अखबारमें छपे हुअे शब्दोंको शास्त्र-वचनोंकी तरह सत्य मान लेते हैं। अिसलिअे विज्ञापनोंकी सामग्री तैयार करनेमें अत्यंत सावधानी बरतनेकी जरूरत है। झूठी बातें बहुत खतरनाक होती हैं।

हरिजन, २४–८–'३५

६९

शान्तिसेना

कुछ समय पहले मैंने अेक अैसे स्वयंसेवकोंकी सेना बनानेकी तजवीज रखी थी जो दंगों, खासकर साम्प्रदायिक दंगोंको शान्त करनेमें अपने प्राणों तककी बाजी लगा दें। विचार यह था कि यह सेना पुलिसका ही नहीं बल्कि फौज तकका स्थान ले लेगी। यह बात बड़ी महत्वाकांक्षावाली मालूम पड़ती है। शायद यह असंभव भी साबित हो। फिर भी, अगर कांग्रेसको अपनी अहिंसात्मक लड़ाअीमें कामयाबी हासिल करनी हो, तो अुसे परिस्थितियोंका शान्तिपूर्वक मुकाबला करनेकी अपनी शक्ति बढ़ानी ही चाहिये।

अिसलिअे हमें देखना चाहिये कि जिस शान्तिसेनाकी हमने कल्पना की है, अुसके सदस्योंकी क्या योग्यतायें होनी चाहिये :

(१) शान्तिसेनाका सदस्य पुरुष हो या स्त्री, अहिंसामें अुसका जीवित विश्वास होना चाहिये। यह तभी संभव है जब कि अीश्वरमें अुसका जीवित विश्वास हो। अहिंसक व्यक्ति तो अीश्वरकी कृपा और शक्तिके बगैर कुछ कर ही नहीं सकता। अिसके बिना अुसमें क्रोध, भय और बदलेकी भावना न रखते हुअे मरनेका साहस नहीं होगा। अैसा

साहस तो अिस श्रद्धासे आता है कि सबके हृदयोंमें ीश्वरका निवास है, और ीश्वरकी अुपस्थितिमें किसी भी भयकी जरूरत नहीं। ीश्वरकी सर्व-व्यापकताके ज्ञानका यह भी अर्थ है कि जिन्हें विरोधी या गुंडे कहा जा सकता हो अुनके प्राणों तकका हम खयाल रखें। यह अिरादतन दस्तन्दाजी अुस समय मनुष्यके क्रोधको शान्त करनेका अेक तरीका है, जब कि अुसके अन्दरका पशुभाव अुस पर हावी हो जाय।

(२) शान्तिके अिस दूतमें दुनियाके सभी खास-खास धर्मोंके प्रति समान श्रद्धा होना जरूरी है। अिस प्रकार अगर वह हिन्दू हो तो वह हिन्दुस्तानमें प्रचलित अन्य धर्मोंका आदर करेगा। अिसलिअे देशमें माने जानेवाले विभिन्न धर्मोंके सामान्य सिद्धान्तोंका अुसे ज्ञान होना चाहिये।

(३) आम तौर पर शान्तिका यह काम केवल स्थानीय लोगों द्वारा अपनी बस्तियोंमें हो सकता है।

(४) यह काम अकेले या समूहोंमें हो सकता है। अिसलिअे किसीको संगी-साथियोंके लिअे अिन्तजार करनेकी जरूरत नहीं है। फिर भी आदमी स्वभावतः अपनी बस्तीमें से कुछ साथियोंको ढूंढ़कर स्थानीय सेनाका निर्माण करेगा।

(५) शान्तिका यह दूत व्यक्तिगत सेवा द्वारा अपनी बस्ती या किन्हीं चुने हुअे क्षेत्रमें लोगोंके साथ अैसा संबंध स्थापित करेगा, जिससे जब अुसे भद्दी स्थितियोंमें काम करना पड़े तो अुपद्रवियोंके लिअे वह बिलकुल अैसा अजनबी न हो, जिस पर वे शक करें या जो अुन्हें नागवार मालूम पड़े।

(६) यह कहनेकी तो जरूरत ही नहीं कि शान्तिके लिअे काम करनेवालेका चरित्र अैसा होना चाहिये, जिस पर कोअी अंगुली न अुठा सके और वह अपनी निष्पक्षताके लिअे मशहूर हो।

(७) आम तौर पर दंगोंसे पहले तूफान आनेकी चेतावनी मिल जाया करती है। अगर अैसे आसार दिखाअी दें तो शान्तिसेना आग भड़क अुठने तक अिन्तजार न करके तभीसे परिस्थितिको संभालनेका काम शुरू कर देगी जबसे कि अुसकी संभावना दिखाअी दे।

(८) अगर यह आन्दोलन बढ़े तो कुछ पूरे समय काम करनेवाले कार्यकर्ताओंका अिसके लिअे रहना अच्छा होगा। लेकिन यह बिलकुल जरूरी नहीं कि अैसा ही हो। खयाल यह है कि जितने भी अच्छे स्त्री-पुरुष मिल सकें अुतने रखे जायं। लेकिन वे तभी मिल सकते हैं जब कि स्वयंसेवक अैसे लोगोंमें से प्राप्त हों जो जीवनके विविध कार्योंमें लगे हुये हों, पर अुनके पास अितना अवकाश हो कि अपने अिलाकोंमें रहनेवाले लोगोंके साथ वे मित्रताके सम्बन्ध पैदा कर सकें तथा अुन सब योग्यताओंको रखते हों जो कि शान्तिसेनाके सदस्यमें होनी चाहिये।

(९) अिस सेनाके सदस्योंकी अेक खास पोशाक होनी चाहिये, जिससे कालांतरमें अुन्हें बिना किसी कठिनाअीके पहचाना जा सके।

ये सिर्फ आम सूचनायें हैं। जिनके आधार पर हरअेक केन्द्र अपना विधान बना सकता है।

हरिजनसेवक, १८–६–'३८

बड़े-बड़े दलोंको चलानेके लिअे सजा नहीं, तो सजाका डर होना चाहिये और जरूरत मालूम होने पर सजा दी भी जानी चाहिये। अैसे हिंसक दलमें आदमीके चाल-चलनको नहीं देखा जाता। अुसके कद और डीलडौलको ही देखा जाता है। अहिंसक दलमें अिससे ठीक अुलटा होता है। अुसमें शरीरकी जगह गौण होती है, शरीरी ही सब कुछ होता है यानी चरित्र सब कुछ होता है। अैसे चरित्रवान व्यक्तिको पहचानना मुश्किल है। अिसलिअे बड़े-बड़े शान्तिदल स्थापित नहीं किये जा सकते। वे छोटे ही होंगे। जगह-जगह होंगे, हर गांव या हर मुहल्लेमें होंगे। मतलब यह कि जो जाने-पहचाने लोग हैं, अुन्हींकी टुकड़ियां बनेंगी। वे मिलकर अपना अेक मुखिया चुन लेंगे। सबका दरजा बराबर होगा। जहां अेकसे ज्यादा आदमी अेक ही तरहका काम करते हैं वहां अुनमें अेकाध अैसा होना चाहिये, जिसकी आज्ञाके अनुसार सब कोअी चल सकें। अैसा न हो तो मेलजोलके साथ, सहयोगसे, काम नहीं हो सकता। दो या दोसे ज्यादा लोग अपनी-अपनी मरजीसे काम करें, तो मुमकिन है कि अुनके कामकी दिशा अेक-दूसरेसे अुलटी हो। अिसलिअे जहां दो या दोसे ज्यादा दल हों, वहां वे हिलमिल कर काम करें तभी काम चल सकता है और

अुसमें कामयाबी हो सकती है। अिस तरहके शान्तिदल जगह-जगह हों, तो वे आरामसे और आसानीसे दंगा-फसादको रोक सकते हैं। अैसे दलोंको अखाड़ोंमें दी जानेवाली सभी तरहकी तालीम देना जरूरी नहीं। अुनमें दी जानेवाली कुछ तालीम लेना जरूरी हो सकता है।

सब शान्तिदलोंके लिअे अेक चीज आम यानी सामान्य होनी चाहिये। शान्तिदलके हरअेक सदस्यका अीश्वरमें अटल विश्वास होना चाहिये। अुसमें यह श्रद्धा होनी चाहिये कि अीश्वर ही सच्चा साथी है और वही सबका सरजनहार है, कर्ता है। अिसके बिना जो शान्तिसेनायें बनेंगी मेरे खयालमें वे बेजान होंगी। अीश्वरको आप किसी भी नामसे पुकारें, मगर अुसकी शक्तिका अुपयोग तो आपको करना ही है। अैसा आदमी किसीको मारेगा नहीं, बल्कि खुद मरकर मृत्यु पर विजय पायेगा और जी जायेगा।

जिस आदमीके लिअे यह कानून अेक जीती-जागती चीज बन जायगा, अुसको समयके अनुसार बुद्धि भी अपने-आप सूझती रहेगी।

फिर भी अपने तजरबेसे मैं यहां कुछ नियम देता हूं:

१. सेवक अपने साथ कोअी भी हथियार न रखे।

२. वह अपने बदन पर कोअी अैसी निशानी रखे, जिससे फौरन पता चले कि वह शान्तिदलका सदस्य है।

३. सेवकके पास घायलों वगैराकी सार-संभालके लिअे तुरत काम देनेवाली चीजें रहनी चाहिये। जैसे, पट्टी, कैंची, छोटा चाकू, सुअी वगैरा।

४. सेवकको अैसी तालीम मिलनी चाहिये, जिससे वह घायलोंको आसानीसे अुठाकर ले जा सके।

५. जलती आगको बुझानेकी, बिना जले या बिना झुलसे आगवाली जगहोंमें जानेकी, अूपर चढ़नेकी और अुतरनेकी कला सेवकमें होनी चाहिये।

५. अपने मुहल्लेके सब लोगोंसे अुसकी अच्छी जान-पहचान होनी चाहिये। यह खुद ही अपने-आपमें अेक सेवा है।

७. अुसे मन ही मन रामनामका बराबर जप करते रहना चाहिये और अिसमें माननेवाले दूसरोंको भी अैसा करनेके लिअे समझाना चाहिये।

कुछ लोग आलस्यकी वजहसे या झूठी आदतकी वजहसे यह मान बैठते हैं कि अीश्वर तो है ही और वह विना मांगे मदद करता है, फिर असका नाम रटनेसे क्या फायदा? हम अीश्वरकी हस्तीको कबूल करें या न करें, अिससे असकी हस्तीमें कोअी कमी-बेशी नहीं होती यह सच है। फिर भी अस हस्तीका अपयोग तो अभ्यासी ही कर पाता है। हरअेक भौतिक शास्त्रके लिअे यह बात सौ फीसदी सच है, तो फिर अध्यात्मके लिअे तो यह अससे भी ज्यादा सच होनी चाहिये। फिर भी हम देखते हैं कि अिस मामलेमें हम तोतेकी तरह रामनाम रटते हैं और फलकी आशा रखते हैं। सेवकमें अिस सचाअीको अपने जीवनमें सिद्ध करनेकी ताकत होनी चाहिये।

हरिजनसेवक, ५-५-'४६

गुंडे

गुंडोंको दोष देना गलत है। वे तब तक कोअी शरारत नहीं कर सकते, जब तक कि हम अनके लिअे अनुकूल वातावरण नहीं पैदा कर दें। सन् १९२१ में बम्बअीमें ब्रिटिश युवराजके आगमन-दिन पर जो कुछ हुआ, वह सब मैंने खुद देखा था। असका बीज हमने ही बोया था, गुंडोंने तो असकी फसल काटी। अनके पीछे बल हमारा ही था। . . . हमें प्रतिष्ठित वर्गको दोषारोपणसे बचानेकी आदत छोड़ देना चाहिये। . . . बनियों और ब्राह्मणोंको, यदि अहिंसासे नहीं तो हिंसासे सही, अपनी रक्षा करना सीख लेना चाहिये। अगर वे अैसा नहीं करेंगे तो अन्हें अपनी स्त्रियों और अपनी धन-सम्पत्तिको गुंडोंके हवाले करना पड़ेगा। गुंडोंकी असलमें — अन्हें हिन्दू कहा जाता हो या मुसलमान — अेक अलग जाति है।

यंग अिंडिया, २९-५-'२४

कायरताका अिलाज शारीरिक तालीममें नहीं, बल्कि जो भी खतरे आयें अनका मुकाबला बहादुरीके साथ करनेमें है। जब तक मध्यम वर्गके हिन्दू, जो खुद डरपोक होते हैं, ज्यादा लाड़-प्यारके द्वारा अपने जवान लड़कों-बच्चोंको नाजुक बनाना और अिस तरह अपना डरपोकपन अनमें

भरना जारी रखते हैं, तब तक अुनमें खतरा टालने और किसी भी तरहके जोखिमसे बचनेकी जो वृत्ति पायी जाती है वह भी जारी रहेगी। अिसलिअे अुन्हें अपने लड़कोंको अकेला छोड़नेका साहस करना चाहिये; अुन्हें खतरेमें पड़ने देना चाहिये और अैसा करते हुअे यदि वे मर जाते हैं तो मर जाने देना चाहिये। शरीरसे कमजोर किसी बौने आदमीमें भी शेरका दिल हो सकता है। और बहुत हट्टे-कट्टे जुलू भी अंग्रेज लड़कोंके सामने कांपने लग जाते हैं। हरअेक गांवको अपनी बस्तीमें से अैसे शेरदिल व्यक्ति ढूंढ़ निकालना चाहिये।

यंग अिंडिया, २९–५–'२४

जिन लोगोंको गुंडा माना जाता है अुनसे हमें जान-पहचान करनी चाहिये। शान्तिका साधक अपने आसपास समाजके किसी अंगको अैसे रहने नहीं देगा। सबके साथ मीठा संबंध बांधेगा, सबकी सेवा करेगा। गुंडे लोग आकाशसे तो नहीं अुतरते। भूतकी तरह जमीनके पेटमें से भी नहीं निकलते। अुनकी अुत्पत्ति समाजकी कुव्यवस्थासे ही होती है। अिसलिअे समाज अुसके लिअे जिम्मेदार है। गुंडोंको समाजका बीमार या अेक प्रकारका दूषित अंग समझना चाहिये। अैसा मानकर अुस बीमारीके कारण ढूंढ़ने चाहिये। कारण हाथ लगने पर बादमें अिलाज किया जा सकता है। अब तक तो अिस दिशामें प्रयत्न तक नहीं किया गया। 'जागे तभी सवेरा' अिस सुभाषितके अनुसार यह प्रयत्न अब शुरू कर देना चाहिये। अिस बारेमें अब कोशिश शुरू हो गअी है। सब अपनी अपनी जगह कोशिश करें। अैसी कोशिशोंकी सफलतामें ही अिस सवालका जवाब समाया हुआ है।

हरिजनसेवक, १४–९–'४०

७०

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस

अिण्डियन नेशनल कांग्रेस देशकी सबसे पुरानी राष्ट्रीय राजनीतिक संस्था है। अुसने कअी अहिंसक लड़ाअियोंके बाद आजादी हासिल की है। अुसे मरने नहीं दिया जा सकता। अुसका खात्मा सिर्फ तभी हो सकता है जब राष्ट्रका खात्मा हो। अेक जीवित संस्था या तो जीवंत प्राणीकी तरह लगातार बढ़ती रहती है या मर जाती है। कांग्रेसने राजनीतिक आजादी तो हासिल कर ली है, मगर अुसे अभी आर्थिक आजादी, सामाजिक आजादी और नैतिक आजादी हासिल करनी है। ये आजादियां चूंकि रचनात्मक हैं और भड़कीली नहीं हैं, अिसलिअे अिन्हें हासिल करना राजनीतिक आजादीसे ज्यादा मुश्किल है। जीवनके सारे पहलुओंको अपनेमें समा लेनेवाला रचनात्मक काम करोड़ों जनताके सारे अंगोंकी शक्तिको जगाता है।

कांग्रेसको अुसकी आजादीका प्रारंभिक और जरूरी हिस्सा मिल गया है। लेकिन अुसकी सबसे कठिन मंजिल आना अभी बाकी है। प्रजातंत्रीय व्यवस्था कायम करनेके अपने मुश्किल मकसद तक पहुंचनेमें अुसने अनिवार्य रूपसे दलबन्दी करनेवाले गन्दे पानीके गड्ढों-जैसे मंडल खड़े किये हैं, जिनमें घूसखोरी और बेअीमानी फैली है और अैसी संस्थायें पैदा हुअी हैं, जो नामकी ही लोकप्रिय और प्रजातंत्री हैं। अिन सब बुराअियोंके जंगलसे बाहर कैसे निकला जाय?

कांग्रेसको सबसे पहले अपने मेम्बरोंके अुस खास रजिस्टरको अलग हटा देना चाहिये, जिसमें मेम्बरोंकी तादाद कभी भी अेक करोड़से आगे नहीं बढ़ी और तब भी जिन्हें आसानीसे शनाख्त नहीं किया जा सकता था। अुसके पास अैसे करोड़ोंका अेक अज्ञात रजिस्टर अितना बड़ा होना चाहिये कि देशके मतदाताओंकी सूचीमें जितने पुरुषों और स्त्रियोंके नाम हैं वे सब अुसमें आ जायं। कांग्रेसका काम यह देखना होना चाहिये कि कोअी बनावटी नाम अुसमें शामिल न हो जाय और कोअी जायज

नाम छूट न जाय। अुसके अपने रजिस्टरमें अुन सेवकोंके नाम रहेंगे, जो समय समय पर अुनको दिया हुआ काम करते रहेंगे।

देशके दुर्भाग्यसे अैसे कार्यकर्ता फिलहाल खास तौर पर शहरवालोंमें से ही लिये जावेंगे, जिनमें से ज्यादातरको देहातोंके लिअे और देहातोंमें काम करनेकी जरूरत होगी। मगर अिस श्रेणीमें ज्यादा और ज्यादा तादादमें देहाती लोग ही भरती किये जाने चाहिये।

अिन सेवकोंसे यह अपेक्षा रखी जायगी कि वे अपने-अपने हलकोंमें कानूनके मुताबिक रजिस्टरमें दर्ज किये गये मतदाताओंके बीच काम करके अुन पर अपना प्रभाव डालेंगे और अुनकी सेवा करेंगे। कअी व्यक्ति और पार्टियां अिन मतदाताओंको अपने पक्षमें करना चाहेंगी। जो सबसे अच्छे होंगे अुन्हींकी जीत होगी। अिसके सिवा और कोअी दूसरा रास्ता नहीं है, जिससे कांग्रेस देशमें तेजीसे गिरती हुअी अपनी पहलेकी अनुपम स्थितिको फिरसे हासिल कर सके। अभी तक कांग्रेस बेजाने देशकी सेविका थी। वह खुदाअी खिदमतगार थी — भगवानकी सेविका थी। अब वह अपने आपसे और दुनियासे कहे कि वह सिर्फ भगवानकी सेविका है — न अिससे ज्यादा है, न कम। अगर वह सत्ता हड़पनेके व्यर्थके झगड़ोंमें पड़ती है तो अेक दिन वह देखेगी कि वह कहीं नहीं है। भगवानको धन्यवाद है कि अब वह जनसेवाके क्षेत्रकी अेकमात्र स्वामिनी नहीं रही।

मैंने सिर्फ दूरका दृश्य आपके सामने रखा है। अगर मुझे वक्त मिला और मेरा स्वास्थ्य ठीक रहा तो मैं अिन कालमोंमें यह चर्चा करनेकी अुम्मीद करता हूं कि अपने मालिकों — सारे बालिग पुरुषों और स्त्रियोंकी — नजरोंमें अपनेको अूंचा अुठानेके लिअे देशसेवक क्या कर सकते हैं।

हरिजनसेवक, १–२–'४८

गांधीजीका आखिरी वसीयतनामा

[कांग्रेसके नये विधानका नीचे दिया जा रहा मसविदा गांधीजीने २९ जनवरी, १९४८ को अपनी मृत्युके अेक ही दिन पहले बनाया था। यह अुनका अन्तिम लेख था। अिसलिअे अिसे अुनका आखिरी वसीयतनामा कहा जा सकता है।]

देशका बंटवारा होते हुअे भी, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा मुहैया किये गये साधनोंके जरिये हिन्दुस्तानको आजादी मिल जानेके कारण मौजूदा स्वरूपवाली कांग्रेसका काम अब खतम हुआ — यानी प्रचारके वाहन और धारासभाकी प्रवृत्ति चलानेवाले तंत्रके नाते अुसकी अुपयोगिता अब समाप्त हो गयी है। शहरों और क़सबोंसे भिन्न अुसके सात लाख गांवोंकी दृष्टिसे हिन्दुस्तानकी सामाजिक, नैतिक और आर्थिक आजादी हासिल करना अभी बाकी है। लोकशाहीके मक़सदकी तरफ़ हिन्दुस्तानकी प्रगतिके दरमियान फौजी सत्ता पर मुल्की सत्ताको प्रधानता देनेकी लड़ाओ अनिवार्य है। कांग्रेसको हमें राजनीतिक पार्टियों और साम्प्रदायिक संस्थाओंके साथकी गन्दी होड़से बचाना चाहिये। अिन और अैसे ही दूसरे कारणोंसे अखिल भारत कांग्रेस कमेटी नीचे दिये हुअे नियमोंके मुताबिक अपनी मौजूदा संस्थाको तोड़ने और लोक-सेवक-संघके रूपमें प्रकट होनेका निश्चय करे। जरूरतके मुताबिक अिन नियमोंमें फेरफार करनेका अिस संघको अधिकार रहेगा।

गांववाले या गांववालोंके जैसी मनोवृत्तिवाले पांच वयस्क पुरुषों या स्त्रियोंकी बनी हुअी हरअेक पंचायत अेक अिकाअी बनेगी।

पास-पासकी अैसी हर दो पंचायतोंकी, अुन्हींमें से चुने हुअे अेक नेताकी रहनुमाअीमें, अेक काम करनेवाली पार्टी बनेगी।

जब अैसी १०० पंचायतें बन जायं, तब पहले दरजेके पचास नेता अपनेमें से दूसरे दरजेका अेक नेता चुनें और अिस तरह पहले दरजेका नेता दूसरे दरजेके नेताके मातहत काम करे। दो सौ पंचायतोंके अैसे जोड़ कायम करना तब तक जारी रखा जाय, जब तक कि वे पूरे हिन्दुस्तानको न ढंक लें। और बादमें कायम की गअी पंचायतोंका हरअेक समूह पहलेकी तरह दूसरे दरजेका नेता चुनता जाय। दूसरे दरजेके नेता सारे हिन्दुस्तानके लिअे सम्मिलित रीतिसे काम करें और अपने अपने प्रदेशोंमें अलग अलग काम करें। जब जरूरत महसूस हो तब दूसरे दरजेके नेता अपनेमें से अेक मुखिया चुनें, और वह मुखिया चुननेवाले चाहें तब तक सब समूहोंको व्यवस्थित करके अुनकी रहनुमाअी करे।

(प्रान्तों या जिलोंकी अन्तिम रचना अभी तय न होनेसे सेवकोंके अिस समूहको प्रान्तीय या जिला समितियोंमें बांटनेकी कोशिश नहीं की

गअी है। और, किसी भी वक्त बनाये हुअे समूह या समूहोंको सारे हिन्दुस्तानमें काम करनेका अधिकार रहेगा। यह याद रखा जाय कि सेवकोंके अिस समुदायको अधिकार या सत्ता अपने अुन स्वामियोंसे यानी सारे हिन्दुस्तानकी प्रजासे मिलती है, जिसकी अुन्होंने अपनी अिच्छासे और होशियारीसे सेवा की है।)

१. हरअेक सेवक अपने हाथ-कते सूतकी या चरखा-संघ द्वारा प्रमाणित खादी हमेशा पहननेवाला और नशीली चीजोंसे दूर रहनेवाला होना चाहिये। अगर वह हिन्दू है तो अुसे अपनेमें से और अपने परिवारमें से हर किस्मकी छुआछूत दूर करनी चाहिये और जातियोंके बीच अेकताके, सब धर्मोंके प्रति समभावके और जाति, धर्म या स्त्री-पुरुषके किसी भेदभावके बिना सबके लिअे समान अवसर और समान दरजेके आदर्शमें विश्वास रखनेवाला होना चाहिये।

२. अपने कार्यक्षेत्रमें अुसे हरअेक गांववालेके निजी संसर्गमें रहना चाहिये।

३. गांववालोंमें से वह कार्यकर्ता चुनेगा और अुन्हें तालीम देगा। अिन सबका वह रजिस्टर रखेगा।

४. वह अपने रोजानाके कामका रेकार्ड रखेगा।

५. वह गांवोंको अिस तरह संगठित करेगा कि वे अपनी खेती और गृह-अुद्योगों द्वारा स्वयंपूर्ण और स्वावलम्बी बनें।

६. गांववालोंको वह सफाअी और तन्दुरुस्तीकी तालीम देगा और अुनकी बीमारी व रोगोंको रोकनेके लिअे सारे अुपाय काममें लायेगा।

७. हिन्दुस्तानी तालीमी संघकी नीतिके मुताबिक नअी तालीमके आधार पर वह गांववालोंकी पैदा होनेसे मरने तककी सारी शिक्षाका प्रबंध करेगा।

८. जिनके नाम मतदाताओंकी सरकारी यादीमें न आ पाये हों, अुनके नाम वह अुसमें दर्ज करायेगा।

९. जिन्होंने मत देनेके अधिकारके लिअे जरूरी योग्यता हासिल न की हो, अुन्हें वह योग्यता हासिल करनेके लिअे प्रोत्साहन देगा।

१०. अूपर बताये हुअे और समय-समय पर बढ़ाये हुअे अुद्देश्योंको पूरा करनेके लिअे, योग्य कर्तव्य पालन करनेकी दृष्टिसे, संघके द्वारा तैयार किये गये नियमोंके अनुसार वह स्वयं तालीम लेगा और योग्य बनेगा।

संघ नीचेकी स्वाधीन संस्थाओंको मान्यता देगा:

१. अखिल भारत चरखा-संघ

२. अखिल भारत ग्रामोद्योग-संघ

३. हिन्दुस्तानी तालीमी संघ

४. हरिजन-सेवक-संघ

५. गोसेवा-संघ

संघ अपना मकसद पूरा करनेके लिअे गांववालोंसे और दूसरोंसे चंदा लेगा। गरीब लोगोंका पैसा अिकट्ठा करने पर खास जोर दिया जायगा।

हरिजनसेवक, २२-२-'४८

७१

भारत, पाकिस्तान और काश्मीर

हमारे देशकी बदकिस्मतीसे हिन्दुस्तान और पाकिस्तान नामसे जो दो टुकड़े हुअे, अुसमें धर्मको ही कारण बनाया गया है। अुसके पीछे आर्थिक और दूसरे कारण भले रहे हों, मगर अुनकी वजहसे यह बंटवारा नहीं हुआ होता। आज हवामें जो जहर फैला हुआ है, वह भी अुन्हीं साम्प्रदायिक कारणोंसे पैदा हुआ है। धर्मके नाम पर लूट-मार होती है, अधर्म होता है। अैसा न हुआ होता तो अच्छा होता, अैसा कहना अच्छा तो लगता है। मगर अिससे हकीकतको बदला नहीं जा सकता।

यह सवाल कअी बार पूछा गया है कि दोनोंके बीच लड़ाअी होने पर क्या पाकिस्तानके हिन्दू हिन्दुस्तानके हिन्दुओंके साथ और हिन्दुस्तानके मुसलमान पाकिस्तानके मुसलमानोंके साथ लड़ेंगे? मैं मानता हूं कि अूपर बतलाअी हुअी हालतमें वे जरूर लड़ेंगे। मुसलमानोंकी

वफादारीके वचनों पर भरोसा करनेमें जितना खतरा है, अुसके बजाय भरोसा न करनेमें ज्यादा खतरा है। भरोसा करनेमें भूल हो और खतरेका सामना करना पड़े, तो बहादुरोंके लिअे यह अेक मामूली बात होगी।

मौजूं ढंग पर अिस सवालको दूसरी तरहसे यों रखा जा सकता है कि क्या सत्य और न्यायके खातिर हिन्दू हिन्दूके खिलाफ और मुसलमान मुसलमानके खिलाफ लड़ेगा? अिसका जवाब अेक अुलटे-सवाल पूछकर यह दिया जा सकता है कि क्या अितिहासमें अैसे अुदाहरण नहीं मिलते?'

अिस सवालको हल करनेमें सबसे बड़ी अुलझन यह है कि सत्यकी दोनों ही राज्योंमें अुपेक्षा की गअी है। मानो सत्यकी कोअी कीमत ही न हो। अैसी विषम स्थितिमें भी हम अुम्मीद करें कि सत्य पर अटल श्रद्धा रखनेवाले कुछ लोग हमारे देशमें जरूर हैं।

हरिजनसेवक, २६–१०–'४७

धर्मके नाम पर पाकिस्तान कायम हुआ। अिसलिअे अुसको सब तरहसे पाक और साफ रहना चाहिये। गलतियां दोनों तरफ काफी हुअीं। मगर क्या अब भी हम गलतियां करते ही रहें? अगर हम दोनों लड़ेंगे तो दोनों तीसरी ताकतके हाथमें चले जायेंगे। अिससे बुरी बात और क्या होगी?

दिल्ली-डायरी, पृ० ३२२

अगर (हिन्दुस्तान और पाकिस्तानके बीच) लड़ाअी छिड़ जाय, तो पाकिस्तानके हिन्दू वहां पांचवीं कतारवाले नहीं बन सकते। कोअी भी अिसे बरदाश्त नहीं करेगा। अगर वे पाकिस्तानके प्रति वफादार नहीं हैं, तो अुनको पाकिस्तान छोड़ देना चाहिये। अिसी तरह जो मुसलमान पाकिस्तानके प्रति वफादार हैं, अुन्हें हिन्दुस्तानी संघमें नहीं रहना चाहिये। सरकारका फर्ज है कि वह हिन्दुओं और सिक्खोंके लिअे अिन्साफ हासिल करे। जनता सरकारसे अपना मनचाहा करा सकती है।... मुसलमान लोग यह कहते सुने जाते हैं कि 'हंसके लिया पाकिस्तान, लड़के लेंगे हिन्दुस्तान'।... कुछ मुसलमान सारे हिन्दुस्तानको मुसलमान बनानेकी बात सोच रहे हैं। यह काम लड़ाअीके जरिये

कभी नहीं हो सकेगा। पाकिस्तान हिन्दू धर्मको कभी बरबाद नहीं कर सकेगा। सिर्फ हिन्दू ही अपने आपको और अपने धर्मको बरबाद कर सकते हैं। अिसी तरह अगर पाकिस्तान बरबाद हुआ, तो वह पाकिस्तानके मुसलमानों द्वारा ही बरबाद होगा, हिन्दुस्तानके हिन्दुओं द्वारा नहीं।

दिल्ली-डायरी, पृ० ४३-४४

दोनों राज्योंके लिअे ठीक-ठीक समझौता करनेका आम रास्ता यह है कि दोनों राज्य साफ दिलसे अपना पूरा पूरा दोष स्वीकार करें और समझौता कर लें। अगर दोनोंमें कोअी समझौता न हो सके, तो वे सामान्य तरीकेसे पंच-फैसलेका सहारा लें। अिससे दूसरा और जंगली रास्ता लड़ाअीका है।... लेकिन आपसी समझौते या पंच-फैसलेके अभावमें लड़ाअीके सिवा कोअी चारा नहीं रह जायगा। अिस बीच ... जिन मुसलमानोंने अपनी अिच्छासे पाकिस्तान जानेका चुनाव नहीं किया है, अुन्हें अुनके पड़ोसी सुरक्षा या सलामतीके पक्के विश्वासके साथ अपने घरोंको लौट आनेके लिअे कहेंगे। यह काम फौजकी मददसे नहीं किया जा सकता। यह तो लोगोंके समझदार बननेसे ही हो सकता है।

दिल्ली-डायरी, पृ० २०

हिन्दुस्तानसे हरअेक मुसलमानको भगाने और पाकिस्तानसे हरअेक हिन्दू और सिक्खको भगानेका नतीजा यह होगा कि दोनों अुपनिवेशोंमें लड़ाअी होगी और देश हमेशाके लिअे बरबाद हो जायगा। अगर दोनों अुपनिवेशोंमें यह आत्मघाती नीति बरती गअी, तो अुससे पाकिस्तान और हिन्दुस्तान दोनोंमें अिस्लाम और हिन्दू धर्मका नाश हो जायगा। भलाअी सिर्फ भलाअीसे ही पैदा होती है। प्यारसे प्यार पैदा होता है। जहां तक बदला लेनेकी बात है, अिन्सानको यही शोभा देता है कि वह बुराअी करनेवालेको भगवानके हाथमें छोड़ दे।

दिल्ली-डायरी, पृ० २८

हिन्दुस्तानका, हिन्दू धर्मका, सिक्ख धर्मका और अिस्लामका बेबस बनकर नाश होते देखनेके बनिस्बत मृत्यु मेरे लिअे सुन्दर रिहाअी होगी।

अगर पाकिस्तानमें दुनियाके सब धर्मोंके लोगोंको समान हक न मिलें, अुनकी जान और माल सुरक्षित न रहें और यूनियन भी पाकिस्तानकी नकल करे, तो दोनोंका नाश निश्चित है। अुस हालतमें अिस्लामका तो हिन्दुस्तान और पाकिस्तानमें ही नाश होगा — बाकी दुनियामें नहीं; मगर हिन्दू धर्म और सिक्ख धर्म तो हिन्दुस्तानके बाहर हैं ही नहीं।

दिल्ली-डायरी, पृ० ३४७

बहुमतवाले लोग अगर अल्पमतवालोंको अिस डरसे मार डालें या यूनियनसे निकाल दें कि वे सब दगाबाज साबित होंगे, तो यह बहुमतवालोंकी बुजदिली होगी। अल्पमतके हकोंका सावधानीसे खयाल रखना ही बहु-मतवालोंको शोभा देता है। जो बहुमतवाले अल्पमतवालोंकी परवाह नहीं करते वे हंसीके पात्र बनते हैं। पक्का आत्म-विश्वास और अपने नामधारी या सच्चे विरोधीमें बहादुरीभरा विश्वास ही बहुमतवालोंका सच्चा बचाव है।

दिल्ली-डायरी, पृ० ३३

जो यह महसूस करते हैं कि पाकिस्तानसे अुन्हें निकाल दिया गया है, अुन्हें यह जानना चाहिये कि वे सारे हिन्दुस्तानके नागरिक हैं, न कि सिर्फ पंजाब, सरहदी सूबे या सिन्धके। शर्त यह है कि वे जहां कहीं जायें, वहांके रहनेवालोंमें दूधमें शक्करकी तरह घुलमिल जायं। अुन्हें मेहनती बनना और अपने व्यवहारमें अीमानदार रहना चाहिये। अुन्हें यह महसूस करना चाहिये कि वे हिन्दुस्तानकी सेवा करने और अुसके यशको बढ़ानेके लिअे पैदा हुअे हैं, न कि अुसके नाम पर कालिख पोतने या अुसे दुनियाकी आंखोंसे गिरानेके लिअे। अुन्हें अपना समय जुआ खेलने, शराब पीने या आपसी लड़ाअी-झगड़ेमें बरबाद नहीं करना चाहिये। गलती करना अिन्सानका स्वभाव है। लेकिन अिन्सानको गलतियोंसे सबक सीखने और दुबारा गलती न करनेकी ताकत भी दी गअी है। अगर शरणार्थी मेरी सलाह मानेंगे, तो वे जहां कहीं भी जायेंगे वहां फायदेमन्द साबित होंगे और हर सूबेके लोग खुले दिलसे अुनका स्वागत करेंगे।

दिल्ली-डायरी, पृ० ८६

अगर पाकिस्तान पूरी तरह मुस्लिम राज्य हो जाय और हिन्दुस्तानी संघ पूरी तरह हिन्दू और सिक्ख राज्य बन जाय और दोनों तरफ अल्पमतवालोंको कोअी हक न दिये जायं, तो दोनों राज्य बरबाद हो जायंगे।

दिल्ली-डायरी, पृ० ९५

क्या कायदे आजमने यह नहीं कहा है कि पाकिस्तान मजहबी राज्य नहीं है और अुसमें धर्मको कानूनका रूप नहीं दिया जायगा? लेकिन बदकिस्मतीसे यह बिलकुल सच है कि अिस दावेको हमेशा अमलमें सच साबित नहीं किया जाता। क्या हिन्दुस्तानी संघ मजहबी राज्य बनेगा और क्या हिन्दू धर्मके अुसूल गैर-हिन्दुओं पर लादे जायंगे? . . . अैसा हुआ तो हिन्दुस्तानी संघ आशा और अुजले भविष्यका देश नहीं रह जायगा। तब वह अैसा देश नहीं रह जायगा, जिसकी तरफ सारी अेशियाअी और अफ्रीकन जातियां ही नहीं, बल्कि सारी दुनिया आशाभरी नजरसे देखती है। दुनिया यूनियन या पाकिस्तानके रूपमें हिन्दुस्तानसे ओछेपन और धार्मिक पागलपनकी अुम्मीद नहीं करती। वह हिन्दुस्तानसे बड़प्पन, भलाअी और अुदारताकी आशा करती है, जिससे सारी दुनिया सबक ले सके और आजके फैले हुअे अंधेरेमें प्रकाश पा सके।

दिल्ली-डायरी, पृ० १४५

काश्मीर

न तो काश्मीरके महाराजा साहब और न हैदराबादके निजामको अपनी प्रजाकी सम्मतिके बगैर किसी भी अुपनिवेशमें शामिल होनेका अधिकार है। जहां तक मैं जानता हूं, यह बात काश्मीरके मामलेमें साफ कर दी गअी थी। अगर अकेले महाराजा संघमें शामिल होना चाहते, तो मैं अुनके अैसे कामका कभी समर्थन नहीं कर सकता था। संघ-सरकार काश्मीरको थोड़े समयके लिअे संघमें शामिल करने पर सिर्फ अिसलिअे राजी हुअी कि महाराजा और काश्मीर व जम्मूकी जनताकी नुमाअिन्दगी करनेवाले शेख अब्दुल्ला दोनों यह बात चाहते थे। शेख अब्दुल्ला अिसलिअे सामने आये कि वे काश्मीर और जम्मूके सिर्फ मुसलमानोंके ही नहीं, बल्कि सारी जनताके नुमाअिन्दे होनेका दावा करते हैं।

मैंने यह कानाफूंसी सुनी है कि काश्मीरको दो हिस्सोंमें बांटा जा सकता है। अिनमें से जम्मू हिन्दुओंके हिस्से आयेगा और काश्मीर मुसलमानोंके हिस्से। मैं अैसी बंटी हुअी वफादारीकी और हिन्दुस्तानकी रियासतोंके कअी हिस्सोंमें बंटनेकी कल्पना नहीं कर सकता। अिसलिअे मुझे अुम्मीद है कि सारा हिन्दुस्तान समझदारीसे काम लेगा और कमसे कम अुन लाखों हिन्दुस्तानियोंके लिअे, जो लाचार शरणार्थी बननेके लिअे बाध्य हुअे हैं, तुरन्त ही अिस गन्दी हालतको टाला जायगा।

दिल्ली-डायरी, पृ० १६९

७२

भारतमें विदेशी बस्तियां

गोआ

आजाद हिन्दुस्तानमें गोआ हिन्दुस्तानसे बिलकुल अलग रहकर अपनी मनमानी नहीं कर सकेगा। गोआवाले आजाद हिन्दुस्तानकी नागरिकताके हकोंका दावा कर सकेंगे और वे अुन हकोंको पा भी सकेंगे। और अिसके लिअे अुन्हें न तो अेक गोली चलानी होगी और न अेक कतरा खून बहाना होगा।

हरिजनसेवक, ३०–६–'४६

सचमुच ही फ्रांसीसी और फिरंगी सल्तनतमें अैसा कोअी खास फर्क नहीं है, जिसकी वजहसे अेकको ठुकराया जाय और दूसरीको अपनाया जाय। सल्तनतोंके हाथ हमेशा खूनसे तर रहे हैं। सारी दुनिया आज अिन सल्तनतोंके बोझसे दबी कराह रही है। अच्छा हो कि ये साम्राज्यवादी ताकतें जल्दी ही अशोक महानकी तरह अपने साम्राज्यवादको छोड़ दें। . . . पुर्तगाली सरकारके अिन्फरमेशन व्यूरोके मुख्य अफसरका यह लिखना कि पुर्तगाल गोआके हिन्दुस्तानियोंकी मातृभूमि है, अेक हंसी लानेवाली चीज है। जिस हद तक हिन्दुस्तान मेरी मातृभूमि है, अुसी हद तक वह गोआवालोंकी भी मातृभूमि है। आज गोआ ब्रिटिश हिन्दुस्तानकी

हदमें नहीं है, मगर समूचे भौगोलिक हिन्दुस्तानके अन्दर तो वह है ही। फिर, गोआके हिन्दुस्तानियों और पुर्तगालियोंके बीच बहुत थोड़ी समानता है — अगर कुछ हो।

हरिजनसेवक, ८–९–’४६

फ्रांसीसी बस्तियां

अुन्हींके सामने जब अुनके करोड़ों देशवासी ब्रिटिश हुकूमतसे आजाद हो रहे हैं, तब अिन छोटी-छोटी विदेशी बस्तियोंके निवासियोंके लिअे गुलामीमें रहना सम्भव नहीं है। . . . मैं अुम्मीद करता हूं कि . . . महान फ्रांसीसी राष्ट्र भारतके या दूसरी जगहोंके काले या भूरे लोगोंको दबाकर रखनेकी नीतिका हामी कभी नहीं होगा।

हरिजन, १६–११–’४७

७३

भारत और विश्वशांति

दुनियाके सुविचारशील लोग आज अैसे पूर्ण स्वतंत्र राज्योंको नहीं चाहते जो अेक-दूसरेसे लड़ते हों, बल्कि अेक-दूसरेके प्रति मित्रभाव रखनेवाले अन्योन्याश्रित राज्योंके संघको चाहते हैं। भले ही अिस अुद्देश्यकी सिद्धिका दिन बहुत दूर हो। मैं अपने देशके लिअे कोअी भारी दावा नहीं करना चाहता। लेकिन यदि हम पूर्ण स्वतंत्रताके बजाय अन्योन्याश्रित राज्योंके विश्वसंघकी तैयारी जाहिर करें, तो अिसमें हम न तो कोअी बहुत भारी बात ही कहते हैं और न वह असंभव ही है।

यंग अिंडिया, २६–१२–’२४

मेरी आकांक्षाका लक्ष्य स्वतंत्रतासे ज्यादा अूंचा है। भारतकी मुक्तिके द्वारा मैं पश्चिमके भीषण शोषणसे दुनियाके कअी निर्बल देशोंका अुद्धार करना चाहता हूं। भारतके अपनी सच्ची स्थितिको प्राप्त करनेका अनिवार्य परिणाम यह होगा कि हरअेक देश वैसा ही कर सकेगा और करेगा।

यंग अिंडिया, १२–१–’२८

मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि भारत अपनी स्वतंत्रता अहिंसक अुपायोंसे प्राप्त करे, तो फिर वह बड़ी स्थलसेना, अुतनी ही बड़ी जलसेना और अुससे भी बड़ी वायुसेना रखनेकी अिच्छा नहीं करेगा। यदि आजादीकी अपनी लड़ाअीमें अहिंसक विजय प्राप्त करनेके लिअे अुसकी आत्म-चेतनाको जितनी अूंचाअी तक अुठना चाहिये अुतनी अूंचाअी तक वह अुठ सकी, तो दुनियाके माने हुअे मूल्योंमें परिवर्तन हो जायगा और लड़ाअियोंके साज-सामानका अधिकांश निरर्थक सिद्ध हो जायगा। अैसा भारत भले महज अेक सपना हो, बच्चोंकी जैसी कल्पना हो। लेकिन मेरी रायमें अहिंसाके द्वारा भारतके स्वतंत्र होनेका फलितार्थ तो बेशक यही होना चाहिये। अैसी स्वतंत्रता, वह जब भी आयगी तब, . . . ब्रिटेनके साथ सज्जनोचित समझौतेके जरिये आयगी। लेकिन तब जिस ब्रिटेनसे हमारा समझौता होगा वह दुनियामें सर्वश्रेष्ठ स्थान लेनेके लिअे तरह तरहकी कोशिशें करनेवाला आजका साम्राज्यवादी और घमण्डी ब्रिटेन नहीं होगा, बल्कि मानव-जातिकी सुख-शान्तिके लिअे नम्रतापूर्वक प्रयत्न करनेवाला ब्रिटेन होगा।

यंग अिंडिया, ६–५–'२९

तब भारतको ब्रिटेनके लूट-मारके युद्धोंमें ब्रिटेनके साथ आजकी तरह लाचार होकर नहीं घिसटना होगा। तब अुसकी आवाज दुनियाके सारे हिंसक बलोंको नियंत्रणमें रखनेकी कोशिश करनेवाले अेक शक्तिशाली देशकी आवाज होगी।

यंग अिंडिया, ६–५–'२९

मैं अत्यंत नम्रतापूर्वक यह सुझानेका साहस करता हूं कि यदि भारतने अपना लक्ष्य सत्य और अहिंसाकी राहसे प्राप्त करनेमें सफलता पायी, तो अुसकी यह सफलता जिस विश्वशान्तिके लिअे दुनियाके तमाम राष्ट्र तड़प रहे हैं अुसे नजदीक लानेमें अेक मूल्यवान कदम सिद्ध होगी; और तब यह भी कहा जा सकेगा कि ये राष्ट्र अुसे स्वेच्छापूर्वक जो सहायता पहुंचा रहे हैं, अुस सहायताका अुसने थोड़ा-बहुत मूल्य अवश्य चुका दिया है।

यंग अिंडिया, १२–३–'३१

जब भारत स्वावलम्बी और स्वाश्रयी बन जायगा और जिस तरह न तो खुद किसीकी सम्पत्तिका लोभ करेगा और न अपनी सम्पत्तिका शोषण होने देगा, तब वह पश्चिम या पूर्वके किसी भी देशके लिअे — उसकी शक्ति कितनी भी प्रबल क्यों न हो — लालचका विषय नहीं रह जायेगा और तब वह खर्चीले शस्त्रास्त्रोंका बोझ अुठाये बिना ही अपनेको सुरक्षित अनुभव करेगा। अुसकी यह भीतरी स्वाश्रयी अर्थ-व्यवस्था बाहरी आक्रमणके खिलाफ सुदृढ़तम ढाल होगी।

यंग अिंडिया, २–७–'३१

यदि मैं अपने देशके लिअे आजादीकी मांग करता हूं, तो आप विश्वास कीजिये कि मैं यह आजादी अिसलिअे नहीं चाहता कि मेरा बड़ा देश, जिसकी आबादी सम्पूर्ण मानव-जातिका पांचवां हिस्सा है, दुनियाकी किसी भी दूसरी जातिका, या किसी भी व्यक्तिका शोषण करे। आप विश्वास कीजिये कि मैं अपनी शक्तिभर अपने देशको ऐसा अनर्थ नहीं करने दूंगा। यदि मैं अपने देशके लिअे आजादी चाहता हूं, तो मुझे यह मानना ही चाहिये कि प्रत्येक दूसरी सबल या निर्बल जातिको भी अुस आजादीका वैसा ही अधिकार है। यदि मैं अैसा नहीं मानता हूं और अैसी अिच्छा नहीं करता हूं, तो अुसका यह अर्थ है कि मैं अुस आजादीका पात्र नहीं हूं।

यंग अिंडिया, १–१०–'३१

मैं अपने हृदयकी गहराअीमें यह महसूस करता हूं . . . कि दुनिया रक्तपातसे बिलकुल अूब गयी है। दुनिया अिस असह्य स्थितिसे बाहर निकलनेका रास्ता खोज रही है। और मैं विश्वास करता हूं तथा अुस विश्वासमें सुख और गर्व अनुभव करता हूं कि शायद मुक्तिके प्यासे जगतको यह रास्ता दिखानेका श्रेय भारतकी प्राचीन भूमिको ही मिलेगा।

अिन्डियाज़ केस फॉर स्वराज, पृ० २०९

हिन्दुस्तानकी राष्ट्रीय सरकार क्या नीति अख्तियार करेगी सो मैं नहीं कह सकता। संभव है कि अपनी प्रबल अिच्छाके रहते हुअे भी मैं तब तक जीवित न रहूं। लेकिन अगर अुस वक्त तक मैं जिन्दा रहा,

तो अपनी अहिंसक नीतिको यथासंभव संपूर्णताके साथ अमलमें लानेकी सलाह दूंगा। विश्वकी शांति और नयी विश्व-व्यवस्थाकी स्थापनामें यही हिन्दुस्तानका सबसे बड़ा हिस्सा भी होगा। मुझे आशा तो यह है कि चूंकि हिन्दुस्तानमें अितनी लड़ाकू जातियां हैं और चूंकि स्वतंत्र हिन्दुस्तानकी सरकारके निर्णयमें अुन सबका हिस्सा होगा, अिसलिअे हमारी राष्ट्रीय नीतिका झुकाव मौजूदा सैन्यवादसे भिन्न किसी अन्य प्रकारके सैन्यवादकी तरफ होगा। मैं यह अुम्मीद तो जरूर रखूंगा कि अेक राजनीतिक शस्त्रकी हैसियतसे अहिंसाकी व्यावहारिक अुपयोगिताका हमारा पिछला सारा . . . प्रयोग बिलकुल विफल नहीं जायगा और सच्चे अहिंसावादियोंका अेक मजबूत दल हिन्दुस्तानमें पैदा हो जायगा।

हरिजनसेवक, २१–६–'४२

७४

पूर्वका संदेश

अगर हिन्दुस्तान अपने फर्जको भूलता है तो अेशिया मर जायगा। यह ठीक ही कहा गया है कि हिन्दुस्तान कअी मिली-जुली सभ्यताओं या तहजीबोंका घर है, जहां वे सब साथ-साथ पनेपी हैं। हम सब अैसे काम करें कि हिन्दुस्तान अेशियाकी या दुनियाके किसी भी हिस्सेकी कुचली और चूसी हुअी जातियोंकी आशा बना रहे।

दिल्ली-डायरी, पृ० ३२

[दिल्लीमें ता० २–४–'४७ के दिन अेशियाअी कान्फरेन्सकी आखिरी बैठकमें भाषण करते हुअे गांधीजीने बताया कि पश्चिमको ज्ञानकी रोशनी पूर्वसे ही मिली है। अिस सिलसिलेमें अुन्होंने आगे कहा :]

अिन विद्वानोंमें सबसे पहले जरथुस्त हुअे थे। वे पूरबके थे। अुनके बाद बुद्ध हुअे, जो पूरब — हिन्दुस्तानके — थे। बुद्धके बाद कौन हुआ? अीशु खिस्त। वे भी पूरबके थे। अीशुसे पहले मोजेज हुअे, जो फिलस्तीनके थे, अगरचे अुनका जन्म मिस्रमें हुआ था। अीशुके बाद मुहम्मद हुअे।

यहां मैं राम, कृष्ण और दूसरे महापुरुषोंका नाम नहीं लेता। मैं अुन्हें कम महान नहीं मानता। मगर साहित्य-जगत अुन्हें कम जानता है। जो हो, मैं दुनियाके अैसे किसी अेक भी शख्सको नहीं जानता, जो अेशियाके अिन महापुरुषोंकी बराबरी कर सके। और तब क्या हुआ? अीसाअियत जब पश्चिममें पहुंची, तो अुसकी शकल बिगड़ गअी। मुझे अफसोस है कि मुझे अैसा कहना पड़ता है। अिस विषयमें मैं और आगे नहीं बोलूंगा। . . . जो बात मैं आपको समझाना चाहता हूं, वह अेशियाका पैगाम है। अुसे पश्चिमी चश्मोंसे या अेटम-बमकी नकल करनेसे नहीं सीखा जा सकता। अगर आप पश्चिमको कोअी पैगाम देना चाहते हैं, तो वह प्रेम और सत्यका पैगाम होना चाहिये। . . . जमहूरियतके अिस जमानेमें, गरीबसे गरीबकी जागृतिके अिस युगमें, आप ज्यादासे ज्यादा जोर देकर अिस पैगामका दुनियामें प्रचार कर सकते हैं। चूंकि आपका शोषण किया गया है, अिसलिअे अुसका अुसी तरह बदला चुकाकर नहीं, बल्कि सच्ची समझदारीके जरिये आप पश्चिम पर पूरी तरहसे विजय पा सकते हैं। अगर हम सिर्फ अपने दिमागोंसे नहीं, बल्कि दिलोंसे भी अिस पैगामके मर्मको, जिसे अेशियाके ये विद्वान हमारे लिअे छोड़ गये हैं, अेक साथ समझनेकी कोशिश करें और अगर हम सचमुच अुस महान पैगामके लायक बन जायं, तो मुझे विश्वास है कि हम पश्चिमको पूरी तरहसे जीत लेंगे। हमारी अिस जीतको पश्चिम खुद भी प्यार करेगा।

पश्चिम आज सच्चे ज्ञानके लिअे तरस रहा है। अणु-बमोंकी दिन-दूनी बढ़तीसे वह नाअुम्मीद हो रहा है। क्योंकि अणु-बमोंके बढ़नेसे सिर्फ पश्चिमका ही नहीं, बल्कि पूरी दुनियाका नाश हो जायगा; मानो बाअिबलकी भविष्य-वाणी सच होने जा रही है और पूरी कयामत होनेवाली है। अब यह आपके अूपर है कि आप दुनियाकी नीचता और पापोंकी तरफ अुसका ध्यान खींचें और अुसे बचावें। . . . यही वह विरासत है, जो मेरे और आपके पैगम्बरोंसे अेशियाको मिली है।

हरिजनसेवक, २०–४–'४७

७५
स्फुट वचन
आदिवासी

'आदिवासी' नाम अुन लोगोंको दिया गया है, जो कि पहलेसे ही अिस देशमें बसे हुअे थे। अुनकी आर्थिक स्थिति हरिजनोंसे शायद ही अच्छी होगी। लम्बे अरसेसे अपने आपको 'अूंचे वर्गों' के नामसे पुकारने-वाली हमारी जनताने अुनके प्रति जो बेपरवाही बताअी है, अुसका परिणाम अुन्हें भोगना पड़ा है। आदिवासियोंके प्रश्नको रचनात्मक कार्यक्रममें खास स्थान मिलना चाहिये। सुधारकोंके लिअे अुनके बीच सुधारका काम करनेका बड़ा क्षेत्र है, परन्तु अभी तक अीसाअी धर्म-प्रचारकोंने ही यह काम किया है। यद्यपि अुन्होंने अिस काममें बहुत मेहनत की है, तो भी अुनका काम जैसे चाहिये था वैसे फला-फूला नहीं; क्योंकि अुनका अंतिम हेतु आदिवासियोंको अीसाअी बनाना था और अुन्हें हिन्दुस्तानी मिटाकर अपने जैसा परदेशी बना लेनेका था। जो भी हो, परन्तु अगर हम अहिंसाके आधार पर स्वराज्य चाहते हैं तो कनिष्ठसे कनिष्ठ वर्गकी तरफसे भी हम बेपरवाह नहीं हो सकते। परन्तु आदिवासियोंकी तो संख्या अितनी बड़ी है कि अुनको कनिष्ठ गिना ही नहीं जा सकता।

हरिजनसेवक, १८–१–'४२

अनुशासन

आजादीके सर्वोच्च रूपके साथ ज्यादासे ज्यादा अनुशासन और नम्रता होनी ही चाहिये; दोनोंका अटूट सम्बन्ध है। अनुशासन और नम्रतासे आयी हुअी आजादी ही सच्ची आजादी है। अनुशासनसे अनियंत्रित आजादी, आजादी नहीं, स्वेच्छाचारिता है; अुससे स्वयं हमारे और हमारे पड़ोसियोंके खिलाफ अभद्रता सूचित होती है।

यंग अिंडिया, ३–६–'२६

हमें दृढ़तापूर्वक कठोर अनुशासनका पालन करना सीखना चाहिये। तभी हम कोअी बड़ी और स्थायी वस्तु प्राप्त कर सकेंगे। और यह

अनुशासन कोरी बौद्धिक चर्चा करते रहनेसे या तर्क और विवेक-बुद्धिको अपील करते रहनेसे नहीं आ सकता। अनुशासन विपत्तिकी पाठशालामें सीखा जाता है। और जब अुत्साही युवक बिना किसी ढालके जिम्मेदारीके काम अुठायेंगे और अुसके लिअे अपनेको तैयार करेंगे, तब वे समझेंगे कि जिम्मेदारी और अनुशासन क्या हैं।

यंग अिंडिया, १३–५–'२७

डॉक्टर

डॉक्टर हमें धर्मसे भ्रष्ट करते हैं, यह साफ और सीधी बात है। वे हमें स्वच्छन्द बननेको ललचाते हैं। अिसका परिणाम यह आता है कि हम निःसत्त्व और नामर्द बनते हैं।

हिन्द स्वराज्य, पृ० ४३

सामान्य तौर पर अिस धंधेसे मेरा जो विरोध है, अुसका कारण यह है कि अुसमें आत्माके प्रति कुछ भी ध्यान नहीं दिया जाता और अिस शरीर जैसे नाजुक यंत्रको सुधारनेका प्रयत्न करनेमें जो श्रम किया जाता है वह न-कुछ जैसी वस्तुके लिअे ही किया जाता है। अिस प्रकार आत्माका ही अिनकार करनेसे यह धंधा मनुष्योंको दयाके पात्र बना देता है और मनुष्यके गौरव और आत्म-संयमको घटानेमें मदद करता है।

हिन्दी नवजीवन, ११–६–'२५

पोशाक

किसी भारतीयके लिअे अुसकी राष्ट्रीय पोशाक ही सबसे ज्यादा स्वाभाविक और शोभाप्रद है। मैं अैसा मानता हूं कि हमारा यूरोपीय पोशाककी नकल करना हमारे पतनका चिह्न है; अुससे हमारा पतन, हमारा अपमान और हमारी दुर्बलता सूचित होती है। अपनी अैसी पोशाकको छोड़कर, जो भारतीय जलवायुके सबसे ज्यादा अनुकूल है, जो सादगी, कला और सस्तेपनमें दुनियामें अपनी जोड़ नहीं रखती और जो स्वास्थ्य तथा स्वच्छताकी आवश्यकताओंको पूरा करती है, हम अेक राष्ट्रीय पाप कर रहे हैं।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ३९३

मेरा संकीर्ण राष्ट्रप्रेम टोपका विरोध करता है, किन्तु मेरा छिपा हुआ विश्वप्रेम अुसे यूरोपकी अिनी-गिनी बहुमूल्य देनोंमें से अेक मानता है। टोपके खिलाफ देशमें अितनी अुग्र विरोध-भावना न होती, तो मैं टोपके प्रचारके लिअे संघटित संस्थाका अध्यक्ष बन जाता।

भारतके शिक्षित लोगोंने (यहांकी जलवायुमें) पतलून जैसे अनावश्यक, अस्वास्थ्यकर और असुन्दर परिधानको अपनानेमें तथा टोपको अपनानेमें आम तौर पर हिचकिचाहट प्रकट करनेमें भूल की है। लेकिन मैं जानता हूं कि राष्ट्रीय रुचियों और अरुचियोंके पीछे कोअी विवेक नहीं होता।

यंग अिंडिया, ६–६–'२९

झंडा

झंडेकी जरूरत सब देशोंको होती है। अुसके लिअे लाखों-करोड़ोंने अपने प्राण दिये हैं। अिसमें सन्देह नहीं कि यह अेक प्रकारकी मूर्ति-पूजा है, जिसे नष्ट करना पाप-जैसा होगा। कारण, झंडा अमुक आदर्शोंका प्रतीक होता है। जब यूनियन जैक फहराया जाता है तब अंग्रेजोंके हृदयमें जो भाव अुठते हैं, अुनकी गहराअी और तीव्रताको मापना कठिन है। अमेरिकाके रेखाओं और तारकोंसे अंकित झंडेमें अमेरिकावालोंको जाने कितना गहरा अर्थ मिलता है। अिसी तरह अिस्लामके अनुयायियोंमें अुनका चन्द्र और तारोंसे अंकित झण्डा अुत्तम वीरताके भाव जगाता है। हम भारतीयोंको यानी हिन्दुओं, मुसलमानों, अीसाअियों, यहूदियों, पारसियों और भारतको अपना देश माननेवाले अन्य सब लोगोंको अपना अेक सर्व-स्वीकृत झंडा तय करना चाहिये, जिसके लिअे हम मरें और जियें।

यंग अिंडिया, १३–४–'२१

वकील

वकीलका कर्तव्य हमेशा न्यायाधीशोंके सामने सत्यको रखना और सत्य पर पहुंचनेमें अुनकी मदद करना है। अुनका काम अपराधियोंको निरपराधी सिद्ध करना कदापि नहीं है।

यंग अिंडिया, ११–६–'२५

हम टोलाशाहीकी स्थितिको टालना चाहते हैं और यह अिच्छा
देशकी व्यवस्थित प्रगति हो, तो जो लोग जनताका नेतृत्व
करते हैं अुन्हें जनताका नेतृत्व माननेसे यानी जनता जो
जेसे दृढ़तापूर्वक अिनकार कर देना चाहिये। मैं मानता हूं
ने मतकी घोषणा करना और फिर लोगोंके सामने झुक
नहीं है। यदि महत्त्वके मामलोंमें लोगोंका मत नेताओंकी
न हो, तो अुन्हें चाहिये कि वे अुसके खिलाफ काम करें।
या, १४–७–'२०

पद समान पदवालोंमें प्रथम माने गये व्यक्तिका पद है।
को प्रथम स्थान देना ही पड़ता है, लेकिन शृंखलाकी सबसे
से ज्यादा शक्तिशाली न तो वह होता है, न अुसे होना
बार नेताका चुनाव करनेके बाद हमारा कर्तव्य हो जाता
सका अनुसरण करें। यदि अैसा न किया जाय तो शृंखला
और सारा संघटन शिथिल हो जाता है।
या, ८–१२–'२१

संगीत

वस्तुतः अेक पुरानी और पवित्र कला है। सामवेदके सूक्त
र हैं और कुरानकी किसी भी आयतका पाठ संगीतका
विना नहीं हो सकता। डेविडके भक्तिपूर्ण गीत हमें आनन्दके
देते हैं और सामवेदके सूक्तोंका स्मरण कराते हैं। हमें
पुनर्जीवित करना चाहिये और अुसका प्रचार करनेवाली
ाश्रय देना चाहिये।
ीत-सम्मेलनोंमें हिन्दू और मुसलमान संगीतज्ञोंको साथ-साथ
अुसमें हिस्सा लेते हुअे देखते हैं। अपने राष्ट्रीय जीवनके
हम भाअीचारेकी यही भावना कब देखेंगे? अैसा होगा
ारे होठों पर राम और रहमानका नाम अेकसाथ होगा।
या, १५–४–'२६

दलोंकी अनेकता

यदि हममें अुदारता और सहिष्णुता न हो तो हम अपने मतभेद कभी भी मित्रतापूर्वक नहीं सुलझा सकेंगे; और अुस हालतमें हमें हमेशा ही तीसरे पक्षका फैसला स्वीकार करनेके लिअे यानी विदेशी सत्ताकी गुलामी अपनानेके लिअे लाचार होना पड़ेगा।

यंग अिंडिया, १७–४–'२४

किसी भी अेक विचारधाराके अनुयायी यह दावा नहीं कर सकते कि अुनके ही निर्णय हमेशा सही होते हैं। हम सबसे गलतियां हो सकती हैं और हमें अकसर ही अपने निर्णय बादमें बदलने पड़ते हैं। हमारे अिस विशाल देशमें सब ओीमानदार विचारधाराओंके लिअे गुंजाअिश होनी चाहिये। और अिसलिअे अपने प्रति और दूसरोंके प्रति हमारा कमसे कम यह कर्तव्य तो है ही कि हम अपने विरोधीका दृष्टिकोण समझनेकी कोशिश करें और यदि हम अुसे स्वीकार न कर सकते हों तो अुसका अुतना आदर अवश्य करें जितना हम चाहेंगे कि वह हमारे दृष्टिकोणका करे। यह चीज स्वस्थ सार्वजनिक जीवनका और अिसलिअे स्वराज्यकी योग्यताका अेक अनिवार्य प्रमाण है।

यंग अिंडिया, १७–४–'२४

राजनीति

अैसे व्यापक सत्यनारायणके प्रत्यक्ष दर्शनके लिअे जीवमात्रके प्रति आत्मवत् प्रेमकी परम आवश्यकता है। और जो मनुष्य अैसा करना चाहता है, वह जीवनके किसी भी क्षेत्रसे बाहर नहीं रह सकता। यही कारण है कि सत्यकी मेरी पूजा मुझे राजनीतिमें खींच लायी है। जो मनुष्य यह कहता है कि धर्मका राजनीतिसे कोओी सम्बन्ध नहीं है वह धर्मको नहीं जानता, अैसा कहनेमें मुझे संकोच नहीं होता और न अैसा कहनेमें मैं अविनय करता हूं।

आत्मकथा, पृ० ४३३; १९५७

पंडे और पुजारी

यह अेक दुःखदायी हकीकत है, किंतु अितिहास अिसकी गवाही देता है कि पंडे और पुजारी ही, जिन्हें कि धर्मके सच्चे रक्षक होना चाहिये था, अपने-अपने धर्मके पतन और नाशका कारण सिद्ध हुअे हैं।

यंग अिंडिया, २०–१०–'२७

सार्वजनिक कोष

अगर हम मिले हुअे पैसेकी पाअी-पाअीका हिसाब नहीं रखते और कोषका विचारपूर्वक अुचित अुपयोग नहीं करते, तो सार्वजनिक जीवनसे हमें निकाल दिया जाना चाहिये।

यंग अिंडिया, ६–७–'२१

सार्वजनिक धन भारतकी अुस गरीब जनताका है, जिससे ज्यादा गरीब अिस दुनियामें और कोअी नहीं है। अिस धनके अुपयोगमें हमें बहुत ज्यादा सावधान तथा सजग रहना चाहिये और जनतासे हमें जो भी पैसा मिलता है अुसकी पाअी-पाअीका हिसाब देनेके लिअे तैयार रहना चाहिये।

यंग अिंडिया, १६–४–'३१

सार्वजनिक संस्थायें

अनेकानेक सार्वजनिक संस्थाओंकी अुत्पत्ति और अुनके प्रबन्धकी जिम्मेदारी संभालनेके बाद मैं अिस दृढ़ निर्णय पर पहुंचा हूं कि किसी भी सार्वजनिक संस्थाको स्थायी कोष पर निभनेका प्रयत्न नहीं करना चाहिये। अिसमें अुसकी नैतिक अधोगतिका बीज छिपा रहता है। . . . देखा यह गया है कि स्थायी सम्पत्तिके भरोसे चलनेवाली संस्था लोकमतसे स्वतंत्र हो जाती है, और कितनी ही बार वह अुलटा आचरण भी करती है। हिन्दुस्तानमें हमें पग-पग पर अिसका अनुभव होता है। कितनी ही धार्मिक मानी जानेवाली संस्थाओंके हिसाब-किताबका कोअी ठिकाना नहीं रहता। अुनके ट्रस्टी ही अुनके मालिक बन बैठे हैं और वे किसीके प्रति अुत्तरदायी भी नहीं हैं। जिस तरह प्रकृति स्वयं प्रतिदिन

अुत्पन्न करती और प्रतिदिन खाती है, वैसी ही व्यवस्था सार्वजनिक संस्थाओंकी भी होनी चाहिये, अिसमें मुझे कोअी शंका नहीं है। जिस संस्थाको लोग मदद देनेके लिअे तैयार न हों, अुसे सार्वजनिक संस्थाके रूपमें जीवित रहनेका अधिकार ही नहीं है।

आत्मकथा, पृ० १७०; १९५७

मैं अिस दृढ़ निश्चय पर पहुंचा हूं कि कोअी भी सुपात्र संस्था जनतासे मिलनेवाली मददके अभावके कारण नहीं मरती। मरनेवाली संस्थाओंके मरनेका कारण या तो यह रहा है कि अुनमें अैसी कोअी अुपयोगिता शेष नहीं रह गयी थी, जिससे आकर्षित होकर जनता अुनकी मदद करती, अथवा अुनके संचालकोंने अपनी श्रद्धा या दूसरे शब्दोंमें अपनी जीवन-क्षमता खो दी थी।

यंग अिंडिया, १५-१०-'२५

हमारी आर्थिक स्थिति नहीं, हमारी नैतिक स्थिति ही अनिश्चित है। अपने कार्यकर्ताओंकी चारित्रिक पवित्रताकी दृढ़ नींव पर खड़े हुअे किसी भी कार्य या आन्दोलनको अर्थाभावके कारण नष्ट हो जानेका डर कभी नहीं होता। . . . हमें पैसेके लिअे सामान्य जनताके पास पहुंचना चाहिये। हमारे मध्यम वर्गों और गरीब वर्गोंके लोग कितने भिखारियोंको, कितने मन्दिरोंको सहायता देते हैं; ये लोग चंद अच्छे कार्यकर्ताओंका भरण-पोषण क्यों नहीं करेंगे? हमें घर-घर जाकर भीख मांगनी चाहिये, अनाज मांगना चाहिये, और कुछ न मिले तो चंद पैसे ही मांगना और स्वीकार कर लेना चाहिये। अिस मामलेमें हमें वैसा ही करना चाहिये, जैसा कि बिहार और महाराष्ट्रमें किया जा रहा है। . . . लेकिन याद रखिये कि सफलता आपकी ध्येयनिष्ठा पर, कार्यके प्रति आपकी भक्ति पर और आपके चरित्रकी पवित्रता पर निर्भर करेगी। अैसे कार्योंके लिअे लोग तब तक नहीं देंगे जब तक अुन्हें हमारी निःस्वार्थताका निश्चय न हो जायगा।

हरिजन, २८-११-'३६

लोकमत

लोकमत ही अेक अैसी शक्ति है, जो समाजको शुद्ध और स्वस्थ रख सकती है।

यंग अिण्डिया, १८–१२–'२०

लोकमतसे आगे बढ़कर कानून बनाना प्रायः निरर्थक ही नहीं, अुससे भी ज्यादा बुरा सिद्ध होता है।

यंग अिण्डिया, २९–१–'२१

स्वस्थ लोकमतमें जो प्रभाव निहित होता है अुसके महत्त्वको अभी हमने पूरा-पूरा पहचाना नहीं है। लेकिन जब लोकमत हिंसापूर्ण और आक्रामक बन जाता है तब वह असह्य हो जाता है।

यंग अिण्डिया, ७–५–'३१

सार्वजनिक कार्यकर्ता

आधुनिक सार्वजनिक जीवनमें अैसी अेक प्रवृत्ति रूढ़ हो गयी है कि जब तक कोअी सार्वजनिक कार्यकर्ता अमुक व्यवस्था-तंत्रकी अिकाअीकी तरह अपना काम बखूबी करता हो तब तक अुसके चरित्रकी ओर दृष्टिपात न किया जाय। कहा जाता है कि चरित्र हरअेक व्यक्तिकी निजी वस्तु है, अुसकी चिन्ता वही करेगा। मैंने लोगोंको अकसर अिस मतका समर्थन करते हुअे देखा है, लेकिन मुझे कभी अुसका औचित्य समझमें नहीं आया, अुसे अपनाना तो दूर रहा। जिन संस्थाओंने अपने कार्यकर्ताओंके वैयक्तिक चरित्रको महत्त्वकी वस्तु नहीं माना है, अुन्हें अपनी अिस नीतिके भयंकर परिणाम भुगतने पड़े हैं।

हरिजन, ७–११–'३६

समयकी पाबन्दी

हमारे नेता और कार्यकर्ता वक्तके पाबन्द बनें तो राष्ट्रको अुससे निश्चित लाभ होगा। कोअी आदमी वस्तुतः जितना काम कर सकता है, अुससे ज्यादा करनेकी अुससे आशा नहीं की जा सकती। दिनभरके कामके बाद भी अगर काम पूरा न हो, या अपना खाना छोड़कर अथवा नींद या आमोद-प्रमोदकी अुपेक्षा करके अुसे काम करना पड़े, तो समझना

चाहिये कि कहीं-न-कहीं कोअी अव्यवस्था जरूर है। मुझे तो अिसमें कोअी शक नहीं कि अगर हम अपने कार्यक्रमके अनुसार नियमित रूपसे कार्य करनेकी आदत डालें, तो राष्ट्रकी कार्य-क्षमता बढ़ेगी, अपने ध्येयकी ओर हमारी प्रगति तेज गतिसे होगी और कार्यकर्ता ज्यादा तन्दुरुस्त और दीर्घजीवी होंगे।

हरिजनसेवक, २४–९–'३८

घुड़दौड़

घोड़ोंकी परवरिशके लिअे शर्त बदना और अुसके बारेमें लोगोंको अुत्तेजित करना बिलकुल अनावश्यक है। घुड़दौड़की शर्तसे मनुष्यके दुर्गुणोंका पोषण होता है और अच्छी खेतीके लायक जमीन तथा पैसेका बिगाड़ होता है। शर्त बदकर जुआ खेलनेवाले अच्छे अच्छे लोगोंको मैंने पामाल और तबाह होते देखा है। अैसे लोगोंको किसने नहीं देखा है? यह मौका पश्चिमके दुर्गुणोंको छोड़कर अुसके सद्‌गुण स्वीकार करनेका है।

हरिजन, १८–१–'४८

शरणार्थी

अुन्हें नम्रताका पाठ सीखना चाहिये, अैसी नम्रता जिससे वे दूसरोंके दोष देखने और अुनकी टीका करनेके बदले अपने दोष देख सकें। अुनकी टीका कअी बार बहुत कड़ी होती है, कअी बार अनुचित होती है और कभी-कभी ही अुचित होती है। अपने दोष देखनेसे अिन्सान अूपर अुठता है, दूसरोंके दोष निकालनेसे नीचे गिरता है। अिसके सिवा दुःखी लोगोंको सहयोगी जीवनकी कला और अुसमें रहनेवाले गुणोंको समझ लेना चाहिये। यह सीखते हुअे वे देखेंगे कि सहयोगका घेरा बड़ा होता जाता है, जिससे अुसमें सारे अिन्सान समा जाते हैं। अगर दुःखी लोग अितना करना सीख जायं—तो अुनमें से कोअी अपने आपको अकेला न माने। तब सभी, चाहे वे जिस प्रान्तके हों, अपनेको अेक मानेंगे और सुख खोजनेके बदले मनुष्यमात्रके कल्याणमें ही अपना कल्याण देखेंगे। अिसका मतलब कोअी यह न करे कि आखिरमें सबको अेक ही जगह रहना होगा। यह हमेशा असंभव ही रहेगा। और जब लाखोंका सवाल है,

तब तो बिलकुल असंभव है। मगर अिसका मतलब अितना जरूर है कि हरअेक अपनेको समुद्रमें अेक बूंदके समान समझकर दूसरेके साथ संबंध रखे; फिर भले ही दुःख आ पड़नेसे पहले सबके दरजे अलग अलग रहे हों, किसीका नीचा रहा हो, किसीका अूंचा, और सभी अलग-अलग प्रान्तोंके हों। और फिर कोअी अैसा तो कह ही नहीं सकता कि मुझे तो फलां जगह पर ही रहना है। तब किसीको न तो अपने दिलमें कोअी शिकायत रहेगी और न कोअी प्रकट रूपमें शिकायत करेगा। अैसी अच्छी व्यवस्थामें वे अपंग या लाचार बनकर नहीं रहेंगे।

अैसे सभी दुःखी अुनको दिया गया काम करेंगे और सभीके खाने, पहनने और रहनेका अच्छा अिन्तजाम हो जायगा। अैसा करनेसे वे स्वावलम्बी बनेंगे। स्त्री-पुरुष सभी अेक-दूसरेको बराबर मानेंगे। कअी काम तो सभी करेंगे, जैसे कि पाखाने साफ करना, कूड़ा-करकट निकालना वगैरा। किसी कामको अूंचा और किसी कामको नीचा नहीं माना जायगा। अैसे समाजमें कोअी आवारा, आलसी या निकम्मा नहीं रहेगा।

हरिजनसेवक, १४–१२–'४७

नदियां

गंगा और यमुना नामकी अिन दो नदियोंके सिवा हमारे देशमें और भी गंगायें और यमुनायें हैं, अुनके वास्तविक नाम चाहे भिन्न हों। वे हमें अुस त्यागकी याद दिलाती हैं, जो कि जिस देशमें हम रहते हैं अुसके लिअे हमें करना होगा। वे हमें अुस शुद्धिकी याद दिलाती हैं जिसके लिअे हमें निरन्तर प्रयत्न करना चाहिये, ठीक वैसे ही जैसे नदियां स्वयं अुसके लिअे क्षण-प्रतिक्षण प्रयत्न करती हैं। आजके जमानेमें तो अिन नदियोंसे हम केवल यही काम लेना जानते हैं कि अुनमें अपनी गंदी मोरियां बहावें और अुनकी छाती पर अपनी नावें चलावें और अिस प्रकार अुन्हें और भी गंदा करें। हमारे पास अितना समय नहीं है कि . . . हम अुनके पास जायें और ध्यानस्थ होकर अुनका वह सन्देश सुनें, जो वे हमारे कानोंमें धीरे-धीरे गुनगुनाती हैं।

यंग अिंडिया, २३–१२–'२६

सूची